

प्रकाशक : डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक

SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)

दूरभाष : 9910777969

E-mail : harisharanverma1@gmail.com

WWW.IJSCJOURNAL.COM

सहयोग राशि (भारत में)

(व्यक्तिगत) (आजीवन 5100 रुपये)

(संस्थागत) (आजीवन 7100 रुपये)

कृपया सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट से ही भेजें।

बैंक ड्राफ्ट, संपादक "इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल कन्सर्न्स" के पक्ष में देय होगा। आजीवन सदस्यता केवल दस वर्षों के लिए मान्य होगी। यदि किसी कारणवश पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो जाता है तो आजीवन सदस्यता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

संपादकीय कार्यालय :

1. डॉ० हरिशरण वर्मा, प्रधान सम्पादक

F-120, सेक्टर-10, DLF, फरीदाबाद (हरियाणा) 121006

harisharanverma1@gmail.com 09355676460

WWW.IJSCJOURNAL.COM

2. डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक

SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)

क्षेत्रीय सम्पादक

1. डॉ० वाई.आर. शर्मा, A-24, रेजिडेंसल कैम्पस, न्यू कैम्पस, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू-180001, फोन : 09419145967
2. डॉ० सलमा असलम, ओल्ड टाउन बरामुला, कश्मीर पिन - 193101, मौ० 9682162934
3. डॉ० आरती लोकेश P. o. Box 99846, Dubai, UAE 97150-4270752
4. श्री मोहनलाल, 11 अशोक विहार, संजय नगर, पो. इज्जत नगर बरेली (उ० प्र०) फोन : 09456045552
5. श्री जितेन्द्र गिरधर, कार्यालय सहायक 105/26 जवाहर नगर, कॉपरेटिव बैंक के पीछे, रोहतक 09896126686
6. Dr. Vimla Devi, Asst. Professor (History) M.B.G.P.G College Haldwani Nainital (Uttarakhand) G-mail address. drvimla2015@gmail
7. डॉ० प्रिया कपूर, सहायक प्रोफेसर, डी० ए० वी शताब्दी कालेज, फरीदा मौ० 9711196954
8. डॉ० रुक्मिणी हिन्दी-विभाग हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला-5
9. विमला टोप्पो, एस० आर० इंटरप्राइसेस म्युनिसिपल काम्पलेक्स सोप न० 4, डेरी फार्म, पोर्ट बलेयर, पी० ओ० जंगली घाट -744103 साउथ अंडमान
10. डॉ० राजपाल, सहायक प्रो० राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हिसार
11. डॉ० प्रवेश कुमारी, सहायक प्रो० (हिन्दी -विभाग), बाबा मस्तराथ, विश्वविद्यालय, रोहतक, (हरियाणा)
12. डॉ० निर्भय शर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी), संघटक राजकीय महाविद्यालय भदपुरा, नवाबगंज, एम० जे० पी० रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली (उ० प्र०) पिन कोड - 262406. Mobile No: 9634160016 Email: dr.nirbhaysharma@gmail.com

संरक्षक मण्डल :

1. प्रो० डॉ० चक्रधर त्रिपाठी कुलपति, उड़ीसा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट, 763004, चलभाषा: 9437568809
2. डॉ० दिनेश मणी त्रिपाठी, प्रधानाचार्य एन० पी० के० आई कालेज, सरदार नगर बसडीला (गोरखपुर) उ० प्र०
3. डॉ० नरेश मिश्रा (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. डॉ० वाई.आर.शर्मा, (राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू)
5. डॉ० सुधांशु कुमार शुक्ल चेयर हिन्दी, आई. सी. सी. वासा विश्वविद्यालय, वासा (पोलैन्ड) मौ० 48579125129
6. डॉ० तपन कुमार शण्डिल्य, कुलपति, डॉ० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय राँची, (झारखण्ड) 9431049871
7. डॉ० जंगबहादुर पाण्डेय (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) राँची विश्वविद्यालय, राँची - 834008 फोन : 09431595318
8. सुदेश रावत प्राचार्य एस. एन. आर. जयराम महिला कॉलेज, लोहार माजरा, कुरुक्षेत्र हरियाणा 36119 (सेठ नारंग राय लोहिया जय राम महिला कॉलेज)
9. Sh. Butta Singh gill, PPS, Dy Superintendent of Police. No 409 ,Street no 7 Ghuman Nagar , Sarhind Road, Patiala Punjab -147001.

परामर्शदात्री समिति :

1. डॉ० विजयदत्त शर्मा, पूर्व निदेशक, हरियाणा ग्रन्थ अकादमी पंचकूला (हरियाणा)
2. डॉ० सुधेश (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली)
3. डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल (पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर)
4. डॉ० राजकुमारी सिंह, प्रोफेसर एफ.टी.एम. विश्वविद्यालय लोधीपुर राजपूत मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 9760187147
5. डॉ० माया मलिक, पूर्व प्रोफेसर हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
6. डॉ० ममता सिंहल, (प्रोफेसर एवं अध्यक्षा अंग्रेजी विभाग) जे० वी० जैन कॉलेज सहारनपुर
7. डॉ० विनीत बाला, सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक

संपादकीय विशेषज्ञ समिति :

हिन्दी विभाग:

1. डॉ० राजेश पाण्डे (डी.वी. कॉलेज, उरई, जिला जालौन, उ० प्र०)
2. डॉ० अनिता, सहायक प्रोफेसर, (हिन्दी), श्री अरविन्दो कालिज दिल्ली (साध्य) मौ० :8595718895
3. डॉ० सुशील कुमार शर्मा (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय शिलांग, मेघालय)
4. डॉ० शशि मंगला, पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
5. डॉ० के० डी० शर्मा, पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त, सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
7. मुकेश चन्द्र गुप्ता (हिन्दी विभाग, एम.एच.पी.जी. कॉलेज, मुरादाबाद)
8. डॉ० गीता पाण्डेय (रीडर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, एस.डी.

9. डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा (सह प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल
10. डॉ० सुधा चौहान, पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, वैश्य कालिज, भिवानी
11. डॉ० रूबी, (सोनेयर सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग कश्मीर)
12. डॉ० सुमन राठी, सहायक प्रो० हिन्दी विभाग, मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
13. डॉ० सुधा कुमारी (हिन्दी विभाग) एन०जी०एफ० डिग्री कालिज, उड्डू, अध्ययन केन्द्र मथूरा रोड, पलवल 982719456
14. डॉ० एम. के. कलशेट्टी, हिन्दी विभाग, श्री माधवराव पाटेल महाविद्यालय, मुरुम तह० अमरगा, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)-413605
15. डॉ० मनोज पंड्या, व्याख्याता हिन्दी विभाग, श्री गोविन्द गुरु, राजस्थान महाविद्यालय, बांसवाड़ा-327001, मो० 09414308404
16. डॉ. कृष्णा जून, प्रो० हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
17. डॉ. विपिन गुप्ता, सहायक प्रोफेसर, वैश्य कॉलेज भिवानी
18. प्रो० (डॉ०) वन्दना शर्मा, म. न. 2, प्रोफेसर लॉज, किचम सी. डी. एम., मोदीनगर (उ.प्र.) 201204, मो० 2760411251
19. डॉ० जाहिदा जबीन, (प्रो० एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर-६)
20. डॉ० टी०डी० दिनकर, पूर्व प्रो० एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग अग्रवाल कॉलेज, बल्लभगढ़)
21. डॉ० सुभाष सैनी, (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग दयालसिंह कॉलेज, करनाल, हरियाणा)
22. डॉ० उर्विजा शर्मा, (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग शम्भु दयाल स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, गाजियाबाद)
23. डॉ० ममता कुमारी, सहायक प्रो०, डी० ए०वी० शताब्दी महाविद्यालय, फरीदाबाद हरियाणा
24. डॉ० मधुकान्त, (वरिष्ठ साहित्यकार) 211- L मॉडल टारुन, रोहतक
25. डॉ० कंचन पुरी, विभागध्यक्ष, रघुनाथ गर्ल्स पी० जी० कॉलेज मेरठ
26. डॉ० प्रवेश कुमारी, सहायक प्रो० हिन्दी बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
27. डॉ० राजपाल, सहायक प्रो० राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हिसार
28. डॉ० प्रवेश कुमारी, सहायक प्रो० टिकाराम कन्या कॉलेज, सोनीपत, हरियाणा
29. प्रो. प्रणव शास्त्री, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष-हिन्दी विभाग, उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत - 262 001 उ. प्र. मो.98379 60530 drpranav&pbt23@rediffmail-com
30. प्रो. राखी उपाध्याय, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष - हिन्दी विभाग, डी. ए. वी. कॉलेज, देहरादून - 248 001 (उत्तराखण्ड) मो. 94111 90099 drrakhi.418@gmail-com
31. डॉ० सुनीता जसवाल, असिस्टेंट प्रोफेसर - हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला (हिमाचल प्रदेश) मो. 7018621542
32. डॉ० सुमन रानी, सहायक प्रोफेसर, अस्थाई, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय पलवल हरियाणा मो० 9050289680 sumanbhati808@gmail.com
33. डॉ० संगम वर्मा, सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, राजकीय महिला महाविद्यालय, सैक्टर 11, चण्डीगढ़ 9463603737.kavysavvy@yahoo.com
34. डॉ० प्रीति गुप्ता, हिन्दी व्याख्याता GGSSS राम नगर न०1 पहाड़गंज नई दिल्ली (शिक्षा निदेशालय दिल्ली सरकार) मो० 8058138017 sweetpriti80@gmail.com
35. संजय कुमार, व्याख्याता, GBSSS करावल नगर, दिल्ली (शिक्षा निदेशालय दिल्ली सरकार) संपर्क- 8769406872 ई मेल sanjaydholpuria51@gmail.com

अंग्रेजी विभाग:

1. डॉ. ममता सिंहल, अध्यक्षा, अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर, उ.प्र.
2. डॉ. रणदीप राणा, प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. डॉ. जयवीर सिंह हुड्डा, प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
4. डॉ० रविन्द्र कुमार, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, चौ० चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
5. डॉ. अनिल वर्मा (पूर्व रीडर, अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर)
6. डॉ० जे. के. शर्मा, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक
8. डॉ. पी.के. शर्मा, (प्रो., अंग्रेजी-विभाग, राजकीय के.आर.जी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर)
9. डॉ. गीता रानी शर्मा, (सहायक प्रोफेसर) गो.ग.दत्त सनातन धर्म कॉलेज, पलवल
10. डॉ. किरण शर्मा, (एसोसिएट प्रोफेसर) राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय रोहतक
11. डॉ० राजाराम, सहायक प्रोफेसर (अंग्रेजी) ओम स्ट्रलिंग ग्लोबल, विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

वाणिज्य विभाग:

1. डॉ० नवीन कुमार गर्ग (वाणिज्य विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. डॉ० ए.के. जैन, रीडर (वाणिज्य विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर)
3. डॉ० दिनेश जून, एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, फरीदाबाद
4. डॉ० एम.एल. गुप्ता, (पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वाणिज्य एवं व्यवसायिक प्रशासन संकाय, एस.एस.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हापुड़ एवं संयोजक-शोध उपाधि समिति एवं संयोजक बोर्ड ऑफ स्टीडिज चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ)
5. डॉ. गीता गुप्ता, (सहायक प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, वैश्य महिला महाविद्यालय, रोहतक)
6. Dr. Shaveta Kakkar Assistant professor in commerce Vaish Mahila Mahavidyalaya Rohtak

राजनीति शास्त्र विभाग:

1. साकेत सिसोदिया, (राजनीति शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
2. डॉ० रोचना मित्तल (रीडर एवं अध्यक्षा, राजनीति शास्त्र-विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
3. डॉ० राजेन्द्र शर्मा (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
4. डॉ० कौशल गुप्ता, एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली Mob.: 09810938437
5. डॉ० पी.के. वार्ण्य, एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, जे.वी.जैन कॉलेज, सहारनपुर
6. डॉ० सुदीप कुमार, सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, पेहवा (कुरुक्षेत्र) Mob.: 9416293686
7. डॉ० वाई०आर० शर्मा, एसो० प्रो०, राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू
8. डॉ. रेनू राणा, (सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, प. नेकीराम शर्मा राजकीय महाविद्यालय रोहतक 124001
9. डॉ. ममता देवी, (सहायक प्रोफेसर, राजनीतिक शास्त्र विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

इतिहास विभाग:

1. डॉ० भूकन सिंह (प्रवक्ता, इतिहास विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. डॉ० मनीष सिन्हा, पी.जी. विभाग, इतिहास, मगध विश्वविद्यालय बोधगया, बिहार-824231
3. डॉ० राजीव जून, सहायक प्रो० इतिहास, सी.आर. इन्स्टीट्यूट ऑफ ला, रोहतक
4. डॉ० मीनाक्षी (सहायक प्रोफेसर इतिहास विभाग) सी.आर. किसान कॉलेज, जीन्द
5. डॉ० रश्मि, (अध्यक्षा) इतिहास विभाग, हिन्दू कन्या महाविद्यालय, जीन्द (हरियाणा) पिन - 126102

भूगोल विभाग:

1. डॉ० पी.के. शर्मा, पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, भूगोल विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर
2. रश्मि गोयल (भूगोल विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
3. डॉ० भूपेन्द्र सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राजकीय पी.जी. कॉलेज, हिसार
4. डॉ० विनीत बाला, सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक
5. डॉ० प्रदीप कुमार शर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

शिक्षा विभाग:

1. डॉ० उमेन्द्र मलिक, एसिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, म.द.वि. , रोहतक
2. डॉ० संदीप कुमार, सहायक प्रो० शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली एसोसिएट
3. डॉ० तपन कुमार बसन्तिया, एसोसिएट प्रोफेसर, सेंटर फॉर एजुकेशन, सैट्रल यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ बिहार, गया कैम्पा, विनोभा नगर, वार्ड नं. 29, Behind ANMCH मगध कालोनी, गया-823001 बिहार Mob.: 09435724964
4. डॉ० (प्रो०) अनामिका शर्मा, प्राचार्या, एम.आर. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, फरीदाबाद
5. डॉ० मनोज रानी, सहायक प्रोफेसर (अंग्रेजी) एम.एल.आर.एस. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, चरखी दादरी (भिवानी)
6. डॉ० अनीता ढाका, (प्राचार्या, आर.जी.सी.ई. कॉलेज, ग्रेटर, नोएडा।)
7. डॉ० ममता देवी, (सहा. प्रो. बी.आई.एम.टी. कॉलेज कमालपुर गढ़ रोड़, मेरठ)

गृह विज्ञान

1. डॉ० श्रीमती पंकज शर्मा, (सहायक प्राफेसर), गृह विज्ञान (प्रसार शिक्षा) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रोहतक

शारीरिक शिक्षा विभाग:

1. डॉ० सरिता चौधरी, सहायक प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, आर्य गर्ल्स कॉलेज, अम्बाला कैट, हरियाणा
2. डॉ० वरुण मलिक, सहायक प्रोफेसर, म.द.वि., रोहतक
3. डॉ० सुनील डबास, (पद्मश्री व द्रोणाचार्य अवार्ड) HOD in physical education "DGC Gurugram

समाज शास्त्र विभाग:

1. प्रवीण कुमार (समाजशास्त्र विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. डॉ० कमलेश भारद्वाज, समाज शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद

मनोविज्ञान विभाग:

1. डॉ० चन्द्रशेखर, सहायक प्रोफेसर साइक्लोजी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू
2. डॉ. रश्मि रावत, (मनोविज्ञान विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, देहरादून)
3. अनिल कुमार लाल (प्रवक्ता, मनोविज्ञान विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)

अर्थशास्त्र विभाग:

1. डॉ० जसवीर सिंह (पूर्व रीडर अर्थशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मवाना)
2. डॉ० सुशील कुमार (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
3. डॉ० अखिलेश मिश्रा (प्राध्यापक, अर्थशास्त्र-विभाग, एस.डी.पी. जी. कॉलेज, गाजियाबाद)
4. डॉ० सत्यवीर सिंह सैनी, एसो०प्रो० (अर्थ०वि०, गोंग० सनातन धर्म पी०जी० कॉलेज, पलवल)

विधि विभाग:

1. डॉ० नरेश कुमार, (प्रोफेसर, विधि-विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
2. डॉ० विमल जोशी, (प्रोफेसर, विधि-विभाग भगत फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय खानपुर, सोनीपत)
3. डॉ० जसवन्त सैनी, (सहायक प्रोफेसर, विधि-विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. डॉ० वेदपाल देशवाल, (सहायक प्रोफेसर, विधि-विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
5. डॉ. अशोक कुमार शर्मा, एसो. प्रोफेसर, विधि विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
6. डॉ. राजेश हुड्डा, सहायक प्रो०, विधि विभाग, बी.पी.एस. महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलां, सोनीपत
7. डॉ० सत्यपाल सिंह, (सहायक प्रोफेसर, विधि-विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
8. डॉ० सोनू, (सहायक प्रोफेसर, विधि-विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
9. डॉ० अर्चना वशिष्ठ, (सहायक प्रोफेसर, के०आर० मंगलम विश्वविद्यालय, सोहना रोड़, गुरुग्राम)
10. डॉ० आनन्द सिंह देशवाल, (सहायक प्रोफेसर, सी०आर० कॉलेज ऑफ लॉ रोहतक)
11. अनसुइया यादव, (सहायक प्रोफेसर, विधि विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा)

गणित विभाग:

1. डॉ० विनोद कुमार, रीडर एवं अध्यक्ष गणित विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
2. डॉ० विरेश शर्मा, लेक्चरर गणित विभाग, एन.ए.एस. कॉलेज, मेरठ
3. डॉ० सलौनी श्रीवास्तव सहायक प्रो०, गणित विभाग आर० बी० एस० कालेज आगरा
4. Dr. Dhrub Kumar Singh, HOD, Department of Mathematics, YBN University, Rajaulatu, Namkum, Ranchi, Jharkhand, India. Pin-834010
5. डॉ० रश्मि मिश्रा प्रोफेसर (एप्लाइड साइंस एंड हमनीटीएस), मैथमेटिक्स गनेशी लाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एंड मैनेजमेंट ग्रेटर नॉएडा

कम्प्यूटर विभाग:

1. प्रो० एस.एस. भाटिया (अध्यक्ष, स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स एण्ड कम्प्यूटर एप्लीकेशन, थापर विवि, पटियाला)
2. सर्वजीत सिंह भाटिया (प्रवक्ता, कम्प्यूटर साइंस, खालसा कॉलेज, पटियाला)
3. डॉ० बालकिशन सिंहल, सहायक प्रोफेसर, कम्प्यूटर विभाग, म०द०विश्वविद्यालय, रोहतक

संस्कृत विभाग:

1. डॉ० रामकरण भारद्वाज पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लाजपत राय कॉलेज, साहिबाबाद (गाजियाबाद)
2. डॉ० सुनीता सैनी, प्रो० संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. डॉ० सुमन, (सहायक प्रोफेसर, संस्कृत-विभाग, आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी।)
4. डॉ० दिनेश मणि त्रिपाठी {प्रधानाचार्य} एल० पी० के० इंटर कॉलेज सरदार नगर बसडिला {गोरखपुर}
5. डॉ० दानपति तिवारी, प्रोफेसर, एवं अध्यक्ष, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर-प्रदेश
6. डॉ० दिनेशचन्द्र शुक्ल, सहायक प्रोफेसर, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर-प्रदेश

रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग:

1. डॉ० आर०एस० सिवाच, प्रो० एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, म०द०वि०, रोहतक

1254

दृश्यकला विभाग:

1. डॉ० सुषमा सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, म०द० विश्वविद्यालय, रोहतक

पंजाबी विभाग:

1. डॉ० सिमरजीत कौर, सहायक प्रो० (पंजाबी), ईश्वरजोत डिग्री कालेज, पेहवा (कुरुक्षेत्र)

संगीत विभाग:

1. डॉ० संध्या रानी, अध्यक्षा, संगीत विभाग, यूआरएलए, राजकीय पीजी कॉलेज, बरेली
2. डॉ० हुकमचन्द, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष तथा डीन, संगीत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
3. डॉ० अनीता शर्मा, (संगीत-गायन प्राध्यापिका, जयराम महिला महाविद्यालय लोहारमाजरा (कुरुक्षेत्र)
4. डॉ० वन्दना जोशी, (सहायक प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, एस.एस.जे. परिसर, अल्मोड़ा)

पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग:

1. डॉ० सरोजनी नंदल, प्रोफेसर (पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग) महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

उर्दू विभाग:

1. डॉ० मो. नूरुल हक, (एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, उर्दू, बरेली कॉलेज, बरेली)

कृषि विभाग

1. डॉ० गोविन्द प्रकाश आचार्य सह-आचार्य (कृषि-प्रसार) श्री गोविन्द गुरु राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा राजस्थान मो. 9460545836

दर्शनशास्त्र

1. Prof, Dr, Asha Devi department of Philosophy Govt P G college kotdwar pauri Garhwal Uttarakhand 246149

LIFE MEMBERS OF INDIAN JOURNAL OF SOCIAL CONCERNS

1. **Dr. Praveen Kumar Verma**
Associate Professor, Hindi Department, GGD Sanatan Dharam Post Graduate College, Palwal.
2. **Smt. Veena Pandey (Shukla)**
Hindi Teacher, Jawahar Navodaya Vidyalaya, Dhoom Dadri, Distt. Gautambudhnagar - 203207 (U.P.)
3. **Dr. Suman**
H.No. 1001, Radha Swami Colony, Rohtak Road, Bhiwani (Haryana)
4. **Dr. Subhash Chand Saini** (Hindi Department, Dyal Singh College, Karnal, Haryana)
5. **Dr. Vimla Devi, Asst. Professor (History)** M.B.G.P.G College Haldwani Nainital (Uttarakhand)
G-mail address. drvimla2015@gmail
6. **Princepal**, Associat Professor (Hindi), Aggarwal College, Ballabgarh (Haryana)
7. **Dr. Dinesh Mani Tirpathi (Principal)** L-P-K Inter College sardar Nagar, Basdila Gorkhpur
8. **Dr. Govind Prakash Acharya** F--63, Chandra Vardai Nagar, UIT, Colony, Shaheed Bhagat Singh Marg, Opposite Ramganj Thana, Taragarh Road, Ajmer (Rajasthan) Pincode--305003.
9. **Amardeep Singh** Mcf C -21, Near Deep Vatika, Bhagat Singh Colony, Ballabgarh121004, Mob. 9873814066
10. **Principal**, Goswami Ganesh Dutt Sanatam Dharma College Palwal (Haryana)



आचार्य मनिष र. जोशी
सचिव

Prof. Manish R. Joshi
Secretary



सत्यमेव जयते



विश्वविद्यालय अनुदान आयोग
University Grants Commission
(शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार)
(Ministry of Education, Govt. of India)

F.No. 1-1/2018(CARE/JOURNAL)-Part file 22 माघ 1946/11 February, 2025

सार्वजनिक सूचना

In supersession of the Public Notice dated 28th November 2018 for establishing UGC Consortium for Academic and Research Ethics (UGC- CARE), the Commission, in its 584th meeting held on 3rd October 2024, based on the recommendations of the expert committee, has decided to discontinue UGC-CARE listing of Journals and develop suggestive parameters for choosing peer-reviewed journals by faculty members and students. The suggestive parameters, developed by a group of experts and academicians, are now placed in the public domain for their feedback till **25th February, 2025 at email id: journal@ugc.gov.in.**

The stakeholders, including HEIs, faculty members, researchers, and students, may take note of it.


(मनिष जोशी)

बहादुरशाह जफ़र मार्ग, नई दिल्ली-110002 | Bahadur Shah Zafar Marg, New Delhi-110002
दूरभाष (Ph.): 011-23236288/23239337 | सम्पर्क सूत्र (ई-मेल) (E-mail) : secy.ugc@nic.in

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
1.	समजोन्नय ने नैतिक तत्व समीक्षा संस्कृत साहित्य में नैतिक विमर्श मुकेश, डॉ० चंद्रलेखा		9-13
2.	मेहरुन्सि परवेज की कहानी "निर्णय" में अभिव्यक्त मानवीय संवेदना श्रुतिप्रभा बारिक		14-16
3.	जयशंकर प्रसाद की कहानियों में भारतीय संस्कृति का विश्लेषणात्मक अध्ययन डॉ० पुष्पा रानी		17-18
4.	भारतीय संवैधानिक व्यवस्था और महिला सशक्तिकरण डॉ० अजय कुमार		19-22
5.	प्रभुनाथ द्विवेदी के कथाकौमुदी में उत्पन्न सामाजिक कुरीतियों का यथार्थ चित्रण – (मतदानम् एवं वरान्वेषणम् के विशेष सन्दर्भ में) कमलेश कुमार उपाध्याय		23-25
6.	शक्ति सत्ता का अवधारणात्मक परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन डॉ. अजय कुमार		26-31
7.	महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में सामाजिक चेतना बुराई का द्वंद्व डॉ० सुमन, सविता		32-34
8.	महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में सामाजिक चेतना सन्दीप कुमार		35-38
9.	समकालीन महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारी विमर्श गगनदीप कौर		39-42
10.	प्रतिशोध नहीं, धर्म पुनर्संस्थापन – स्त्री दृष्टि से महाभारत डॉ० सुमन		43-46
11.	कैराली मसाज पार्लर उपन्यास में चित्रित स्त्री-जीवन पूजा		47-51
12.	हरियाणा की लोक कला एवं लोक परंपरा एक अध्ययन डॉ० पवन		52-55
13.	रामायण और राष्ट्रीय शिक्षा नीति : मूल्यपरक शिक्षा की खोज राजीव कुमार उपाध्याय		56-59
14.	नारी मानवाधिकार विमर्श का भारतीय संदर्भ : एक अवलोकन डॉ. ममता देवी		60-66
15.	हरियाणवी लोकगीतों में नारी के विविध रूप डॉ० रेखा		67-69
16.	मालती जोशी की रचनाधर्मिता अनीता कुमारी		70-73
17.	“आध्यात्मिक ज्ञान से मनोचिकित्सा” Dr. Swati		74-79
18.	रणेन्द्र की साहित्य-साधना कुमारी श्वेता रानी		80-84
19.	राष्ट्रीय एकता, अखण्डता एवं भारतीय सुरक्षा डॉ० एम०के० सिंह, सत्यवीर सिंह		85-87
20.	स्त्री रचनाकारों के साहित्य में स्त्री विमर्श अनिल कुमार		88-91
21.	स्वाधीन भारत में राष्ट्रीय एकता के समक्ष चुनौतियां डॉ० एम०के० सिंह, सत्यवीर सिंह		92-94
22.	वर दे, वीणावादिनी वर दे !; नवोन्मेष की अप्रतिम कविता डॉ. कपिल देव पांडेय		95-96

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
23.	भारत-भारती में धर्म उपदेशक तीर्थ-पण्डे, मंदिर, महन्त एवं साधु-संतों में फैले अनाचार का वर्णन। देवेन्द्र कुमार		97-99
24.	आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में अभिव्यक्त ग्रामीण जीवन की समस्याएँ रणजीत कुमार		100-102
25.	भारतीय काव्यशास्त्र में प्रतिभा का स्वरूप निकिता कुमारी		103-106
26.	भारत की वैश्विक दृष्टि एवम् वसुधैव कुटुंबकम् की अवधारणा डॉ० चक्रधर त्रिपाठी		107-109
27.	चंद्रगुप्त नाटक में प्रसाद की गीति- योजना डॉ० चंद्र मणि किशोर		110-112
28.	डाक्टर ईश्वर के विग्रह हैं डॉ० जंग बहादुर पाण्डेय		113-113
29.	स्त्री विमर्श डॉ० बबली		114-114
30.	श्रीकान्त वर्मा के काव्य में सामाजिक चेतना डॉ० सुमन रानी		115-118
31.	हरियाणा की पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका मोनिका, डॉ. निशा कुमारी		119-120
32.	A Study On Investor's Perception Towards Investment In Mutual Funds Dr. Anju Singla		121-124
33.	International Journal Of Law Management & humanities Empowering Women Through Alimony Reform: Fostering Financial In Dependence And Empowering Women Through Alimony Reform: Fostering Financial Independence And and Its Impact on minimizing Role of Courts Dr. Santosh Kumar Sharma		125-131
34.	Cotton Production In Haryana: Trends, Factors, And Prospects Since 2010 Dr.Mukesh Bala		132-140
35.	Emerging Trends Relating To Environmental Pollution Dr. Nisha Rani		141-147
36.	Current Scenario In Haryana's Agriculture Dr.Mukesh Bala		148-154
37.	“Developed Graphic Designs For Print Media” Vidu Khambra, Dr.beena Dixit		155-158
38.	Title of the Paper: Social- Economic Change: Agencies & Pathways to Atmanirbhar Bharat Dr. Deepa Juneja		159-165
39.	Electronic Waste: A Growing Threat to Environmental and Human Health Dr. Ram Prakash, Sundar Singh		166-170
40.	Contribution of Social Ethics to Environmental Conservation Dr. Madhusudan		171-177

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
41.	Enterpreneurship Awareness and Economic Development Dr. Saneh Yadav, Princy Tiwari		178–183
42.	Analysis Of The Legal Framework For Mergers And Acquisitions In India Shree Nandani Gaur		184–185
43.	Importance Of Financial Literacy In Daily Life Dr. Saneh Yadav, Princy Tiwari		186–190
44.	Exploring The Role Of Gram Panchayats In Empowering Differently Abled Children Praveen Kumari, Dr. Umender Malik		191–195
45.	The Rise of Eco-Fiction: A Study of Climate Change Narratives in Contemporary Novels Dr. Sunita Yadav		196–199
46.	Enhancement Of Service Quality In Tertiary Care Government Hospitals: Challenges And Recommendations Hemanand		200–206
47.	Deaf Culture and Indian Sign Language in India: An Analysis of Parental and Familial Support Dr. Vineet Bala		207–210
48.	Service Quality Measurement Through Servqual Model: A Critical Analysis Hemanand		211–216
49.	Gender Responsive Budgeting in Bihar : A Step Towards Development Dr. Sunita Roy		217–227
50.	स्वामी विवेकानंद और महिला सशक्तिकरण: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन मोनिका, डॉ. निशा कुमारी		228–229
51.	समकालीन हिंदी कविता में चित्रित वर्तमान परिदृश्य डॉ० जागीर नागर		230–234
52.	From Forgetting to Remembering: The Teacher's Role in Strengthening Memory Retention : Dr. Rajkumari Singh		235–237
53.	Labour Skill Development and Employment Dr. Saneh Yadav, Princy Tiwari		238–243

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
------	------	------	----------

सारांश –

नीतिकाव्य का उद्देश्य विशुद्ध काव्य से भिन्न है । नीतिकाव्य का मुख्य लक्ष्य वही है, जो नीतिशास्त्र का, परंतु नीतिशास्त्र नीति की शिक्षा सामान्य एवं नीरस ढंग से देता है, परंतु नीतिकाव्य सरस वाणी में । शुष्क होने के कारण शास्त्रीय कथन उतना प्रभावशाली नहीं होता, जितना नीतिकाव्य । कहा जाता है कि महाराजा जयसिंह अपनी ब्याह कर लाई गई रानी पर मुग्ध होकर महलों में ही पड़े रहा करते थे । इससे राज्य-संचालन में शिथिलता आने लगी । उनका यह भी आदेश था यदि कोई रंग में भंग करेगा, तो कुशल नहीं होगा । किसी में कुछ कहने का साहस नहीं था, परंतु बिहारी ने किसी प्रकार से यह दोहा उनके पास भिजवाया –
नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं बिकास यहि काल ।
अली क्ली ही सो बंध्यो आगे कौन हवाल ।।

इस दोहे का महाराज पर इतना प्रभाव पड़ा कि वे तुरंत महल छोड़कर बाहर निकले । उन्होंने प्रसन्न होकर बिहारी को बहुत सा धन भी दिया और राज्य संचालन कार्य में लग गए । इस प्रकार देखा जाता है कि जो कार्य राजा के बड़े-बड़े सभासद और मंत्री न कर सके, उसको कवि ने सहज में ही कर डाला ।

इसी से नीतिकाव्य का प्रयोजन या महत्ता समझी जा सकती है । नीतिकवि यदि कुशल है, तो उसकी नीतिविषयक काव्य भी उतना सरस हो सकता है, जितना किसी अन्य विषय का । लोकमंगल की दृष्टि से देखा जाए तो नीतिकाव्य का प्रयोजन अन्य काव्यों के प्रयोजनों से उत्कृष्ट है । अन्य काव्य मुख्य रूप से आनंद के लिए लिखे जाते हैं, शिक्षा के लिए नहीं ।

अतः नीतिकाव्य का मुख्य लक्ष्य तो शिक्षा देना है, परंतु साथ ही इस बात के लिए सचेत रहना भी है कि शिक्षा यथासंभव सरल व सरस स्थान से दी जाए । इस प्रकार नीतिकाव्य शिक्षा एवं आनंद दोनों प्रदान करने में समर्थ है, जो प्राचीन काल से ही हमें दी जाती रही है, जिसका सम्पूर्ण वर्णन प्रस्तुत पत्र में किया गया है ।
सर्वलोक व्यवहार स्थिति नित्या विना नहि ।
यथा शनेर्विनादेहस्थिति नेस्याद्धि देहिनाम् ।।

जिस प्रकार भोजन के बिना शरीरकी कल्पना नहीं की जा सकती, उसकी स्थिति बने रहना असंभव है, उसी प्रकार नीति के बिना भी जीवन की स्थिति नामुमकिन है । जीवन तो होता ही है, नीति पर आधारित ।

अब यहां प्रश्न उठता है कि नीति क्या है, तो इसका जवाब नीतिकल्पतरुकारने लिखा है दृ“नीति मानव केलिए नेत्र है जिसमें

ज्ञान की दिव्यदृष्टि है ” । नीति का मानव के जीवन से घनिष्ठ संबंध है । समाज में मर्यादा को बनाए रखने के लिए नीति की गहन आवश्यकता होती है, यदि समाज का प्रत्येक व्यक्ति नीतिपूर्ण व्यवहार करेगा, तो निश्चित रूप से वह समाज सुरक्षित और जीवन योग्य बनेगा । मानव समाज यदि नीतिविहीन हो, तो वह जीवन नहीं, अपितु मृत शरीर है ।

नीति मानव जीवन में संजीवनी का काम करती है । ‘नयन्नीतिरुच्यते’ इसी कारण ही वह नीति कही जाती है, अर्थात् जो मनुष्य को अकृत्य से हटाकर कृत्य की ओर ले जाए, वह नीति है, जो मनुष्य को अनुचित और कुकर्मा से दूर कर उचित सद्कर्मों की ओर प्रेरित करें, वह ही नीति है । इसी शिष्टता के द्वारा मनुष्य की प्रवृत्ति पशुता से हटकर मानवता की ओर होती है । नीति तो मनुष्य के लिए देवत्व का निर्माण करने में भी सक्षम है, उसके लिए वरदान साबित होती है, उसके जीवन को सुलभ व सुगम बनाती है । यदि मानव को नीति का ज्ञान न हो, किसके साथ कैसा व्यवहार करना है, यदि मनुष्य यह नहीं जानता तो उसका इस धरती पर जन्म असफल हो जाता है, व्यर्थ हो जाता है उसका यह बहुमूल्य मनुष्य जीवन ।

नीति कर्तव्याकर्तव्य के प्रति सदा सचेत करती है । मनुष्य के जीवन को अनुशासित करके, प्रत्येक लक्ष्य में सफलता को प्राप्त करने में उसकी मदद करती है । मानव का जीवन नीति से ओत-प्रोत है ।

नीति मानव को मर्यादित कर देश-काल-पात्र और स्थिति के अनुसार व्यवहार का ज्ञान प्रदान करती है । उन्नति को प्राप्त करने का नीति ही वह सोपान है, जिससे आज वह मानव ज्ञान-विज्ञान के चरमोत्कर्ष पर स्थित है । परिवार, समाज, राज्य, देश और विश्व में सभी मनुष्य नीति का अनुसरण करके ही अभ्युदय को प्राप्त करते हैं, और श्रेय और प्रेय, जो हमारे उपनिषदों, शास्त्रों, पुराणों के द्वारा मानव हितार्थ कही गई विद्याएं हैं, को प्राप्त करके अभेदित होते हैं । नीति मानवीय दुर्गुणों को दूर कर सद्गुणों का विकास करती है । उसके व्यक्तित्व का विकास होता है । इसलिए ही सद्गुणों से विकसित व्यक्तित्व की पूजा तो सर्वत्र होती है दृ गुणाः पूजा स्थानं गुणिषु न च लिंगं न च वयः ।।

नीति दया, दाक्षिण्य, परोपकार, त्याग आदि अनेक सात्विक गुणों का आधार है । भगवान परशुराम ने समस्त भूमण्डल जीतकर त्याग दिया था । श्रीराम ने लंका पर विजय प्राप्त करके, विभीषण को लंका का राज्यभार सौंप दिया था । आचार्य चाणक्य ने अपनी नीतिचातुर्य से समृद्ध नन्दवंश का विनाश करके चन्द्रगुप्त को सम्राट बना दिया था । हमारे इतिहास में अनेक अन्य उदाहरण भी

प्राप्त होते हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि नीति ने मनुष्य में त्याग की भावना को जागृत किया । स्वार्थ की अपेक्षा परार्थ को महत्व देना ही नीति का लक्ष्य होता है । परोपकारिता सर्वश्रेष्ठ सेवा है, यह हमें नीति सिखाती है । धर्मपालन में भी नीति होना आवश्यक माना जाता है । इस प्रकार मनुष्य के भाषण, व्यवहार, आचार, कर्तव्यादि समस्त मानवीय आचरण में नीति का पुट अवश्य मिल जाता है । मानव से नीति के संबंध का सारांश यही है दृ रामादिवत् प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत् ।

अतः उपर्युक्त नीति के ज्ञान के आधार पर हम कह सकते हैं कि नीति वह सत्शास्त्र है जो पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति, सदसद का ज्ञान, कर्तव्याकर्तव्यानुशीलनपूर्वक, देश-काल-पात्रों की स्थिति के अनुसार अभ्युदय करके मानव जाति का कल्याण होता है । नीति की व्यापकता के कारण ही भारतीय ऋषियों, मुनियों, आचार्यों, कवियों ने अपने-अपने ग्रन्थों में वेदों, पुराणों, महाकाव्यों, नाटकों में विस्तृत रूप से नीति की चर्चा की है –

सर्वोपजीवकेलोकस्थिति कृन्नीति शास्त्रकम् ।

धर्मार्थ काम मूलं हि स्मृतं मोक्ष प्रदं यतः ।।

इसलिए सर्वोपजीवक भी कही गयी है । मानव जीवन का कोई भी क्षेत्र नीति के ज्ञान से वंचित नहीं है, अछूता नहीं है । इस तथ्य की पुष्टि में आचार्य चाणक्य का कथन है –

नीतिसारं प्रवक्ष्यामि अर्थशास्त्रादि संश्रितम् ।

राजादिभ्यो हितं पुण्यमायुः स्वर्गादिदायकम् ।।

भारतीय परंपरा के अनुसार नीतिशास्त्र दो शब्दों से मिलकर बना है दृ नीति और शास्त्र । नीति शब्द संस्कृत परंपरा के अनुसार नीक्तिन् से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है – ले जाना, निर्देशन, दिग्दर्शन, प्रबन्ध आदि । नीति शब्द से यह अभिप्राय है – “वे नियम, जिन पर चलने से मनुष्य का कल्याण हो, समाज में स्थिरता और संतुलन रहे, सब प्रकार से उन्नति हो, विश्व में शांति रहे अर्थात् जिन नियमों का पालन करने से व्यक्ति और समाज दोनों का ही कल्याण हो” । नीति शब्दणीञ् प्रापणे धातु से भावार्थ मे किन् प्रत्यय द्वारा निष्पन्न शब्द है । नयनं नीतिः अर्थात् मनुष्यों को अज्ञान रूपी अन्धकार से ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले जाना ही नीति है । नीति शब्द का अर्थ असत् कर्म से निवृत्ति और सत् में प्रवृत्ति है ।

संस्कृत परंपरा के अनुसार शास्त्र शब्द शिष्यतेऽनेन इति शास्त्रम् से बना है, जिसका अर्थ है— आज्ञा, समादेश, नियम, विधि आदि । शास्त्र वह ग्रन्थ या ज्ञान की शाखा है, जिसमें हमें वस्तु के संबंध में इस प्रकार की शिक्षा मिले, जिसके द्वारा हम

जीवन और विश्व की वस्तुओं का नियंत्रण कर सके । भारतवर्ष में शास्त्र शब्द का प्रयोग लगभग उसी अर्थ में होता है, जिस अर्थ में पाश्चात्य परंपरा के विज्ञान शब्द का । विज्ञान हमें विशेष रीति से निरीक्षण और प्रयोगद्वारा प्राप्त किया जा सकता है । शास्त्र शब्द हमें विज्ञान की ही भांति साधारण ज्ञान से अधिक गहरा, निश्चित एवं सर्वव्यापी ज्ञान देता है, इसी तरह जहां विज्ञान का आधार निरीक्षक व प्रयोग है, वही शास्त्र का आधार ऋषियों का समाधिगतानुभव है । इस प्रकार शास्त्र और नीति को समाहित करते हुए भारतीय चिन्तकों ने नीतिशास्त्र की उपयोगिता प्रतिपादित की है, और स्पष्ट की है कि “नीतिशास्त्र वह शास्त्र है जो व्यक्ति और समाज को कुमार्ग से सुमार्ग की ओर ले चले , कर्तव्याकर्तव्य का बोध करवाने वाला धर्मशास्त्र ही नीतिशास्त्र होता है , नीतिशास्त्र एक प्रकार से मानव जीवन के चरित्र के मूल्यांकन की विधि है” ।

जब से मानव ने इस धरती पर जन्म लिया है, तो उसने अपने जीवन यापन करने के लिए केवल अपने भावों का ही आदान-प्रदान नहीं किया, अपितु अपनी समस्याओं के समाधानार्थ उसने रीति-रिवाज, आचार, व्यवहार, ज्ञान, अज्ञान को भी प्राप्त किया । चूंकि हमारे प्राचीनतम ग्रंथ और सृष्टि की प्रारंभिक रचना वेद है, तो वहां पर हम नीति से संबंधित उद्धरण देख सकते हैं । नीतिशास्त्र का संबंध नैतिक जीवन की समस्याओं से है, वहां से ही नीति की परंपरा प्रारंभ हुई है ।

वैदिक युग से पूर्व भी भारतवर्ष में मौखिक नैतिक शिक्षा दी जाती थी और वैदिक युग के बाद जब से लेखन कला का उद्भव हुआ, तब से लेकर आज तक नीतिविषयक इतने ग्रंथ लिखे गए कि उनका छोटे से आकार में संकलन करना कठिन है । नैतिक जीवन का इतिहास मानव की संस्कृति से ही आरंभ होता है । वेदों में देवताओं को ऋत एवं नैतिक नियमों का संरक्षक माना गया है । संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों, उपनिषदों में नीति शब्द स्वतंत्र रूप से तो उपलब्ध नहीं होता, पर किसी न किसी रूप में इसका प्रयोग अनेक स्थानों पर मिल जाता है – ऋजु नीति नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् अर्थात् मित्र और वरुण मुझे कौटिल्य रहित नीति द्वारा अभीष्ट फल दिलाएं । नीति के पहले ऋजु शब्द इस बात का आभास कराता है कि उस समय चातुर्य मिश्रित छल कपट से परिपूर्ण कुटिल नीति भी चलती थी, जिसमें ऋजु नीति की ही कामना की गई है दृ वामी वामस्य धूतयः प्रणीतिरस्तु सुनृता अर्थात् हे प्रकम्पित करने वाले मरुत देवताओं! तुम्हारी वाणी हमारे लिए खूब धन लाने वाली हो । यदा गच्छत्यसु नीति मेतामथ देवानां

वशनीर्भवाति जब यह असुनीति अर्थात् प्राणहारक देवताओं के पास पहुंचता है तब यह देवताओं का वशवर्ती बन जाता है । इन्द्रोवृत्रमवृणोच्छदध नीतिः प्रमायिनाममिनादवर्पनीतिः अर्थात् प्रबुद्ध कर्मा वाले इन्द्र ने वृत्र को घेर लिया तथा युद्ध में शत्रुओं के निवारक कर्म करने वाले इन्द्र ने युद्ध में शत्रुओं का अत्यधिक वध किया ।

यहां वर्पनीति शब्द का अर्थ महीधर ने नाना रूपधारी अर्थात् कपटी असुरों को अनेक रूप धारण कर मारनेवाला इन्द्र किया । इससे दुष्ट और आततायी लोगों के प्रति कैसी नीति अपनाई जानी चाहिए, इसका स्पष्टाभास मिलता है ।

वैदिक साहित्य में तो समासरहित नीति शब्द का प्रयोग नहीं मिलता । हमारे महाकाव्य रामायण और महाभारत में उसका पर्यायवाची नय शब्द सहस्रों स्थलों पर प्रयुक्त हुआ है । आदि महाकाव्य वाल्मीकीय रामायण के बालकाण्ड में श्रीरामचंद्र के गुणों का उल्लेख करते हुए लिखा गया है—

बुद्धिमान् नीतिमान् वाग्मी श्रीमान्छत्रुनिर्वहणः

अर्थात् श्रीरामचंद्रजी बुद्धिमान् नीतिकुशल, सुवक्ता तथा शत्रुनाशक थे । परंतु रामानुजीय टीकाकार ने नीति शब्द का अलग ही विश्लेषण किया है कि राम को ब्रह्मा आदि देवताओं को नीति सीखाने वाला, भूषण व्याख्या के अनुसार मर्यादावाला तथा तिलकटीका के अनुसार कामान्दकादि निर्दिष्ट राजनीति ज्ञाता के अर्थ में नीति तथा लोक व्यवस्था दोनों का बोध होता है । भगवान राम द्वारा भरत को उपलक्षित करके कहे गए श्लोक में राष्ट्रीय नीति का स्पष्ट चित्रण मिलता है—

नास्तिक्यमनृतं क्रोध प्रमादं दीर्घसूत्रताम् ।

एक चिन्तनमर्थानामर्थज्ञैश्च मन्त्रणम् ।

निश्चितानामनारभ्यं मन्त्रस्यापरिक्षणम् ।

मंगलस्याप्रयोगाश्च प्रत्युत्थानं सर्वतः ।

कच्चित्त्वर्जयस्यैतान् राजदोषाश्च सर्वतः ।।

इस श्लोक में भगवान राम ने नास्तिकता, अनृत, क्रोध, प्रमाद, दीर्घसूत्रता, ज्ञानवान् से न मिलना, आलस्य, इंद्रिय पराधीनता, केवल अर्थ चिंतन, निश्चित कार्य का अनारम्भ, मंत्र की अरक्षा, बुरे से मंत्रणा, मंगल का ना करना तथा सब ओर से प्रत्युत्थान, परित्याग कर स्वपक्ष में 15 तथा परपक्ष में 18 तीर्थों के विषय का विचार करना, राजा के लिए अभीष्ट बताते हुए राजनीति का दुर्लभ सार बताया है । वही इस सर्ग में धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था और राजनीति की ओर भी संकेत किया गया है

नीति विषयक चर्चा हेतु महाभारत का संकेत अवश्य करना चाहिए ।

महाभारत का नीति में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है । इसके शांतिपर्व के 59 में अध्याय में युधिष्ठिर ने भीष्म से नीतिशास्त्र का विषय पूछा है । भीष्म ने बतलाया है कि सतयुग में सृष्टि रचना के कुछ ही दिनों के बाद सभी मनुष्य पापपथ पर आचरण करने लगे और संसार में त्राहि त्राहि मच गई । देवता लोग घबराकर ब्रह्मा के पास गए और अपना दुख कह कर सुनाया, ब्रह्मा ने विश्व को पापपथ से विमुख करने हेतु तुरंत एक लाख अध्याय वाले नीतिशास्त्र की रचना कर दी, बाद में भगवान शंकर ने इसके अध्यायों की संख्या 10,000 कर दी, जिसका नाम 'शालाख्य' पड़ा । इन्द्र को फिर यह ग्रन्थ संसार के लिए बड़ा लगा । अतः उन्होंने इसका 'बाहुदत्तक' नामक और भी संक्षिप्त संस्करण तैयार किया, जिसमें 5000 अध्याय थे । बृहस्पति ने इसे और भी संक्षिप्त करके 'बार्हस्पत्य' नामक 3000 अध्याय का ग्रंथ लिखा । शुक्राचार्य को फिर भी ग्रंथ बड़ा लगा, अतः उन्होंने 1000 अध्यायों के नीतिग्रंथ 'शुक्रनीति' की रचना कर दी ।

उसके बाद महाभारत के उद्योगपर्वान्तर्गत प्रजागरपर्व के 8 अध्यायों (33-40) में धृतराष्ट्र के प्रति कहे गए विदुर के वचनों में राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक तथा वैयक्तिक नीतियों का पर्याप्त निर्देश है । यह प्रसंग विदुरनीति के नाम से प्रख्यात है ।

नीति के उद्देश्य से कालिकापुराण के 84 वें अध्याय में भी नीति की परिभाषा या उसकी सीमाओं को निश्चित करने के विषय में कुछ उपयोगी सामग्री मिलती है । इसमें महाराज सगर और नीति विशारद महर्षि औरव के बीच संवाद है । यद्यपि इसमें मुख्य रूप से राजनीति का ही वर्णन है, परंतु यह वर्णन इतना विस्तृत एवं बहुमुखी है कि उसमें अनायास ही धर्म, समाज और आचार के विषय में बहुत सी बातें आ गई हैं, जैसे औरव ने राजा को काम, क्रोध, लोभ, हर्ष, मान और मद को अत्यन्त प्रबल शत्रु समझकर उन्हें नष्ट करने की नीति का परिचय कराया है । राजा को धर्म दण्ड के अधीन रहकर निजी स्वातन्त्र्य को उन्मूल करने का आदेश भी दिया गया है । यह प्रकरण भी यह सिद्ध करता है कि पुराण काल में नीति का अभिप्राय राजनीति धर्म एवं लोक नीति रहा है, जिसमें आचरण की श्रेष्ठता का विशेष महत्त्व रहा है

महाभारत के नीति अध्यायों में विशेष रूप से लोकनीति और राजनीति दोनों का वर्णन है । स्त्री विषयक आसक्ति, जुआ, शिकार, मद्यपान, वचन की कठोरता, अत्यंत कठोर दंड देना और

धन का दुरुपयोग करना, यह सात दुखदायी दोष राजा को त्याग देने चाहिए । इनमें दृढ़ मूल राज्य भी प्रायः नष्ट हो जाते हैं । मनुष्य दिन में वह काम करें जिससे रात में सुख से रहे और 8 मास में वे कार्य करें जिसे चौमासा सुख से बीत जाएं ।

महाभारत में नीति शब्द पुष्पिकाओंमात्र में ही नहीं, मूल श्लोकों में भी उपलब्ध होता है । जैसे –

दण्डोदमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम्

गीता की संस्कृत टीकाएं अनेक विद्वानोंने की, परंतु इस श्लोक में आए हुए नीति शब्द के अर्थ में कोई वैमत्य लक्षित नहीं हुआ ।

इसी परंपरा को आगे बढ़ते हुए, वैदिक संस्कृत साहित्य और प्राचीन महाकाव्य के अनन्तर हमारे लौकिक शास्त्र के साहित्य का क्रम आता है । संस्कृत साहित्य में भी नीति शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया गया है । महाकविकुलगुरुकालिदास की रचनाओं में अनेक स्थलों पर नीति शब्द का प्रयोग हुआ है । रघुवंश महाकाव्य में शरण में आये हुए विभीषण को राक्षसाधिपति विशेषण से घोषित करने की राम की उक्ति के समय कवि का अर्थान्तरन्यास शैली में यह कथन कि समय पर काम पर लाई हुई कूटनीतियां भविष्य में फलदायिनी होती है –

तस्यै निशाचरैश्वर्यं प्रतिशुश्राव राघवः ।

काले खलु समारब्धा फलं वहन्तिनीतयः ।।

उपर्युक्त नीति राजनीति से ही संबंध रखती है । कुमारसंभव में हिमालय तथा मैना और उसकी पुत्री के वार्तालाप में भी नीति शब्द व्यवहृत हुआ है, जो सामान्य तथा राज्य संबंधी नीति दोनों पर प्रकाश डालता है ।

वहीं महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीयम् में इसी भाव को व्यक्त किया है – “व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु न मायिनः” । भारवि ने किरातार्जुनीयम् में नय शब्द को अनेक स्थलों पर व्यवहृत किया है । उनके टीकाकार मल्लिनाथ ने तो अधिकतर स्थलों पर नय का अर्थ नीति किया है, पर कहीं-कहीं राजनीति और विवेकपूर्णकृत कार्य भी किया है । जैसे दुर्योधन की गतिविधि का रहस्य जानने के लिए प्रेषित वनवासी किरात लौटकर युधिष्ठिर को सूचित करता है –

तवानुभावो यम वेदि यन्माया निगूढतत्त्वं तत्त्वं नय वर्त्मविद्विषाम् ।

भारवि ने अन्यत्र भी कहा है कि “शरीर का अलंकार पवित्र ज्ञान है, पवित्र ज्ञान का अलंकार शांति है और शांति का अलंकार पराक्रम और पराक्रम का अलंकार विवेकपूर्ण कार्य विधि द्वारा सिद्धि प्राप्ति

है” ।

श्रीहर्ष रचित नैषधीयचरितम् महाकाव्य में नल और इन्द्र के संवाद में प्रयुक्त नीति शब्द देश कालानुरूप न्याय व्यवहार का हीद्योतक है । उसमें जब नल ने इन्द्र के कपट को पहचान लिया तब उसने तदनुरूप ही व्यवहार किया, क्योंकि कुटिलों के साथ ऋजुता का व्यवहार नीति नहीं, अपितु कपटी के साथ कपटी होना ही न्याय है ।

माघ ने शिशुपालवधम् में अपनी उन्नति और शत्रु की हानि को ही नीति कहा है –

आत्मोदय पर ग्लानिर्द्वयं नीतिरितीयते ।

इस प्रकार हम पाते हैं कि हमारी परंपरा में नीति शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है, यह तो हमारी परंपरा के अनुरूप लिखे गए साहित्य में नीति का अन्वेषण था, परंतु कुछ ग्रंथ इस प्रकार भी लिखे गए जो केवल नीति पर ही आधारित थे, जिनकी रचना का लक्ष्य ही नीति प्रतिपादन था । प्रख्यात राजनीतिज्ञ चाणक्य द्वारा प्रणीत तीन पुस्तक उपलब्ध होती हैं – 1. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 2. चाणक्य सूत्र और 3. चाणक्य नीति । कौटिल्य अर्थशास्त्र में कहा गया है दृ नयानयौ दण्डनीत्या । अर्थात् राजा को उचित-अनुचित व्यवहार की शिक्षा दण्ड नीति से ग्रहण करनी चाहिए ।

चाणक्य सूत्र में कुल 541 सूत्र हैं कुछ सूत्रों में तो नीति शब्द निस्संदेह ही राजनीति का वाचक है, परन्तु एक सूत्र में वह सामान्य नीति का भी द्योतक है । यहां एक बात लक्ष्य करने की है यद्यपि इस सूत्र ग्रंथ का नामान्तरण चाणक्य राजसूत्र भी मिलता है तो भी इसमें सैकड़ों सूत्र सामान्य नीति के हैं । उनका आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता तथा दण्डनीति इन चार विद्याओं का उल्लेख करना, राजनीति का द्योतक है, जबकि चाणक्य-सार-संग्रह की भूमिका में उनका यह कथन कि मानवों की हित कामना से उस शास्त्र के वर्णन का कथन जिसमें माता के समान कल्याण करने वाली बुद्धि की वृद्धि हो और नीतिज्ञ देश काल का परीक्षण कर ले । स्पष्टतः सामान्य नीति की ओर निर्देश कर रहा है ।

शुक्रनीति में भी हमें दोनों प्रकार की नीतियां प्राप्त होती हैं । नीतिशास्त्र के फल वर्णन प्रकरण में इसे धर्म, काम तथा मोक्ष का साधन और सर्वोपजीवी एवं लोकस्थितिकारक बताने का उद्देश्य लोक या सामान्य नीति से है । इसी प्रकार तृतीय अध्याय के अतिरिक्त अन्य दो प्रथम अध्यायों का संबंध प्रत्यक्षतः राजनीति से है –

नृपस्य परमोधर्मः प्रजानां परिपालनम् ।

दुष्ट निग्रहणं नित्यं न नीत्या तौ बिना ह्युमे ।।

द्विवेदी ने अपनी पुस्तक नीतिमञ्जरी में करणीय और अकरणीय धर्म को नीति माना है, जिसका अभिप्राय लोक व्यवहार से है — एवं कर्तव्यमेवं न कर्तव्यमिव्यात्मको धर्मः सानीतिः । नीतिमयूख के नया-नयन सम्बन्धी विश्लेषण के प्रसंग में शास्त्र द्वारा निश्चित विनय के आधार पर आत्मसंयम तथा प्रजा-पालन के निर्देश का अभिप्राय भी यही निकलता है कि नीति में राजनीति तथा लोकनीति दोनों का समायोजन हो जाता है —

सदानुरक्त प्रकृतिः प्रजापालन तत्परः ।

विनीतात्मा हि नृपतिः भूयसीं श्रियमश्नुते ।।

प्रसिद्ध रचनाकार भर्तृहरि ने अपने नीतिशतक में नीति तथा नय दोनों शब्दों का प्रयोग किया है । टीकाकारों ने नयो नीति तथा नीतिनिपुणा नयविशारदा: ऐसा अर्थ कहकर यह सिद्ध कर दिया है कि नीति का अभिप्राय विवेकपूर्ण लोकोचित व्यवहार से है । भर्तृहरि द्वारा निर्दिष्ट नीति का सम्बन्ध अधिकांशतः सामान्यतः नीति से है ।

पंचतंत्र तथा हितोपदेश के ग्रन्थों को भी नीतिशास्त्र कहा गया है:-

अधीसे य इदं नित्यं नीतिशास्त्रं शृणोति च ।

न पराभवामाप्नोति शुक्रादपि कदाचन ।।

यद्यपि इन ग्रन्थों की रचना विवेकहीन और उन्मार्गगामी नृपकुमारों के शिक्षार्थ की गई थी तो भी यह निर्विवाद है कि ये सामान्य नीति से परिपूर्ण हैं, यही कारण है कि राजाओं ने इन्हें जनता में भी प्रचारित किया । 14 वीं से 18 वीं शताब्दी तक राजनीति रत्नाकर, राजनीति मयूख आदि ग्रन्थों की भी रचना हुई जो राजनीति से ही संबंधित हैं ।

निष्कर्ष — इस प्रकार उक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि नीतिपरक ग्रन्थों में नीति शब्द राजनीति के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है और सामान्य नीति के संबंध में भी । नीति विषयक प्रारंभिक ग्रन्थ केवल राजाओं की शिक्षाओं के लिए लिखे गए थे । उन ग्रन्थों में प्रसंगवश लोक-व्यवहार की भी प्रचुर सामग्री आ गई है । परवर्ती काल में प्रायः सामान्य नीति के लिए नीति शब्द और राजनीति के लिए राजनीति शब्द प्रचलित हो गया

शोध छात्र

मुकेश

शोध पर्यवेक्षक

डॉ० चंद्रलेखा

श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय,

हनुमानगढ़, राजस्थान

सम्पर्क — सूत्र — 8901497779

पत्राचार का पता

मुकेश शर्मा

राजकीय मिडिल स्कूल, कोना

गांव कोना

पो० नानकपुर, पंचकुला

हरियाणा

134102

मो० 8901497779

शोध सारांश

मेहरुन्सिा परवेज जी समकालीन दौर की एक सशक्त लेखिका हैं। उन्होंने समाज में घटित विभिन्न समस्याओं पर अपनी लेखनी चलाई है। आज इस बढ़ती हुई बौद्धिकता और भौतिकता के दौर में मानवीय संवेदनाएं जैसे क्षीण होती जा रही हैं। बाजारवाद की यह संस्कृति मनुष्य पर इस कदर हावी है कि दूसरों के दुःख, कष्ट, शोषण से उसे कोई वास्ता नहीं रहा है। वह धीरे-धीरे आत्म केंद्रित होता जा रहा है। ऐसे में साहित्य ही एकमात्र साधन है जिसके द्वारा मनुष्य के हृदय में फिर से वह संवेदनाएं जागृत किया जा सकता है। मेहरुन्सिा परवेज की यह कहानी "निर्णय" ग्रामीण समाज की समस्याएं, उनके सरल स्वभाव, सीमित संसाधनों में जीवन यापन करने की शैली, ग्रामीण समाज और शहरी समाज के बीच का अंतर, भ्रष्टाचार, रीति-रिवाजों के नाम पर नारियों को घर में बंदी बनाकर रखना आदि विभिन्न विषयों पर आधारित है। मेहरुन्सिा परवेज जी ने इस कहानी के माध्यम से ग्रामीण लोगों तथा नारियों के प्रति अपनी गहरी संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया है।

मूल आलेख

'सम' उपसर्ग के साथ 'वेदना' शब्द के संयोग से संवेदना शब्द बना है, जिसका अर्थ है दूसरों की वेदना को समान रूप से अनुभव करना। संवेदना एक नितांत मानसिक प्रक्रिया है। समाज में घटित प्रत्येक घटनाओं का प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है। उन घटनाओं के प्रतिक्रिया स्वरूप उसका हृदय दुःख, पीड़ा, क्रोध, उत्साह, विद्रोह, उल्लास जैसे विभिन्न भावनाओं से भर जाता है। यों तो यह प्रभाव सभी मनुष्यों पर पड़ता है। परन्तु रचनाकार साधारण मनुष्य से भिन्न अधिक संवेदनशील होता है। वह मानव मन की सूक्ष्म से सूक्ष्म भावनाओं को कागज पर उतारता है। हिन्दी में एक कहावत भी है – "जहां न पहुंचे रवि वहां पहुंचे कवि"। रचनाकार हाशिए पर स्थित लोगों की वेदनाओं को स्वयं अनुभव करता है तथा अपनी सृजनात्मक कला का प्रयोग करते हुए उनकी समस्याओं को वाणी प्रदान करता है। उनकी वेदनाओं को समाज के सामने प्रस्तुत करता है। लोगों में उनके प्रति संवेदना उत्पन्न करने का काम अपने साहित्य के माध्यम से करता है।

साहित्य और संवेदना पर विचार करते हुए गिरिराज किशोर जी ने लिखा है – "संवेदना सूरदास की पारस पथरी है गुण, अवगुण बिसराकर कंचन करती है। संवेदना ही है जो अनुभव को भी साधती है और पात्रों को भी। मोती, मानुस, चून के संदर्भ में जिस पानी के महत्व के परिकल्पना की गयी है, लेखक के संदर्भ में

वही संवेदना है। संवेदनहीन व्यक्ति बड़ा आदमी तो हो सकता है पर बड़ा इंसान नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए महाभारत संवेदना का सबसे बड़ा कुंड है लेकिन उससे बड़ा वह रचनाकार है जिसने इस कुंड को अपने अंदर वहन किया और फिर उसका पात्रों में वितरण करके उन्हें संसार में उतारा।" 1

मेहरुन्सिा परवेज जी इस कहानी के माध्यम से गांव में रहने वाले सीधे सरल लोगों के प्रति अपनी गहरी संवेदनाओं का अभिव्यक्त करती हैं। यह कहानी ग्रामीण समाज की समस्याएं, उनके साथ हो रहे शोषण, भ्रष्टाचार, ग्रामीण तथा शहरी सभ्यता के बीच के अंतर को दर्शाता है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहां के अधिकतर लोग गांव में रहते हैं। परन्तु दुख की बात यह है कि आजादी के इतने वर्षों के बाद भी उनके पास वह सुख सुविधा आज तक पहुंच नहीं पाई है जो उन्हें मिलना चाहिए। यह कहानी जबलपुर जिले के छोटे से गांव 'हरई' की है। दिल्ली में रहने वाली मालविका जब गांव पहुंचती है तो वह भौंचकी रह जाती है। क्योंकि वहां किसी भी प्रकार की सुविधा नहीं है। उनके पास आज तक न यातायात की सुविधा है और न ही बिजली की सुविधा है। कहानी की शुरुआत में ही इस गांव की सड़क के हालात का व्योरा देते हुए लेखिका लिखती हैं – "बरसात के कारण पुलिया टूट गई थी। गाड़ियां सब किनारे के कच्चे रास्ते से निकलकर जा रही थीं। कच्ची सड़क की मुरम, बारिश और लगातार बड़ी गाड़ियों के निकलते रहने से वहां पीस-पीसकर कीचड़-सा हो गया था, जिसके कारण बहुत मुश्किल से गाड़ियां निकल पा रही थीं।" 2

गांव में रहने वाले लोग इतने सरल होते हैं की जो कुछ उनके पास है वह उसी में ही खुश रहते हैं। यह लोग अपने अधिकारों से बेखबर हैं। सत्ताधिकारियों ने उनकी सरलता और भोलेपन का हमेशा से फायदा उठाया है। इन्हें अपने अधिकारों से बेखबर रखा है। इनका शोषण किया है। गांव के लोगों के भोलेपन को देखकर मालविका सोचती है – "गांववालों के पास आज आजादी के चीलीस बरस बाद भी करने, सोचने को कुछ नहीं है। इनसे कितना बड़ा काम लिया जा सकता है! ३३३३३३। आज चारों ओर धर्म की राजनीति तथा धर्म का प्रशासन ही प्रमुख होकर रह गया है, जिसने लगातार इनका शोषण किया है, इनके हक को मारा है और ये अपनी अधिकारों से बेखबर आज भी बरसों पुराने ढंग से जी रहे हैं।" 3

सत्ताधिकारियों ने हमेशा से आम जनता का शोषण किया है। उनके हक को मारा है। उनके पास जो सामान पहुंचनी चाहिए उसे ऊपर के अधिकारियों ने निगल लिया है। मालविका सिद्धार्थ से

पूछती है "अच्छा यहां कंट्रोल की दुकान तो होगी ही , फिर शक्कर का कोटा कहा जाता है ? राशन भी लोग कम ही खरीदते होंगे, क्योंकि सब किसान हैं। जो नहीं हैं वह मजदूरी में अनाज पा जाते होंगे, है न?" उसने पूछा । "सब ऊपर के लोग खा जाते हैं। गांव के लोग तो वैसे भी शक्कर नहीं खाते, गांव की मिठाई गुड़ जो है।" 4

परवेज जी ने इस कहानी के माध्यम से नारियों के प्रति अपनी गहरी संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया है। उनका कहना है की इस पितृसत्तात्मक समाज ने रीति-रिवाजों के नाम पर हमेशा से नारियों को बंदी बनाकर घर में रखने की साजिश किया है। उन्हें इंसान से देवी बना दिया गया है। नारी को माता, बहन, पत्नी, बेटी तो समझा गया है परंतु कभी इंसान नहीं समझा गया है। यों कहे तो उन्हें इन्हीं बंधनों में उलझा दिया गया है। वह क्या चाहती है उसे क्या पसंद है वह उसे भूल जाती है या कहे तो भुलाने के लिए मजबूर किया जाता है। वह अपने आप को भाग्य पर छोड़ देती है। कहानी की पात्र अम्मा अपने घर से कभी बाहर नहीं गई है। गांव से 2 घंटे की दूरी पर जबलपुर है। परंतु वह आज तक वहां नहीं गई है हालांकि उन्हें वहां जाने का बहुत मन है। और इस घटना से परिचित मालविका सोचती है – "पुरुष समाज ने घर, परिवार का मोह दिखाकर औरतों को सदियों से बंदी बना रखा है और वे उस अपने मालिक पुरुष से कितना डरती हैं? कभी कोई इच्छा प्रकट नहीं करती। इन्होंने जबलपुर जैसा छोटा शहर नहीं देखा, न उसने दिखाया इन्हें।" 5 यही बात तसलीमा नसरीन अपनी किताब 'औरत का कोई देश नहीं' में कहती है कि – "औरत का अपना कुछ भी नहीं होता, अपनी जो जिंदगी है वह भी औरत की नहीं। औरत पुरुष की संपत्ति होती है, सिर्फ पुरुष नहीं पुरुष शासित समाज की संपत्ति होती है।" 6

इस कहानी के माध्यम से परवेज जी ने ग्रामीण तथा शहरी सभ्यता के बीच के अंतर को भी दर्शाया है। शहर में जहां भाग दौड़ है, वही गांव में ठहराव है। गांव में रहने वाले लोगों का जीवन सरल है। जो है उसी में वह खुश रहते हैं। शहरी लोगों के पास सारी भौतिक सुख सुविधाएं हैं परंतु इतना होने के बावजूद भी उन्हें उससे ज्यादा ही चाहिए। जिसके लिए वे रात दिन भागते रहते हैं। उनके पास मानसिक शांति नहीं है। उनका जीवन संत्रास, अकेलापन, अजनबीपन जैसी समस्याओं से घिरा हुआ है। शहरी लोगों के पास एक दूसरे के लिए समय ही नहीं है। मालविका गांव में रहते हुए सोचती है कि – "शहरों में जीवन जैसे घोड़े की दौड़ – सा सरपट भागता – सा लगता है

३३३३३३३३। सिनेमा, टी.वी., वीडियो, क्लब, होटल, डांस, शॉपिंग, पार्क, नाइट शो, डे शो, और न जाने क्या-क्या ! जुलूस, हंगामे, हड़तालें यानि चारों तरफ कोलाहल – ही – कोलाहल होता है। आदमी चकरी की भांति घूमता रहता है और यहां कितनी शांति है !" 7

परवेज जी ने इस कहानी के माध्यम से पारिवारिक संवेदनाओं को भी अभिव्यक्त किया है। उन्होंने यह दर्शाया है कि किस प्रकार घर की चट्टान मां के चले जाने से घर पूरी तरह से बिखर जाता है। हमारे घरों में मांओं ने हमेशा से सबको आपस में जोड़कर रखने का प्रयत्न किया है। इसी तरह इस कहानी में भी जब तक मालविका की मां जिंदा होती है तब उसका परिवार पूरी तरह से एकत्रित होकर रहता है। सभी लोग आपस में जुड़े रहते हैं, मिलकर एक निर्णय लेते हैं। परंतु जैसे ही मां की मृत्यु हो जाती है तो सारा परिवार बिखर जाता है। सब अपने-अपने रास्ते चुन लेते हैं, सभी का रास्ता एक दूसरे से अलग हो जाता है। मालविका की मम्मी की मृत्यु के बाद उसके पिता दूसरी विवाह करना चाहते हैं भले ही इस फैसले से सभी बच्चों को ऐतराज क्यों न हो। उसका छोटा भाई प्रदीप का मेडिकल में दाखिला हो गया तो वह भी अपने रास्ते चला गया। उसकी छोटी बहन बुलबुल ने भी अपना निर्णय ले लिया कि वह हॉस्टल चली जाएगी और जब विक्रम से शादी करेगी तो टेलीग्राम से सूचित कर देगी। अंत में मालविका ने भी एक निर्णय ले लिया कि वह शहरों की दुनिया को छोड़कर गांव में जाकर रहेगी। इस प्रकार सभी अपने-अपने जिंदगी का निर्णय खुद लेने लगते हैं वह चाहे एक दूसरे के खिलाफ क्यों न हो। मालविका अपने मन में सोचती है – "मम्मी के मरने के बाद घर संकटकालीन स्थिति से गुजर रहा था। हर व्यक्ति की जैसे अपनी अलग दिशा हो गई थी। रास्ते अलग-अलग हो गए थे। पहले जब मम्मी थीं तो हर रास्ते को लौटकर उनसे मिलना जरूरी था। मम्मी चौराहा जो थीं। पर अब तो जैसे भटकी हुई दिशा ही शेष थी। कोई बंधन नहीं, कोई सहेजनेवाला नहीं था।" 8

निष्कर्ष

साहित्य समाज को एक नई दिशा प्रदान करता है। हमारे देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा गांव में रहता है। उनकी समस्याओं को दरकिनार कर समाज कभी आगे नहीं बढ़ सकता है। ऐसे में मेहरुन्निसा परवेज जी ने अपनी इस कहानी के माध्यम से गांव के लोगों के सरल स्वभाव, वहां के प्राकृतिक सौंदर्य, सादा जीवन शैली, उनकी समस्याओं, उनके भोलेपन,

उनके साथ हो रहे शोषण, नारियों को घर परिवार के नाम पर बंदी रखने की साजिश, परिवार का टूटना जैसे विषयों को उचित वाणी प्रदान की है।

1. गिरिराज किशोर, हिंदी उपन्यास और संवेदना का प्रश्न (लेख), समकालीन भारतीय साहित्य, अक्टूबर –दिसंबर, १९४८, पृष्ठ सं- १२५
2. मेहरुन्सिसा परवेज, निर्णय – (कहानी संकलन – अम्मा) , ज्ञान गंगा, दिल्ली, १९६७, पृष्ठ सं – ८३
3. मेहरुन्सिसा परवेज, निर्णय – (कहानी संकलन – अम्मा) , पृष्ठ सं – १०७-१०८
4. मेहरुन्सिसा परवेज, निर्णय – (कहानी संकलन – अम्मा) , पृष्ठ सं – ११०
5. मेहरुन्सिसा परवेज, निर्णय – (कहानी संकलन – अम्मा) , पृष्ठ संख्या – ६०
6. तसलीमा नसरीन ,औरत का कोई देश नहीं, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, २००६, पृष्ठ सं – १५५
7. मेहरुन्सिसा परवेज, निर्णय – (कहानी संकलन – अम्मा) , पृष्ठ सं – ६७
8. मेहरुन्सिसा परवेज, निर्णय – (कहानी संकलन – अम्मा) , पृष्ठ सं – ११६

श्रुतिप्रभा बारिक

शोधार्थी

रामादेवी महिला विश्वविद्यालय

भुवनेश्वर

मोबाइल नंबर- 82499 84789

पता – ब्लॉक छ4, बिल्डिंग नंबर – 281

आई.आर.सी विलेज, नयापल्ली

भुवनेश्वर, ओड़िशा ,751015

सारांश –

“संस्कृति उस समिष्ट का नाम है जिसे कोई देश, जाति या समाज अपना उद्देश्य एवं आदर्श निश्चित करके उसे प्राप्त करने के लिए मानव के आध्यात्मिक एवं शारीरिक परिष्करणों के लिए निर्धारित करता है तथा अपनाता है।” प्रसाद की दृष्टि में “संस्कृति का सामूहिक चेतना से, मानसिक शील और शिष्टाचार से तथा मनोभाव से मौलिक संबंध है।”²

भारतीय संस्कृति की अनेक विशेषताएं प्रसाद की कहानियों में सहज ही उपलब्ध हो जाती है।

अध्यात्म भावना का तत्त्व भारतीय संस्कृति में अत्यधिक महत्व रखता है। ईश्वर के प्रति अटूट आस्था एवं विश्वास आस्तिकता का व्यक्त रूप है। ईश्वर के प्रति यह विश्वास ‘नीरा’, ‘प्रतिमा’ और प्रसाद कहानियों में देखने को मिलता है। ‘नीरा’ में तो ईश्वर के प्रति विश्वास की विस्तृत व्याख्या और अडिग आस्था कि सुव्यक्त अभिव्यंजना हुई है। नीरा कहती है –

“बाबा तुम मेरी चिंता न करो। भगवान मेरी रक्षा करेंगे” और वृद्ध कहता है – ‘करेंगे बेटे’।³

‘प्रतिमा’ में भगवान में श्रद्धा और विश्वास रखने वाला कुंजनाथ कुंज बिहारी की प्रतिमा को पूजता है। सरला भी ईश्वर को सर्वशक्तिमान और सबका स्वामी समझकर शिव रूप में उसकी आराधना करती है। भगवान के प्रति यही आस्था प्रसाद कहानी में व्यक्त हुई है, जिसमें सभी पात्र भगवान पर विश्वास रखते हुए उसकी पूजा, अर्चना और वंदना करते हैं।

धार्मिक जीवन के अहिंसा और करुणा दो मुख्य स्तंभ हैं। प्रसाद पर बौद्ध धर्म का विशेष प्रभाव था। यही कारण है कि अहिंसा और करुणा की भावना उनकी कहानियों में दिखाई देती है। ‘अशोक’ ‘चक्रवर्ती का स्तंभ’ और ‘स्वर्ग के खंडहर में’ अहिंसा और करुणा की भावना हो उठी है। अशोक अपने भाई को भिक्षु रूप में मृत्यु से इतना प्रभावित होता है कि वह स्वयं करुणा और अहिंसा का प्रचारक बन जाता है। ‘चक्रवर्ती का स्तंभ’ में धर्म रक्षित और मुसलमान सैनिकों की वार्ता में, धर्म रक्षित कहता है कि –

“क्या जिस धर्म में दया नहीं, उसे भी धर्म कहोगे? जब मुसलमान सैनिकों ने वृद्ध को छोड़ दिया तब वह कहता है – चाहे मुझ बांध लो किन्तु इन सबको छोड़ दो।”⁴

यह संपूर्ण कहानी करुणा पर आश्रित है। ‘करुणा की विजय’ कहानी में तो दो भाव पात्रों का आपस में संघर्ष और उसमें करुणा की विजय दिखाई गई है। ‘जहांनारा’ में जहांनारा के लिखे

हुए पुरजे को पढ़कर क्रूर औरंगजेब भी करुणा से भर जाते हैं –

“वगैर सब्ज: न पोशद कसे मजार मरा

कि कब्रपोश गरीबां हमीं गयाह बसस्त।”⁵

वैरागी कहानी में वास्तविक त्याग का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। राग से विजित वैरागी एक युवती स्त्री को शरण देने के लिए कुटी छोड़ कर भाग जाता है, पर अतिथि बनी युवती उसी स्थान पर तपस्या में संलग्न हो जाती है। प्रसाद की अधिकांश कहानियां प्रेम प्रधान हैं और प्रेम को आधार बनाकर ही उन्होंने त्याग और बलिदान की भावना का मुख्यतः निर्देशन किया है। जिस तप का स्वरूप उन्होंने स्पष्ट किया है वह सन्यासी का तप नहीं, प्रेम योगी का तप है।

भारतीय संस्कृति में मानव जीवन की चरम सफलता परमार्थ साधना में मानी जाती है। ‘व्रतभंग’ कहानी में नंदन के माध्यम से परोपकार की भावना को मूर्त किया गया है। नन्दन जिस तन्मयता, साहस और उत्साह के साथ जन सेवा में संलग्न होता है वह दर्शनीय है। परोपकार की यही भावना ‘पाप की पराजय’ कहानी में भी परिलक्षित होती है।

अतिथि सत्कार की परंपरा भारतीय जीवन और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग रही है। अतिथि के लिए सर्वस्व समर्पण की भावना केवल भारतीय जीवन में ही उपलब्ध होती है। ‘स्वर्ग के खंडहर में’, ‘चूड़ीवाली’ और ‘ममता’ और ‘ममता’ कहानियों में तो अतिथि देव की उपासना साकार हो उठी है। अंतर्द्वंद्व से ऊपर उठकर ममता एक मुगल को आश्रय देती है और सोचती है—

“मैं ब्राह्मणी हूँ, मुझे तो अपने धर्म, अतिथि देव की उपासना, का पालन करना चाहिए।”⁶

‘चूड़ीवाली’ में सरकार के अतिथि न ग्रहण करने पर चूड़ीवाली कहती है –

“मेरी जीविका चाहे कुछ रही हो, मेरे अतिथि धर्म में बाधा न दीजिए।”⁷

अतिथि सेवा के समान ही शरणागत की रक्षा भी भारतीय परंपरा का एक महत्वपूर्ण रूप है। ‘शरणागत’ और ‘सलीम’ कहानियों में इसका जीवंत रूप दिखाई देता है। ‘शरणागत’ में एक भारतीय दंपति सिपाही विद्रोह के अवसर पर एक यूरोपीय दंपति को शरण ही नहीं देते पुत्रवधू की तरह उसे विदा भी करते हैं। ‘सलीम’ कहानी में नंदराम सलीम की केवल इस लिए रक्षा करता है क्योंकि वह उसका शरणागत है, यद्यपि सलीम क्रूर और नीच है।

आत्म गौरव का भारतीय जीवन में विशेष महत्त्व है। भिक्षा मांगना

अथवा दूसरों का अनुग्रह लेना आत्माभिमान के विपरीत कार्य समझा जाता है। 'गुदड़ी में लाल' कहानी में कृशकाय बुढ़िया रामनाथ के यहां इसलिए नौकरी करती है कि वह अपनी जीविका को अस्वीकार कर देती है। 'सालवती' कहानी की सालवती भी आत्माभिमानिनी है। वह किसी का अनुग्रह नहीं लेना चाहती।

विश्व के सभी प्राणी सुखी हो यह कामना भारतीय संस्कृति का सर्वोत्तम रूप प्रस्तुत करती है। सलीम में मानव के प्रति यही प्रेम स्पष्ट हुआ है। हिंदू-मुस्लिम ही नहीं अनेक वर्ण और धर्मों के लोग अपने इस अन्तर को भूल कर एक-दूसरे के सुख-दुःख के साथी बनते हैं। इस कहानी को सीमाप्रांत के एक छोटे से गांव को आधार बनाकर प्रस्तुत किया गया है। गांव के लोगों के आचरण को देखकर सलीम सोचता है –

“मनुष्यता का एक पक्ष वह भी है जहां वर्ण, धर्म और देश को भूल कर मनुष्य मनुष्य के लिए प्यार करता है।”⁸

वस्तुतः प्रसाद ने “अपने साहित्य के सब प्रकार के उत्पीड़न का विरोध किया है और मानव मात्र के भ्रातृत्व और प्रेम का उपदेश दिया है।”⁹

भारतीय संस्कृति की मूल धारा हिंदू संस्कृति है। उसके उच्चतम आदर्श भारत में विकसित सभी धर्म को मान्य रहे हैं। समय-समय पर उसकी विकृतियों पर भयंकर चोट भी हुई पर इस तरह वह एक स्वच्छ निरोगनी के समान उत्तरोत्तर प्रवाहित और विकसित होती गई। भारतीय संस्कृति के वर्तमान व्यापक स्वरूप के निर्माण में अनेक धर्म, जातियों और संतों तथा साधकों का योगदान रहा है। जहां भी सांस्कृतिक जीवन में विसंगतियों का दर्शन हुआ प्रसाद की दृष्टि उन पर पड़ी है और उन्होंने उनका उनकी कटु आलोचना की है। 'स्वर्ग के खंडहर' में शेख द्वारा निर्मित स्वर्ग उसकी वासनाओं की पूर्ति का साधन मात्र है। 'सलामती' नगर सुंदरी के चयन की परंपरा पर एक कठोर व्यंग्य है। मुगल संस्कृति की विलासिता के अनेक चित्र यहां पर दिखाई देते हैं। 'तानसेन' में भी जीवन के कुछ चित्र हैं, पर 'गुलाम' तो मुगल विलासिता की विकृति का सबसे क्रूर रूप चित्रित करने वाली कहानी है। 'सिकंदर की शपथ' में यवन संस्कृति के कपटी रूप को दिखाया गया है।

इस प्रकार प्रसाद की कहानियों में, उनके द्वारा रचित साहित्य की अन्य विधाओं की भांति उनके व्यापक दृष्टिकोण की अभिव्यंजना हुई है। चाहे वह दर्शन हो, समाज, चाहे राष्ट्र प्रेम हो या सांस्कृतिक जीवन की झांकी, प्रसाद की दृष्टि सब और गई है। उन्होंने प्रेम और करुणा को आधार बनाकर अपनी कहानियों

की सृष्टि की है और भारतीय जीवन की अनेक पक्षियों को दिखाया है। इतिहास की पृष्ठभूमि पर नवीनतम समस्याओं को भरने का प्रयत्न भी उन्होंने किया है। विकृतियों पर कठोर व्यंग्य करते हुए उन्होंने जीवन की उच्चतम आदर्श और मान्यताओं को भी अपनी कहानियों में अभिव्यक्ति दी है।

सन्दर्भ सूची:

1. भारतीय संस्कृति का इतिहास, पृष्ठ ६
2. काव्य-कला तथा अन्य निबंध, पृष्ठ ६
3. 'आंधी' संग्रह 'नीरा' कहानी, पृष्ठ ६४०
4. 'प्रतिध्वनि' संग्रह 'जहां नारा' कहानी, पृष्ठ ६५
5. 'छाया' संग्रह 'चक्रवर्ती का स्तम्भ' कहानी, पृष्ठ ६०५
6. 'आकाशदीप' संग्रह 'ममता' कहानी, पृष्ठ १८
7. 'आकाशदीप' संग्रह 'चूड़ीवाली' कहानी, पृष्ठ ६३४
8. 'इंद्रजाल' संग्रह 'सलीम' कहानी, पृष्ठ १०
9. प्रसाद की विचारधारा

डॉ० पुष्पा रानी
हिन्दी-विभाग
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
हरियाणा

सारांश:

ये सच है कि कुदरत ने सभी को बराबर नहीं बनाया। लेकिन इंसान को बुद्धि, विवेक और **Dialectical** क्षमता देकर कुदरत ने कुदरत से भी आगे निकलने का मौका दिया ऐसा माना जाता है कि किसी भी देश की राजनीतिक व्यवस्था उतनी ही सफल समझी जाती है जितनी वो अपनी जनता को स्वतंत्रता, सुरक्षा और सुविधाएँ देती है। ठीक उसी प्रकार जो समाज, जो **Civilization** अपनी जनता को जितनी अधिक समानता देता है वो उतना ही सभ्य समझा जाना चाहिए। अगर हम भारतीय समाज की बात करें तो यहाँ की सामाजिक व्यवस्था काफी उतार-चढ़ावों से गुजरते हुए वर्तमान स्थिति तक आकर पहुँची है जहाँ ऐसे भी दौर आए हैं जिसमें महिलाओं को समानता और सम्मान के साथ विशेष भूमिकाओं में देखा गया है वहीं इतिहास का ऐसा भी दौर रहा है जिसमें महिलाओं की स्थिति न सिर्फ कमजोर हुई बल्कि उन्हें सिर्फ एक जीवित वस्तु मान लिया गया। हालांकि समय-समय पर कितने ही महापुरुष आए और उन्होंने महिलाओं की समानता के लिए विशेष प्रयास किए। जिसका असर आज भी समाज में दिखाई देता है लेकिन महिलाओं के लिए ऐसे ठोस प्रावधानों की जरूरत थी जो उन्हें स्थाई अधिकार दे सके और देश की आज़ादी के बाद जो नए भारत का नया संविधान बना उसके संविधान निर्माताओं विशेष तौर पर बाबा साहेब अम्बेडकर के प्रयासों से संविधान में वो प्रावधान किए गए जो महिलाओं के साथ किसी भी प्रकार के भेदभाव को रोक सके। जहाँ एक तरफ बाबा साहेब अम्बेडकर के प्रयासों से लाए गए हिन्दू कोड बिल के माध्यम से महिलाओं के विभिन्न रूपों के समान अधिकार मिले वहीं दूसरी तरफ संविधान के अध्यायों 15, 16, 23, 39, 51, 343 आदि के द्वारा महिलाओं को अवसर की समानता, उनके व्यापार पर रोक, आर्थिक संसाधन और समान कार्य के लिए समान वेतन, स्त्रियों के विरुद्ध कुप्रथाओं का त्याग और बाद में 73वें, 74वें संवैधानिक संसाधनों के द्वारा स्थानीय ग्रामीण व शहरी निकायों में आरक्षण का प्रावधान किया गया। लेकिन वो सोच जो संविधान निर्माताओं के द्वारा शुरू की गई देश की आज़ादी के 77 साल बाद भी परिपक्व नहीं हो पाई है। अगर हम सरकार के विभिन्न अंगों की बात करें तो भारत की पहली लोकसभा में जहाँ 22 महिला सांसद बनी थीं वहीं वर्तमान में 74 महिला लोकसभा में पहुँची है वहीं देश के पहले मंत्रिमंडल में प्रधानमंत्री सहित 15 Ministers में से सिर्फ एक राजकुमारी अमृत कौर अहलूवालिया को Cabinet Minister बनाया गया था। आज प्रधानमंत्री सहित 31 Cabinet Ministers में से केवल 2

महिलाओं को Cabinet Minister बनाया गया है। न्यायपालिका की बात करें तो आज़ादी के चार दशकों बाद किसी महिला को सुप्रीम कोर्ट का न्यायधीश बनने का मौका मिला जो आज बढ़कर 34 में से 2 तक पहुँचा है। देश की आधी आबादी के लिए ये आँकड़े बहुत कम नज़र आते हैं। हालांकि लोकसभा व राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण देने का विधेयक भी 5 बार लाया जा चुका है लेकिन आज तक सफल नहीं हुआ। देश की दोनों बड़ी पार्टी महिलाओं के लिए आरक्षण की बात करती है लेकिन कभी भी आम सहमति नहीं बन पाती। क्योंकि हजारों वर्षों से चली आ रही जिन परम्पराओं से जो सामाजिक वातावरण बना है उसने जो हमारी मानसिकता को घड़ा है वो हमें कहीं न कहीं महिलाओं को आगे आने से रोकने के लिए कहती है।

अगर हम संवैधानिक व्यवस्था की बात करें तो अनुच्छेद 5 ये कहता है कि इस संविधान के प्रारम्भ होने पर प्रत्येक व्यक्ति जिसका भारत के राज्य क्षेत्र में अधिवास है और वो भारत के राज्य क्षेत्र में जन्मा था या जिसके माता या पिता में से कोई भी भारत के राज्य क्षेत्र में जन्मा था या जो ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले कम से कम पाँच वर्ष तक भारत के राज्य क्षेत्र में मामूली तौर से निवासी रहा है भारत का नागरिक होगा (भारत का संविधान, P, 3)। इस प्रकार उस दौरान पाकिस्तान से आने वाले लोगों के लिए प्रावधान किए गए। इसमें हम देखते हैं कि भारतीय संविधान ने सभी को समान रूप से नागरिकता दी किसी प्रकार का महिला व पुरुष के बीच भेदभाव नहीं किया गया था। संविधान का अनुच्छेद 14 सभी को कानून के समक्ष समानता का अधिकार देता है (भारत का संविधान, P, 6)। इसी प्रकार संविधान का अनुच्छेद 15 महिलाओं को लिंग के आधार पर किए जाने वाले भेदभावों से आज़ादी दिलाता है क्योंकि ये स्पष्ट करता है कि धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिबंध होगा (भारत का संविधान, P, 7)। संविधान का अनुच्छेद 16 लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता (भारत का संविधान, P, 8) का प्रावधान करके महिलाओं को सरकारी पदों से जुड़े अवसरों में पूर्ण समानता प्रदान करता है। भारत में आज़ादी से पहले और बाद में ये देखा गया कि इस देश में शिक्षा का बहुत बड़ा अभाव था काफी हद तक यहाँ कि जनता स्त्रीवादी सोच रखने के कारण लड़कियों की शिक्षा देरी में संकोच करती थी लेकिन देश का नेतृत्व यह समझता था कि महिलाओं की शिक्षा के बिना देश शिक्षित नहीं हो सकता। हालांकि समय-समय पर भारत में जन्में विभिन्न महापुरुषों ने महिलाओं की शिक्षा के लिए

बहुत प्रयास किए भारत में सावित्री बाई फुले, ज्योतिबा फुले, स्वामी दयानन्द सरस्वती आदि ने महिलाओं की शिक्षा पर न सिर्फ जोर दिया बल्कि स्वयं कई कार्यक्रम चलाकर विभिन्न शिक्षण संस्थानों की स्थापना में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया लेकिन उसके बावजूद भी सरकार द्वारा नीति निर्माण और उसके व्यावहारिक क्रियावन की भी जरूरत थी और इसी जरूरत को पूरा किया गया संविधान के अनुच्छेद 21 (क) (भारत का संविधान, P, 19) को जोड़कर जिसमें देश के सभी लड़के-लड़कियों को छह वर्ष से चौदह वर्ष की आयु तक में निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का प्रावधान किया।

भारत में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में एक बहुत बड़ी संख्या रही है और वो है मानव तस्करी की। विभिन्न देशों की सरकारों ने अपने-अपने यहाँ विभिन्न कानून बनाकर इसे रोकने का भी प्रयास किया लेकिन आज तक भी ये समस्या पूरी तरह से मिट नहीं पाई है। अगर हम भारत की ही बात करें तो यहाँ भी ये समस्या कुछ हद तक आज भी बनी हुई है। आज भी भारत में मानव तस्करी देखने को मिल जाती है। विभिन्न मानव अंगों की तस्करी के काफी उदाहरण भारत में अभी भी मिलते हैं। औरतों के मामले में ये समस्या और भी अधिक बढ़ जाती है क्योंकि औरतों का व्यापार मानव अंगों की तस्करी से कहीं ज्यादा उनको कई प्रकार के गलत धंधों में लगाने के लिए की जाती है। हालांकि हमारे संविधान निर्माताओं ने इस समस्या को समझते हुए अनुच्छेद 23 के द्वारा मानव का दुर्व्यापार और बलात्क्रम का प्रतिबंध (भारत का संविधान, P, 15) का प्रावधान करके मानव तस्करी को असंवैधानिक घोषित किया है लेकिन अभी भी ऐसी समस्याएँ गैर कानूनी ढंग से पनपती हुई मिल जाती हैं। भारत के संविधान निर्माताओं द्वारा किया गया ये प्रावधान उनकी संवेदनशीलता को दर्शाता है और हमें इस तरफ सक्रिय भूमिका निभाने का मार्ग प्रशस्त करता है। हालांकि ये भी सच है कि कई बार महिलाओं को अपने आर्थिक अभाव के चलते गलत कामों में शामिल होना पड़ता है और इस समस्या को समझते हुए संविधान निर्माताओं ने अनुच्छेद 39 (क) में स्पष्ट वर्णन किया है कि पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार है तथा साथ ही अनुच्छेद 39 (ड.) पुरुषों और स्त्री कर्मचारियों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर प्रतिकूल रोजगारों में शामिल न होना पड़े आदि का प्रावधान करके महिलाओं को आर्थिक सुरक्षा देने

की व्यवस्था की है (भारत का संविधान, P, 29)। लेकिन ये अनुच्छेद नीति निर्देशक सिद्धांतों में आने के कारण अपना कोई ठोस प्रभाव नहीं रखते क्योंकि नीति निर्देशक सिद्धांतों को मानना सरकार की इच्छा है। ये सिर्फ सरकार को निर्देश है कि यथाशक्ति अपने संसाधनों को ध्यान में रखते हुए इन्हें लागू करना चाहिए। महिलाओं को कई बार काम की जगह/स्थान पर आने वाली समस्याओं को देखते हुए संविधान में कई प्रावधान किए गए हैं हालांकि संविधान लागू होने से लेकर अब तक महिलाओं की कई प्रकार की समस्याएँ कार्यस्थल पर देखी गई हैं और उन्हें दूर करने के लिए भी समय-समय पर कई कार्यक्रम चलाए गए हैं कई कानूनी प्रावधान भी किए गए हैं। सरकार द्वारा वर्तमान में विभिन्न योजनाएँ इस संदर्भ में चलाई जा रही हैं और इन सबके लिए भारतीय संविधान का अनुच्छेद 42 निर्देश देता है कि काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का प्रावधान किया जाना चाहिए (भारत का संविधान, P, 26)। इस अनुच्छेद में महिलाओं के लिए प्रसूति सहायता का प्रावधान भी किया गया है क्योंकि ये एक महत्वपूर्ण विषय है कि महिलाओं की कम उम्र में मृत्यु का एक बड़ा कारण प्रसव के दौरान होने वाली मौत है और इसको रोकने के लिए ठोस उपायों की जरूरत है। भारतीय संविधान सरकार को महिलाओं को प्रसूति सहायता प्रदान करने की सिफारिश करके महिलाओं और नवजात शिशुओं को सुरक्षा का सही रास्ता दिखाया है। भारत और दुनिया की विभिन्न संक्रमणकालीन व्यवस्थाओं में देखा गया है कि वहाँ की राजनीतिक व्यवस्था को अपनी काफी ऊर्जा विभिन्न कुप्रथाओं को दूर करने में लगानी पड़ती है। भारत में ब्रिटिश भारत में सती प्रथा जैसी कुप्रथाओं को कानूनी रूप से अवैध घोषित करके महिलाओं के लिए अत्यधिक जरूरी कार्य किया गया हालांकि इसके लिए तत्कालीन सरकार को कई प्रकार के विरोध का भी सामना करना पड़ा और इतना ही नहीं कई भारतीय स्वतंत्रता सैनानियों ने जहाँ एक तरफ इन कुप्रथाओं को दूर करने के लिए सरकार को सराहा और उसका साथ दिया वहीं कुछ ऐसे भी थे जो सरकार के इस प्रकार के कार्यों के प्रति कोई उत्साह नहीं रखते थे बल्कि उनका मानना था अंग्रेज भारत को आजाद करें समाज सुधार हम खुद ही कर लेंगे। मगर भारत की आजादी के बाद बनने वाले नए भारत के संविधान में अनुच्छेद 51 (क) जोड़कर उसके भाग 51 (क) ड. में ये प्रावधान किया गया लोग ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के समाज के विरुद्ध हो (भारत का संविधान, P, 28)।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 243 (घ) पंचायती राज संस्थाओं और संविधान का अनुच्छेद 243 (न) नगरपालिकाओं में (भारत का संविधान, P, 129)। महिलाओं के लिए कम से कम एक तिहाई स्थान आरक्षित करने का प्रावधान करता है और इस प्रकार ये प्रावधान महिलाओं की स्थानीय स्वशासन में भागीदारी सुनिश्चित करता है। हालांकि ये भी कहा जाता है भारत के ग्रामीण परिवेश में महिलाओं को सार्वजनिक कार्यों में आगे न आने की परम्पराएँ उन पर काफी समय तक घूँघट में रहकर कार्य करने के लिए दबाव बनाती रही लेकिन फिर भी महिलाओं को मिले इस अधिकार ने उनका धीरे-धीरे महत्वपूर्ण भूमिका में आने के लिए मार्ग तैयार किया है। लेकिन अगर हम वास्तविक स्थिति देखें तो महिलाओं को अधिकार तो मिले हैं लेकिन अपनी स्थिति में वो बदलाव अभी तक नहीं आया है जो उम्मीद संविधान निर्माताओं ने लगाई थी। आज महिलाएँ लोकसभा, राज्य सभा, राज्य विधानमण्डलों, न्यायपालिका, पंचायती राज व्यवस्था, शहरी स्थानीय निकाय और यहाँ तक की मन्त्रिमण्डल में व प्रधानमंत्री तक का पद प्राप्त कर चुकी है लेकिन इसके बावजूद भी ज्यादातर जगह ये देखा गया है कि महिलाओं को सिर्फ पद पर बिठाया जाता है काम उनके परिवार के पुरुष सदस्य ही करते हैं। अक्सर विधायक, सरपंच, वार्ड मैम्बर आदि पदों पर चुनी जाने वाली महिलाएँ कई बार मुखौटा बनकर रह जाती हैं। उनके पति या पुत्र ही सारा काम संभाल रहे होते हैं। लेकिन हमेशा ऐसी स्थिति नहीं होती। कई बार ये भी देखा गया है कि महिलाओं ने विभिन्न पदों पर रहते हुए अपनी सक्रिय भूमिका निभाई है। यहाँ अगर संवैधानिक प्रावधानों के औचित्य की बात की जाए तो कुछ मामलों में निष्क्रियता के बावजूद ज्यादातर मामलों में सकारात्मक प्रभाव देखने को मिले हैं। संविधान का ये महिलाओं के साथ भेदभाव की मनाही की गई है और आज हम देखते हैं कि ये भेदभाव जो सदियों से चला आ रहा था काफी हद तक समाप्ति की ओर है। काफी महिलाओं को कई जगह मन्दिरों में प्रवेश की अनुमति नहीं थी। दक्षिण भारत में तो कई स्थलों पर महिलाओं को पूरे वस्त्र पहनने के लिए भी टैक्स देना पड़ता था। इस प्रकार की और भी कई दूषित परम्पराएँ महिलाओं को शोषण का शिकार बना रही थी उन सबको समाप्त करके संविधान ने महिलाओं के सम्मान के प्रावधान किए और उन्हें बराबरी का दर्जा दिया। आज प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है कि वो महिलाओं की गरिमा और उनके सम्मान का ध्यान रखे। इसी प्रकार सरकारी नौकरियों में अवसर की समानता और समान कार्य के लिए समान

वेतन जैसे प्रावधान करके संविधान महिलाओं की भूमिका न सिर्फ सरकारी क्षेत्र में बढ़ा रहा है बल्कि आर्थिक क्षेत्र में भी उन्हें बराबर के दर्जे पर खड़ा करना चाहता है। वैसे भी हम देखते हैं कि वर्तमान में महिलाएँ सार्वजनिक पदों पर हर क्षेत्र में स्थान प्राप्त कर रही हैं और आर्थिक क्षेत्र में भी सफल उद्यमी के तौर पर भी आगे बढ़ रही हैं। सरकारों द्वारा समय-समय पर कानून बनाकर महिलाओं के लिए सरकारी नौकरियों में विशेष छूट और विशेष आरक्षण के प्रावधान करके भी महिलाओं की भूमिका को सक्रिय बनाने का प्रयास किया गया है। आर्थिक क्षेत्र में भी महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रम चलाकर उनका योगदान बढ़ाए जाने के प्रयास विभिन्न सरकारों के द्वारा किए जा रहे हैं जो संविधान की मूल भावना के अनुरूप मजबूत सामाजिक ताना बाना बुनने का काम कर रहे हैं। वैसे भी कहा जाता है कि आर्थिक स्वतंत्रता के अभाव में राजनीतिक स्वतंत्रता और समानता एक धोखा है और भारतीय संविधान तथा सरकारों द्वारा किए गए विभिन्न विशेष प्रावधान भारत की महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता की तरफ ले जा रहे हैं। महिलाओं का चुनावी राजनीति के माध्यम से नीति निर्माण की भूमिका में पहुँचना ना सिर्फ उनके लिए एक संवैधानिक वरदान है बल्कि सदियों से चली आ रही उस धारणा को भी तोड़ता है जहाँ महिलाओं को सिर्फ घर की चार-दीवारी में सीमित भूमिकाओं में ही उचित समझा जाता था। महिलाओं को विधानमण्डलों में लाकर हमारे नए भारत के समाज ने उन्हें कार्यपालिका में सक्रिय भूमिका निभाने का रास्ता भी दे दिया है और इसका परिणाम सभी के सामने है कि वर्तमान में जहाँ एक तरफ केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में महिलाएँ पहुँची हैं वहीं कई प्रांतों की मुख्यमंत्री की भूमिका भी निभा रही हैं और सफलता के नए सोपान हासिल कर रही हैं हालांकि ये भी सच है जैसा कि इस शोधपत्र के शुरु में ही लिखा है कि महिलाएँ देश की अपनी आज़ादी के रूप में मौजूद हैं और उनकी इस संख्या को देखते हुए उनकी राजनीतिक भूमिका बहुत कम है लेकिन ये भी सच है कि जहाँ सदियों से उन्हें बहुत पीछे रखा गया वहाँ आज़ादी के 75 वर्षों में उन्हें काफी हद तक अपनी स्थिति सुधारने का मौका भी मिला है। आज महिलाओं को शिक्षा के माध्यम से भी आगे लाने का प्रयास किया जा रहा है। जहाँ एक तरफ संविधान महिलाओं को पुरुषों के बराबर शिक्षा के अवसर प्रदान करता है वहीं दूसरी तरफ समय-समय पर राष्ट्रीय सरकार और विभिन्न प्रांतों की सरकारों के द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के माध्यम से व महिलाओं को दी जा रही कई प्रकार की विशेष सुविधाओं (मानव अधिकार और

महिला 72-76) के माध्यम से उन्हें अधिकसे अधिक शिक्षित किए जाने का प्रयास किया जा रहा है और ये शिक्षा उनके लिए उच्चतम स्थान प्राप्त करने की राह बना रही है।

निष्कर्ष

आज भारतीय संस्कृति भी अपने नए स्वरूप की तरफ आगे बढ़ रही है जहाँ आधुनिकता के साथ-साथ अच्छी परम्पराओं का समायोजन दिखाई दे रहा है। जिसमें एक तरफ महिलाएँ भारतीय संस्कृति के सकारात्मक मानदंडों को अपनाकर गौरवान्वित महसूस कर रही हैं वहीं दूसरी तरफ आधुनिक जीवन शैली को अपनाकर मिलने वाली सुविधाओं का आनन्द ले रही है हालांकि ये समायोजन अभी सीमित स्तर पर ही उभर पाया है जो कि ग्रामीण पृष्ठभूमि के सम्पन्न परिवारों में और शहरी पृष्ठभूमि के पारम्परिक सोच रखने वाले परिवारों में देखने को मिल रहा है लेकिन धीरे-धीरे ये दायरा बढ़ता जा रहा है। इसी दौरान कुछ मामलों में भारतीय संस्कृति के मूल्यों को नुकसान होते भी देखा जा रहा है लेकिन इसके बावजूद भी कुल मिलाकर एक नव संस्कृति पनप रही है जो महिलाओं का स्वतंत्रता और सुविधा के साथ-साथ उनके सम्मान को भी बचाकर रखने में सक्षम दिखाई पड़ रही है और ये सब भारतीय संविधान के प्रावधानों की वजह से ही है। भारतीय संविधान महिलाओं को उस व्यवस्था से निकालना चाहता है जहाँ वो अधिकार विहीन थी। आज महिला शादी, पैंत्रिक सम्पत्ति, खानपान, रहन-सहन, व्यवसाय आदि सभी क्षेत्रों में अपनी विवेकपूर्ण और अधिकारों के साथ व्यवहार कर सकती है और जहाँ अभी नहीं कर सकती वहाँ भी धीरे-धीरे उनका सहभागिता बढ़ती जा रही है। इस प्रकार हम देखते हैं कि महिलाएँ हर क्षेत्र में बढ़ चढ़कर भाग ले रही हैं हालांकि इस सच्चाई से मना नहीं किया जा सकता कि उनकी जनसंख्या के अनुपात में उनकी स्थिति उनकी काफी कुछ माँग कर रही है लेकिन उम्मीद की जा सकती है कि धीरे-धीरे महिलाएँ अपनी वास्तविक स्थिति को इस मुकाम तक ले जाएंगी जो उन्हें हर क्षेत्र में पुरुषों के बराबर बना चुका होगा।

संदर्भ –

1. भारत का संविधान (VI edition 2011), Central Law Publications, (द्विभाषी संस्करण), Darbhanga Castle, Allahabad
2. आशारानी व्होरा, (1999), महिलाएँ और स्वराज्य, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

3. ममता चंद्रशेखर (2009), मानवाधिकार और महिलाएँ, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

डॉ. अजय कुमार
एसोसिएट प्रोफ़ेसर
राजनीतिक विज्ञान विभाग
गुरुनानक खालसा कॉलेज,
करनाल।
हरियाणा

सारांशः

संस्कृत-कथा-साहित्य विश्व का प्राचीनतम एवं लोकप्रिय साहित्य है। संस्कृत वाङ्मय में साहित्य की दृष्टि से गद्यात्मक शैली में कथा-साहित्य की रचना एक नूतन आयाम है।

वस्तुतः इस परम्परा का प्रारम्भ आचार्य बाणभट्ट के उद्भव के साथ हुआ। आचार्य बाणभट्ट ने कादम्बरी की रचना करके लौकिक साहित्य में कथाओं को, अनुसंधान कर्त्ताओं को एक विहंगम दृष्टि प्रदान की है।

आचार्य प्रमुनाथ द्विवेदी ने पूर्ववर्ती आचार्यों की इस शैली को आत्मसात् करते हुए कथा-साहित्य को अर्वाचीन में एक नई दृष्टि प्रदान की है।

द्विवेदी जी ने अपने संपूर्ण कथा-साहित्य में कथाकौमुदी, श्वेतदूर्वा, अन्तर्ध्वनि, कनकलोचन और शालिवीथी जैसी कथाओं की रचना कर एक नई दिशा प्रदान की है जो नूतन – अनुसंधान की दृष्टि से अध्येताओं को अध्ययन एवं अनुसंधान के लिए एक नई परम्परा का श्रृजन किया है।

आचार्यवर की इस साहित्यिक रचना से प्रेरित होकर कथाकौमुदी के दो शीर्षकों 'मतदानम्' व वरान्वेषणम् पर सामाजिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए समाज में व्याप्त कुरीतियों विशेषकर भ्रष्टाचार, धोखा-धड़ी, असत्य-संभाषण आदि को केन्द्र में रखकर यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया जा रहा है।

'मतदानम्' कथा वर्तमान निर्वाचन प्रणाली एवं उसमें व्याप्त भ्रष्टाचार, प्रपंच, जातिवाद ध्वनि-प्रदूषण, स्वार्थपूर्ति, अत्याचार, दुराचार आदि समस्याओं को ध्यान में रखकर प्रस्तुत किया गया है। 'भ्रष्टाचार' आज देश के लिए गंभीर संकटों में से एक है। वर्तमान समय में यह केवल सार्वजनिक व्यवस्थाओं में ही नहीं अपितु सर्वत्र एवं सर्वव्यापक हो गया है।

वर्तमान समय में 'भ्रष्टाचार' से कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा, जिसका परिणाम यह है कि यह केवल आर्थिक प्रगति एवं सामाजिक विकास को ही नुकसान नहीं पहुंचा रहा है बल्कि हमारी एकता, अखंडता और सुरक्षा को भी संकटापन्न कर रहा है।

जनसाधारण को इससे होने वाली दिक्कतें अवर्णनीय हैं, क्योंकि यह व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। शासन सत्ता में पदासीन अधिकारीगण भी पदीय दुरुपयोग, अकर्मण्यता, अनुत्तरदायी एवं संवेदनहीन होते जा रहे हैं।

आचार्य द्विवेदी जी ने 'मतदानम्' कथा में भगवान विष्णु एवं नारद को पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है एक दिन भगवान विष्णु की नींद सहसा टूट गई और वे अपने गण को बुलाकर

पूँछते हैं कि पृथ्वी पर इतना शोर क्यों हो रहा? उसने पता कर विष्णु जी को अवगत कराया कि— भगवन् पृथ्वी पर 'मतदान' की तैयारी चल रही है।

पुनः देवर्षि नारद से पूछने पर वे निर्वाचन-यज्ञ के सम्पूर्ण दोषों एवं दुराचारों पर विस्तृत रूप से विष्णु जी का ध्यान आकर्षित करते हैं।

'सभी कुरीतियों एवं दुराचारों के अधिष्ठाता के रूप में 'आज के नेता का गुणगान करते हुए नारद जी कहते हैं कि :-

“यस्तु सर्वास्ववस्थासु मनोवाक्कर्मभिः सदा।

नीयते व्यभिचारं प्रत्यात्मनः हितकाम्यया।।

मतिभ्रमं समुत्पाद्य जनानाञ्च गृहे-गृहे।

विनयः सन्नयति स्वार्थं स हि नेता

कथ्यते।। (कथाकौमुदी / मतदानम्)

व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग करते हुए नेता के दो प्रकार बताए गये हैं –सनातन और सामयिक। सनातन नेता को पारम्परिक एवं सामयिक नेता को स्वार्थ साधक बताया गया है। वर्तमान समय में नेतृत्व करता ही समाज का विनाशक बन बैठा है, वह स्वार्थ सिद्धि के लिए किसी भी राजनीतिक दल में शामिल होकर सिर्फ स्वार्थ-चिन्तन में लगा रहता है। जैसे ही उसे अनुभव होता है कि हमारी स्वार्थ पूर्ति में बाधा आ रही है वह उसी क्षण उस दल को छोड़कर दूसरे दल में चला जाता है या अपना नया दल बना लेता है।

आज भारतवर्ष में निर्वाचन भी बहुत हो रहे हैं। कहीं अध्यापक संघ, कहीं छात्रसंघ, कहीं अधिकारी संघ, कर्मचारी संघ आदि अगणित निर्वाचन हो रहे हैं। इन सभी निर्वाचनों का क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।

मतदान भी परोपकार के लिए ही होता है, लेकिन संकुचित मानसिकता के लोगों में इसका स्वरूप ही बदल दिया और राष्ट्रहित के जगह पर स्वार्थ हित की बात करने लगे।

कथा के अन्तर्गत जैसे द्रव्यदान, अन्नदान, वस्त्रदान जलदान, भूदान, गोदान, कन्यादान, विद्यादान, आदि कई प्रकार के दानों की चर्चा की गई इसी के अन्तर्गत (मतदान) का भी प्रयोग किया है।

सामाजिक विसंगतियों को ध्यान में रखते हुए कथाकार ने बताया कि पाखंड पुराण में भी मतदान की महिमा बताई गई है—

“दानं द्रव्यान्नवस्त्राणां कन्यादानं महत्फलम्

मतदानं तथैवात्र सर्वदानाद्विशिष्यते।।

(कथाकौमुदी / मतदानम्)

भारतीय संविधान में चतुर्थ स्तंभ के अन्तर्गत

‘पत्रकारिता’ का वर्णन किया गया है, इसलिए कथाकार अपने दोनों पात्रों को पृथ्वी लोक की समस्याओं को जानने के लिए अवसर के अनुकूल पत्रकार का वेष धारण करने के लिए कहता है। पत्रकार रूपी नारायण और नारद जब पृथ्वी लोक की समस्याओं को जानने के लिए भ्रमण पर निकलते हैं तो उन्हें ज्ञात होता है कि इस समय देश में बड़ी मंहगाई है और चारों ओर अत्याचार—दुराचार और भ्रष्टाचार रक्तबीज की तरह उत्पन्न हो रहे हैं। कृषकों और श्रमिकों की दुर्दशा अवर्णनीय है, कोई भी देशहित की चिन्ता नहीं करता क्योंकि जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद और अन्य बहुत से बाद राष्ट्रिय एकता को जड़ से उखाड़ने के लिए प्रयत्नशील हैं। प्रायः सभी कर्तव्यविमुख होकर केवल अधिकार चाहते हैं।

वर्तमान समय में समाज में व्याप्त कुरीतियों का यथार्थ चित्रण करते हुए द्विवेदी जी ने ठगी व धोखा धड़ी का भी बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है। ‘वरान्वेषणम्’ के अन्तर्गत कथाकार ने सामाजिक विसंगतियों जिसमें विवाह के अन्तर्गत कन्या पक्ष एवं वर पक्ष को जिन-जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है उसे ध्यान में रखकर द्विवेदी जी ने इस कथा का विस्तार किया है।

वरान्वेषणम् कथा का प्रारम्भ ही ऐसे दो पात्रों से किया गया है जो समाज के विभिन्न कुरीतियों से पूर्व परिचित हैं और धोखा-धड़ी की कला में निपुण हैं और दोनों ही स्वांग भरने में दक्ष एवं धूर्तता में बेजोड़ हैं। उन दोनों की विचारधारा ही ठग विद्या से समाज को मूर्ख बनाना है:-

‘येऽपि मायाविनो धूर्ता वंचकाः साहसप्रियाः।

मोदन्ते ते क्षितौ नूनं लक्ष्म्या

स्वयमालिङ्गिताः।’ (कथाकौमुदी/वरान्वेषणम्)

इस पृथ्वी पर वही खुश है जो धूर्तता के साथ-साथ मायावी एवं ठग विद्या में निपुण है। यह इस बात की ओर संकेत करता है कि आज हमारा समाज अपनी खुशियों को प्राप्त करने हेतु किसी को भी धोखा देना व अपनी स्वार्थ सिद्धि कर लेने में ही अपने को चतुर समझता है।

आचार्य द्विवेदी जी ने कन्या विवाह में होने वाली कठिनाइयों एवं समाज में कन्या को लेकर उनके प्रति जो लोगों की विचारधारा है उसका भी यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। यथा: -

पुत्रीति जाता महतीह चिन्ता,
कस्मै प्रदेयेति महान् विर्तकः।

दन्ता सुखं प्राप्स्यति वा न वेति

कन्या पितृत्वं खलु नाम

कष्टम्।। (कथाकौमुदी/वरान्वेषणम्)

कन्या जब विवाह के योग्य होती है तब उसके लिए सुयोग्य वर ढूँढना भी पिता के लिए एक गंभीर समस्या बन जाती है। कन्या कौन-कौन देश नहीं दिखाती? बिना मतलब के आदमी से भी धिधियाना पड़ता है। द्विवेदी जी कहते हैं कि जैसे रोगी वैद्य के पीछे भागता है ठीक उसी प्रकार कन्या का

पिता भी लोगों से जानकारी लेकर यहाँ-वहाँ लड़का खोजता हुआ भटकता रहता है।

यथाऽर्त्ताऽतुरो येन केनापि सूचितं यं कमपि
वैद्यमनुधावति तथैव कन्यायाः पिताऽपि

जनैर्विदितवृत्तान्तो यत्र तत्र वरान्वेषणं

कुर्वन्नटति। (कथाकौमुदी/वरान्वेषणम्)

यह कथा मनोरंजन की दृष्टि से तो लोगों को आकर्षित करती है लेकिन इन घटनाओं का समाज पर व्यापक एवं गहरा प्रभाव पड़ता है। समाज में नैतिक मूल्यों का पतन होने से लोग अपने स्वार्थ के लिए किसी भी हद तक जाने के लिए तैयार हो जाते हैं, जिससे लोगों का एक दूसरे पर से विश्वास उठ जाता है।

‘इस कथा में कथाकार समाज के उस दृश्य पर प्रकाश डाला है जहाँ व्यक्ति एक दूसरे पर अपनी-अपनी शर्तों पर विश्वास कर लेते हैं लेकिन उसके दुष्परिणाम को नजर अंदाज करते हैं। कभी भी किसी अनजान व्यक्ति पर भले ही वह मधुर वाणी से अपनी ओर आकर्षित करें लेकिन बिना परख किए उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए।

वस्तुतः भ्रष्टाचार एवं सामाजिक कुरीतियाँ ऐसे जटिल और बहुआयामी मुद्दे हैं जो भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित करते हैं। ये न केवल व्यक्तिगत नैतिकता और कानूनी व्यवस्था के लिए चुनौती प्रस्तुत करते हैं बल्कि देश की प्रगति, शासन और मानव जीवन पर भी व्यापक नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

भ्रष्टाचार, हानिकारक प्रथाएँ या मान्यताएँ, सामाजिक कुरीतियाँ ये सभी समाज के कल्याण और प्रगति के लिए हानिकारक हैं जो प्रायः ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सन्दर्भों में गहराई से निहित होती हैं। राजनीतिक भ्रष्टाचार में राजनेताओं द्वारा निजी लाभ के लिए शक्ति का दुरुपयोग शामिल है, जिसमें अवैध राजनीतिक वित्तपोषण चुनावी घोखाधड़ी और राज्य संसाधनों का दुरुपयोग शामिल है।

आचार्यवर के कथा-साहित्य में जीवन की यथार्थ घटनाओं का सजीव चित्रण किया गया है। मानव-चित्त में उत्पन्न होने वाले विविध प्रकार के संवेगों के साथ-साथ तत्कालीन समाज में घटित होने वाली घटनाओं से पात्र किस तरह प्रभावित होते हैं और उनके मनमें नैसर्गिक रूप से सामाजिक कुरीतियाँ, भ्रष्टाचार, चाटुकारिता, प्रलोभन एक महत्वपूर्ण सम्प्रत्यय है जो मानव के व्यक्तित्व के चारित्रिक हनन में महत्वपूर्ण भूमिका उत्पन्न करता है।

आपका कथा-साहित्य अनुसंधान की प्रबल संभावना को उद्भूत करता है। यद्यपि इसकी सीमायें भी हैं

जिसके अन्तर्गत मानव व्यक्तित्व के नकारात्मक पक्ष अत्यधिक दिखाई पड़ते हैं जिसमें पाठक को पढ़कर यही ज्ञात होता है कि व्यक्तित्व को पात्रों की भूमिकाओं द्वारा संकुचित किया गया है लेकिन दूसरे पक्ष से अनुसंधान करने पर यह भी ज्ञात होता है कि सामाजिक कुरीतियों को स्वीकार करके सकारात्मक सोच के साथ जीवन में एक दिव्य-दृष्टि की प्राप्ति होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

1. कथा कौमुदी – प्रो० प्रभुनाथ द्विवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर।
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास— आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, वाराणसी।
3. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास— डॉ० राधा बल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
4. संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास— (सप्तम् खण्ड)— आचार्य बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ।

पता—

कमलेश कुमार उपाध्याय

ग्राम—गंगाउत्त, पो०—मेवली

जिला — मीरजापुर (उ०प्र०)

मो०नं० 7376739374

ई मेल— kamleshmzp86@gmail.com

सारांश:

प्रत्येक अवस्था में शक्ति के प्रवाह को समझना व उसके प्रभाव को दृष्टिगत करना अत्यन्त आवश्यक है। शक्ति के विविध आयाम होते हैं। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, धार्मिक या फिर व्यक्तिगत या सामूहिक शक्ति का प्रतिमान भिन्न-भिन्न परिलक्षित होता है। जनशक्ति, सैन्यशक्ति, साम्राज्य शक्ति आदि के आधार पर ही सत्ता का रूपान्तरण व अभिरूप दर्शाया जा सकता है। शक्ति व्यवहार का वह महत्वपूर्ण केन्द्र बिन्दु है जिस प्रकार सम्पूर्ण व्यवस्था का घूर्णन संभव हो पाता है। शक्ति क्षेत्रीय व लम्बत् दोनों ही प्रकार में अपना महत्व रखती है। शक्ति आन्तरिक व बाह्य दोनों प्रतिबिम्बों में अवश्यम्भावी होती है। शक्ति, सत्ता व प्रभाव परस्पर परिपूरकता व अन्तर्सम्बद्धता लिए हुए है। शक्ति के माध्यम से समाज की आधारभूत व्यवस्था को अध्ययनगत किया जा सकता है। शक्ति एक साधन भी है और साध्य भी है। दोनों ही प्रतिमानों में शक्ति का प्रवाह प्रभावपूर्ण ढंग से निर्धारित होता है।

शक्ति राजनीतिक विज्ञान का एक महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र होते हुए विवादों से भी परिपूर्ण रहा है। शक्ति सदैव प्रच्छन्न रूप में रहती है, कभी भी स्वयं को यथारूप में प्रकट नहीं करती। शक्ति के प्रकरन रूप अपने स्वरूप में ही शक्ति को परिभाषित करते हैं जैसे सत्ता व प्रभाव। शक्ति का उद्देश्य या उपयोग रचनात्मक अथवा विध्वंसात्मक हो सकते हैं अर्थात् शक्ति नकारात्मक व सकारात्मक दोनों ही रूपों में परिलक्षित हो सकती है। व्यापक दृष्टिकोण में शक्ति एक सर्वत्र पाया जाने वाला मानवीय सम्बन्ध है। उसमें शक्ति के सभी रूपों का समायोजन संभव हो सकता है। शक्ति विविधता रूपेण होती है और स्पष्टतः इसी कारण उसका मापन भी कठिन व भ्रमित हो सकता है। गुप्तता, विभिन्न कारकों की संश्लिष्टता तथा अस्पष्टता आदि कठिनाइयाँ उत्पन्न कर देती है।

शक्ति एवं प्रभाव दोनों प्रभावित व्यक्ति के व्यवहार को परिवर्तित करते हैं। किन्तु वह व्यक्ति, शक्ति के अनुसार परिवर्तित हुआ या प्रभाव के अनुसार, इसका निर्णय वह व्यक्ति ही कर सकता है। ये दोनों एक-दूसरे के लिए वर्द्धनकारी भी हो सकते हैं। प्रभुत्व मनोवैज्ञानिक अवधारणा है, जो व्यक्ति की प्रकृति तथा उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। वैसे ही शक्ति बल का पर्याय नहीं है। शक्ति प्रच्छन्न बल है और बल प्रकट शक्ति। शक्ति की पृष्ठभूमि में बल रह सकता है, किन्तु वह अलग अस्तित्व लिए भी होता है। इसी प्रकार हम शक्ति व सत्ता का विवेचन करें तो सत्ता आदेश देने का अधिकार है, जबकि शक्ति आदेश देने की क्षमता है। शक्ति सत्ता के

अभाव में असंस्थाकृत रहती है। जबकि सत्ता संस्थाकृत होने के कारण अपने विषय-क्षेत्र, लक्षणों तथा विस्तार की दृष्टि से निश्चित होती है। सम्प्रभुता की कानूनी अवधारणा वास्तव में शक्ति के सन्निकट प्रतीत होती है।

भारत में राजनीतिक विज्ञान के जन्म कौटिल्य ने दण्ड शक्ति को राजनीति का मूल आधार माना है। राजनीतिशास्त्र में शक्ति की अवधारणा नवीन है। सुकरात, प्लेटों, थ्रेसीमेक्स, अरस्तु, हॉब्स, मैकियावली आदि ने स्वीकार किया है।

राज्य के शक्ति सिद्धांत का प्रतिपादन सबसे पहले जर्मनी में 19वीं शताब्दी में ट्रिटस्के तथा नीयाज, जैसे विद्वानों द्वारा किया गया।

20वीं शताब्दी 1911 में कॉफमैन ने लिखा कि, "राजनीति का सत्त्व शक्ति के विकास, उसकी वृद्धि और उसके प्रदर्शन में है, जिसके साथ अपने को बनाए रखने और दूसरों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने की दृढ़ इच्छा भी सम्मिलित है।"

शक्ति के आयाम :

1. वास्तविक शक्ति : (पद में या व्यक्ति में)

चूंकि शक्ति व्यक्तिगत होती है। व्यक्तिगत संदर्भ में शक्ति अर्जन की क्षमता पर आधारित होती है। पद में शक्ति-सत्ता के रूप में पाई जाती है। (जैसे प्रधानमंत्री का पद जो कि स्वतः ही शक्तिमान है।) अतः शक्ति व्यक्ति व पद दोनों का हो सकती है। सत्ता में शक्ति अनिवार्य रूप निहित होती है।

शक्ति पद में होगी या व्यक्ति में इस निश्चय करना या पूर्वाग्रह देना केवल बचकानी है। अतः पद में शक्ति अनिवार्य है जबकि शक्ति के पदों का होना जरूरी नहीं है।

2. शक्ति उपकरण के रूप में :

शक्ति होकर एक साधन है, उपकरण है। अर्थात् वे निश्चित साध्य की प्राप्ति हेतु एक उपादान रूप में शक्ति हमारी सहायक होती है।

3. सम्बन्ध के रूप में शक्ति :

आवश्यकता, समय, प्रचलन, परिस्थिति आदि के आधार पर शक्ति समझा जाता है। शक्ति एक (Relative Term) में रहती है। (जैसे - गली का कुत्ता गली में शेर होता है)। किसी घटना, प्रक्रिया आदि के साथ शक्ति को जोड़कर सम्बन्ध स्थापित करना।

शक्ति की परिभाषाएं :

लॉसवेल :

“शक्ति का अर्थ अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह की वह क्षमता जो आपकी इच्छानुसार दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार बदलती है।”

सी. जे. फ्रेडरिक – “राजनीतिक शक्ति का अर्थ हैं व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की वह क्षमता जिसके अनुसार अन्य व्यक्ति अपनी इच्छानुसार ना चलकर शक्ति सम्पन्न की इच्छानुसार व्यवहार करते हैं।”

कैटलिन – “अपने संकल्पों को कार्यान्वित करने की सामान्य इच्छा सभी में होती है। वह अपनी व लक्ष्य को करने का मुख्य अभिकर्ता होता है। इस प्राप्ति में स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है। शक्ति उस प्राप्ति का नाम है।”

सूजना लेविल – “प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में तानाशाह निवास करता है।”

हॉब्स – “सभी मनुष्यों में शक्ति प्राप्त करने की ‘हब्स’ (उर्दू शब्द) होती है। और ये हब्स उसे एक शक्ति के बाद दूसरी शक्ति के पीछे दौड़ाती रहती है। इस दौड़ व अन्त मृत्यु से ही होता है।”

बट्रेण्ड रसल – “शक्ति इच्छित प्रभावों की उपज है।”

शक्ति अभिव्यक्ति के रूप :

1. शक्ति प्रभाव प्रक्रिया के रूप में
2. शक्ति बल प्रयोग के रूप में
3. शक्ति नियंत्रण के रूप में
4. शक्ति सामान्य प्रवृत्ति के रूप में
5. शक्ति सम्भावना के रूप में
6. शक्ति संकल्प (उद्घोषित लक्ष्य प्राप्ति) के रूप में
7. शक्ति निहित अर्थों के रूप में
8. शक्ति सांझेदारी के रूप में
9. शक्ति सहमती व सहयोग के रूप में
10. शक्ति मूल्य (सत्य, न्याय, औचित्यपूर्णता आदि के साथ शक्ति) के रूप में **शक्ति की आवश्यक शर्तें**

:

व्यक्ति अर्थात् अनुयायियों की आवश्यकता – शक्ति एक बहुआयामी धारणा है। शक्ति को पूर्ण व भावी बनाने हेतु शक्ति के अन्य रूपों की आवश्यकता होती है।

औचित्य की आवश्यकता :

शक्ति को कुछ समय बाद अपना औचित्य सिद्ध करना होता है। वरना उसका प्रभाव कम होने लगता है।

शक्ति संचयन की आवश्यकता :

शक्ति की स्वरूप :

1. व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करने का प्रतीक
2. शक्ति व्यक्ति व समूह के संघर्ष का बिन्दू है।
3. व्यक्ति की सर्वोच्च इच्छा का नाम शक्ति है।
4. शासन व्यवस्था में शक्ति शासक की इच्छा का अन्तिम रूप है।
5. शक्ति का अस्तित्व प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष होता है।
6. शक्ति में पदसोपानीय व्यवस्था ही पाई जाती है। शक्ति के साथ बल या दण्ड आवश्यक रूप से जुड़ा हुआ है। (भूत या भविष्य का भय)
7. शक्ति राज्य के सम्पूर्ण कार्य का प्रतीक है।
8. शक्ति संगठन का प्रतीक हैं।
9. शक्ति समाज को सुव्यवस्थित रखने का साधन (कानून व संगठन के माध्यम से)
10. शक्ति राजनीति का अन्तिम लक्ष्य है।
11. शक्ति के रूप परिवर्तित होते रहते हैं।

क्षेत्रीय आधार पर राष्ट्रीय – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रभाव की क्षमता शक्ति है।

शक्ति के आधार

(1) अधिनायकवादी शासन व्यवस्थाओं में :

“Obey the order follow the leader”

1. बल प्रयोग
2. हिंसा
3. कठोर उपाय
4. दण्ड
5. भय

(2) लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में :

1. प्रभाव
2. नेतृत्व
3. औचित्यपूर्णता
4. आज्ञापालन
5. सहमति।

शक्ति के स्रोत :

1. प्रत्यक्ष स्रोत :

निश्चित उद्गम स्थल के प्रवाहित होकर निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति। व्यक्तित्व, नेतृत्व, संगठन, सत्ता, धन, ज्ञान, संचार साधन।

2. अप्रत्यक्ष स्त्रोत :

आत्मज्ञान, बुद्धि, प्रभाव, आदेश, सम्प्रभुता आदि ।

3. सामान्य स्त्रोत :

1. सत्ता
2. धन व बल
3. व्यक्तित्व
4. ज्ञान
5. संगठन
6. संचार साधन
7. वैचारिक आधार
8. निजी आकर्षण – प्रेम या करिश्मा
9. विश्वास, भक्ति व आदर

टेनिसन :

“आत्म नियंत्रण, आत्म ज्ञान और आत्म सम्मान यह तीन ही जीवन को संप्रभु शक्ति की ओर संचालित करती है ।”

लासवेल :

“शक्ति वितरणात्मक है और राघ-वितान का लक्ष्य यह निर्धारित करना है कि उसका वितरण कैसे विकसित आधार पर हो ।”

शक्ति के प्रकार :

(1) व्यवहार परिवर्तन के आधार पर – (गोल्ड हैमर व एडवर्ड के अनुसार)

(i) बल (ii) प्रभुत्व (iii) छल योजना व कपट ।

(2) औचित्यपूर्णता के आधार पर :

तर्क, नैतिकता, सत्यता ।

(3) मैक्सवेबर के अनुसार –

(1) कानूनी शक्ति (2) परम्परागत शक्ति (3) बुनियावादी

(4) वायर्ड स्टेडके अनुसार :

1. अदृश्य-दृश्य शक्ति
2. दमनकारी-अदमनकारी शक्ति
3. औपचारिक-अनौपचारिक शक्ति अनिश्चित होती है ।
4. प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष शक्ति अनिश्चित होती है ।
5. शक्ति प्रवाह के रूप में (एकपक्षीय या)
6. केन्द्रीकृत-विकेन्द्रीकृत के रूप में शक्ति
7. क्षेत्रीय आधार पर स्थानीय, राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति ।

(5) मूल्यों के आधार पर शक्ति :

1. सकारात्मक शक्ति (इच्छा व सहमति)
2. नकारात्मक शक्ति (बल प्रयोग व दमन)

(6) मात्रा के आधार पर :

1. महाशक्ति
2. मध्य शक्ति
3. निम्न शक्ति

(7) प्रयोग व परिणाम के आधार पर :

1. इच्छित
2. अनिच्छित

शक्ति की सीमाएं व प्रयोग :

शक्ति का प्रयोग कभी भी निरपेक्ष या असीमित नहीं होता । यह सर्वदा सापेक्ष होती है । शक्ति के प्रयोग की सीमाएं होती हैं । जो इतिहास, परम्परा, सहमति, स्वीकृति, राजनीतिक विकास नैतिकता, दबाव आदि पर निर्भर करती हैं । ये सीमाएं शक्ति प्रयोगकर्ता की क्षमता, उद्देश्यों, पारस्परिक संबंधों, प्रतियोगिता, कार्य पद्धतियां आदि पर निर्भर करती हैं ।

जहां इसका आधार-जनसहमति व उद्देश्य-जनहित तथा प्रयोग का तरीका-संवैधानिक है वहाँ इसकी सफलता निश्चित है । शक्ति के प्रयोग व औचित्य उसकी सफलता की कुंजी है । जहां इसके मूल्य व उद्देश्य औचित्यपूर्ण नहीं हैं वहां विफलता निश्चित है ।

शक्ति, प्रभाव, सत्ता

शक्ति व प्रभाव में समानता :

बचराज व बारज के अनुसार –

1. दोनों बौद्धिक और सम्बन्धात्मक है ।
2. दोनों एक-दूसरे को सुदृढ़ करती हैं ।
3. दोनों औचित्यपूर्ण होने से प्रभावशाली होते हैं ।
4. दोनों व्यवहार में परिवर्तन करते हैं ।

असमानता :

1. शक्ति दमनात्मक है प्रभाव अनुनयात्मक
2. शक्ति स्वतंत्र प्रकृति की प्रभाव संबंधात्मक
3. शक्ति अलोकतांत्रिक प्रभाव लोकतांत्रिक
4. शक्ति सीमित, प्रभाव असीमित
5. शक्ति बाहरी तत्त्व, प्रभाव आन्तरिक

(शक्ति मौलिक इच्छा का दमन कर वांछित स्थापित करती है जबकि प्रभाव स्वैच्छिक ।

शक्ति व सत्ता :

1. शक्ति का अस्तित्व सत्ता के बिना लम्बे समय तक नहीं ।
2. सत्ता बल के अभाव में भी कायम जबकि शक्ति बल के अभाव में कायम नहीं ।
3. शक्ति असंस्थागत, असाधनात्मक, अनिश्चित जबकि सत्ता संस्थागत, साधनात्मक, निश्चित ।
4. शक्ति का प्रत्यायोजन संभव नहीं जबकि सत्ता का प्रत्यायोजन संभव ।
5. शक्ति में स्वविवेक का प्रभाव जबकि सत्ता में स्वविवेक का अभाव ।
6. पद में शक्ति अनिवार्य हैं जबकि शक्ति में पदों का होना अनिवार्य नहीं हैं ।
7. सत्ता में निर्देशित कार्य करना होता है जब शक्ति में स्वैच्छिक ।

फ्रैडिक :

सत्ता शक्ति की एक प्रकार बल्कि एक ऐसी वस्तु हैं जो शक्ति के साथ चलती है । सत्ता व्यक्तियों में वस्तुओं में एक गुण हैं जो उनकी शक्ति में करता है । सत्ता ऐसी प्रकृति है जो शक्ति के उत्पन्न करती है परन्तु स्वयं शक्ति नहीं हैं ।

सत्ता :

अर्थ व परिभाषा :

सत्ता (अथारिटी) शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा "आक्टोरिटास" से हुई है जिसका अर्थ हैं — बढ़ाना । सत्ता वह गुण हैं जो इच्छा, संकल्प या पसन्द को विवेक के साथ जोड़कर उसका विस्तार करती है ।

1. शासन व्यवस्था में अनुशासन, समन्वय, सामंजस्य और निर्णय की स्थापना की स्थिति का नाम ही सत्ता है ।
2. सत्ता में औचित्यपूर्णता, विश्वास, तर्क आदि का समावेश ।
3. यह उच्च स्तर से निम्न स्तर को आदेश जारी करने व पालना की व्यवस्था है ।
4. सत्ता शक्ति व अधिकार प्रदान करती हैं ।
5. सत्ता व्यवस्था की क्षमता का प्रतीक हैं ।

बार्थयडेड :

"सत्ता शक्ति के प्रयोग का संस्थात्मक अधिकार है ।"

बीच :

"दूसरों के कार्य—निष्पादन को प्रभावित या निर्देशित

करने के औचित्यपूर्ण अधिकार को सत्ता कहते हैं ।"

बट्रेण्ड :

"व्यक्ति की वह योग्यता है जिसके द्वारा वह अपने प्रस्तावों को सवीकार करता है ।"

जैक्यूस मैरिटेन :

नेतृत्व एवं आदेश देने दूसरों के द्वारा सुनें जाने एवं आज्ञापालन के अधिकार को सत्ता कहते हैं ।

हर्बर्ट साइमन :

"सत्ता का अस्तित्व तब तक ही जाता है जब तक कि वरिष्ठ कार्य व अधीनस्थ कार्मिक के बीच कोई व्यवहार हो यदि अधीनस्थ कार्मिक का व्यवहार परिवर्तित नहीं होता तो सत्ता का अस्तित्व नहीं है । यदि व्यवहार में परिवार होता है तो सिद्धांत और व्यवहार में सत्ता का अर्थ होता । ऐसी सत्ता में दो प्रकार की व्यवस्था होती है । 1. अनुपालन की आशा 2. अनुपालन की इच्छा ।

सत्ता के तर्क और विशेषताएं :

1. सत्ता में कानूनी वैज्ञानिकता
2. सर्वोच्च सत्ता सर्वोच्च शिखर पर पाई जाती हैं ।
3. सत्ता सार्वजनिक कल्याण के कार्यों की संचार
4. सत्ता में नौकरशाही का अस्तित्व
5. सत्ता आदेश देने और उसका पालन करवाने का प्रतीक
6. सत्ता में कार्य को सम्पन्न करवाने की शक्ति
7. सत्ता संगठनात्मक एवं प्रशासनिक व्यवस्था करती है ।
8. सत्ता राजनीतिक व शक्ति का दूसरा नाम है ।
9. सत्ता नियंत्रण के साथ समन्वय कायम करती है ।
10. सत्ता मानवीय व्यवहार को मनोवैज्ञानिक रूप बदलने व अनुकूल करने में सक्षम है ।
11. सत्ता नेतृत्व द्वारा अभिव्यक्त व क्रियान्वित
12. सत्ता में उच्च व अधीनस्थ का संबंध आ जाने देने और कार्य सम्पादन का निर्देश देने के लिए ।
13. सत्ता शासन व्यवस्था की विभिन्न क्रियाओं को.....

सत्ता के प्रकार — मैक्सवेबर के अनुसार

1. परम्परागत सत्ता
2. कानूनी या वैधानिक सत्ता
3. करिश्मावादी सत्ता

अन्य प्रकार —

1. सरकारी अंगों की सत्ता
2. स्थानीय, प्रान्तीय, राष्ट्रीय, अं. स्तर की सत्ता
3. संविधान, विधि, अध्यादेशों के द्वारा सत्ता
4. सामाजिक, आर्थिक, राज. व सांस्कृतिक रूप में सत्ता
5. एकल, बहुल और मण्डलात्मक सत्ता
6. केन्द्रीकृत और विकेन्द्रीकृत सत्ता

सत्ता की प्रकृति :

औपचारिक सत्ता का सिद्धांत

1. सत्ता सर्वोच्च शिखर पर स्थित होती है ।
2. सत्ता का प्रवाह ऊपर से नीचे की ओर
3. पदसोपानीय व्यवस्था
4. आदेश प्रसारण, नियंत्रण तथा आज्ञापालन
5. पूर्णतः कानूनी व वैधानिक सत्ता का रूप

सत्ता की स्वीकृति का सिद्धांत :

1. जो आदेश, सूचना प्रसारित की जाती है कार्मिक उसे समझने में समर्थ है या नहीं ।
2. कार्मिक को निर्णय ग्रहण करते समय यह विश्वास होना चाहिए कि संगठन के उद्देश्य आदेश के उद्देश्य में तालमेल है ।
3. कार्मिक समग्रता से सोचकर व्यक्तिगत हित के अनुरूप आदेश को स्वीकृति प्रदान करता है ।
4. मानसिक व शारीरिक रूप से कार्मिक आधार की पालना में सक्षम हो ।

स्वीकृति सिद्धांत के लिए संस्थागत को सम्पन्न करवाने की अवधारणा से संबंधित है ।

सत्ता के कार्य :

1. सत्ता स्थायी रहकर प्राथमिकता के आधार कार्य सम्पन्न करती है ।
2. सत्ता के कार्यों में अनुशसन, त्यागयोजन, नियंत्रण व समन्वय आदि सम्मिलित है ।

हर्बर्ट साइमन ने सत्ता के मुख्य तीन कार्य बताए :

1. सत्ता उत्तरदायित्व सौंपती है ।
2. सत्ता नीति-निर्धारित करते हुए कानून निर्माण करती है ।
3. निर्मित निर्णय व कानूनों को लागू करती है ।

सत्ता का विस्तार व्यापक स्तर पर है ।

सत्ता की सीमाएं :

1. राज., सामा. आर्थिक क्षेत्र में मूल्यों, आदर मर्यादाओं व परम्पराओं की सीमाएं ।
2. नैतिकता की सीमा
3. सत्ता जन आकांक्षा के अनुकूल होनी चाहिए ।
4. व्यक्ति को स्वतंत्रता, समानता, न्याय के जीवन से वंचित नहीं करना चाहिए ।
5. सत्ता के दुरुपयोग के साथ दण्ड व्यवस्था जुड़ी हुई है ।
6. सत्ता भेदभाव उत्पन्न नहीं कर सकती ।
7. सत्ता संवैधानिक, कानूनी, वैधानिक व राष्ट्रीय परम्पराओं का पालन करती है ।
8. सत्ता दबाव समूह व संगठन या संघ के हितों की उपेक्षा नहीं करती ।
9. सत्ता नौकरशाही के हितों का उल्लंघन नहीं करती ।
10. सत्ता का दुरुपयोग पद व शक्ति के रूप में नहीं किया जा सकता ।

मूल्यांकन स्वरूप यह कह सकते हैं कि सत्ता स्वतंत्र पूरक है । यह अपने आप में कोई अधिकार या शक्ति होते हुए भी यह इनके बिना रह सकती है । सत्ता प्राप्त हुए कर एक अयोग्य एवं प्रभावहीन व्यक्ति आदेश देने की क्षमता प्राप्त कर लेता है । प्रभाव सत्ता के भेद को नेता व शासक के उदाहरण स्पष्ट किया जा सकता है । नेता का प्रभाव उसके नेतृत्व की योग्यता है । शासक की सत्ता औपचारिक और संस्थागत है ।

प्रभाव व सत्ता में अन्तर :

1. प्रभाव अनौपचारिक, असंस्थागत, असीमित व सत्ता औपचारिक, संस्थागत एवं सीमित
2. प्रभाव गुप्त तथा अस्पष्ट जबकि सत्ता प्रत्यक्ष तथा निश्चित
3. प्रभाव-व्यक्तिनिष्ठ, सत्ता-वस्तुनिष्ठ ।
4. प्रभावक व प्रभावित व्यक्ति में उद्देश्यों मूल्यों में समानता होने से फल मिलता है जबकि सत्ता में वरिष्ठता-कनिष्ठता उच्चतर निम्नतर, प्राधिकारी-अधीनस्थ आदि के प्रकार विद्यमान ।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. प्रो. वर्मा, एस.एल.- उच्चतर आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त

नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2002

2. गेना, सी.बी. – तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ विकास पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, तृतीय संस्करण, 2003

3. आशीर्वादम् एडी – राजनीति विज्ञान
मिश्र कृष्णकान्त (संशोधित एवं परिवर्तित संस्करण)
एस. चन्द्र एवं कम्पनी लि. नई दिल्ली, 2002

डॉ० अजय कुमार

एसोसिएट प्रोफ़ेसर

राजनीतिक विज्ञान विभाग

गुरुनानक खालसा कॉलेज,

करनाल।

हरियाणा

सारांश:

सृष्टि के आरंभ से ही अच्छाई एवं बुराई का द्वंद्व चला आ रहा है। समाज में कुछ लोग जहाँ अच्छाई का प्रतीक होते हैं, वहीं कुछ लोग बुराई का प्रतीक होते हैं। कुछ लोग समाज को उन्नति की राह पर ले जाते हैं, तो कुछ लोग इस उन्नति की राह में बाधा बनते हैं। साहित्य समाज का दर्पण है। अतः समाज में फैले इस अच्छाई एवं बुराई का द्वंद्व का साहित्य में प्रतिबिंबित होना स्वाभाविक है। अगर हम साहित्य में अच्छाई एवं बुराई के द्वंद्व की बात करें, तो यह द्वंद्व हमें वैदिक साहित्य से ही दिखाई देना प्रारंभ हो जाता है। रामायण में राम जहाँ अच्छाई का प्रतीक है, वहीं रावण बुराई का। महाभारत में पांडव पक्ष जहाँ अच्छाई का प्रतीक है, वहीं कौरव पक्ष बुराई का। आगे चलकर हिंदी साहित्य में भी अच्छाई एवं बुराई का द्वंद्व दिखाई देता है। चाहे तुलसीदास की रचना रामचरितमानस हो या जायसी की रचना पद्मावत, चाहे प्रेमचंद का उपन्यास गोदान हो या प्रेमचंद की कहानी कफन, चाहे मोहन राकेश का नाटक आषाढ़ का एक दिन हो या लहरों के राजहंस, चाहे यशपाल का उपन्यास दिव्या हो या मन्नू भंडारी का उपन्यास श्मशानभोज, अच्छाई और बुराई का यह द्वंद्व हमें इन सभी में मिलता है। वस्तुतः अच्छाई और बुराई का यह पौराणिक द्वंद्व हमें हिंदी साहित्य की प्रत्येक विधा में मिलता है।

Keywords, अच्छाई, बुराई।

मध्यकाल तक हिंदी साहित्य में पौराणिक कथाओं का चित्रण अधिक मिलता है। अच्छाई और बुराई का द्वंद्व हमें पौराणिक कथाओं के चित्रण के रूप में मिलता है। परंतु आधुनिक काल आते ही परिस्थितियों में जो बदलाव आया, उसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। इन बदलती परिस्थितियों के फलस्वरूप हिंदी साहित्य में पौराणिक कथाओं के स्थान पर आधुनिक समस्याओं का चित्रण आरंभ हो गया। फलतः हिंदी साहित्य में अच्छाई एवं बुराई का यह द्वंद्व पौराणिक कथाओं की जगह आधुनिक समस्याओं के रूप में चित्रित होना प्रारंभ हो गया।

हिंदी साहित्य में उपन्यास विधा एक आधुनिक विद्या है। इस विधा में प्रेमचंदपूर्व युग, प्रेमचंद युग, प्रेमचंदोत्तर युग के उपन्यासों में हमें अच्छाई एवं बुराई का यह द्वंद्व स्पष्ट रूप से मिलता है। आधुनिक काल में लाजपत राय गर्ग जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से इस द्वंद्व का चित्रण जारी रखा।

लाजपत राय गर्ग जी के अभी तक छह उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं; कौन दिलों की जाने, पल जो यूँ गुजरे, पूर्णता की चाहत, प्यार के इंद्रधनुष, अनूठी पहल, अमावस्या में खिला चाँद। गर्ग जी के सभी उपन्यासों में अच्छाई एवं बुराई का द्वंद्व दिखाई देता है। परंतु

इसकी प्रबल अभिव्यक्ति उनके तीसरे उपन्यास पूर्णता की चाहत में हुई। पूर्णता की चाहत उपन्यास में मीनाक्षी जहाँ अच्छाई का प्रतीक है, वहीं कैप्टन साहब बुराई का प्रतीक है। अच्छाई बुराई के इस द्वंद्व में अंत में अच्छाई की जीत होती है। इस उपन्यास में मीनाक्षी कैप्टन साहब से विवाह करती है। परंतु शादी के कुछ महीनो बाद ही कैप्टन साहब के व्यवहार में परिवर्तन आने लगता है। कैप्टन नशे में न केवल मीनाक्षी पर हाथ उठाने लगता है, बल्कि रात को संबंध बनाते समय वहशियाना हरकतें भी करने लगता है। मीनाक्षी कैप्टन साहब के द्वारा यौन हिंसा का शिकार होती है।

कैप्टन कई बार नशे की हाथ में न केवल हाथ उठाने लगा था, बल्कि रात को संबंध बनाते समय वहशियाना हरकतें भी करने लगा था।⁽¹⁾

इतना कुछ होने पर भी मीनाक्षी कोई शिकायत नहीं करती। फलतः कैप्टन साहब के हौसले बढ़ने लगते हैं और वह मीनाक्षी की छोटी बहन (मीनाक्षी की बेटी) नीलू को भी अपनी वासना का शिकार बनाने का प्रयास करता है। नीलू भी कैप्टन साहब के यौन शोषण का शिकार बनती है। कैप्टन नीलू के हॉस्टल में पहुँच जाता है तथा वहाँ से नीलू को चाय पीने के बहाने होटल के कमरे में ले जाकर उसके साथ गलत हरकतें करने लगता है।

नीलू के मना करने पर कहने लगा – नीलू अब तुम बड़ी हो गई हो। जीजा-साली में ऐसा तो चलता ही है। और साथ ही कुर्सी से उठकर उसे बाँहों में जकड़ लिया और उसकी कनपटी पर जलते हुए होंठ रख दिये। नीलू तिलमिला उठी।⁽²⁾

होली के बाद एक दिन सुबह कैप्टन नीलू के साथ जबरदस्ती करने की कोशिश करता है।

नीलू के कमरे से चीखने की आवाज आयी। नीलू खुद को कैप्टन की गिरफ्त से छुड़ाने की कोशिश कर रही थी।⁽³⁾

मीनाक्षी के विरोध करने पर वह मीनाक्षी पर हाथ उठाता है। गुस्से में मीनाक्षी के मुँह से यह सच निकल जाता है कि नीलू मीनाक्षी की बेटी है, और कैप्टन गुस्से में राइफल से मीनाक्षी के सिर में चोट मार कर भाग जाता है।

उसने फूर्ती से राइफल उतारी और उल्टी करके धड़ाधड़ मेरे आगे-पीछे करने लगा।⁽⁴⁾

इसके पश्चात मीनाक्षी पुलिस में शिकायत करके कैप्टन साहब को उसके अपराधों की सजा दिलवाती है। इस तरह बुराई और अच्छाई के इस द्वंद्व में सत्य की अर्थात् अच्छाई की जीत होती है।

अच्छा और बुराई के इस द्वंद्व की अभिव्यक्ति हमें गर्ग जी के चौथे उपन्यास प्यार के इंद्रधनुष में भी दिखाई देती है। जहाँ डॉ. वृंदा अच्छाई का प्रतीक है। डॉ. वृंदा मनमोहन से प्यार करती है।

परंतु उसके पिता हरलाल मनमोहन की कमजोर आर्थिक स्थिति तथा उसकी जाति की वजह से वृंदा का विवाह मनमोहन से नहीं करवाना चाहते तथा वृंदा को कहते हैं—

विवाह एक ऐसा बंधन है जो दो व्यक्तियों के जीवन को ही प्रभावित नहीं करता, बल्कि दो परिवारों तथा आगामी पीढ़ियों के जीवन पर भी असर डालता है। जैसा तूने बताया, मनमोहन अपनी बिरादरी का नहीं है।... पहली बात तो यह है कि हम गाँव में रहते हैं, यहीं हमें सारी उम्र रहना है। एक बार गाँव और वर्मा खाप की बात छोड़ भी दे तो भी तेरे चाचा—ताऊ तक हमसे संबंध तोड़ लेंगे। समाज में सबसे कटकर जीना बड़ा मुश्किल होता है। (5)

वृंदा पूरी उम्र कुँवारी रह कर अपने प्यार के लिए जीवन व्यतीत करती है। इस उपन्यास में अनिता अच्छाई का प्रतीक है, उसका पति थॉमस बुराई का प्रतीक है। अनिता थॉमस के द्वारा घरेलू हिंसा तथा यौन शोषण का शिकार होती है और अंत में थॉमस से अलग हो जाती है।

कहने लगा — आज तू मेरी दूसरी भूख मिटा पहले। मैंने मिन्नतें कीं कि खाना खा ले और सो जा, क्योंकि मैं जानती थी कि नशे में वह जानवर बन जाता है। लेकिन वह न माना। मुझे जबरदस्ती रसोई से खींचकर बेडरूम में ले गया। मैंने खुद को छुड़ाने की बहुत कोशिश की। पता नहीं, कहाँ से उसमें इतनी ताकत आ गई थी, मैं खुद को उसके चँगुल से छुड़ा नहीं पाई। उसने मेरे साथ जबरदस्ती संबंध बनाया। मैं तड़पती रही। (6)

फिर उसने जलती हुई सिगरेट मेरे बदन पर कई जगह लगाई और आखिर में बदन पर रगड़कर ही बुझाई। (7)

इस उपन्यास में विमल अच्छाई का प्रतीक है। विमल की पत्नी अनामिका एक गैंग के चँगुल में फंसे होने के कारण विमल से तलाक के बदले में मोटी रकम वसूलती है।

गर्ग जी के पांचवे उपन्यास अनूठी पहल में उपन्यास के नायक प्रभुदास अच्छाई का प्रतीक है। वह समाज सेवा का कार्य करता है। प्रभुदास लड़कियों के कॉलेज के लिए अपनी जमीन दान कर देते हैं। वह देहदान को अपने जीवन का मिशन बनाते हैं। इसी उपन्यास में प्रभुदास के दोस्त रामरतन भी अच्छाई का प्रतीक है, जो विभाजन के दौरान कुछ युवकों की दरिंदगी का शिकार हुई जमना को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। इसी उपन्यास में प्रीति अच्छाई का प्रतीक है तथा उसका पति एवं उसके ससुराल वाले बुराई का प्रतीक है। उसका पति मदन अपने परिवार वालों के साथ प्रीति को दहेज के लिए प्रताड़ित करता है तथा उसके साथ मारपीट भी करता है। अंत में प्रीति अपने पति से तलाक लेकर दीपक से विवाह कर लेती है।

एक दिन उसका ससुरा लात—घुँसो से उसे पर टूट

पड़ा था। वह नासपीटा भी अपने माँ—बाप का पिछलग्गू निकला। वह भी प्रीति पर हाथ उठाने लगा था। (8)

गर्ग जी का छठा उपन्यास शमावस्या में खिला चौदश में अच्छाई एवं बुराई का द्वंद्व स्पष्ट तौर पर दिखाई देता है। इस उपन्यास के नायिका शीतल अच्छाई का प्रतीक है तथा उसका पति मदन बुराई का प्रतीक है। उसका पति मदन एवं उसके घर वाले शीतल को दहेज के ताने देते हैं और उसके साथ मारपीट भी करते हैं। परिणामस्वरूप शीतल मदन से तलाक ले लेती है।

मेरा इतना कहना था कि ससुर ने टेबल से उठकर मेरे पास आकर दो थप्पड़ रसीद कर दिए। जब तीसरे थप्पड़ के लिए उसका हाथ उठा तो मैंने बीच में ही पकड़ लिया। इस पर मदन की मम्मी ने बेलन से मेरी पीठ पर वार कर दिया और मदन ने भी एक—दो लात—घुँसे चला दिए। (9)

इस उपन्यास में मानवेंद्र अच्छाई का प्रतीक है तथा उसकी पत्नी पूनम बुराई का प्रतीक है। मानवेंद्र की पत्नी पूनम अपने क्लीग के साथ किराए पर फ्लैट लेकर लिव—इन रिलेशन में रहती है। पूनम का अपने क्लीग के साथ विवाहेतर संबंध होता है। जब मानवेंद्र को सच्चाई का चलता है, तो मानवेंद्र पूनम के खिलाफ कोर्ट में विवाह की शुचिता भंग करने का केस दायर करता है। और अंत में मानवेंद्र का पूनम से तलाक हो जाता है।

अब तक की बातों से तुम्हें अहसास हो गया होगा कि वह यथार्थ में बहुत महत्वाकांक्षी थी। उसने अपना करियर ग्राफ बढ़ाने के लिए अपने सीनियर को सीढ़ी बनाया और उस सीनियर ने उससे इसकी कीमत वसूली। (10)

जब राज खुला तो पता चला कि मेरी अनुपस्थिति में पूनम अपने सीनियर क्लीग के साथ लिव—इन रिलेशन में रहती थी। (11)

निष्कर्ष

इस तरह हम देखते हैं कि अच्छाई तथा बुराई के इस द्वंद्व में जीत अच्छाई की अर्थात् शीतल और मानवेंद्र की होती है। सच तो यह है कि अच्छाई और बुराई का यह द्वंद्व सृष्टि के अनादिकाल से ही चला आ रहा है। बुराई कितनी ही ताकतवर क्यों ना हो, अंत में अच्छाई से हार ही जाती है। और जीत हमेशा अच्छाई की ही होती है। इसी भाव को गर्ग जी ने अपने उपन्यास साहित्य के माध्यम से व्यक्त किया है।

संदर्भ सूची —

1. लाजपत राय गर्ग, पूर्णता की चाहत, दिशा प्रकाशन, दिल्ली, 2021, पृ.— 80।
2. वही, पृ.— 81।
3. वही, पृ.— 85।

4. वही, पृ.- 85 ।
5. लाजपत राय गर्ग, प्यार के इन्द्रधनुष, इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा, 2021, पृ. - 32 ।
6. वही, पृ. - 123 ।
7. वही, पृ. - 123 ।
8. लाजपत राय गर्ग, अनूठी पहल, इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा, 2022, पृ. - 90 ।
9. लाजपत राय गर्ग, अमावस्या में खिला चाँद, बोधि प्रकाशन, जयपुर 2023, पृ. - 25 ।
10. वही, पृ. - 76 ।
11. वही, पृ.- 74 ।

शोध निर्देशिका

डॉ. सुमन

सहायक प्रवक्ता

(बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा।)

सविता

पी.एच.डी. शोधार्थी

(बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा।)

सहायक प्रवक्ता (राजकीय महिला महाविद्यालय, सोनीपत)

पता- मकान नंबर - 940, सेक्टर - 14, हुड्डा पार्क के

समीप, सोनीपत, हरियाणा।

पिन कोड- 131001

मोबाइल नं. - 8059651497

सारांश:

साहित्य और समाज अन्योन्याश्रित हैं, इसलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। साहित्य को समझने के लिए समाज का अध्ययन आवश्यक होता है। व्यक्ति समूह का नाम समाज है।

समाज का अर्थ :

‘समाज’ शब्द ‘समष्टि’ की भाँति व्यापक है। सामान्यतः जनता में ‘समाज’ शब्द से अभिप्राय कुछ व्यक्तियों का समूह समझा जाता है। “वृहद हिन्दी कोश” में समाज का अर्थ है— एकत्र होना, समूह, समिति, विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संघटित संस्था।¹ समाज मनुष्य का एक प्राकृतिक संगठन है। यह एक परिवर्तनशील व्यवस्था एक गतिशील प्रक्रिया है।

चेतना शब्द का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप :

आधुनिक हिन्दी शब्दकोश में चेतना का अर्थ अत्यन्त सरल एवं स्पष्ट शब्दों में दिया है। चेतना मन की वह वृत्ति जो जीव को अंतर एवं बाह्य का ज्ञान कराती है, वह स्थिति जो प्राणी के चेतन होने का प्रमाण देती है। संज्ञा, ज्ञान, प्रतिबोध, सजीवता, बुद्धिमत्ता, तर्कनाशक्ति, चेत। वस्तुतः चेतना शब्द अपने-आप में बड़ा ही व्यापक अर्थ रखता है। चेतना अंग्रेजी शब्द **Consciousness** का हिन्दी पर्याय है। डॉ० अंबलगे के मतानुसार “चेतना प्राणी मात्र में निहित वह शक्ति है जो उन्हें निर्जीव और जड़ वस्तुओं से अलग बनाती है और उन्हें चैतन्यमय बनाकर सजीव सिद्ध करती है। अतः स्पष्ट है कि चेतना मनुष्य या प्राणी मात्र की ऐसी शक्ति है जो उसे निर्जीव जड़ वस्तुओं से अलग तो बनाती ही है और उसके साथ व्यक्ति के विकास में अहम भूमिका भी निभाती है।

सामाजिक चेतना :

सामाजिक चेतना में ‘चेतना’ शब्द का सम्बन्ध मनोविज्ञान से है। मनोविज्ञान के अनुसार चेतनमानस की प्रमुख विशेषता चेतना है, अर्थात् वस्तुओं, विषयों तथा व्यवहारों का ज्ञान। सामान्यतः सामाजिक चेतना से हम किसी देश एवं काल विशेष से सम्बन्धित मानव-समाज में अभिव्यक्त परिवर्तनशील जागृति समझते हैं। जन-जीवन में लक्षित यह जाग्रति या सामाजिक चेतना तत्कालीन जीवन से उत्पन्न अप्रत्याशित गतिरोध एवं गतिशीलता से उत्पन्न हो सकती है। इसके पीछे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियाँ प्रेरणात्मक हो सकती हैं।

“सभी कलाओं का केन्द्र मानव जीवन है। साहित्य के लिए भी यह मान्यता पूर्णतः सत्य है। साहित्य मानव संस्कृति का एक अविभाज्य अंग है। अतः साहित्य सामाजिक चेतना का एक अत्यन्त

अनिवार्य तत्त्व है। किसी देशकाल की संस्कृति की झलक तत्कालीन साहित्य में स्पष्ट देखी जा सकती है। देश में चेतना की चिंगारी फूँक कर क्रांति की अग्नि प्रज्वलित करने का कार्य उस देश के साहित्य एवं साहित्यकारों ने ही किया है।²

साहित्य में सामाजिक चेतना :

साहित्यकार जिन परिस्थितियों में रचना करता है वह उसका सामाजिक परिवेश है। कृति की रचना जिन सामाजिक संदर्भों को आधार बनाती है, और जिन परिस्थितियों में पूर्ण होती है, वह रचनाकार का सामाजिक परिवेश है। “जिस प्रकार सामाजिक परिवेश साहित्यकार को प्रभावित करता है उसी प्रकार साहित्य व्यक्ति को प्रभावित करता है और उसके द्वारा समाज को भी। इस प्रभाव को आयुध बनाकर साहित्यकार समाज में परिवर्तन ला सकते हैं।³

महादेवी वर्मा के गद्य – साहित्य में सामाजिक चेतना :

‘गद्य कवीना निकषं वदन्ति’ इस संस्कृतोक्ति के अनुसार गद्य कवियों की योग्यता परखने की कसौटी मानी गई है। सुश्री महादेवी वर्मा जिन्हें अधिकांशतः एक अप्रतिम प्रतिभा मंडित कवयित्री के रूप में जाना जाता है उसका श्रेय उनके उत्कृष्ट गद्य लेखन को है। कविता में जिस सामाजिक तत्व की कमी आधुनिक युग के पाठक को खटकती है वह महादेवी जी के गद्य साहित्य में चरमोत्कर्ष पर विद्यमान है। काव्य में वे केवल निजी सुख-दुख की चर्चा करती हैं ओर गद्य में समाज के शोषण और उत्पीड़न के लिए सोचने में व्यस्त रहती हैं।⁴

महादेवी जी ने समाज में व्याप्त अन्याय-अत्याचार, शोषण- दोहन, सामाजिक कुरीतियों आदि पर अपनी लेखनी के माध्यम से समाज की बुराइयों को इंगित किया है और सामाजिक समस्याओं का चित्रण कर सशक्त रचनाओं में समस्याओं के समाधान का संकेत भी किया है।

वर्ग संघर्ष एवं मानवीय चेतना :

महादेवी जी का अध्ययन समाज, परिवार के प्रति अत्यन्त व्यापक था। महादेवी जी के गद्य-साहित्य में तत्कालीन समाज का चित्रण पात्रों के माध्यम से अंकित हुआ है। उनकी गद्य कृतियों में तत्कालीन समाज के सभी वर्गों का चित्रण हुआ है। महादेवी जी ने किसी वर्ग, जाति विशेष को दृष्टिपथ में रखकर, उसका चित्रण नहीं किया। साथ ही व्यक्तियों में जो संवेदनशून्यता, कलह, ईर्ष्या, अभाव ग्रस्तता है उसका चित्रण भी किया है।

महादेवी वर्मा ने उच्चवर्गीय परिवार का चित्रण कर यह

बताया है कि इन परिवारों के व्यक्तियों में संवेदन-शून्यता अधिक होती है भावुकता, सहानुभूति के लिए कोई स्थान नहीं होता। ईर्ष्या-द्वेष भी एक-दूसरे के लिए अधिक होता है। सम्पत्ति के लिए भाई-भाई का शत्रु बन जाता है।

‘लछमा’ संस्मरणात्मक रेखाचित्र में लछमा का विवाह एक बहुत सम्पन्न परिवार में हुआ। लछमा का पति पागल तो नहीं लेकिन मानसिक विकास अधिक नहीं हो सका था। घर के सदस्य जो धन लोलुपता से युक्त संवेदनशून्य थे, अपने पागल भाई को सम्पत्ति में हिस्सा नहीं देना चाहते। इसी कारण लछमा अपने पति और उसके अधिकार को छोड़ना नहीं चाहती थी। एक दिन संवेदन शून्य धन लोलुपता से युक्त जेठ ने क्रूरता का ऐसा ताण्डव दिखाया कि लछमा को इतना अधिक पीटा की वह बेहोश हो गई। महादेवी जी ने मध्यवर्ग की आर्थिक समस्याओं उनकी अभावग्रस्तता का चित्रण कर उनमें संवेदना, सहानुभूति का भी स्पष्टीकरण पात्रों के माध्यम से किया है।

‘अतीत के चलचित्र’ के ‘अभागी स्त्री’ रेखाचित्र में अभागी स्त्री का पति डेढ़ वर्ष से बिमार चल रहा है। आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पा रही है। पति की लम्बी बीमारी के कारण दवा-दारु में सब कुछ खत्म हो चुका है। गहने भी बेच डाले, उंगली में चार मासे भर सोने का एक छल्ला बचा है। महादेवी जी लिखती हैं— “पति का एकमात्र उपहार होने के कारण इसे बेचने का विचार ही उसे क्लान्त कर देता है। अभागी स्त्री पतिता माँ से कोई सम्बन्ध रखना तो दूर उनके रुपये लेने से मृत्यु को अच्छा मानती हैं। बीमार पति अपने घर जाने को राजी नहीं है। पति-पत्नी अपने स्वाभिमान को त्याग नहीं सकते, आर्थिक समस्या का सामना कर भूखे मर जाना स्वीकार है।”⁵ महादेवी जी के संस्मरण संग्रह एवं रेखाचित्र में, निम्नवर्गीय परिवारों का चित्रण भी मिलता है। इसका यह भी कारण रहा है कि महादेवी जी ने ग्रामीण जीवन की समस्याओं को बड़े निकट से उनके बीच जाकर देखा और जिया।

‘घीसा’ रेखाचित्र में निम्नवर्गीय परिवार का यथार्थ चित्रण किया गया है कि किस प्रकार निम्नवर्गीय परिवार अभावग्रस्त जीवन जीने के लिए विवश है। घीसा के बाप की मृत्यु के छः महीने बाद घीसा का जन्म होता है। घर में और कोई कमाने वाला न होने के कारण ‘घीसा’ को उसकी माँ बन्दरिया के बच्चे के समान अपने सीने से लगाये लोगों के घरों में काम करती है।

“बदलू” रेखाचित्र में बदलू जाति का कुम्हार है, पत्नी रधिया जो पति के साथ जन्मजात व्यवसाय में हाथ बँटाकर

जीविका की समस्या को हल करने में लगी रहती। रधिया ने बच्चे को जन्म दिया। उस समय एक रुपया न होने के कारण उसे फिजूलखर्ची समझकर चमारिन को नाल काटने के लिए न बुलाया। पीड़ा को सहन करते हुए लेटे-लेटे दराती से नाल काट लिया।⁶ महादेवी जी ने बड़े मार्मिक सहानुभूतिपूर्ण ढंग से अभावग्रस्त परिवार का चित्रण किया।

पारिवारिक समस्याएं :

परिवार हमारे सामाजिक जीवन का प्रमुख आधार है और पारिवारिक जीवन का मुख्य स्तम्भ पति-पत्नी होते हैं। पति-पत्नी के आपसी प्रेम-स्नेह और सद्भावना से ही पारिवारिक जीवन में सुख-शांति का सांचर होता है। महादेवी जी का साहित्य ग्रामीण जीवन की समस्याओं से जुड़ा हुआ है। महादेवी जी पारिवारिक जीवन एवं उनकी समस्याओं से परिचित थी। संयुक्त परिवार में स्त्रियों की दुर्दशा, ईर्ष्या और कटुता, धनलोलुपता का चित्रण उन्होंने अपने संस्मरण रेखाचित्र में किया है। ‘स्मृति की रेखाएँ’ में संकलित रेखाचित्र भक्तिन संयुक्त परिवार का चित्र प्रस्तुत करती है। भक्तिन का नाम लक्ष्मी है। लक्ष्मी का विवाह संयुक्त परिवार में हुआ है। लक्ष्मी की सास और दो जेठानियाँ मिलकर लक्ष्मी और उसकी तीन बेटियों से घर बाहर का सारा काम करवाती है। जिठानियाँ बैठकर लोकचर्चा करती ओर उनके कलूटे लड़के धूल उड़ाते। लक्ष्मी मट्टा फेरती, कूटती, पीसती और उसकी नन्हीं लड़कियाँ गोबर उठातीं, कंडे थापती।⁷ सास, जिठानियों का ईर्ष्या भरा व्यवहार लक्ष्मी सह सकती थी। लेकिन उन निर्दोष बेटियों को भी उनके दुर्व्यवहार को सहना पड़ता है। उनको तो ये भी नहीं पता कि उनका दोष क्या है? जब कोई भी चीज असहनीय हो जाए तब अनपढ़ स्त्रियाँ भी विद्रोह कर अलगगोझे पर बाध्य हो जाती है और लक्ष्मी ने वही किया। परिवार के स्वार्थी सदस्य जो घर के अन्य व्यक्तियों के साथ ईर्ष्या ओर कटुता युक्त व्यवहार करते हैं उन्हीं के कारण परिवार में समस्या उत्पन्न होती है और परिवारों का विघटन होता है।

बाल विवाह की समस्या

महादेवी जी के समय में इस प्रथा का प्रचलन था। उन्होंने अपने गद्य संग्रह ‘अतीत के चलचित्र’ में बाल-विवाह की विफलता को चित्रित किया है। बिट्टों तीन भाईयों की अकेली बहन बड़े दुलार से पली, उसका विवाह अबोधपन में ही हो गया। महादेवी जी के शब्दों में वैधव्य भी अनजाने आ पड़ा, न पहली स्थिति ने उसे उल्लास में बहाया था न दूसरी स्थिति उसे निराशा

में डूबा पाई। कन्या के ससुराल वाले उसे अशुभ मान के नहीं ले गये और माता-पिता ने सुसुराल भेजा भी नहीं। उसे क्या पता था कि माता-पिता की आंखें मूँदते ही संसार की सभी वस्तुओं का मूल्य ही बदल जायेगा। फिर भाभियाँ उसे नित्य नवीन मानसिक, शारीरिक यातनाएँ देने लगी। बालिका बिट्टों न विवाह की गम्भीरता को समझती थी न ही वैधव्य का अर्थ।

हमारे समाज में नारी का जितना शोषण होता रहा है उससे भी अधिक शोषण, अत्याचार विधवा नारी का हुआ है। विधवा की दयनीय स्थिति सबसे ज्यादा मध्यवर्गीय परिवारों में रही है। 'अतीत के चलचित्र' संस्मरण संग्रह में 'भाभी' रेखाचित्र में महादेवी जी ने अपनी बाल्यावस्था में जिस पड़ोस की विधवा स्त्री को 'भाभी' कहती थी उस बाल विधवा की दयनीय दशा का वर्णन महादेवी जी ने किया है। 'भाभी' रेखाचित्र में यह स्पष्ट है कि एक विधवा स्त्री को समाज और परिवार कैसा दण्ड देता है? धार्मिक ढकोसले की दुहाई दे उस विधवा पर अत्याचार करते हैं। वही स्त्री पति के मरते ही अपना सारा सुख खत्म कर देती है और घर-परिवार के आदेश के अनुसार अपना जीवन बिताती है।

नारी के वैश्या-जीवन की चर्चा करते हुए महादेवी जी स्पष्ट शब्दों में कहती है कि "केवल पुरुष समाज ही इनको इस स्थिति में पहुंचाने के लिए उत्तरदायी है। कोई भी नारी अपनी इच्छा से ऐसा कोई व्यवसाय नहीं चुनना चाहती। समाज ही उसे अपने सौन्दर्य की हाट लगाने को विवश करता है। वैश्याओं ने भी कभी किसी पुरुष को हृदय की सम्पूर्ण अनुभूतियों के साथ आत्मसमर्पण किया था किन्तु पुरुष ने मात्र उसकी समर्पण-वृत्ति को एक खेल समझा⁹ महादेवी वर्मा जी की 'स्मृति की रेखाएँ' का चीनी फेरीवाला की बहन वैश्यावृत्ति के लिए मजबूर की जाती है। चीनी के पिता के मरते ही विमाता ने चीनी और उसकी बड़ी बहन पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। इस संस्मरण में वैश्यावृत्ति के पीछे क्या कारण है। उसके विषय में बताया गया है।

बच्चों का पालन-पोषण माता-पिता दोनों मिलकर करते हैं। ऐसे में यदि परिवार में जब विमाता आ जाती हैं तब वह अपने ईर्ष्यालु स्वभाव के कारण परिवार में अनेकों समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। उसका शिकार सर्वप्रथम बच्चों को बनना पड़ता है। महादेवी जी ने अपने गद्य संग्रह में विमाता के अत्याचार का शिकार बने बच्चों का भी चित्रण किया है। 'अतीत के चलचित्र' संस्मरण संग्रह में 'रामा' रेखाचित्र का रामा जो विमाता के अत्याचार से बुन्देलखण्ड से इंदौर जा पहुंचा था। आज भी समाज में रामा जैसे बच्चे जो विमाता के अत्याचारों से तंग आकर घर

छोड़कर भाग जाते हैं और स्नेह ढूँढते हैं। विमाता से बच्चों को वह स्नेह और प्यार नहीं मिलता जो उन्हें उनकी वास्तविक माँ से मिला होता है। यह कहना उचित ही होगा कि नई माँ के ईर्ष्या – जन्य व्यवहार, उसकी अयोग्यता से ही बच्चे घर छोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं।

'बिन्दा' रेखाचित्र में बिन्दा जो महादेवी जी की बाल्यावस्था की सखी है वह भी विमाता के अत्याचारों से पीड़ित और शोषित है। बिन्दा की माँ की मृत्यु के बाद उसके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। नई विमाता के आते ही बिन्दा पर तरह-तरह के अत्याचार शुरू हो जाते हैं। विमाता स्वयं चारपाई पर सज संवरकर बैठकर बिन्दा को ऊँचे स्वर में गर्जना करती – 'उठती है या आऊँ, बैल के से दीदे क्या निकाल रही, मोहन का दूध कब गर्म होगा, अभागी मरती भी नहीं।'¹⁰ विमाता के व्यवहार में इतनी कटुता, ईर्ष्या, है जो शायद उस बाल्य बिन्दा की समझ से बाहर हैं।

निष्कर्ष :

महादेवी छायावादी युग के चार आधार स्तम्भों में से एक है। हिन्दी साहित्य में महादेवी जी का विशेष योगदान रहा है। महादेवी जी ने समाज के प्रति आदर्शात्मक एवं उपदेशात्मक दृष्टिकोण न अपनाकर वर्तमान समय की समस्याओं पर यथार्थवादी ढंग से प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। महादेवी रूढ़ियों, अंधविश्वासों एवं कुसंस्कारों में जकड़े हुए समाज में रह रहें जनमानस की नस नस को पहचानती थी। महादेवी जी का गद्य साहित्य सामाजिक चेतना को लेकर ही लिखा गया है। युगों से नारी की समस्याएँ चली आ रही है।

महादेवी जी ने नारी सम्बन्धी समस्याओं की विभिन्न स्थितियों को नारी पात्रों के माध्यम से स्पष्ट किया है। नारी सम्बन्धी पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी समस्याओं का चित्रण किया है। महादेवी वर्मा की रचनाएँ मानवीय मूल्यों, प्रेम, करुणा और दया के प्रति समाज को जागरूक करती हैं। उन्होंने साहित्य के माध्यम से समाज के हर वर्ग के प्रति एक संवेदनशील दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। उनके साहित्यिक योगदान ने भारतीय समाज को न केवल प्रेरित किया, बल्कि उसे आत्ममंथन करने और सामाजिक सुधार की दिशा में कदम बढ़ाने की प्रेरणा भी दी। इस प्रकार महादेवी वर्मा के साहित्य में सामाजिक चेतना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। उनके लेखन ने समाज को एक नया दृष्टिकोण दिया और सामाजिक न्याय, समानता और मानवता की मूलभूत अवधारणों को प्रोत्साहित किया। उनके

साहित्य के माध्यम से समाज में परिवर्तन लाने की उनकी इच्छा और प्रयास निःसंदेह प्रेरणादायक है।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ० महेश चन्द्र दिवाकर, हिन्दी नई कहानी का समाजशास्त्रीय अध्ययन, पृ० 1
2. डॉ० अमरसिंह, प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना, पृ० 3
3. डॉ० सोफिया मैथ्यू, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में सामाजिक चेतना, पृ० 18
4. डॉ० दुर्गा देवी अग्रवाल, महादेवी वर्मा का नारी विषयक दृष्टिकोण, पृ० 228
5. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ० 67
6. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ० 85
7. वही, स्मृति की रेखाएँ, पृ० 10-11
8. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ० 46
9. डॉ० सोफिया मैथ्यू, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में सामाजिक चेतना, पृ० 62
10. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ० 32

सन्दीप कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, डिंग मण्डी, सिरसा
मोबाईल : 9996936690
हरियाणा

सारांश:

नारी-विमर्श का अर्थ :

नारी विमर्श अंग्रेजी शब्द Feminism का हिन्दी रूपान्तरण है। जिसका अर्थ है स्त्री के अधिकारों, सत्ता शक्ति की वकालत करना। नारी-विमर्श दो शब्दों से मिलकर बना है, नारी का अर्थ तो सर्वविदित हैं नारी अर्थात् स्त्री। विमर्श का अर्थ अत्यन्त व्यापक है "विमर्श का व्युत्पत्तिपरक अर्थ विचार-विमर्श, सोचना, समझना और आलोचना करना है। ज्ञान शब्द कोश के अनुसार, "विमर्श का अर्थ विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, तर्क ज्ञान करना आदि है।"¹

पश्चिमी देशों के संदर्भ में नारी – विमर्श :

पश्चिम में स्त्रीवादी विमर्शों को राजनैतिक, सांस्कृतिक आन्दोलनों के द्वारा उजागर किया गया। सीमोन द बोउवार की महत्वपूर्ण किताब 'The Second Sex' ने स्त्री विमर्श के प्रश्नों को उठाया। जान स्टुवर्ड मिल ने स्त्री अस्मिता के प्रश्नों को समान मताधिकारों की मांग के द्वारा उठाया।² पाश्चात्य नारी-विमर्श के अन्तर्गत स्त्री अब पुरुष के बनाये बन्धनों की कैद से स्वयं को आजाद करना चाहती है, वहां स्त्री का उद्देश्य पुरुष को सुधारने का कम रहा है बल्कि वह पुरुष समाज के प्रति घृणित भावना रखने लगी है क्योंकि पुरुषों ने उनके साथ शोषण किया है, इस कारण वे पुरुषों की व्यवस्था तथा पुरुषों को त्यागकर स्वयं अपने जीवन को स्वतंत्र रूप से जीने का प्रयास कर रही है।

भारतीय सन्दर्भ में नारी-विमर्श :

महाभारत कालीन भारतीय समाज में द्रोपदी, कुंती जैसी तेजस्वी स्त्रियों की उपस्थिति के बावजूद समाज स्त्री की स्वतन्त्रता का पक्षधर नहीं था।

वैदिक काल में नारी की स्थिति बहुत ही सम्मानजनक थी, 'ऋग्वेद' के अनुसार वैदिक काल में नारी को पूर्ण अधिकार प्राप्त थे, स्त्री के बिना पति धार्मिक कृत्य सम्पादन में पंगु था, उसे यज्ञ करने का अधिकार न था।³

पुराण काल में नारी को धार्मिक एवं स्वाधीनता बहुत कम दी गयी। उनका कर्तव्य परिवार और पति सेवा तक ही सीमित रह गया, पुराणों में कन्या का विवाह रजस्वला से पूर्व कर दिया जाता था। विधवा नारी को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाने लगा था उसका जीवन घोर कष्टों से भर गया था। बौद्ध धर्म ने स्त्री को वैदिक युग की स्वतन्त्रता के निकट ले जाने का पुनः प्रयास किया। जैन युग की नारियां विशेषकर उच्चवर्ग की महिलाएं शिक्षित थी और धर्म व

साहित्य की उन्नति में भी उन्होंने महत्वपूर्ण योगदान दिया।⁴

मध्यकाल में स्त्रियाँ धार्मिक कृत्यों में अधिक भाग लेने लगी। भारत पर मुगलों के राज्य के बाद नारी की स्थिति में और गिरावट आ गई थी। क्योंकि मुस्लिम संस्कृति में स्त्रियों पर बहुत अंकुश है। शैलजा माहेश्वरी लिखती है, "नारी के अनेक रूपों – गृहणी, जननी, देवी, भगिनी आदि को भूलकर समाज नारी शरीर के सौन्दर्य सरोवर में सतह पर ही गोते खाता रह गया।"⁵

आधुनिक काल महिला जागरण का काल कहा जाता है। सदियों से समाज में महिलाओं की पतनोन्मुख सामाजिक अवस्था के कारण उन्हें पिछड़े वर्ग में शामिल किया गया। अब नारी प्रत्येक सुधार आन्दोलन का आधार बनी। ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज और आर्य समाज की स्थापना स्त्री उत्थान के लिए की गई। भारतीय संदर्भ में स्त्रियों का दमन या अनुकूलन कहीं देवी के समान बतलाकर महिमागान करके और कहीं उसके प्रताड़ित होने को सही ठहराकर किया गया है।⁶

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में नारी-विमर्श

'मित्रो मरजानी' कृष्णा सोबती का वह उपन्यास है जिसके कथ्य और चरित्र ने एक लम्बे अरसे तक हिन्दी साहित्य में धूम मचा दी थी। मित्रो हिन्दी साहित्य की पहली ऐसी नारी है जो सदियों से चले आ रहे नैतिक मूल्यों को तार-तार कर अपनी जिन्दगी जीती है उसमें यौवन की अमिट प्यास है।⁷

मित्रों का पति सरदारी उस पर नियन्त्रण करने का भरसक प्रयत्न करता है परन्तु असफल रहता है। सास व जेठ सब मित्रों के दबंग, बेबाक व्यवहार और पुरुषों को रिझाने की बदनामी के डर से मित्रों को कुछ समय के लिए मैके भेज देते हैं। मित्रो बहुत प्रसन्न होती है। क्योंकि मैके में उसे और अधिक स्वतंत्रता प्राप्त होगी। उसकी माँ बालो ने स्वयं भी एक अप्रतिबंधित जीवन व्यतीत किया था।

मित्रो जब मैके पहुंचती हैं तब उसकी माँ बालो, जो एक गणिक के रूप में रही है, उसकी यौन तृप्ति का प्रबन्ध भी करा देती है लेकिन वहाँ पर एक ऐसी घटना घटती है कि मित्रो का मन परिवर्तित हो जाता है, अनेक पुरुषों के पास भटकने वाली मित्रो अंततः सरदारी के प्रति समर्पित हो जाती हैं।

'ऐ लड़की' उपन्यास में लड़की जिसको किसी नाम से संबोधित न करके लड़की कहकर ही पुकारा गया है, की उम्र अधिक हो गयी पर उसने विवाह नहीं किया है, अविवाहित रहने का निर्णय लिया है 'ऐ लड़की' में अम्मू अपनी बेटी से कहती भी हैं "तुम किसी

के अधीन नहीं। स्वाधीन हो। लड़की यह ताकत है। सामर्थ्य। शक्ति। समझ रही हो न?"⁸

सोबती की नारियां अनेक तरह की सामाजिक स्थितियां रखती हैं कोई विवाहित है तो किसी ने विवाह नहीं किया, कुछ कई पुरुषों से सम्बन्ध रखती हैं तो कुछ पुरुषों से नाता रखना ही नहीं चाहती हैं कुछ हिन्दू होते हुए मुसलमान से विवाह करती हैं।

आधुनिक समकालीन स्त्री लेखिकाओं में कृष्णा सोबती एक ऐसी लेखिका है, जिन्होंने साहित्य में व्यक्ति के स्तर पर स्त्री की प्रतिष्ठा और उसकी अस्मिता सम्बन्धी प्रश्नों को मुखरता से उठाया है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी-विमर्श :

मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य के केन्द्र में नारी है, उनके साहित्य में पुरुष प्रधान समाज के प्रति आक्रोश दिखाई देता है वे नारी स्वतन्त्रता की पक्षधर हैं 'चाक' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण परिवेश में प्राचीन कुरीतियों या व्यवस्था को नारी की दयनीय स्थिति का जिम्मेवार ठहराया है। चाक उपन्यास की प्रमुख नायिका सारंग अपने पति के सहयोग न मिल पाने पर वह श्रीधर मास्टर का सहयोग अपनी न्याय की लड़ाई के लिए लेती है। और श्रीधर के खुले विचारों से प्रभावित हो वह उससे प्रेम करने लगती है जिस कारण समाज में उसकी काफी चर्चा भर्त्सना भी होती है।

अगनपाखी उपन्यास की भुवन एक ऐसी नारी है जिसका विवाह एक अर्द्ध-विक्षिप्त व्यक्ति कुंवर विजय सिंह से कर दिया जाता है भुवन न चाहते हुए भी अपने पति के साथ रहती है वह कहती है, "जिज्जी, वह कुंदिया की तरह भी सुख आनन्द कहाँ जानता है कि मैं उसे सुख आनन्द जुटाऊँ। खुद को दुख ही देता रहता है। सर्दी की रात पूरी की पूरी हाथ पाँव धोते निकाल देता है। कहता है हर जगह कीड़े हैं, हर जगह खून है।"⁹

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों की नारी पात्रों के द्वारा यह दर्शाया है कि वह नारी जो एक समय पुरुष की प्रतिष्ठा थी, जिसके लिए समाज में अनेक वर्जनाएं थी, वह अब ऐसी नहीं रही हैं अब वह अपने बारे में सजग है। मैत्रेयी पुष्पा यह दर्शाती है कि आज भी स्त्री परम्परिक संस्कारों में जकड़ी हैं, परावलम्बी है आश्रित है और अभी भी अर्द्ध-सामंतीय संरचना के रहने के कारण स्त्री का दमन भयानक रूपों में हो रहा है। आज आवश्यकता है इन स्त्री विरोधी हिंसक अमानवीय उत्पीड़क प्रभुत्वशाली परम्पराओं का विश्लेषण करने की जिस पर आज तक बुद्धिजीवी खामोश रहे हैं।

मृणाल पांडे के उपन्यासों में नारी-विमर्श :

मृणाल पांडे ने नारी की सभी समस्याओं को उभारने के साथ नारी के अन्तर्मन को पहचानने का भी प्रयास किया है उनके साहित्य में नारी के संघर्ष का यथार्थ चित्रण है साथ ही नारी की कोमल भावना का आभास भी उनकी रचना में मिलता है।

देवी उपन्यास की बीजी जो एक ऐसी संघर्षशील साहसी माँ है, वह पंजाब के दंगों में भागकर अपने बेटों के साथ पहाड़ में आकर बस गई थी उन्होंने अपने जेवर बेचकर अपने बेटों को पढ़ाया, कारोबार कराया, उन्हें आत्मनिर्भर बनाया, उनका बेटा स्वयं स्वीकारता है कि उनका सब कुछ बर्बाद हो गया था उसके बावजूद भी उनकी माँ ने उन्हें अच्छे स्कूलों में भेजा। जिस प्रकार देवी का महत्व भक्तों के लिए अपने कार्य की सिद्धि तक होता है उसी प्रकार बच्चों के लिए बड़े होकर माँ का अनावश्यक होना स्वाभाविक हो जाता है। देवता का वर्णन करते हुए लेखिका बताती है, "जाओ माँ अपने धाम जाओ।"¹⁰

'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास की नायिका मंजरी अकेली रहती हैं बंटी का उसके जीवन में अचानक प्रवेश उसे भाता है सुकून देता है, लेकिन उसने कभी उसके प्रति अपनापन या ममता नहीं दिखाई परन्तु बंटी की मौत के बाद एक रात जब वह उसे अपने सपने में दिखाई देता है तो उसके दिल में अचानक ममता उत्पन्न हो जाती है और वह रोना प्रारम्भ कर देती है इस सम्बन्ध में मंजरी कहती है, "रात फिर बंटी की याद आई और उस रात पहली बार बंटी की मौत पर मैं फूट-फूट कर रोई। भगवान ही जानता है, मैंने कभी भी यह नहीं चाहा था, कि सौ-सौ जतनों से परत दर परत पथराया यह कठोर चट्टानी मन पिघल जाए। पर पहाड़ भी तो नहीं झेल सकता है पिघलते हिम का दबाव। उसकी छाती भी फट ही जाती है एक दिन।"¹¹

मृणाल पांडे 'देवी' में स्त्री की तुलना देवी से करती है वे मानती है कि स्त्रियाँ वैसे युद्ध पसन्द नहीं करती हैं पर अन्याय के विरुद्ध लड़ने के लिए वे हथियार उठाने से भी नहीं झिझकती हैं। ऐसा ही उनके उपन्यास 'रास्तों पर भटकते हुए' की नायिका मंजरी भी करती है। बंटी को न्याय दिलवाने के लिए वह वापिस समाज से जुड़ जाती है और निस्वार्थी माँ के रूप में पूर्ण भ्रष्ट व्यवस्था व पुरुष के बनाये तत्व से मुकाबला करती है।

मृणाल पांडे ने स्त्री के शक्तिरूप को अपने इन दोनों उपन्यासों में व्याख्यायित किया है इनके उपन्यास नारी-विमर्श का वास्तविक लेखन है। देवी उपन्यास में सच्ची धारणाओं का वर्णन है वे समाज में स्त्री चेतना को वास्तविक धरातल पर विश्लेषित कर रही हैं।

प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी-विमर्श :

प्रभा खेतान स्त्री विमर्श की महत्वपूर्ण लेखिका है। वह बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में एक नारीवादी सोच की लेखिका के रूप में उभर कर आयी हैं, उन्होंने नारी के बहुआयामी संबंधों को सामाजिक व पारिवारिक स्तर पर बड़े प्रभावी व विश्वसनीय ढंग से चित्रित किया है।

प्रभा खेतान ने नारी के जीवन के भावनात्मक सम्बन्धों को ईमानदारी से जीने की इच्छा रखने के तहत् संघर्षों का वर्णन किया है मारवाड़ी उच्च वर्ग से सम्बन्ध रखने के कारण उनके उपन्यासों में उच्च वर्गीय शहरी स्त्री के जीवन की गाथा है जो अपनी स्थिति से भली-भांति परिचित है। इस उच्च वर्गीय स्त्रियों की स्थिति को प्रभा खेतान स्वयं स्वीकारते हुए कहती हैं, “संस्कृति संस्था और धार्मिक सुविधाएं अभिजात स्त्रियों को अधिक मिली हैं। किंतु इन्हीं सुविधाओं ने कहीं उनकी चेतना को और अधिक जड़ीभूत भी बना दिया है। अपनी कुलीनता के नशे में वे बेहोश हैं।”¹²

‘छिन्नमस्ता’ नायिका प्रिया बचपन से ही अपने परिवार में उपेक्षित संतान की तरह रहती है वह पुत्र की इच्छा से हुई पांचवीं संतान थी और भाई बहनों की तुलना में प्रिया का उतनी सुंदर न होना तथा उसी समय से माँ का बीमार पड़ जाना ये अनेक कारण थे कि प्रिया की माँ को अपनी इस बेटी के प्रति मोह नहीं था। नौ वर्ष की उम्र में पिता की मृत्यु होने और साथ ही बड़े भाई की वासना का शिकार होने से वह मन ही मन सहमी सी रहने लगी किन्तु विपरीत परिस्थितियों से लड़ते-लड़ते वह इतनी साहसी हो गई कि प्रत्येक चुनौती का डटकर सामना कर सके। भाई द्वारा शोषित होने से उसके मन में पुरुष वर्ग के प्रति घृणा बन गई साथ ही कालेज में एक प्रोफेसर के प्रेम में धोखा खाया। विवाह के उपरान्त भी प्रिया के जीवन में खुशियाँ न आ पायी, पति नरेन्द्र की वहशी भूख के कारण और पति का स्त्रियों को वस्तु के रूप में प्रयोग करना उसकी पुरुष के प्रति घृणा को और अधिक बढ़ा देता है।

प्रिया को पति के घर को छोड़कर जाना होता है नरेन्द्र उसे घर से निकाल देता है, वह अपना हक जानते हुए भी कहती है, “इस पराई जमीन का बँटवारा नहीं चाहती थी, जो मन से उतर गया था, उसके धन का लोभ क्या।”¹³

‘पीली आंधी’ प्रभा खेतान का एक ऐसा अनोखा उपन्यास है जिसमें कई पीढ़ियों के मारवाड़ी संयुक्त परिवार का वृत्तान्त है। पहली पीढ़ी की स्त्री घूँघट की लम्बाई में अपने को समेटे पुरुष की बैसाखी बनकर ही जीती रही, चेतना या अन्तर्द्वन्द्व तो बहुत दूर की बात है। जैसे-जैसे समय गुजरता है नये जमाने

की स्त्री इस रूंगटा हाउस में आती हैं जो जीवन के बारे में जागरूक सोच रखती है। सोमा गौतम की पत्नी और रूंगटा हाउस की छोटी बहू है वह एक पढ़ी लिखी लड़की होने के साथ खुले विचारों में पली बढ़ी, अपने जीवन की खुशियों को परिवार व समाज के लिए बलि चढ़ाने को तत्पर नहीं है।¹⁴

प्रभा खेतान की ‘पीली आंधी’ सोमा, मिसेज अग्रवाल, ताई जी, बड़ी भाभी यानी रूंगटा हाउस की बड़ी बहू हो या ‘छिन्नमस्ता’ की प्रिया दाई माँ, तिलोत्मा, प्रिया की सास, सभी के साथ पितृसत्तात्मक समाज व पुरुष वर्ग का रवैया उत्पीड़नकारी ही रहा है। लेकिन साथ ही यह भी दृष्टिगोचर होता है कि पितृक सिद्धान्तों, नैतिक मर्यादाओं, शील नैतिकता मातृत्व के बंधनों को तोड़कर कोई भी स्त्री अपने भविष्य को पहचान सकती है। ऐसा ही आत्मबोध सोमा व प्रिया को गया था जिस कारण वह अपनी राह चुन सकी है।

प्रभा खेतान स्त्री की पीड़ा को समाप्त करने का समाधान भी देती। उनके उपन्यास की नायिका पत्नी ओर माँ होने के साथ-साथ बाहरी जगत में एक कर्मठ नागरिक भी होना चाहती है। बाहरी जगत यानि अपने व्यवसायिक कार्यक्षेत्र में भी सक्रिय रहना चाहती है और ऐसा कर भी पाई है, क्योंकि उनका उद्देश्य स्वयं को पत्नी व माँ के आदर्श ढाँचे में ही फिट करना ही नहीं है।

निष्कर्ष :

स्त्री विमर्श, स्त्री को उसके व्यक्तित्व और अस्मिता से परिचित कराता है अभी तक स्त्री पितृक वर्चस्व का आत्मसात किये हुए, वाणीहीन स्वत्वहीन जीवन व्यतीत करती रही है। सदियों से प्रताड़ित, शोषित, समर्पित, रीढ़हीन, विचारहीन स्त्री की मनोव्यथा को समझने, परखने, उसके उत्पीड़न के विविध आयामों को व्यक्त करने, उसके मन की पीड़ा की ठेस को जानने और बेबसी से कहने का साहस महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में ही हुआ है।

कृष्णा सोबती हिन्दी की एक ऐसी स्त्रीवादी लेखिका है जिन्होंने स्त्री के बाहरी उत्पीड़न, संघर्ष और भेद-भाव को ही नहीं दर्शाया है बल्कि स्त्री के अन्तर्मन को झाँककर उसकी पीड़ा को समझा है। ‘चाक’ और ‘अगनपाखी’ उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा की स्त्री चेतना ग्रामीण स्त्री की चेतना है। वे स्वयं ग्रामीण परिवेश से हैं इस कारण वे ग्रामीण स्त्री के जीवन को करीब से जान पायी हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में स्पष्ट किया है कि प्राचीन कुरीतियों, धार्मिक रीति रिवाजों के कारण भी ग्रामीण क्षेत्र की अशिक्षित स्त्री के साथ अमानवीय व्यवहार होता रहा है।

‘देवी’ ओर ‘रास्तो पर भटकते हुए’ उपन्यास में मृणाल

पांडे ने शहरी, ग्रामीण कामकाजी महिलाओं की पीड़ा को यथार्थ के धरातल पर अवलोकित करने का कार्य किया है। उन्होंने अपने उपन्यासों के द्वारा स्त्री को उसकी शक्ति से परिचित कराने का कार्य किया है।

‘छिन्नमस्ता’ और ‘पीली आंधी’ उपन्यास में प्रभा खेतान मारवाड़ी परम्परावादी रूढ़िवादी समाज की स्त्री के चिंतन को व्याख्यायित करती है वे स्त्री के लिए शिक्षा जागरुकता, आर्थिक आत्मनिर्भरता को परम आवश्यक मानती है क्योंकि इसी के द्वारा ही एक स्त्री अपने स्वयं और आत्म को पहचान सकती है और पुरुष के समान मानवीय धरातल पर स्वयं को स्वतन्त्र कर सकती है।

स्त्री अस्मिता की पहचान व प्रतिष्ठा के सवाल में चारों महिला लेखिकायें सशक्त भूमिका निभाती हैं, भले ही स्त्री अस्मिता के अलग-अलग प्रश्नों को भिन्न धरातल पर इन चारों महिला लेखिकाओं ने व्यक्त किया है। इन सभी महिला लेखिकाओं के रास्ते भले ही भिन्न हो पर लक्ष्य स्त्री अस्मिता की पहचान और प्रतिष्ठा प्राप्त करना, एक ही है।

सन्दर्भ सूची

1. मुकुन्दी लाल श्रीवास्तव, ज्ञान शब्द कोश, पृ० 740
2. प्रभा खेतान, प्रगतिशील वसुधा 78 जुलाई-सितम्बर, 2008, पृ० 43
3. कमला, ऋग्वेद में नारी, पृ० 40
4. वही, पृ० 49
5. शैलजा माहेश्वरी, हिन्दी व्यंग्य साहित्य में नारी, पृ० 47
6. पुरुषोत्तम अग्रवाल, संस्कृति वर्चस्व और प्रतिरोध, पृ० 68
7. सरिता कुमार, महिला कथाकारों की रचनाओं में प्रेम का स्वरूप, पृ० 129
8. कृष्णा सोबती, ऐ लड़की, पृ० 50
9. मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी, पृ० 72
10. मृणाल पांडे, देवी, पृ० 58
11. मृणाल पांडे, रास्तों पर भटकते हुए, पृ० 70
12. प्रभा खेतान, स० अरविन्द जैन, औरत, अस्तित्व और अस्मिता, पृ० 63
13. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, पृ० 165-166
14. प्रभा खेतान, पीली आंधी, पृ० 158

गगनदीप कौर

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी

चौधरी मनीराम गोदारा राजकीय महिला महाविद्यालय,

भोड़िया खेड़ा, फतेहाबाद

मोबाईल : 9729755149

हरियाणा

सारांशः

महाभारत केवल एक युद्धकथा नहीं, बल्कि धर्म, नैतिकता और मानवीय संवेदनाओं का गहन महाकाव्य है। इस ग्रंथ में पुरुष पात्रों के समानांतर नारी पात्र भी अत्यंत सक्रिय भूमिका निभाते हैं, जिसमें प्रतिशोध की भावना, आत्मसम्मान, धर्म-संरक्षण और सामाजिक न्याय की चेतना से प्रेरित होती है। द्रौपदी, गांधारी, कुंती, अम्बा जैसी स्त्रियाँ केवल पीड़िता नहीं, बल्कि जागरूक, निर्णयात्मक और परिवर्तनकारी शक्तियाँ हैं। यह शोध-पत्र इस बात का विश्लेषण करता है कि महाभारत में प्रतिशोध, स्त्रियों के माध्यम से किस प्रकार धर्म और नीति के पुनर्संस्थापन का माध्यम बनता है। यह अध्ययन प्रतिशोध को नकारात्मक क्रिया न मानकर एक नैतिक और आध्यात्मिक जागरण के रूप में देखता है, जो धर्म पुनर्संस्थापन के सिद्धांत "धर्मो रक्षति रक्षितः" की पुष्टि करता है।

बीज शब्द – महाभारत, नारी प्रतिशोध, धर्म, आत्मसम्मान, द्रौपदी, गांधारी, अम्बा, वेदान्त, स्त्री चेतना, भारतीय महाकाव्य, नैतिक संघर्ष, पौराणिक नारी।

प्रस्तावना

भारतीय धार्मिक और साहित्यिक परंपरा में नारी को प्रायः सहनशीलता, त्याग और करुणा की मूर्ति के रूप में चित्रित किया गया है। परंतु जब हम महाभारत जैसे विशाल ग्रंथ का विश्लेषण करते हैं, तो यह स्पष्ट होता है कि स्त्री पात्र केवल पीड़ा सहने वाली नहीं, अपितु सक्रिय रूप से अन्याय के विरुद्ध संघर्षरत होती हैं। उनका प्रतिशोध किसी व्यक्तिगत आक्रोश की अभिव्यक्ति न होकर धर्म और न्याय के पुनर्संस्थापन का प्रयास होता है।

द्रौपदी – धर्मनिष्ठ चेतना की प्रतीक

द्रौपदी, पंचालराज्य की तेजस्विनी यज्ञाग्निसंभवा कन्या, कोई साधारण स्त्री नहीं थीं। वे धर्म और आत्मगौरव की चिरंतन ज्वाला थीं। पांच पांडवों की पत्नी होकर भी वे किसी की संपत्ति नहीं, अपितु स्वतंत्र चेतना, मर्यादा और नारी स्वाभिमान की मूर्तिमान प्रतिमूर्ति थीं। जब हस्तिनापुर की राजसभा में, जहाँ धर्म और नीति का शासन होना चाहिए था, उन्हें द्यूतक्रीड़ा के पश्चात दुःशासन द्वारा केश पकड़कर घसीटा गया और चीरहरण का प्रयास हुआ, तो द्रौपदी की प्रतिक्रिया केवल अपमानित नारी की नहीं थी— वह थी धर्म और आत्मगौरव की विवेकपूर्ण अग्निचेतना। द्रौपदी ने क्रोध में नहीं, बल्कि चेतना में डूबकर सभा को संबोधित किया—

गच्छ त्वं कितवं गत्वा सभायां पृच्छ सूतज।

किं नु पूर्व पराजैषीरात्मानमथवा नु माम्॥१॥

— जाओ, जाकर पूछो — धर्मराज ने पहले किसे हारा, स्वयं को या मुझे? यह प्रश्न केवल विधिक स्थिति का नहीं, न्याय की आत्मा को

जगाने का आह्वान था।

जब सभा मौन रही, द्रौपदी ने पुनः धर्म की पुकार लगाई और कहा —
सोऽयं धर्मो मात्यगात् कौरवान् वै सभ्यान् गत्वा पृच्छ धर्म्यं वचो मे।

ते मां ब्रूयुर्निश्चितं तत् करिष्ये धर्मात्मानो नीतिमन्तो वरिष्ठाः॥२॥
— मेरे धर्म का अतिक्रमण न हो, इसीलिए तुम सभा में जाकर पूछो कि इस समय मुझे क्या करना चाहिए।

फिर द्रौपदी ने उस सभा की आत्मा को झकझोर दिया और तीव्र उद्घोष सभा की मर्यादा को चुनौती देते हुए कहा —

धिगस्तु नष्टः खलु भारतानां धर्मस्तथा क्षत्रविदां च वृत्तम्।

यत्र ह्यतीतां कुरुधर्मवेलां प्रेक्षन्ति सर्वे कुरवः सभायाम्॥३॥

— धिक्कार है उस धर्म पर, जो सभा में मौन रहकर स्त्री के अपमान को देखता है।

और उन्होंने समाज को आईना दिखाते हुए कहा —

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा न ते वृद्धा ये न वदन्ति धर्मम्।

नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति न तत् सत्यं यच्छलेनानुविद्धम्॥४॥

— वह सभा नहीं, जहाँ वृद्ध धर्म न बोलें, वह धर्म नहीं जिसमें सत्य न हो, वह सत्य नहीं जो छलयुक्त हो।

उनकी वह प्रतिज्ञा— जब तक दुशासन के रक्त से मेरे केश नहीं धोये जाते, तब तक इन्हें नहीं बाँधूंगी। महाभारत में नहीं, किंतु लोक परंपरा व वेणीसंहार जैसे नाट्यग्रंथों में द्रौपदी की प्रतिशोधमयी चेतना का सार बनकर उभरी। यह प्रतिज्ञा स्त्री की उस शक्ति की उद्घोषणा थी जो केवल आँसू नहीं बहाती, अपितु अन्याय के विरुद्ध धर्म के पुनर्संस्थापन हेतु ज्वालामुखी बन जाती है।

द्रौपदी की प्रतिशोध भावना केवल क्रोध से नहीं, न्यायबोध से प्रेरित थी। उनके प्रश्न — क्या धर्म की मर्यादा लुप्त हो गई है? और उनका दुःख— आज धर्म कहाँ है, जब एक सती स्त्री को सभा में घसीटा जाता है — समाज और सत्ता दोनों से उत्तर की मांग थी। उनकी चेतना उस क्षण केवल एक अपमानित स्त्री की नहीं, समूची नारी अस्मिता की प्रतिनिधि थी।

गांधारी – मौन तपस्विनी से शापवती चेतना तक

गांधारी, एक तपश्चर्यायुक्त क्षत्रिय नारी, जो धर्म और पतिव्रत्य की दीप्तिमान प्रतिमूर्ति थीं। जिस क्षण उन्होंने जाना कि उनका पति जन्मांध है, उसी क्षण उन्होंने अपनी दृष्टि का त्याग कर आँखों पर पट्टी बाँध ली। यह कोई मात्र बाह्य प्रतीक नहीं था, यह एक ऐसे संकल्प का उद्घोष था, जिसमें पत्नी अपने पति के अंधत्व को केवल सहन नहीं करती, बल्कि उसे अपने भीतर आत्मसात करती है। यह त्याग नहीं, एक आध्यात्मिक साधना थी। एक ऐसी चेतना का निर्णय, जो जीवन की सीमाओं से ऊपर उठकर आत्मनिष्ठा का उदाहरण

बनती है।

युद्ध के विकराल क्षण, जब कुरुक्षेत्र की धूल में पुत्रों का रक्त समाहित हो गया था। गांधारी ने अपने हृदय की गहराई से व्यथित होकर श्रीकृष्ण को शाप दिया था। यह कोई तात्कालिक आवेग नहीं था, बल्कि धर्म और अधर्म की संधि रेखा पर खड़ी एक माँ की आत्मगर्जना थी। वे जानती थीं कि श्रीकृष्ण, जिनमें समस्त कालों का बोध है, इस विनाश को टाल सकते थे। किंतु उनका मौन, उनकी उदासीनता, गांधारी की चेतना को उस बिंदु तक ले गई जहाँ शब्द शाप में परिवर्तित हो गए।

इच्छतोपेक्षितो नाशः कुरुणां मधुसूदन।

यस्मात् त्वया महाबाहो फलं तस्मादवाप्नुहि।।

— हे मधुसूदन! क्योंकि कुरुवंश के विनाश को तुमने जानते हुए भी रोका नहीं, इसलिए अब तुम भी उसी विनाश का फल भोगो।

तवाप्येवं हतसुता निहतज्ञातिबान्धवाः।

स्त्रियः परिपतिष्यन्ति यथैता भरतस्त्रियः।।

— हे वासुदेव! जैसे मेरी संतति और कुल का नाश हुआ, वैसे ही तुम्हारा यदुवंश भी नष्ट हो।

यह शाप उस न्याय की प्रतिध्वनि था, जो धर्मयुद्ध की समाप्ति के बाद भी मातृत्व की करुण वेदना को न शांत कर सका। यह प्रतिशोध क्रोधजनित नहीं था, बल्कि आत्मा की पीड़ा से उपजा हुआ वह आग्रह था, जो शोक को धर्म की भाषा में बदल देता है। यह प्रतिशोध गांधारी के हृदय की उस ज्वाला से जन्मा था, जिसमें उनके पुत्रों की चिताएँ नहीं, बल्कि समय की नैतिकता जल रही थी। श्रीकृष्ण स्वयं इस शाप को स्वीकार करते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि समय का न्याय तभी पूर्ण होता है जब संतुलन का पुनर्संस्थापन होता है।

वस्तुतः, गांधारी महाभारत की मौन चेतना हैं। वे न तो सभा में द्रौपदी के अपमान पर बोलती हैं, न ही युद्ध को रोकने का प्रयास करती हैं, किंतु जब वे बोलती हैं तब उनके शब्द केवल ध्वनि नहीं, इतिहास की दिशा को बदलने वाली नियति बन जाते हैं।

कुन्ती – नियति की करुण पुकार की संवाहिका

कुन्ती, केवल पांडवों की जननी नहीं थीं, वे तो उस परमशक्ति की प्रतीक थीं जो धर्म के बीज को समय की कठोर भूमि में बोकर उसे तप और त्याग के जल से सींचती है। वे नियति के करुण निनाद की वाहिका थीं। एक ऐसी नारी, जो जीवन के प्रत्येक मोड़ पर आत्मसंघर्ष और धर्मनिष्ठा का अपूर्व उदाहरण बनकर उभरीं।

महाराज शूरसेन की पुत्री और वसुदेव की भगिनी, जिनका पालन-पोषण महाराज कुन्तीभोज ने किया, वही नारी 'कुन्ती'

कहलायीं। यौवन की दहलीज पर पदार्पण करते ही उन्हें कठोर तपस्वी महर्षि दुर्वासा की सेवा का अवसर प्राप्त हुआ। दुर्वासा मुनि अपने उग्र स्वभाव और कठोर व्रतों के लिए विख्यात थे, किन्तु कुन्ती की विनम्र सेवा, श्रद्धा और तपस्या से वे इतने संतुष्ट हुए कि उन्होंने उसे एक दिव्य वरदान प्रदान किया –

यं यं देवं त्वमेतेन मन्त्रेणावाहयिष्यसि।

तस्य तस्य प्रसादेन पुत्रस्तव भविष्यति।।

— शुभे! तुम इस मन्त्र द्वारा जिस देवता का आवाहन करोगी, उसी की कृपा से तुम्हें पुत्र की प्राप्ति होगी।

तो उस यशस्विनी राजकन्या के चित्त में एक कौतूहल जगा। अभी वह अविवाहित थी, किन्तु उस रहस्य को परखने की उत्कंठा उसे रोक न सकी। उसने मन्त्र का प्रयोग कर सूर्यदेव का आवाहन किया। मन्त्र सिद्ध हुआ और एक दिव्य तेजस्वी बालक उसकी गोद में प्रकट हुआ। वही था कर्ण, जो बाद में महाभारत का एक विलक्षण पात्र बना। किन्तु लोकनिंदा, कुल मर्यादा और पारिवारिक भय ने कुन्ती को विवश कर दिया। हृदय फटा जा रहा था, आँसू बह रहे थे, लेकिन माँ अपने नवजात पुत्र को जलप्रवाह में छोड़ने के लिए बाध्य हो गई। उस क्षण उसकी पीड़ा इन शब्दों में फूट पड़ी—

स्वस्ति ते चान्तरिक्षेभ्यः पार्थिवेभ्यश्च पुत्रक।

दिव्येभ्यश्चैव भूतेभ्यस्तथा तोयचराश्च ये।।

—हे पुत्र! आकाश, पृथ्वी, दिव्य शक्तियों, समस्त जीवों और जल में निवास करने वाले प्राणियों से तेरा कल्याण हो!

कुन्ती द्वारा कुण्ठित आत्मा से किया गया त्याग केवल एक क्षणिक निर्णय नहीं था, अपितु वह एक ऐसा अमिट आघात था जिसने उनके अंतःकरण को जीवनभर क्षुब्ध किया। यह एक माँ की आत्मा में उठती पीड़ा थी, जो कभी नहीं थमी।

महाभारत युद्ध से पूर्व जब उन्होंने अपने पहले पुत्र कर्ण से एक माँ के रूप में मिलने का प्रयास किया, वह क्षण केवल एक पारिवारिक मिलन नहीं था अपितु वह एक आध्यात्मिक संगम था, जहाँ धर्म, मोह और नियति तीन धाराओं की तरह टकरा रहे थे। उस समय, कर्ण ने अपने भ्राताओं के प्रति अद्वितीय त्याग दिखाते हुए उन्हें जीवनदान दिया और जब वही कर्ण रणभूमि में वीरगति को प्राप्त हुआ, तब कुन्ती के भीतर वर्षों से संचित करुणा और ग्लानि फूट पड़ी। कुन्ती की आत्मग्लानि तब पूर्ण रूप से प्रकट हुई, जब उन्होंने स्वीकार किया –

कुरुध्वमुदकं तस्य भ्रातुरक्लिष्टकर्मणः।

स हि वः पूर्वजो भ्राता भास्करान् मय्यजायत।।

जिसे तुमने रणभूमि में शत्रु समझकर मारा, वह वास्तव में तुम्हारा बड़ा भाई था। उसका कर्म निष्कलंक था। अब उसके लिए

जलांजलि दो, जैसे एक भ्राता दूसरे भ्राता के लिए देता है। यह एक माँ की आत्मग्लानि, करुणा और धर्म के प्रति निष्ठा की अंतिम पुकार है – न केवल पुत्र के लिए, बल्कि सत्य के लिए भी।

कुन्ती का यह आत्मसंघर्ष, महाभारत के सबसे मौन और सबसे गहन प्रतिशोधों में से एक है। यह प्रतिशोध किसी शत्रु के विनाश का नहीं, अपितु स्वयं के भीतर जली आत्मग्लानि, करुणा और धर्म के अनवरत संघर्ष का था।

सत्यवती – मातृशक्ति की महाभाग्यवती नियंता

सत्यवती, केवल निषाद कन्या नहीं, हस्तिनापुर के भाग्य की सूत्रधार थी। मत्स्यगंधा से सत्यवती तक की उनकी यात्रा आत्मबोध और सत्ता-चेतना की यात्रा थी। ऋषि पराशर से प्राप्त वरदान ने उन्हें दिव्यता दी और वेदव्यास जैसे महापुरुष को जन्म देकर उन्होंने धर्म की धुरी को स्थिर किया।

जब उन्होंने शांतनु से विवाह की शर्त रखी कि उनके गर्भ से उत्पन्न संतान ही राजा बने, तो यह एक साधारण स्त्री की आकांक्षा नहीं थी, बल्कि राजनीतिक प्रतिशोध का परोक्ष बीज था – जो एक माता ने अपने पुत्र के लिए बोया। यही वह क्षण था जिसने देवव्रत को भीष्म बना दिया।

यह प्रतिशोध तलवार का नहीं था, युक्ति का था। उन्होंने योग्य होते हुए भी एक राजपुत्र को सत्ता से दूर कर दिया, क्योंकि सत्ता से अधिक महत्त्व वंश की उत्तरजीविता का था और जब वही वंश संकट में पड़ा, तो उन्होंने नियोग परंपरा को पुनर्स्थापित कर तीन पुत्र उत्पन्न कराए – धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर, जो कुरुवंश की धुरी बने।

सत्यवती का यह संकल्प प्रतिशोध का वह रूप था, जिसमें स्त्री अपने मौन से इतिहास बदलती है। उनका प्रतिशोध घातक नहीं, रचात्मक था जिसमें त्याग, दूरदर्शिता और मातृत्व की सत्ता सम्मिलित थी।

अम्बा – क्रोधाग्नि में तप्त संकल्प की अग्निशिखा

काशी-नरेश की जेष्ठा सुता अंबा, केवल राजकन्या नहीं, अपितु अपने भाग्य के उच्छेद की विधायिनी, न्याय की याचना से जन्मे युगांतर की चिरस्मरणीय प्रतीक बन गई। विवाह के स्वप्न संजोए, जब वह स्वयंवर हेतु उद्यत हुई, तब भाग्य की रेखाएं भीष्म की प्रत्यंचा पर बंधी चली गई।

राजनैतिक युक्ति से भीष्म ने काशी की तीन राजकन्याओं का हरण कर उन्हें कुरु वंश के लिए संग्रहीत किया, परन्तु अंबा के हृदय में पहले ही शाल्वराज का अनुराग अंकित था। जब इस अनुराग को भीष्म ने मान्यता नहीं दी और स्वयं ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा के बंधन में बंधे रहे, तब अंबा के हृदय में अपमान और अस्वीकार की ज्वाला प्रज्वलित हुई।

यह वह क्षण था जब स्त्री के कोमल चित्त में प्रतिशोध की लौ जल उठी, नारीत्व का वह पक्ष, जो केवल द्रव नहीं, दाह भी है। अंबा ने निश्चय किया कि वह उस पुरुष को नष्ट करेगी जिसने न तो उसे स्वीकारा और न त्यागकर मुक्त ही किया।

नारी के आत्मसम्मान पर किया गया आघात जब धर्म और प्रतिष्ठा के समक्ष उतरता है, तब वह प्रतिशोध का रूप धारण करता है। अंबा ने तपस्या की ज्वाला में स्वयं को तपाया, देवताओं को स्तब्ध कर देने वाली घोर साधना की। देवताओं के आशीर्वाद से अंबा को पुनर्जन्म मिला— शिखंडी के रूप में, एक ऐसे योद्धा के रूप में जो नारी और पुरुष दोनों के स्वरूप को धारण करता था। यही शिखंडी कुरुक्षेत्र की रणभूमि में भीष्म के समक्ष उपस्थित हुआ और भीष्म जैसे अपराजेय वीर ने उसी के कारण अपने शस्त्र त्याग दिए। इस प्रकार अंबा के प्रतिशोध ने धर्मयुद्ध में निर्णायक भूमिका निभाई।

अंबा का प्रतिशोध एक नारी की आत्मशक्ति का उदाहरण है जो समय, जन्म और मृत्यु से परे जाकर धर्म के नाम पर हुए अन्याय का उत्तर बनती है।

माद्री – मौन तपश्चर्या में धृक्कता आत्मिक प्रतिशोध

माद्री, मद्रदेश की राजकन्या और पांडु की परमप्रिय पत्नी, केवल अप्रतिम सौंदर्य की मूर्ति नहीं थीं, बल्कि एक ऐसी आत्मा थीं, जिनके अंतर्मन में मौन, मगर तीव्र, प्रतिशोध की ज्वाला सतत प्रज्वलित रही। उनके व्यक्तित्व में जहाँ सौंदर्य की कोमल छाया थी, वहीं नियति की विषम विडंबनाओं से उत्पन्न एक निस्तब्ध पुकार भी गूंजती थी।

कुंती को प्राप्त दिव्य मंत्रों के माध्यम से संतानोत्पत्ति की संभावना बनी और उसी उपाय से माद्री ने नकुल व सहदेव को जन्म दिया। मातृत्व की यह क्षणिक अनुभूति उनके जीवन का उजास बनी, किंतु इसके उपरांत, पांडु एक बार पुनः माद्री के रूप पर मोहित हुए। वह एक क्षणिक वासना, जिसने उनका जीवन समाप्त कर दिया।

यहाँ माद्री का कोई दोष नहीं था, फिर भी उन्होंने स्वयं को उस मृत्यु का मौन कारण मानते हुए आत्मग्लानि की अग्नि में जलने का निर्णय लिया। उन्होंने कुंती से प्रार्थना की कि वह पांचों पांडवों की माता बनकर उनकी भूमिका निभाएं और उन्हें यह अंतिम कर्तव्य निभाने दें—

राज्ञः शरीरेण सह ममापीदं कलेवरं।

दग्धव्यं सुप्रतिच्छन्नं एतद् आर्ये प्रियं कुरु॥^{१०}

— मेरे इस शरीर को महाराज के शव के साथ ही आदरपूर्वक अग्नि में समर्पित कर देना, हे आर्ये (कुंती), यही मेरा अंतिम अनुरोध है।

और फिर –

इत्युक्तवा तं चिताग्निस्थं धर्मपत्नी नरर्षभम् ।

मद्राजसुता तूर्णं अन्वारोहद् यशस्विनी ।।₁

– इतना कहकर, धर्मपत्नी माद्री, जो यशस्विनी थीं, पांडु के शव के साथ चिता पर चढ़ गईं ।

यह केवल सती होने का निर्णय नहीं था, यह कोई पलायन नहीं था, यह प्रतिशोध था । यह प्रतिशोध था उनके अपने रूप से, उनके सौंदर्य से, उस नियति से जिसने उनके जीवन की सबसे बड़ी पूंजी, उनके प्रिय को उनसे छीन लिया । यह प्रतिशोध बाह्य नहीं, बल्कि आत्मिक था, यह आक्रोश नहीं, आत्मदाह था, यह आर्त क्रंदन नहीं, मौन तपश्चर्या थी ।

माद्री का प्रतिशोध मौन किंतु धर्मनिष्ठ आत्मदान था । उन्होंने सिद्ध किया कि नारी केवल अनुसरण करने वाली नहीं, अपितु स्वतंत्र निर्णय की सक्षम धुरी है । उनका त्याग और अग्निस्नान स्त्री की उस शक्ति का प्रतीक है, जो वेदना में भी धर्म और आत्मबल का प्रकाश बन जाती है ।

उत्तरा – अग्निदीप्त अश्रु की तेजस्विनी बेला

उत्तरा, विराट नगरी के पराक्रमी राजा विराट की पुत्री, अभिमन्यु की अर्धांगिनी और अर्जुन की बहू थीं । वह मात्र एक राजकन्या या वीरपत्नी नहीं, अपितु उस नारी की प्रतीक थीं, जिसके गर्भ में भविष्य का धर्म बीज रूप में पल रहा था । जब अभिमन्यु चक्रव्यूह में वीरगति को प्राप्त हुए, तब उत्तरा का हृदय विदीर्ण हो उठा । किन्तु उसी क्षण उसके गर्भ में वह तेजस्वी प्राण विकसित हो रहा था । द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने उत्तरा के गर्भ को लक्ष्य कर ब्रह्मास्त्र प्रक्षिप्त किया । उस अंधकार में एक माँ की करुण पुकार उठी । वह उत्तरा थी, जो भागती हुई, काँपती हुई, हृदय विदीर्ण किए हुए, भगवान श्रीकृष्ण की शरण में पहुँची । वह पुकार प्रतिशोध नहीं थी, वह न्याय की याचना थी । एक माँ, जिसने पति को खोया, अब संतान को खोने की पीड़ा में विवश होकर ईश्वर से कह रही थी–

पहि पाहि महायोगिन् देवदेव जगत्पते । नान्यं त्वदभयं पश्ये

यत्र मृत्युः परस्परम् ।।₂

– रक्षा कीजिए! रक्षा कीजिए, हे महायोगी! हे देवों के देव! हे सम्पूर्ण जगत के स्वामी! जहाँ मृत्यु हर ओर व्याप्त है, वहाँ मैं आपके अतिरिक्त किसी ओर में अभय (सुरक्षा) नहीं देखती ।

श्रीकृष्ण ने दिव्य चक्र से गर्भ की रक्षा की और परीक्षित को पुनर्जीवन प्रदान किया । उत्तरा के हृदय में प्रतिशोध वध के रूप में नहीं, अपितु संरक्षण और धर्म की अविरलता के रूप में प्रकट हुआ । वह नारी, जो अपना सब कुछ खो चुकी थी, फिर भी अपने गर्भस्थ शिशु के माध्यम से भविष्य को गढ़ने हेतु खड़ी रही । यह प्रतिशोध का एक उत्कृष्ट आदर्श है, जो मातृत्व की गरिमा में स्वर्णाक्षरों से अंकित हुआ ।

निष्कर्ष

महाभारत की स्त्रियाँ केवल दया, ममता और सहनशीलता की पारंपरिक प्रतिमाएँ नहीं हैं, बल्कि वे प्रतिशोध, आत्मसम्मान और न्याय की सजग और सक्रिय संवाहक हैं । उनका प्रतिशोध कभी भी केवल व्यक्तिगत आक्रोश या विद्वेष नहीं है, बल्कि वह धर्म और नीति के पुनर्संस्थापन के उद्देश्य से प्रेरित एक सशक्त नैतिक निर्णय है । द्रौपदी, गांधारी, अम्बा, कुंती, सत्यवती, माद्री और उत्तरा – इन सभी स्त्रियों ने किसी न किसी रूप में अन्याय के विरुद्ध खड़े होकर धर्म के पक्ष में निर्णायक भूमिका निभाई । इन स्त्रियों का प्रतिशोध विविध स्वरूपों में प्रकट होता है, कभी संकल्प, कभी शाप, कभी आत्म-बलिदान, तो कभी मौन संघर्ष के रूप में । यह प्रतिशोध केवल क्षणिक प्रतिक्रिया नहीं, अपितु धर्म-संरक्षण, सामाजिक न्याय और सांस्कृतिक पुनर्रचना की एक दीर्घकालिक चेतना है । उनके माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री शक्ति केवल रक्षण की नहीं, अपितु परिवर्तन और पुनर्संस्थापन की भी वाहक होती है ।

महाभारत की स्त्रियाँ हमें यह सिखाती हैं कि जब अधर्म अपने चरम पर होता है, तो नारी का अडिग संकल्प एक नैतिक और आध्यात्मिक ऊर्जा में परिवर्तित होकर धर्म के पुनर्संस्थापन का माध्यम बनता है । उनका प्रतिशोध केवल विनाशक नहीं बल्कि विवेक, समर्पण और भविष्य की दिशा निर्धारित करने वाली शक्ति होता है ।

संदर्भ

1. महाभारत, सभा पर्व, अ.67 श्लो.7
2. वही, अ.67 श्लो.16
3. वही, अ.67 श्लो.40
4. वही, अ.67 श्लो.52
5. महाभारत, स्त्री पर्व, अ.25 श्लो.41
6. वही, अ.25 श्लो.46
7. वही, अ.110 श्लो.7
8. महाभारत, वन पर्व, अ.308 श्लो.10
9. महाभारत, स्त्री पर्व, अ.27 श्लो.12
10. महाभारत, आदि पर्व, अ.124 श्लो.29
11. वही, अ.124 श्लो. 31
12. श्रीमद्भागवतमहापुराण, स्क.1 अ.8 श्लो.9

संदर्भ ग्रंथ

- महाभारत, अनुवादक, पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम', गीता प्रेस, गोरखपुर ।
- श्रीमद्भागवतमहापुराण, महर्षि वेदव्यास-प्रणीत, गीता प्रेस, गोरखपुर ।

डॉ० सुमन,

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत
आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी ।

हरियाणा

Email: sarichwal@gmail.com

सारांश:

‘स्त्री’ शब्द प्रायः वयस्क स्त्रियों के लिए प्रयोग किया जाता है। कई संदर्भों में यह शब्द स्त्री वर्ग को चित्रित करने के लिए प्रयोग किया जाता है; यथा— स्त्री अधिकार, स्त्री विमर्श आदि। वैदिककाल से ही भारतीय संस्कृति में स्त्री का स्थान सम्माननीय रहा है और कहा भी गया है, “यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवताः। यत्रेतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला क्रियाः।” जिस कुल में स्त्री की पूजा की जाती है वहाँ देवता निवास करते हैं। वैदिककाल की मान्यता के अनुसार खेती का प्रारंभ व बस्ती बनाकर रहने की शुरुआत भी स्त्री ने की है इसीलिए सभ्यता और संस्कृति के प्रारंभ में स्त्री ही है। किंतु कालांतर में धीरे-धीरे सभी समाजों में सामाजिक व्यवस्था मातृसत्तात्मक से पितृसत्तात्मक होती चली गई। आर्यों की सभ्यता और संस्कृति के प्रारंभ में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी। इससे पूर्व ऋग्वेदकाल में स्त्रियाँ सर्वोच्च शिक्षा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करती थी और सभी कार्यों में स्त्री की केंद्रीय भूमिका होती थी। अर्धनारीश्वर की कल्पना स्त्री-पुरुष के समान अधिकारों तथा उनके संतुलित संबंधों का परिचायक है। चूँकि परिवर्तन संसार का नियम है। समय, काल एवं स्थान के अनुरूप परिवर्तन होना अवश्यभावी है। स्त्री जीवन व स्त्री की पारिवारिक, सामाजिक भूमिका में भी परिवर्तन आना स्वाभाविक है। स्त्री की स्थिति में अनेक परिवर्तन हो चुके हैं और अनेक अभी होने शेष हैं। स्त्री प्रकृति का अनिवार्य तत्त्व है इसके बिना सृष्टि की कल्पना करना भी संभव प्रतीत नहीं होता। चूँकि साहित्य समाज का दर्पण है तो फिर समाज का अभिन्न अंग स्त्री जीवन इससे अछूता कैसे रह सकता है। रचनाकार अपनी लेखनी के माध्यम से स्त्री-जीवन के विभिन्न पक्षों को व्यक्त कर अपनी रचना में नवीन उन्मेष भरता है।

बीज शब्द : पोनोग्राफी, अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन, कामतृप्ति, अस्तित्व, तलाक, पुनर्विवाह, आत्मनिर्भर।

प्रस्तावना : प्रवासी महिला रचनाकारों में अर्चना पैन्थूली अपनी मौलिक प्रतिभा एवं लेखनी के माध्यम से वैश्विक साहित्य जगत् में अमिट छाप बना चुकी हैं। इनका लेखन अबाध गति से जारी है। इनके अभी तक चार उपन्यास (परिवर्तन, वेयर डू आई बिलांग, पॉल की तीर्थयात्रा, कैराली मसाज पार्लर), एक डेनिश-हिंदी अनुवाद, चार कहानी संग्रह (हाईवे E47, कितनी माँएँ हैं मेरी, कथा सप्तक, मेरी मदरबोर्ड, प्रकाशनाधीन), सात अंग्रेजी पुस्तकें और अनेक काव्य रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी अनेक कहानियाँ प्रतिष्ठित पत्रिकाओं एवं प्रवासी विशेषांक में प्रकाशित हो चुकी हैं। इनका ‘वेयर डू आई बिलांग’ उपन्यास अंग्रेजी में तथा ‘कैराली मसाज पार्लर’ उपन्यास अंग्रेजी, इटालियन, कन्नड़

और मराठी भाषा में प्रकाशित हो चुका इन्हें अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों एवं पुरस्कारों से पुरस्कृत एवं सम्मानित किया जा चुका है। इनके द्वारा रचित भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित ‘कैराली मसाज पार्लर’ उपन्यास में स्त्री जीवन के अनेक पहलुओं को रेखांकित किया गया है। आत्मकथात्मक शैली में रचित उपन्यास ‘कैराली मसाज पार्लर’ की मुख्य नायिका नैन्सी ‘पॉल की तीर्थयात्रा’ उपन्यास के प्रमुख पात्र पॉल के समक्ष अपनी जिंदगी के तीन दशकों की कहानी सुनाती है। ‘कैराली मसाज पार्लर’ उपन्यास ‘पॉल की तीर्थयात्रा’ का अगला पड़ाव है। पॉल के अपनी पत्नी की बरसी पर पदयात्रा करने से पैरों में छाले पड़ जाते हैं, वह गूगल पर सर्च करता है और नैन्सी के ‘कैराली मसाज पार्लर’ में मसाज के लिए पहुंचता है। इसी पॉल के समक्ष नैन्सी अपने तीस वर्ष पूर्व पहुंचकर अपने जीवन का चिट्ठा खोल देती है किस प्रकार उसने तीन दशकों में चार महाद्वीपों की यात्रा कर जीवनयापन किया। “तीन पति मैंने बदले और हर बार जब भी मैंने पति बदला मुझे अपना पिछला पति अगले से बेहतर लगा। सबसे पहले पति के साथ मैं नौ वर्ष रही, दूसरे के साथ आठ वर्ष और तीसरे के साथ सात साल बाद ही रहना मुश्किल हो गया।” नैन्सी के दो बेटे हैं— एक पहले पति से तथा एक तीसरे पति से। इनके पहले पति अब्राहम, दूसरे लार्स हैनसन और तीसरे मार्को। वह पॉल को बताती है कि मैंने एक के बाद एक तीन प्रेम विवाह किए लेकिन मेरी किसी से नहीं बनी। मुझे इन सभी से धोखा ही मिला। पहले पति अब्राहम ने मेरे साथ छल किया, दूसरे पति लार्स हैनसन ने मारा पीटा तथा तीसरे पति मार्को ने मुझे एक-एक पैसे के लिए तरसा कर रखा। धर्म उपदेशक, चर्च के पुजारी, दोहरा जीवन जीने पर विवश अब्राहम पोनोग्राफी पुस्तकें पढ़ता, नग्न औरतों के चित्र देखता। नैन्सी के लिए यह सब बेहद चौंकाने वाला भयावह और विनाशकारी आघात था। “मेरा पादरी पति चरित्रहीन है, औरतबाज है। उसे एक नहीं कई औरतें चाहिए।” व्याभिचारी, पापी, संस्कारहीन, दुराचारी, चरित्रहीन अब्राहम अपने सेक्सुअल बिहेवियर को कंट्रोल नहीं कर पा रहा था। वह चर्च में अनेक औरतों के साथ शारीरिक संबंध बनाकर अपनी मर्दानगी कायम रखता। पति-पत्नी के पवित्र रिश्ते को वह लील रहा था जबकि पति-पत्नी के रिश्ते में एक-दूसरे के प्रति निश्ठावान रहना अनिवार्य है। नैन्सी अपने पति को समझाती, “तुममें बहुत सारी खूबियाँ हैं तुम एक बहुत अच्छे पति बन सकते हो बस ये औरतें छोड़ दो। मैं जिंदगी भर पति परमेश्वर समझ कर तुम्हारी पूजा करूंगी।” लेकिन अब्राहम कहता मैं केवल तुमसे ही प्यार करता हूँ और उनके साथ सेक्स। सेक्स की इस लत से अब्राहम नैन्सी की नजरों में बिल्कुल गिर चुका था। वह पादरी के रूप में व्याभिचारपूर्ण जीवन

व्यतीत कर रहा था। नैन्सी अपना सारा दुख दर्द अपने भाई नील के साथ बाँटती और वह उसे अब्राहम को छोड़ने का सुझाव देता लेकिन नैन्सी पूर्णरूपेण आर्थिक रूप से अब्राहम पर निर्भर थी। वह अब्राहम के बेटे को जन्म भी देती है जिसका नाम जोशुआ रखा जाता है जिससे उसकी जिंदगी में एक नया मोड़ आता है।

मानव जीवन में परिस्थितियाँ पल-पल परिवर्तित होती रहती हैं। यदि जिंदगी हंसाती है तो रुलाती भी है लेकिन मनुष्य प्रत्येक परिस्थिति में आगे बढ़ने की लालसा रखता है। नैन्सी नए देश, नई जिंदगी की तलाश में अब्राहम के साथ अफ्रीकी देश केन्या में अंतरराष्ट्रीय प्रवासन करती है ताकि अब्राहम का इन औरतों/रंडियों से पीछा छूट सके लेकिन अब्राहम यहां भी अफ्रीकन औरतों के चंगुल में फंस जाता है। उसकी ये लत बढ़ती जा रही थी। अब्राहम इंटरनेशनल चर्च में पादरी बन यहाँ की नन से भी सेक्स करता था। धर्म की आड़ को लेकर अब्राहम का यह दुराचार नैन्सी को सहन नहीं होता था। “हे ईश्वर! यह नरकवास मुझे समझ नहीं आता था कि मैं कहां जाऊँ, क्या करूँ। बस रोती रहती। छि! क्या हो तुम? धर्म की बात करते हो, तुम्हारे जैसा अधर्मी इंसान तो कोई भी नहीं होगा। इंसानी खाल में छिपा भेड़िया।” दुनिया में औरतें मौत के घाट उतर सकती हैं लेकिन यह अपमान सहन नहीं कर सकती। नैन्सी अब्राहम से कहती तुम्हें कभी भी किसी भी औरत से कामतृप्ति नहीं मिलेगी, तुम ऐसे ही एक के बाद दूसरी, तीसरी, चौथी औरतों में भटकते रहोगे और अंत में अकेले रह जाओगे तब तुम्हारा साथ देने के लिए न बीवी होगी और न ही वे रंडियाँ। भारी दुख, उदासी, क्रोध, बेचैनी, भय, सदमे से अवसादपूर्ण नैन्सी इस देश में भी स्वयं को अकेली महसूस करती है। आठ साल अब्राहम के साथ जिंदगी गुजार नई डगर तलाशने हेतु इनसे अलग होने का निर्णय लेती है। अपने भाई नील का लिखा नोट अब्राहम को सौंप देती है जिससे अब्राहम खामोश हो जाता है। कोई भी भाई अपनी बहन को दुखी होते नहीं देख सकता। नील पहले भी कई बार कह चुका था जिंदगी बहुत छोटी है इसे कल पर नहीं टालना चाहिए। ऐसे में नैन्सी अपने अस्तित्व को पहचान और नई राह तलाशने के लिए अपना कदम बढ़ाती है वह ऐसे व्यक्ति की तलाश करती है जो उसके प्रति वफादार हो उसके चेहरे पर मुस्कान ला सके उसकी जिंदगी को सुकून दे सके। उसकी लार्स हैनसन नामक डेनिश व्यक्ति से मुलाकात होती है जो नैन्सी की जिंदगी में दस्तक देता है वह दो लोगों के साथ मिलकर स्टार्ट कंपनी में आईटी का बिजनेस करता है। दोनों एक-दूसरे से भली-भाँति परिचित होते हैं। अपने शोक, ख्वाहिशें जाहिर करते हैं, डेटिंग करते हैं। वह लार्स के सामने अपने पति अब्राहम का सच रखती है किस प्रकार वह उनके साथ

परित्यक्त जीवन जी रही है अब वह और सहन नहीं कर सकती। वह अब्राहम से भी स्पष्ट तौर पर कह देती है, “देख अब्राहम मैंने तुझे बहुत झेल लिया। बहुत ही अधिक जलील, अपमानित हो चुकी हूँ तेरे साथ...। क्या कमी थी मुझमें जो तू हमारी शादीशुदा जिंदगी को ताक पर रखकर पराई औरतों के पास जाता रहा। तूने अवैध यौन संबंध बनाये। वह भी कई औरतों से। मेरे रोकने पर भी नहीं रुका। महज पार्टीबाजी करना, औरतों को भोगना...। तेरी जिंदगी औरतों में डूबी हुई है। तेरी क्षुद्र वासना में मेरे लिए कोई जगह नहीं है। मैं तुझे छोड़ रही हूँ। यीशु भी ऐसी अनैतिकता में तलाक की अनुमति देता है।” अब्राहम नैन्सी के शब्द सुनकर उसे खुदगर्ज, हरामखोर, चालाक औरत कहकर संबोधित करता है लेकिन नैन्सी अब पीछे हटने वाली नहीं थी। वह लार्स के सामने अब्राहम का सारा सच रख चुकी थी। वह अपने बेटे जोशुआ को लेकर लार्स के साथ उसके मुल्क डेनमार्क (यूरोप) आ जाती है वह नहीं जानती थी कि उसके द्वारा चुनी नई राहें क्या अंजाम लाएँगी। यहाँ नैन्सी के समक्ष अनेक प्रश्नचिन्ह खड़े हो जाते हैं किस प्रकार उसकी वैवाहिक जिंदगी शांतिपूर्ण और समृद्ध रहेगी। क्योंकि नैन्सी अपनी सांस्कृतिक विरासत के मध्य स्वच्छंद डेनिश जीवन शैली को देखती है। यूरोप में स्त्री-पुरुष का बगैर विवाह किए एक साथ रहना सामान्य बात है जबकि नैन्सी के संस्कार उस पर हावी रहते। वह लार्स हैनसन से शादी का प्रस्ताव रखती है और एक माह बाद उनकी शादी भी हो जाती है। अब नैन्सी मिसेज हैनसन बन जाती है। नैन्सी के लिए यहाँ घर, परिवार, परिवेश, सरनेम सब अलग था। वह पूर्व पति अब्राहम के साथ बड़े खुले चहल-पहल वाले घर में थी लेकिन नये पति के साथ एक तंग फ्लैट में थी। लार्स अपने माता-पिता की इकलौती संतान थे। उनके माता-पिता का तलाक हो चुका था लेकिन नैन्सी अपनी सास लारा से मिलने जाती रहती। वह यहाँ की जीवन शैली से अवगत होती है। लार्स और नैन्सी की शादी को कुछ ही माह हुए थे कि दोनों में वैचारिक मतभेद घर कर जाता है और लार्स नैन्सी पर हाथ उठाना शुरू कर देता है। “एक बार जिस पति का हाथ उठ गया फिर उसका रुकना मुश्किल है। हिंसा एक मानसिक विकार है। जब भी उसे मेरी कोई बात जरा भी अखरती, ले झट से थप्पड़ जड़ देना, मेरे बाल खींचने लग जाना, बांह मरोड़ देना, मुझे धक्का दे देना।” यह सब नैन्सी के लिए असहनीय था। लार्स का हिंसक रवैया नैन्सी उसकी नाकामयाबी महसूस करती है और अपनी किस्मत को दोष देती है। “क्या फूटी किस्मत है मेरी! पहला पति चर्च का पुजारी और अश्लील साहित्य का शौकीन... औरतों के साथ रंगरलियाँ मनाना। दूसरा पति एक सभ्य मुल्क का नागरिक और गंवारों की

तरह मारपीट व गाली गलौज करता है।" नैन्सी हार न मानकर अपने पति का विश्वास जीतने का प्रयास करती है। वह उनके लिए मनपसंद खाना बनाती है लेकिन लार्स उसे मानसिक और शारीरिक यातनाएं देने से बाज नहीं आता। नैन्सी बहुत ही सकारात्मक प्रवृत्ति की क्षमाशील स्त्री है। वह गलत चीजों का विरोध कर आगे बढ़ने का प्रयास करती रहती है। वह लार्स का घर छोड़ महिला आश्रय गृह में शरण लेती है। यहाँ 21 से 65 वर्ष की महिलाएँ सम्मिलित थी। इन सभी औरतों की अपनी एक दुःख भरी दास्तां थी जो अपने हिंसक पतियों के दुर्व्यवहार से यहाँ आई हुई थी। प्रत्येक महिला एक-दूसरे से अपने जीवन की करुण कहानी साझा करती है। सिख महिला जसबीर अपने उत्पीड़न की दास्तां बयां करती है किस प्रकार वह अपने पति के साथ पंजाब के कपूरथला जिले में श्रमिक का काम करती हैं और सारा पैसा उसका पति अपने परिवार में भेज देता है दोनों में कहा-सुनी होती है और उसका पति उसके पेट में चाकू घोंप देता है। घाना की अबीना कहती है कहने को तो मेरा पति मर्क शिपिंग कम्पनी में अधिकारी है लेकिन वह उसे डायन और चुड़ैल ही पुकारता है। दिन-रात गालियाँ देता रहता है। वह मानसिक तनाव का शिकार हो जाती है। पाकिस्तान की बेनजीर कहती है मेरे मियां अपनी सारी कमाई शराब पीने में खर्च कर देते हैं और हिंसक हो जाते हैं सारी मेरी बचत छीन लेते हैं। लेबनान की 21 वर्षीय लंबी छरहरी अपनी जिंदगी का कड़वा सच बयां करती है किस प्रकार उसका पति उसे इस मुल्क में लेकर आया था और वह सोचती कि अच्छा घर होगा, वर होगा, पति के साथ हंसी खुशी जीवन व्यतीत करेगी लेकिन वह तो मुझे रंडी बनाने में तुला हुआ है दूसरे आदमियों से मुझे... मैं मना करती हूँ तो पीटा करता है सुलगती सिगरेट मुझ पर दागता है। स्टोर में चिमटा गर्म करके मुझ पर बरसाता है। पाकिस्तान की बेनजीर उर्दू में कहती – "हाय रे रब्बा! क्या किया यह सितम? मेरा रांझा बन गया मेरे खून का प्यासा...। और साथ में नैन्सी भी गुनगुनाती – जो अब कियो हो दाता ऐसा ना कीजो। अगले जन्म मोहे बिटिया ना कीजो..."

अतः यहाँ हर किसी की एक दुःख भरी कहानी थी। सभी स्त्रियाँ अपने पतियों की हिंसक प्रवृत्ति का शिकार थी। नैन्सी जून की छुट्टियों में अपने देश इंडिया मलप्पुरम अप्पा के पास लौट आती है और उन्हें अपनी दुःख भरी कहानी सुनाती है जिसे सुनकर उसके पिता आहत होते हैं और व्यथित भाव से कहते हैं तुम्हें लार्स के साथ रहने की कोई जरूरत नहीं है तुमने इतना सब कैसे सहन कर लिया आप तो हर्शोल्लासपूर्ण दांपत्य जीवनयापन कर रही थी यह सब कैसे हुआ? "जितनी जल्दी हो सके, उस दृष्ट आत्मा से छुटकारा पा। मेरी फूल सी लड़की को वह हरामी

पीटा करता है नरक में भी जगह नहीं मिलेगी उसे। अपनी तो कोई औलाद नहीं हुई जो किसी दूसरे की औलाद का दर्द समझे। पूरा बर्बाद हो जाए, सड़ जाए। उस पर कीड़े पड़े...। वह गल जाए।" कोई भी माता-पिता अपने बच्चों को दुखी नहीं देख सकता। नैन्सी की अम्मा की मौत हो चुकी थी लेकिन उसके अप्पू अभी जिंदा थे अपनी बेटा का साथ देने के लिए उसकी हौसला आफजाही के लिए। नैन्सी की माँ की मौत के बाद कुंजम्मा ने इन्हें पाल पोशकर बड़ा किया था। वह उसे भी अपनी दुखभरी कहानी कहती है। कुंजम्मा नैन्सी को आश्वासन देती है। नैन्सी के अप्पू की मौत हो जाती है इनके सिर से माता-पिता दोनों का साया उठ चुका था। धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण होने पर नैन्सी वापस डेनमार्क लौट आती है उनकी जिंदगी में एक के बाद दूसरा, तीसरा हादसा हो रहा था। उनकी जिंदगी की नदी कई भटकती हुई धाराओं में परिवर्तित हो चुकी थी। यह सत्य है कि मनुष्य अपनी जिंदगी की सभी घटनाओं पर नियंत्रण नहीं रख सकता। सुख-दुख उसके जीवन के पहलू हैं। अच्छा वक्त जहाँ मनुष्य को खुशी देता है वहीं बुरा वक्त मनुष्य को मजबूत बनाता है। नैन्सी का दूसरा तलाक भी तय समय में शुरू होकर खत्म भी हो गया। वह 40 की दहलीज पर खड़ी थी लेकिन उसकी जिंदगी अभी खत्म नहीं हुई थी। वह पुनः अपनी जिंदगी को समेटने का प्रयास करती है। स्कूल के साथियों के साथ नैन्सी के मधुर संबंध थे। एक दिन उनकी फ्रेंड कैटरिना के घर पार्टी थी जहाँ उसकी मुलाकात मार्को से होती है। मार्को फ्रांसीसी आदमी था जिनका पूरा नाम मार्को जोली लेरॉय था। दोनों में परस्पर संवाद स्थापित होता है। "मुझे एक ऐसे हमदर्द की तलाश है जो आर्थिक रूप से मजबूत हो सहयोगी हो और भावनात्मक रूप से स्थिर हो, जिससे मैं खुलकर बात कर सकूँ, कोई ऐसा व्यक्ति जो मुझे हंसा सके।" नैन्सी की मार्को से नजदीकियां बढ़ने लगती हैं। वह 18 साल के लड़के की मां और मार्को से उम्र में 6 साल बड़ी है जिस पर मार्को कहता है मुझे कोई कमसिन छोकरी नहीं चाहिए, मैं परिपक्व, अनुभवशील औरतें पसंद करता हूँ। नैन्सी इनके साथ वीकेंड बिताने जाती। धीरे-धीरे जैसे रिश्ता आगे बढ़ने लगा, नैन्सी मार्को के समक्ष शादी का प्रस्ताव रखती है जिसे मार्को यह कहकर मना कर देता है कि शादी खुशहाल परिवार की गारंटी नहीं है। भारतीय संस्कारों से ओतप्रोत नैन्सी को रिलेशनशिप में रहना गवारा नहीं था। वह उन्हें रिलेशनशिप में रहने से मना कर देती है। मार्को 14 फरवरी वैलेंटाइन डे के दिन नैन्सी से शादी करने का प्रस्ताव रखता है और उनकी उँगली में हीरे की अंगूठी पहना देता है। शादी में जो भी रीति रिवाज होते हैं वह सब किए जाते हैं। दोनों पति-पत्नी के रिश्ते में बंध जाते हैं। अपनी प्रत्येक शादी

के बाद नैन्सी अपने पति का सरनेम अपनाती है। अब वह नैन्सी लेख्य बन चुकी थी। बहुत-सी प्रवृत्तियों के लोगों से नैन्सी का संबंध जुड़ा और उसने कोशिश की कि वह रिश्ते को धर्मपूर्वक निभा सके लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था। वह मार्को के साथ उसके देश फ्रांस पलायन करती है। यहाँ के परिवेश, घर, परिवार, जीवन-शैली से अवगत होती है। अपने तीसरे पति मार्को के साथ अपनी नूतन जिंदगी प्रारंभ करती है और सोचती है कि जब मनुष्य एक रिश्ते से दूसरे रिश्ते की तरफ बढ़ता है तो लगता है जैसे सारी समस्याओं का अंत हो गया हो लेकिन हर रिश्ते में नई-नई समस्याएं, समझौते होते रहते हैं। स्वयंमेव कुछ भी परिपूर्ण नहीं है। शादी के पहले महीने ही वह गर्भधारण कर लेती है। स्वयं को युवा महसूस करती है। उसके ज्ञान, अनुभव एवं दृष्टिकोण को सराहा जाता है। कुछ समय की अवधि बीत जाने पर वह बेटे नील को जन्म देती है। परिवार में हर्षोल्लास की स्थिति बनी रहती है। नैन्सी एक साल की मेटरनिटी लीव पर थी। मार्को ने यूएसए माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस में नौकरी ले ली थी। वह नैन्सी को साथ ले जाना चाहता था। नैन्सी यहाँ अपनी नौकरी छोड़ अपने पति के साथ संयुक्त राज्य अमेरिका (उत्तरी अमेरिका) प्रस्थान करती है। वह एशिया, अफ्रीका, यूरोप में जीवन बीता चुकी थी। अब उसे अपनी जिंदगी इस चौथे महाद्वीप में बसर करनी थी। यह देश नैन्सी के अंदर उल्लास/उमंग बनकर बसने लगा था। यहाँ की जीवन शैली कुछ ऐसी थी कि न तो नैन्सी को भारत ही याद आता था और न ही वह स्वयं को माइग्रेंट समझती थी। यहाँ इनका मन बिल्कुल रम गया था। तीन साल कब बीत गए पता नहीं चला। जैसे ही मार्को डेनमार्क जाने की घोषणा करता है वह अचंभित रह जाती है क्योंकि वह पुनः अमेरिका से पुनः यूरोप नहीं लौटना चाहती थी। वह अमेरिका में रहकर अपना शेष जीवन बिताना चाहती थी। अपने सपनों को संजोना चाहती थी। नील गोदी में और जोशुआ बगल में जो उसकी जिंदगी थे। इन्हीं के साथ वह अपनी जिंदगी गुजारना चाहती थी लेकिन मार्को नहीं माना और सभी डेनमार्क लौट आते हैं। यहां इन्हें फिर से अपना काम जमाने में संघर्ष करना पड़ता है। कंपनी मार्को को बैंगलोर भेजना चाहती है और यह सुनकर नैन्सी हर्षित होती है। भारत आने पर नैन्सी विचारों में डूबी हुई-खोई-सी रहती है वह कहाँ जाए, किससे मिले। विदेशों में तो अपनों का साथ न होने का मलाल सालता ही रहता है। नैन्सी भी उन्हीं में से एक है। इंसान एक बार कहीं बस जाता है तो वहाँ से उखड़ना आसान नहीं होता। नैन्सी कंप्यूटर टीचर थी। वह भारत में रहते हुए कंप्यूटर कोर्स करके अपने ज्ञान में अभिवृद्धि करना चाहती थी, उसके लिए वह मार्को से पैसे मांगती है। मार्को पैसे देने से मना

कर देता है। ऐसे में नैन्सी को अप्पा के मकान बिकने पर जो पैसे मिले थे वह उन्हें व्यय करके कुछ सीखना चाहती थी, आत्मनिर्भर बनना चाहती थी। वह तीस हफ्ते का मसाज बॉडी थेरेपी कोर्स ज्वाइन करती है और यहाँ के प्रशिक्षकों, कर्मचारी वर्ग तथा छात्रों से परिचित होती है। वेणुगोपाल नाम्बियार इनके गुरु थे जो थ्योरी और प्रैक्टिकल दोनों प्रकार की कक्षाएँ लेते थे। “थ्योरी में मुख्यतः चार विषयों पर फोकस था – स्वास्थ्य रक्षा में मालिश; त्वचा रोग एवं चिकित्सा; बिजनेस स्टडीज; सैलून प्रक्रियाएँ। तीस सप्ताह का प्रशिक्षण सफलतापूर्वक पूर्ण होने पर उनके गुरु बॉडी मसाज डिप्लोमा थमाते हुए इन्हें कहते हैं विदेश में लोगों की अच्छे से मालिश करना और केरल में कैराली मालिश केंद्र खोलना। नैन्सी मार्को के साथ पुनः डेनमार्क लौट आती है और वहीं रहने का निर्णय लेती है। वह डेनिश सीखने का प्रयास करती है मार्को इन्हें एक एक पाई के लिए तरसाने लगता है। उनकी स्थिति अत्यंत दयनीय होती जा रही थी। “पति पर मैं आर्थिक तौर पर निर्भर नहीं हो सकती थी। उसके संरक्षण में नहीं जी सकती। मैं तो यह भी समझती थी कि विवाह का मतलब है कि जो कुछ पति का है वह पत्नी का है और जो कुछ पत्नी का है वह पति का है।” लेकिन नैन्सी को ऐसा लग रहा था कि सब कुछ मार्को का है। वह स्वयं को अबला, आश्रिता, उनकी कृपादृष्टि की मोहताज मान बैठी थी जिस कारण इनमें हीन भावना घर कर चुकी थी। धीरे-धीरे जैसे ही वह होश संभालती है नौकरी के लिए विज्ञापन देखने लगती है और मार्को से पुनः आर्थिक सहयोग की अपेक्षा करती है कि हम दोनों जीवन साथी हैं आप मेरी मदद करो तो मैं अपना स्वयं का मालिश सैलून खोल सकती हूँ। यहाँ एक भी आयुर्वेदिक सैलून नहीं है यह अच्छा चलेगा। मैं इसकी बॉस होऊँगी। लेकिन मार्को इन्हें फूटी-कौड़ी भी देने से मना कर देता है। वह सोचती है कि मार्को से पहले पूर्व दो पतियों अब्राहम और लार्स ने चाहे कुछ भी किया हो, मेरी आत्मा को दुखाया हो, मेरे जिस्म पर वार किया हो किंतु मेरे वजूद को नहीं तोड़ा अब्राहम मेरे प्रति निष्ठावान नहीं था मगर मेरे विकास में उसने पूरा सहयोग दिया। समुद्री तैराकी सीखने के लिए मेरे लिए प्रशिक्षक का इंतजाम किया था। मेरे कंप्यूटर कोर्स की फीस भरी थी। मोंबासा में अध्यापिका की नौकरी लगने के लिए कई लोगों से सिफारिश की थी और लार्स भले ही मुझे मारता फिरता था मगर उसने मुझे रुपए पैसे के लिए कभी नहीं सताया। मार्को नैन्सी को फ्रेंच भाषा में भद्दी गालियाँ बकता मेरदे (शिट), पुतिन (वेश्या), सलोपे (बीच), फिल्स दे सलोपे (सन ऑफ ए बीच)। दोनों में कटूता बढ़ती जा रही थी। दोनों एक साथ रहने में असुरक्षित महसूस कर रहे थे। नैन्सी दो तलाक पहले ले चुकी थी वैसे भी बार-बार तलाक की त्रासदी मनुष्य को

भावनात्मक रूप से तोड़ देती है। वह महसूस करती है कि परिवार, समाज की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतर पाई। दांपत्य संबंधों की टूटन का दर्द उसके हृदय को छलनी कर रहा था। जब नैन्सी अपने बेटे जोशुआ को मार्को से अलग होने के बारे में बताती है तो जोशुआ कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता है उसके लिए वह सामान्य बात थी। पॉल नैन्सी को समझाता है यदि आपकी तीसरी शादी भी खतरे में है तो इसके लिए न आप स्वयं को दोषी माने और न हीं घबराएं वरन् मानसिक रूप से मजबूत बनें और अपनी आर्थिक मजबूती भी सुनिश्चित करें। वह अपने भाई-बहन और बेटे की मदद से कम्यून में मालिश सैलून खोलती है और कैराली मसाज पार्लर नाम देती है इसे चलाने में वह जी तोड़ मेहनत करती है और आत्मनिर्भर स्त्री बनकर उभरती है। इनका चौथा विवाह पॉल से होता है और वह पॉल के बेटे को जन्म भी देती है। इस प्रकार नैन्सी अपनी जिंदगी के मीठे-कड़वे अनुभवों के साथ खुशनुमा पल व्यतीत करती है।

निष्कर्ष : उपरोक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि स्त्री जीवन अनेक कठिनाईयों, चुनौतियों, जटिलताओं से परिपूर्ण है। जैसे-जैसे परिस्थितियाँ परिवर्तित होती हैं वैसे ही मानव जीवन में अनेक उतार चढ़ाव आते रहते हैं। जिनका सामना मनुष्य को डटकर करना चाहिए। उसे परिस्थितियों से भागने की बजाय सामंजस्य लाने पर बल देना चाहिए। नैन्सी अपने जीवन में चार विवाह करती है जो परिवर्तित होते मूल्यों का परिचायक है। नैन्सी अपने प्रत्येक पति के साथ छली जाती है उसकी अस्मिता पर गहरा आघात होता है और वह बढ़ने के लिए परिस्थितियों से समझौता न कर पुनः विवाह कर नये सिरे से अपनी जिंदगी आरंभ करती है, स्त्री सशक्तीकरण की मिशाल पेश करती है और स्त्री जीवन को नया अर्थ देती है।

संदर्भ सूची :

1. मनुस्मृति, अध्याय 3, श्लोक 56
2. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 23
3. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 38
4. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 40
5. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 49
6. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 64

7. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 96
8. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 99
9. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 109
10. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 114
11. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 195
12. अर्चना पैन्थूली, कैराली मसाज पार्लर, भारतीय ज्ञानपीठ, सं. 2020, दिल्ली, पृ. 196

पूजा,

शोधार्थी,

हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय,

रोहतक, हरियाणा – 124001

मोबाइल नं. – 7015414395, ई-मेल :

poojadeswal796@gmail.com

**सारांश:**

कला का जन्म मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही माना गया है। मानव और कला एक-दूसरे के सहभागी रहे हैं। मानव ने अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कला को अपना माध्यम बनाया। मानव ने चित्र, मूर्ति, नृत्य, संगीत, अभिनय एवं संगीत को अपनी अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग किया। कला ने विश्वभर में अपनी सृजनकता की अलग छवि बनाई है। कला मानव के अंतर द्वंद्वों की कहानी है। कला अनंत रूपों में अपनी व्याख्या करती आ रही है।¹

लोक कला सार्वभौमिक और सर्वकालिक है। यह मनुष्य जीवन से ऐसे जुड़ी हुई है। जिसे अलग करने की चेष्टा भी नहीं की जा सकती। उसने मनुष्य से ऐसी प्रेरणा और मनोबल प्राप्त किया है। इसे किसी के सहारे आश्रय की जरूरत नहीं है। यह तो स्वतंत्र रूप से बिना किसी सहयोग के समय के साथ सतत् ही आगे बढ़ती रही है। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं व बालिकाओं ने इसे खेल-खेल में ही सीख लिया और इसे अपनी जीवनशैली का अंग बनकर पीढ़ियों से आगे बढ़ाती आ रही है और बदलते समय के अनुसार इसमें नई-नई तकनीक भी शामिल की हैं और उसे अपने आत्मबल और निष्ठा से इतना सशक्त बना दिया है कि आज उसका समाज में एक अलग ही रुतबा और पहचान है।²

भारतीय संस्कृति में कलाओं का विशेष योगदान रहा है। तीज त्योहारों पर हिंदू घर की महिलाएं व लड़कियां अपने घरों को गोबर से लीपकर गेरु से विभिन्न प्रकार की आकृतियां फूल-पत्तियों, स्वास्तिक से अलंकृत करती हैं। इन कलाओं की भारतीय ग्रामीण क्षेत्र से अधिक घनिष्ठता रहती है। इसमें ग्रामीण महिलाओं का विशेष योगदान रहा है। क्योंकि तीज-त्योहार और शादियों में महिलाएं घरों को सजाने के साथ-साथ नृत्य-गायन कलाओं में भी बढ़कर भाग लेती हैं।

मुख्य शब्द— प्रागैतिहासिक, परंपरा, ऐतिहासिक और प्राचीन काल।

प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक काल तक कलाओं से संबंधित जितने भी ऐतिहासिक सर्वेक्षण हुए, उनके बाद हमें उनमें लोक कला का प्रभाव कम या अधिक प्रतीत होता है। प्रत्येक युग की कला कितनी भी शास्त्रीय क्यों ना हो, लोककला से प्रभावित रही हैं। जिसमें लोककला के अभिप्राय अलंकार अभिप्राय के रूप में स्वीकार किए गए हैं।

प्रागैतिहासिक और लोककला में हाथ पकड़े हुए मानव आकृति साहचर्य भाव को दिखाते हैं लोक कला में पशु-पूजा के

अवशेष प्रागैतिहासिक काल में मिलते हैं। जैसे बनिया बेरी की गुफा में चित्रित सगर्भागाया। प्रागैतिहासिक काल के चित्रों में विष्णु के वराह अवतार का अंकन प्रचलित है। चौक पूजने की प्रक्रिया प्रागैतिहासिक काल से चली आ रही है।

लोककला की पुरातनता और प्रमाणिकता सिंधु घाटी से प्राप्त अवशेषों से प्राप्त होती है। वहां से प्राप्त मोहरों पर अंकित उकेरण से उस समय की शक्तिपूजा, मातृ पूजा, वृक्ष पूजा आदि का भी उल्लेख मिलता है।

शुंगकालीन कला में भी लोककला के तत्वों की झलक प्रतीत होती है। शुंगकाल की मूर्तियाँ लोककला की तरह चपटी और यांत्रिक अनुपात विहीन है।

कुषाण काल में मथुरा शैली का प्रभाव रहा है। जिसके उदाहरण सांची और भरहुत में मिलते हैं। सांची के लोक प्रतीकात्मक अलंकार मथुरा की कला में ज्यों के त्यों अंकित हुए हैं। मध्यकालीन पाल और अपभ्रंश शैली में रंगों का चुनाव और आकृतियों का रेखांकन लोक शैली से समीप्य दर्शाता है। मध्यकालीन शैली में अभिव्यक्तिकरण की प्रक्रिया लोक शैली के समान ही सरल रूपों में विकसित हुई है। राजपूत और पहाड़ी कलाओं में भी प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति को स्थान प्राप्त हुआ है। तत्कालीन लोककला से प्रभावित होकर यामिनीराय ने लोकशैली में विभिन्न चित्रों का सृजन किया है। आज भी स्वतंत्र रूप से कलाकारों ने लोकशैली में नवीनीकरण किया है।

लोककला शब्द में दो अक्षर निहित हैं एक है लोक और दूसरा कला। लोककला को जानने से पहले हम लोक तथा कला के विषय में विचार करेंगे।

लोक का अर्थ— लोक संस्कृत भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ है 'देखने वाला'। संस्कृत से ही हिंदी के लोक शब्द का जन्म हुआ है, इस शब्द का प्रयोग जन समुदाय के लिए किया जाता है। हिंदू धर्म के मुख्य ग्रंथ 'गीता' में भी लोकसंग्रह और लोक जैसे शब्दों का अनेक बार प्रयोग किया गया है जो इस शब्द की प्राचीनता को दर्शाता है।³

ऋग्वेद में भी लोक शब्द का प्रयोग देखने को मिलता है। वेदों में भी कहीं-कहीं पर लोक शब्द को 'जन' शब्द के रूप में परिभाषित किया गया है।

महर्षि पाणिनि ने अपनी 'अष्टाध्यायी' में भी 'लोक' तथा 'सर्वलोक' शब्द का कई बार प्रयोग किया। हिंदुओं के प्रमुख ग्रंथ 'महाभारत' में भी लोक शब्द का उल्लेख हुआ है।

इन सभी तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि चाहे प्राचीन समय हो या आज का समय 'लोक' शब्द का अर्थ है आम जनता जो अपने रीति-रिवाज और संस्कारों के साथ इस संसार में विचरण करती हैं।¹

कला का अर्थ— कला में रूपों का सृजन किया जाता है। ये रूप सुंदर और कलात्मक हो तभी कला की सार्थकता सिद्ध होती है। शिव के लिए कला, सत्य की सौंदर्यमयी अभिव्यक्ति है।²

कला का अर्थ— कला एक क्रिया है, कौशल है, तकनीक है, ज्ञान है, कल्पना है, अनुकृति है, इन सभी में कला का अर्थ छिपा हुआ है। कला में क्रिया निहित होती है, लेकिन प्रत्येक क्रिया में सौंदर्य का भाव नहीं होता। कला को जानने के लिए एक रचना प्रक्रिया होती है। कलाकृति के सर्जन के बाद ही उसकी कलात्मकता का पता चलता है।

कला को अंग्रेजी भाषा में **Art** कहते हैं। इटली में "ल-आर्टे" (El-arte), फ्रेंच भाषा में 'ल-आर्ट' (L-art)। इन सभी शब्दों का जन्म लैटिन भाषा के 'आर्स' (ars) से हुआ है, जिसका अर्थ है— मानवीय कुशलता।

कला में मानवीय कुशलता होती है, लेकिन मात्र मानवीय कुशलता ही कला नहीं है अपने काम में तो इंजीनियर और वकील भी होते हैं लेकिन वो कलाकार तो नहीं होते। कला के लिए तो कलाकार विभिन्न प्रकार की कारीगरी का प्रयोग करते हैं हुए एक उत्कृष्ट कौशल का प्रदर्शन करता है।³

माध्यमों के अनुसार लोककला— प्राचीनकाल से ही भारत कला और संस्कृति का केंद्र बिंदु रहा है। प्राचीनकाल से ही हमारा समाज रीति रिवाज और संस्कारों से बंधा हुआ है धार्मिक अनुष्ठानों, शुभ अवसर, विवाह उत्सवों पर विभिन्न कलाकृतियों के चित्रण की परंपरा महत्वपूर्ण रही है। जो प्राचीन समय से चली आ रही है। जिनके उदाहरण हमें शिलालेखों, पत्थरों, लोहा, तांबा आदि पर देखने को मिलते हैं। कंदराओं में भी विभिन्न क्रियाकलापों के अवशेष दर्शित होते हैं। आज भी तीज-त्योहारों, शादी-ब्याह उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों में चित्रकला व लोककला देखने को मिलती है। लोककलाओं में जो चित्र आमतौर पर बनाए जाते हैं। वह इस प्रकार हैं—

1. भूमि चित्रण— भारत में भूमि चित्रण की प्रथा वैदिककाल से मानी जाती है। अलग-अलग राज्यों में यह विभिन्न नाम और रूपों में देखने को मिलते हैं जैसे उत्तर भारत में सांझी, गुजरात में साथिया, राजस्थान में मांडाना, पहाड़ी क्षेत्र में आंजी, आंध्र में सुग्ग, महाराष्ट्र में रंगोली, दक्षिणी भारत में कोलम, कहीं-कहीं पर

चौक-पूरना भी कहते हैं। यह चित्रण जमीन के ऊपर सूखे व गीले रंगों का प्रयोग करके बनाए जाते हैं। इसमें गुलाल, चावल, हल्दी, गेरू, आटा, चूना, खड़िया, फूल आदि का प्रयोग भी करते हैं। यह कला पूरे भारत में विवाह पर्वों, धार्मिक कार्यक्रम पर बनाई जाती है। कई स्थानों पर स्त्रियों एवं कुंवारी कन्याओं द्वारा नहा धोकर रंगोली व भूमि चित्रण किया जाता है। मांगलिक पर्वों पर सुखे सिंदूर का प्रयोग किया जाता है।⁴

2. भित्ति चित्रण— प्राचीन समय में जब मानव गुफाओं व कंदराओं में रहता था। उसे अपने बारे में कोई ज्ञान नहीं था। तब वह अपने मन के भावों को व्यक्त करने के लिए दीवारों पर चित्रण करता था। उस समय वह अपने समाज की परंपराओं, रहन-सहन, रीति रिवाज, उत्सवों तीज-त्योहारों आदि का चित्रण दीवारों पर करता था। जैसे देवी-देवताओं, पशु-पक्षियों के चित्रण हाथ के थापे, स्वास्तिक, पैरों के निशान आदि। गोबर से दीवार लीप कर उस पर फूस की मदद से उभरी आकृतियां बनाई जाती थी। आज भी भारत में अनेक प्रकार के चित्रण किए जाते हैं। बिहार में कोहबर के नाम से चित्रण किया जाता है। कोहबर चित्रण को कोहबर लेखन भी कहते हैं। कोहबर वह स्थान है जहां नव-दंपति मिलते हैं। यह चित्र अनुभवी महिला द्वारा किया जाता है।

हरियाणा में दीवारों को लीपकर खड़िया, गोबर, चूना, गेरू आदि से उभारकर सांझी बनाने का प्रचलन है जो भाई-बहन के रिश्ते का भी प्रतीक है। सांझी को कपड़ों व आभूषणों से अलंकृत किया जाता है। जिसमें चांद, सितारों का भी प्रयोग किया जाता है। करवाचौथ, अहोई अष्टमी, संतान सप्तमी आदि के चित्र भी दीवारों पर चित्रित किए जाते हैं। जिसमें स्याऊ माता, गाय, साथिया, गणपति आदि का भी चित्रण होता है।

3. मांडना— मांडना की कला दीवारों और जमीन दोनों पर की जाती है। घर की दीवारों और भूमि को गोबर से लीपकर उस पर मांडना किया जाता है। इसके लिए गेरू, हल्दी, चूने का भी प्रयोग किया जाता है। मांडना की कला दिवाली, दशहरा, ग्यारस, देवोत्थान, रक्षाबंधन, विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर की जाती है। यह मांडना विभिन्न आकारों, फूल बेल व स्वास्तिक आदि प्रतिक चिन्हों के आधार पर बनाए जाते हैं। स्वास्तिक, गणपति व सूर्य का प्रतीक है।⁵

4. गोदना— यह एक धार्मिक आस्था का प्रतीक रूप है, यह मनुष्य द्वारा अपने शरीर पर चित्र चित्रित करवाने का कार्य है। जो भी जातियां या लोग इस गोदना की क्रिया करते हैं। उनका

मानना है कि जब मनुष्य मरता है तो उसका शरीर तो नष्ट हो जाता है, लेकिन शरीर पर गुदवाया हुआ आकृति का भाग आत्मा के साथ परलोक तक जाता है। यह गुदवाने की प्रक्रिया शरीर के विभिन्न अंगों ठोड़ी, गाल, माथे पर, पैरों पर, कलाई पर, पीठ पर, हाथों पर आदि अंगों पर की जाती है। इसमें ओम, पति का नाम, स्वयं का नाम, भगवान का नाम स्त्रियों द्वारा अपने शरीर पर गुदवाया जाता है। जो शरीर को सुंदर बनाता है। भारत में आदिवासी जातियां महिलाएं व पुरुष इस कला से अपने शरीर के अंगों का श्रृंगार करते हैं। हरियाणवी भाषा में इसे खिनवाना भी कहते हैं। इस क्रिया के बाद लोक सौंदर्य का अनुभव करते हैं। भील व बंजारा जाति इस गुदवाने की कला में अत्यधिक विश्वास रखते हैं।

5. पशु-श्रृंगार— भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहां पर पशुपालन भी अधिक किया जाता है। इसलिए पशुओं की साज-सज्जा का भी विशेष चलन है। विभिन्न त्योहारों पर मनुष्य अपने साथ-साथ अपने पशुओं की साज-सज्जा व श्रृंगार का भी ध्यान रखना है। महोत्सव, एकादशी पर्व में इनका विशेष श्रृंगार किया जाता है। सींग व उनके खुरों को रंगों से सजाया जाता है, कौड़ियों, मोती, घंटियों की माला उनके गले में पहनाए जाते हैं, पैरों में घुंघरू पहनाए जाते हैं सिंगो पर मेटल के छल्ले में टोपिया बनवाकर पहनाई जाती हैं।

6. पट्टा चित्रण— पट्टा चित्रण की परंपरा भारत में अधिक प्राचीन रही है। पाल कला में कथाओं को चित्रित करने की परंपरा शुरू हो गई थी। गुप्तकाल की चित्रण कला व अजंता के कथा चित्रों में जीवन व काव्य संबंधी चित्रण की परंपरा थी। धीरे-धीरे लोक संस्कृति पर भी इसका प्रभाव पड़ा और कालीघाट के पट्ट चित्र इस परंपरा के उदाहरण हैं। राजस्थान में 'बापू की फड़', 'मनसा कथा' आदि का प्रचलन पट्ट चित्रों पर भी हो गया। बिहार में मिथिला आंचल में भी पट्टचित्रण की परंपरा शुरू हो गई। पट्टचित्रण की परंपरा नेपाल में भी प्रचलित हुई। पट्टचित्रण बहुत ही सुंदर चित्रकारी होती है। यह चित्र कागज, ताड़पत्र व कपड़ों पर बनाए जाते हैं। उनके मुख्य विषय महाभारत, रामायण, पौराणिक कथाएं और समाज में पनप रही बुराइयों से संबंधित कथाएं होती हैं। संपूर्ण कथा को पर्दे पर चित्रित किया जाता है। कलाकार इन चित्रों को टांग कर उन पर गाथाएं गाते हैं। जो बेहद चटक रंग के तथा सभी को आकर्षित करने वाली होते हैं। सभी लोग दूर बैठकर उनकी बातें सुनते हैं। इन पट्टचित्रों की लंबाई लगभग 20 फीट तक होती है।

पट्टचित्रण परंपरागत कला है। जो पीढ़ियों से चलती आ रही है।

7. मेहंदी— मेहंदी एक पौधे का नाम है। जो देखने में अन्य पौधों के समान हरा होता है। लेकिन जब इसे पीसकर शरीर पर लगाया जाता है तो इसके सूखने के बाद वह लाल रंग देता है। मेहंदी सजाने की परंपरा बहुत पुरानी है। पहले महिलाएं मेहंदी का लेप हाथ और पैरों पर लगाती थी, धीरे-धीरे मेहंदी से विभिन्न फूल-पत्तियों में ज्यामिति, डिजाइन बनाएं जाने लगे मेहंदी के सूखने पर चुने व तेल के साथ साफ किया जाता है। उसके बाद मेहंदी का रंग गहरा लाल हो जाता है। भारतीय त्योहार, उत्सव, शादियों में महिलाओं द्वारा इसका अधिक प्रयोग किया जाता है। पशुओं को भी मेहंदी लगाकर सजाया जाता है। मेहंदी को सुहाग का प्रतीक माना गया है। हरियाणा में लड़के के जन्म पर घरों में मेहंदी के थापे लगाने की भी परंपरा रही है।

8. तांत्रिक लोक कला— तांत्रिक कार्यों के लिए भी भूमि अलंकार किया जाता है और यह चित्रण सिद्धि प्राप्त तांत्रिकों द्वारा किए जाते हैं। भूमि शुद्धिकरण करने के पश्चात् ही भूमि पर ज्यामितीय आकृतियों, तांत्रिक चिन्ह एवं अंक विज्ञान आदि का अंकन करके सूखे रंगों का भी प्रयोग होता है। साधारण कलाकारों द्वारा इन आकृतियों को बनाना व देखना भी सबके लिए वर्जित है। अनुष्ठान के बाद विधि अनुसार विसर्जन किया जाता है। तांत्रिक अपनी चेतना और अनुभव के आधार पर अंकन करते हैं। यह परंपरा गुरु-शिष्य परंपरा के अनुसार आगे बढ़ती रही है। महालक्ष्मी, महासरस्वती, महाकाली व चामुंडा को शक्ति रूप में चित्रित किया जाता है। देवियों के रूप में दस महाविद्या कली, कमल, तारा, चिन्ना, मस्तान, मातंगी, शोडसी, भैरवी, भुवनेश्वरी, धूमावती, बगलामुखी इन सबको कलाकार बड़ी लगन और श्रद्धा के साथ चित्रित करता है। इन चित्रों को रंगने का तरीका भी अलग है। क्रिया अनुसार रेखाओं और रंगों का प्रयोग इन चित्रों की विशेषता है इन चित्रों का प्रायः गुप्त रखा जाता है। क्योंकि यह तांत्रिक क्रियो का अंग होते हैं।

निष्कर्ष

कला का मानव के साथ अटूट रिश्ता रहा है। जब से मनुष्य ने धरती पर जन्म लिया है। तभी से कला का भी जन्म माना गया है। मानव ने सबसे पहले अपनी भावनाओं और मन के विचारों को व्यक्त करने के लिए कला को माध्यम बनाया। कला-सृजनात्मक है। इसने समाज में अपनी अलग पहचान बनाई है।

भारतीय संस्कृति में कला का विशेष स्थान रहा है। हरियाणवी संस्कृति की बात करते हैं तो यहां पर तीज-त्योहारों पर कला का

अनूठा दृश्य देखने को मिलता है। यहां की स्त्रियां व लड़कियां त्योहारों व शादी ब्याह में विभिन्न तरीकों से अपने घर आंगन को सजाती हैं। इन कलाओं की भारतीय ग्रामीण क्षेत्र से अधिक घनिष्ठ रही है। इसमें ग्रामीण महिलाओं का विशेष स्थान रहा है। यहां की स्त्रियां घर सजाने के साथ नृत्य गायन कलाओं में भी बढ़ चढ़कर भाग लेती हैं।

प्रागैतिहासिक काल से आधुनिक काल तक कलाओं में अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। प्रागैतिहासिक और लोककला में हाथ पकड़े हुए मानव आकृतियां सहचार्य भाव को दिखाते हैं। प्रागैतिहासिक काल के चित्रों में विष्णु के वराह अवतार का अंकन प्रचलित है। चौक पूरन की कला भी इसी काल से चली आ रही है।

लोककला की पुरातनता और प्रमाणिकता सिंधुघाटी से प्राप्त अवशेषों से पुष्ट होती हैं। शुंगकाल की मूर्तियां लोककला की तरह चपटी और यांत्रिक अनुपात विहीन है। आज भी तीज-त्योहार, उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों में चित्रकला व लोककला देखने को मिलती है। लोककला में जो चित्र आमतौर पर बनाए जाते हैं। वह इस प्रकार है भूमि चित्रण, मांडना, भित्ति-चित्रण, गोदना, पशु-शृंगार, पट्टा चित्रण, मेहंदी, तांत्रिक लोककला है। इन सभी माध्यमों में लोककला को सुसज्जित किया जाता है। जो वैदिककाल से चली आ रही है। इन माध्यमों में रंगों, हल्दी, चावल, गेरू, चूना, खड़िया, फूल आदि का प्रयोग करके लोककला को दर्शाया जाता है। इसमें घर की महिलाएं व लड़कियां बढ़-चढ़कर भाग लेती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में लोककला को जीवंत रखने का श्रेय हम यहां की महिलाओं को दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. खंडेवाला, डॉ० कृष्ण कुमार, आई.ए.एस., हरियाणा एन्साइक्लोपीडिया संस्कृति खंड भाग-2, प्रकाशक- अरुण माहेश्वरी, वीणा प्रकाशन 4695, 21 ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
2. खतरी, नीतू, 'हरियाणा के दक्षिण पश्चिम क्षेत्र की लोककला का सांस्कृतिक एवं कलात्मक अध्ययन-हिसार, फतेहाबाद, सिरसा, डबवाली के विशेष संदर्भ में,' दृश्य कला विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, प्रकाशन: 2017
3. चतुर्वेदी, डॉ० मंजुला, भारतीय लोककला के अभिप्राय, प्रकाशक: कला प्रकाशन- बी. 33/33 ए-1, न्यू साकेत कॉलोनी, बी.एच.यू., वाराणसी-7, संस्करण: 2009
4. सिंह, सुषमा लोककला, प्रकाशक: सुकीर्ति प्रकाशन,

डी.सी. निवास के सामने, करनाल रोड- कैथल-
136027(हरियाणा), संस्करण: 2004

डॉ० पवन
पुत्र राज सिंह
गां पो० बोहन
पाना - मेलवान
नियर रविदास मन्दिर
तहसील - रोहतक, हरियाणा
पिन - 124001
मो० 9728627038



सारांश:

रामायण केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं है, अपितु भारतीय संस्कृति का मूल्य-आधारित शाश्वत ग्रंथ है, जिसमें जीवन के विविध आयामों को शिक्षा, नीति, व्यवहार और राजधर्म के रूप में प्रतिपादित किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी मूल्यपरक, समावेशी और भारतीय मूल्यों से युक्त शिक्षा को प्राथमिकता देती है। प्रस्तुत शोध – पत्र में वाल्मीकि रामायण में निहित जीवन-मूल्यों का विश्लेषण करते हुए यह बताया गया है कि किस प्रकार ये मूल्य वर्तमान शिक्षा नीति के उद्देश्यों से तादात्म्य रखते हैं। यह अध्ययन मूल्यपरक शिक्षा की खोज में रामायण की प्रासंगिकता को रेखांकित करता है।

बीज शब्द (Keyword) – रामायण, जीवन-मूल्य, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, मूल्यपरक शिक्षा, भारतीय परम्परा, नीति दर्शन, शिक्षा दर्शन।

रामायण : एक मूल्यपरक ग्रंथ

भारतीय संस्कृति की आत्मा मूल्यबोध में निहित है। वेद, उपनिषद, पुराण, महाकाव्य ये सभी केवल धर्मग्रंथ नहीं, अपितु सांस्कृतिक चेतना के वाहक हैं। इन्हीं में एक है वाल्मीकि रामायण, जो केवल एक पौराणिक कथा नहीं, बल्कि जीवन मूल्यों का एक जीवंत पाठ है। महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण एक मूल्यपरक ग्रंथ है। रामायण में वर्णित विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से इसमें समाहित जीवन मूल्यों को समझने का प्रयास करते हैं।

अयोध्या के नागरिकों का स्वभाव

बालकाण्ड में अयोध्या नगरी का वर्णन करते हुए महर्षि वाल्मीकी ने लिखा है कि अयोध्या में कोई कामी, कंजूस, नृशंस, अविद्वान या नास्तिक पुरुष नहीं दिखाई देता था। अर्थात् अयोध्या के नागरिक सदाचारी, दानी, दयावान, विद्वान और आस्तिक प्रकृति के थे। वहाँ ऐसे लोगों का निवास था जो धर्म का पालन करने वाले, प्रसन्नता से जीवन व्यतीत करने वाले, संयमी, चरित्रवान और महर्षियों की भाँति निर्मल स्वभाव वाले थे। (श्लोक-8, 9, सर्ग-6, बालकाण्ड, वाल्मीकि रामायण)

क्षमा ही मनुष्य का आभूषण

रामायण में क्षमा की भावना की सुंदर स्थापना राजा कुशनाभ और उनकी पुत्रियों से जुड़े संदर्भ से मिलती है। राजा कुशनाभ अपनी पुत्रियों को शिक्षा देते हुए कहते हैं कि स्त्री हो अथवा पुरुष, दोनों के लिए क्षमा ही आभूषण है। क्षमा दान, सत्य, यज्ञ, यश, धर्म सबकुछ क्षमा है। सम्पूर्ण जगत् क्षमा पर ही आधारित है।

अलंकारो हि नारीणां क्षमा तु पुरुषस्य वा।

क्षमा दानं क्षमा सत्यं क्षमा यज्ञाश्च पुत्रिकाः।।

क्षमा यशः क्षमा धर्मः क्षमायां विष्ठितं जगत्।

(श्लोक – 7, 8, सर्ग – 33, बालकाण्ड, वाल्मीकि रामायण)।

यह विचार बताता है कि क्षमा में सहिष्णुता, करुणा और आत्मनियंत्रण समाहित है, जो मानवता की नींव हैं।

जीवन मूल्यों को साक्षात् स्वरूप पुरुषोत्तम राम

अयोध्याकाण्ड में महर्षि वाल्मीकि ने पुरुषोत्तम राम के अनेक मानवीय गुणों का वर्णन किया है। महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं कि सुंदर और पराक्रमी राम किसी के दोष को नहीं देखते थे, पृथ्वी पर उनके समान कोई दूसरा नहीं था, वे पिता दशरथ के समान ही गुणी थे। (श्लोक – 9, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे सदैव शांत, मृदुभाषी थे। वे कठोर बात का कोई उत्तर नहीं देते थे। (श्लोक – 10, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) कभी कोई उनका उपकार कर देता था, तो वे उसके एक ही उपकार से संतुष्ट रहा करते थे, वे मन में किसी के सैंकड़ों अपराधों को भी स्मरण नहीं रखते थे। (श्लोक – 11, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे अस्त्रों के अभ्यास के बीच में भी जो समय मिलता था, उस समय का प्रयोग चरित्र और ज्ञान में अधिक वृद्ध गुणी पुरुषों से संवाद कर किया करते थे। (उनसे सीखा करते थे) (श्लोक – 12, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) राम बुद्धिमान थे, मधुभाषी थे, आगे बढ़कर पहले ही संवाद करने वाले थे और दूसरों से प्रिय बोलने वाले थे। वे पराक्रमी होने के बाद भी अपने पराक्रम का लेकर अहंकारी नहीं होते थे। (श्लोक – 13, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे सत्यवादी थे, विद्वान थे, अनुभवी वृद्ध पुरुषों के पूजक थे, प्रजा राम के प्रति और राम प्रजा के प्रति बहुत अनुराग रखते थे। (श्लोक – 14, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे आक्रोश व्यक्त नहीं करते थे, वे क्रोध को जीतने वाले थे, वे ब्राह्मणों के पुजारी थे, वे पीड़ितों के प्रति दयावान, धर्मज्ञ, इन्द्रियों पर नियंत्रण रखने वाले थे। (श्लोक – 15, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे कुल की मर्यादा के अनुसार आचरण करने वाले और प्रसन्नता के साथ अपने उस क्षत्रिय धर्म में लगे रहने वाले थे, जिससे परमधाम की प्राप्ति होती है। (श्लोक – 16, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) नकारात्मक चिंतन में उनकी कभी कोई रुचि नहीं रहती थी, वे न्याय के पक्ष में बृहस्पति के समान ही सार्थक तर्क दिया करते थे। (श्लोक – 17, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे एक अच्छे वक्ता थे और उन्हें देखकर लगता था कि ईश्वर ने इस लोक में सम्पूर्ण सार को जानने वाले मर्मज्ञ के रूप में उन्हें ही चुना है। (श्लोक – 18, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वे श्रेष्ठ गुणों से पूर्ण थे, अपने

गुणों के कारण ही वे प्रजाजनों के लिए अपने प्राणों के समान प्रिय थे। (श्लोक – 19, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) अनुभवी वृद्धजनों एवं ब्राह्मणों से शिक्षा प्राप्त करने वाले राम कल्याणकारी चरित्र वाले, सज्जन, सत्यनिष्ठ, सहज और धर्म-अर्थ के ज्ञाता थे। (श्लोक – 21, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) धर्म, काम और अर्थ के ज्ञाता राम समय और समाज के अनुसार आचरण करने में कुशल थे। (श्लोक – 22, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) राम गुरुजनों में भक्ति रखने वाले, स्थिरप्रज्ञ, सद् वस्तुओं को ग्रहण करने वाले, मधुर बोलने वाले, आलस्यरहित, अपने और दूसरों के दोषों को जानने वाले थे। (श्लोक – 24, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) उनमें दोष-दृष्टि नहीं थी, क्रोध को जीत चुके राम में अहंकार और दूसरों के प्रति ईर्ष्या का भाव शून्य के बराबर भी नहीं था। (श्लोक – 30, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) राम दूसरों की अवहेलना नहीं किया करते थे, अनेक उत्तम गुणों से सुशोभित होने के कारण राम अयोध्या की प्रजा के साथ-साथ लोक के सभी प्राणियों के प्राण-प्रिय थे। वे क्षमा करने में वसुधा के, बुद्धि में बृहस्पति के और वीरता में इन्द्र के समान थे। (श्लोक – 31, 32, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) वसुधा भी ऐसे सदाचारी, वीर, तेजयुक्त राम को अपना स्वामी बनाने की कामना करती है। (श्लोक – 34, सर्ग – 1, अयोध्याकाण्ड, वाल्मीकि रामायण)। इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि राम का चरित्र महर्षि वाल्मीकि रामायण में मानवीय मूल्यों का सजीव स्वरूप है। उनका जीवन इस बात का संदेश है कि कोई भी नेतृत्व तभी सार्थक होता है जब वह मानवीय मूल्यों से युक्त हो।

शरणागत के रक्षण की परम्परा

रावण से प्रताड़ित होकर विभीषण पुरुषोत्तम राम की शरण में आते हैं। सभा मध्य विभीषण विषयक निर्णय को लेकर राम कहते हैं कि शरणागत की रक्षा को लेकर पूर्वकाल में मुनि कण्डु को जो उपदेश किया था, उसे सुनिए। (श्लोक – 26, सर्ग – 18, युद्धकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) राम सुग्रीव से कहते हैं कि हाथ जोड़कर दीनता के भाव और दया की कामना से यदि कोई शत्रु भी आए तो उस पर भी हाथ नहीं उठाना चाहिए। (श्लोक – 27, सर्ग – 18, युद्धकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) शत्रु दुखी होकर आए या अभिमानी भाव के साथ भी आए तो भी शरण मांगने पर शत्रु को शरण देनी चाहिए। अपने प्राणों का मोह छोड़कर भी शरणागत की रक्षा करनी चाहिए। (श्लोक – 28, सर्ग – 18, युद्धकाण्ड, वाल्मीकि रामायण) पुरुषोत्तम राम का यह

दृष्टिकोण करुणा, क्षमा, न्याय, दया और धर्मनिष्ठा जैसे मूल्यों को प्रकट करता है। शरणागत की रक्षा करना केवल कर्तव्य नहीं, बल्कि व्यक्ति की आत्मा की शुद्धता और मानवता की कसौटी भी है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : मूल्यपरक शिक्षा की पुनर्व्याख्या –

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में जीवन मूल्य और चरित्र निर्माण

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा के माध्यम से चरित्र निर्माण पर बल देती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रारूप के अंतर्गत दिए परिचय में पृष्ठ 4 पर इस विषय पर विचार रखते हुए लिखा गया है कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थियों के जीवन के सभी पक्ष और क्षमता का संतुलित विकास कर सके। इसके लिए विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम विज्ञान, गणित इत्यादि के साथ साथ संस्कृति और मूल्यों का समावेश अवश्य किया जाना चाहिए। शिक्षा द्वारा ही शिक्षार्थी का चरित्र निर्माण होना चाहिए। शिक्षा नीति के परिचय में शिक्षा के माध्यम से शिक्षार्थियों में संवेदनशीलता, करुणा, तार्किकता और नैतिकता जैसे जीवन मूल्यों को विकसित करने को भी निर्देशित किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इस नीति के आधार सिद्धांत, पृष्ठ – 6 पर स्पष्ट रूप से शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य अच्छे इंसानों का विकास करना माना गया है।

शिक्षा में जीवन मूल्यों का समावेश

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा में भारतीय जीवन मूल्यों को समाहित करने का समर्थन करती है। शिक्षा नीति का मानना है कि पुरातन काल में भारतीय जीवन मूल्य भारतीय शिक्षा का अभिन्न अंग थे। उस समय शिक्षार्थियों को जीवन में सफल होने के साथ-साथ मानवीय मूल्यों का अनुकरण करने की शिक्षा दी जाती थी ताकि वे अपने व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन को भी श्रेष्ठ आधार दे सकें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत इस नीति के आधार सिद्धांत, पृष्ठ – 7 के अंतर्गत नैतिक, मानवीय और संवैधानिक मूल्यों को शिक्षार्थियों के लिए आवश्यक बताते हुए कहा गया है कि इन मूल्यों के अंतर्गत सहानुभूति, दूसरों के प्रति सम्मान का भाव, स्वच्छता के प्रति आग्रह, व्यवहार में शिष्टाचार, लोकतांत्रिक भावना, सेवा का विनम्र भाव, सार्वजनिक सम्पत्ति के प्रति आदर, विज्ञान आधारित चिंतन, स्वतंत्रता, दायित्वबोध, बहुलतावाद की स्वीकार्यता, समानता का महत्व और न्याय के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण को विकसित करना इस नीति के आधार सिद्धांतों में सम्मिलित है।

मानवीय और संवैधानिक मूल्यों को प्रोत्साहन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत बहुभाषावाद और

भाषा की शक्ति, 4.28, पृष्ठ 24, 25 पर इस बात का समर्थन किया गया है कि विद्यार्थियों को कम आयु में ही यह सिखाया जाना बहुत आवश्यक है कि 'सही क्या है'। वह कम उम्र उसकी सही को समझने की सोच विकसित हो और वह नैतिक निर्णय ले सके इसके लिए शिक्षा में एक तार्किक ढाँचे के निर्माण की बात कही गई है। शिक्षा नीति का उद्देश्य है कि फिर धीरे-धीरे उसकी नैतिक चिंतन क्षमता को बढ़ाकर धोखाधड़ी, हिंसा, साहित्यिक चोरी, गंदगी फैलाना, सहिष्णुता, समानता और सहानुभूति की भावना को विस्तारित किया जाएगा। बच्चों को अपने जीवन का संचालन नैतिक दृष्टिकोण से करने और समक्ष बनने पर बल दिया जाएगा। शिक्षा नीति का मानना है कि इस प्रकार धीरे-धीरे शिक्षार्थियों के जीवन में भारतीय मूल्यों को समाहित किया जा सकेगा। शिक्षार्थियों में बुनियादी मानवीय और संवैधानिक मूल्यों जैसे सेवा, अहिंसा, स्वच्छता, सत्यता, निष्काम-कर्म, शांति, त्याग, सहिष्णुता, विविधता, बहुलवाद, नैतिक-आचरण, लैंगिक संवेदनशीलता, बुजुर्गों के प्रति आदर, सभी की क्षमताओं का सम्मान, पर्यावरणीय संवेदना, सहयोग, शिष्टाचार, धैर्य, समानुभूति, करुणा, राष्ट्रभक्ति, लोकतांत्रिक दृष्टिकोण, अखंडता, न्याय, स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व इत्यादि को रोपित किया जा सकेगा।

भारतीय मूल्यों से पोषित हो बनें वैश्विक नागरिक

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत इस नीति का विजन, पृष्ठ – 8 पर शिक्षा के माध्यम से ऐसे वैश्विक नागरिक तैयार किए जाने की बात कही है जिनकी पृष्ठभूमि भारतीय मूल्यों पर आधारित हो, जिनकी प्रेरणा भारतीय जीवन मूल्य हों। शिक्षा नीति चाहती है कि हमारे शैक्षणिक संस्थानों की पाठ्यचर्या और शिक्षा के तरीके छात्रों को मौलिक दायित्व, संवैधानिक मूल्यों, राष्ट्र के प्रति प्रेम से ओत-प्रोत करने के साथ-साथ छात्र में एक उत्तरदायित्व से भरा वैश्विक नागरिक का संस्कार भी डालें ताकि वह अपनी सकारात्मक भूमिका के प्रति आग्रही बन सके। छात्र के व्यवहार, बुद्धि, कार्य, ज्ञान, कौशल्य, मूल्यों और चिंतन में भी भारतीय होने का गर्व होना चाहिए। इसी भावना द्वारा वह मानवाधिकारों, स्थायी एवं निरंतर विकास, जीवनयापन तथा वैश्विक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हो और सही अर्थों में अच्छा वैश्विक नागरिक बन सके। निःसंदेह शिक्षा नीति में भारत के पुरातन चिंतन **वसुधैवकुटुम्बकम्** को ही वैश्विक नागरिक के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

रामायण और राष्ट्रीय शिक्षा नीति –

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 नीति महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण जैसे ग्रंथों में निहित जीवन मूल्यों को आधुनिक शिक्षा

प्रणाली में समाहित करने की आवश्यकता को रेखांकित करती है। महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण भारतीय संस्कृति और परम्परा का प्राचीनतम ग्रंथ है, जो जीवन मूल्यों का शाश्वत स्रोत माना जाता है। यह महाकाव्य न केवल धर्म, नैतिकता और आदर्शों की प्रेरणा देता है, बल्कि मानव जीवन के प्रत्येक पहलू को सत्य, धर्म, करुणा, त्याग और कर्तव्य जैसे उच्चतम मूल्यों के साथ जोड़ता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मुख्य उद्देश्य शिक्षा को ऐसी दशा प्रदान करना है, जो केवल व्यावसायिक दक्षता तक सीमित न रहकर व्यक्तित्व निर्माण, नैतिकता और सामाजिक चेतना का विकास करे। यह नीति शिक्षा के माध्यम से नैतिकता, सांस्कृतिक मूल्यों और व्यक्तित्व के समग्र विकास को प्रोत्साहित करती है। महर्षि वाल्मीकि रामायण के आदर्श मूल्य जैसे सत्य, धर्म, करुणा और सहिष्णुता राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की इन भावनाओं के साथ पूर्ण रूप से संगत है।

समकालीन शिक्षा के लिए अनुशंसाएँ –

– विद्यालयों में नैतिक शिक्षा के अंतर्गत रामायण आधारित पाठ जोड़े जाएं।

– गुरुकुल पद्धति के मूल्यों – जैसे अनुशासन, गुरु सम्मान, आत्मनियंत्रण को आधुनिक संदर्भ में अपनाया जाए।

– शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भारतीय ग्रंथों का परिचय और उनका जीवन में उपयोग सिखाया जाए।

– शिक्षकों के प्रशिक्षण में भारतीय परम्परा की भूमिका को बल मिले।

– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के भारतीय आधारित शिक्षा को रामायण जैसे ग्रंथों के माध्यम से क्रियान्वित किया जाए।

निष्कर्ष – रामायण केवल प्राचीन भारत की कथा नहीं, बल्कि जीवन की शिक्षा है, जो मनुष्य को मानव बनाती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसी मूल्यपरक दृष्टिकोण को पुनर्जीवित करने का प्रयास है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस दिशा में एक सार्थक पहल है। यदि हम रामायण जैसे ग्रंथों से शिक्षा के मर्म को पुनः स्थापित करें, तो न केवल चरित्रवान विद्यार्थी तैयार होंगे, बल्कि ज्ञान, कर्म और भाव का संतुलन प्राप्त कर सकने वाले उत्तरदायी नागरिक भी तैयार होंगे। यह शोध-पत्र इस बात को रेखांकित करता है कि रामायण और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का संगम भारत के भावी शैक्षिक परिदृश्य को न केवल समृद्ध बल्कि संस्कारित भी बना सकता है। रामायण की शिक्षाओं को विद्यालयों और महाविद्यालयों में नैतिक शिक्षा के अंग के रूप में अपनाया जाना समय की मांग है।

संदर्भ –

वाल्मीकि रामायण से श्लोक उद्धरण (स्रोत : गीता प्रेस,

1978 संस्करण)

- 1 – बालकाण्ड, सर्ग – 6, श्लोक – 8
- 2 – बालकाण्ड, सर्ग – 6, श्लोक – 9
- 3 – बालकाण्ड, सर्ग – 33, श्लोक – 7
- 4 – बालकाण्ड, सर्ग – 33, श्लोक – 8
- 5 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 9
- 6 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 10
- 7 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 11
- 8 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 12
- 9 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 13
- 10 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 14
- 11 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 15
- 12 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 16
- 13 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 17
- 14 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 18
- 15 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 19
- 16 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 21
- 17 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 22
- 18 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 24
- 19 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 30
- 20 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 31
- 21 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 32
- 22 – अयोध्याकाण्ड, सर्ग – 1, श्लोक – 34
- 23 – युद्धकाण्ड, सर्ग – 18, श्लोक – 26
- 24 – युद्धकाण्ड, सर्ग – 18, श्लोक – 27
- 25 – युद्धकाण्ड, सर्ग – 18, श्लोक – 28
- 26 – परिचय : भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय, 2020, पृष्ठ – 4
- 27 – नीति के आधार सिद्धांत (प्रथम उल्लेख) – भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय, 2020, पृष्ठ – 6
- 28 – नीति के आधार सिद्धांत (द्वितीय विस्तार) – भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय, 2020, पृष्ठ – 7
- 29 – बहुभाषावाद और भाषा की शक्ति (अनुच्छेद 4.28) – भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय, 2020, पृष्ठ – 24 एवं 25
- 30 – इस नीति का विजन – भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय, 2020, पृष्ठ – 8

राजीव कुमार उपाध्याय,

शोधार्थी

विभाग – स्कूल ऑफ लिबरल आर्ट्स एण्ड लैंग्वेज,

शोभित विश्वविद्यालय, गंगोह (सहारनपुर)

पत्राचार का पता – राजीव उपाध्याय यायावर, पत्रकार एवं लेखक, ग्राम एवं पत्रालय – सौराना, जिला सहारनपुर, उत्तर

प्रदेश, पिनकोड – 247232,

मोबाईल नम्बर – 09358445959

ईमेल – rajeevupadhyaypress1983@gmail.com

**सारांश:**

नारी मानवाधिकार आंदोलन ने न सिर्फ भारत का बल्कि पुरे विश्व समुदाय का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है विश्व की तकरीबन आधी आबादी (जो कि महिलाओं की है) की सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक-राजनीति उन्मुखित से सरोकार रखने वाले इस आंदोलन ने विश्व समुदाय के तकरीबन सभी राष्ट्रों के मानस को उद्वेलित किया है, फलतः भारतीय समाज एवं मानस भी इसके प्रभाव से अछूता नहीं रहा है। पिछले कुछ दशकों से भारतीय लोकतान्त्रिक सरकारों ने भी नारी मानवाधिकार के संरक्षण एवं संवर्द्धन के माध्यम से महिलाओं को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने की जरूरत को स्वीकार किया है।

मुख्य भाव — नारी मानवाधिकार, संवैधानिकता, समतावादी क्रांति, ब्रह्म-समाज,

भूमिका : —

नारी-अधिकारवादी आंदोलन का इतिहास लगभग 200 साल पुराना है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी देखें तो यह अवधि काफी अहमियत रखती है। उल्लेखनीय है कि नारी अधिकारवादी आंदोलन की पृष्ठभूमि का निर्माण सर्वप्रथम 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध में अमेरिका में ब्रिटिश साम्राज्यवाद विरोधी वातावरण में हुआ जो मुख्यतः फ्रांस की समतावादी क्रांति से अभिप्रेरित था। बाद में यह आंदोलन सुधारवादी आंदोलन का अभिन्न अंग बन गया। यह तत्कालीन रुढ़िवादी यूरोपीय मूल्यों के विरुद्ध एक तीखी प्रतिक्रिया भी था। श्रीमती लुक्रेटिया माट, एलिजाबेथ कैंडी, एलिजाबेथ ब्लैकवेल जैसी दबंग महिलाओं और लीडिया मारिया चाइल्ड सारा जोसेफा हेल व फूलर जैसी लेखिकाओं के नेतृत्व में जब नारी मुक्ति आंदोलन ने जोर पकड़ा तो न सिर्फ अमेरिका, बल्कि संपूर्ण विश्व की नारियों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। नारियां अपने अधिकारों के प्रति न सिर्फ सचेत होने लगीं, बल्कि आंदोलन में खुलकर भाग भी लेने लगीं और अपनी मांगों के समर्थन में आवाजें बुलंद करने लगीं। अब नारियों ने पितृसत्तात्मक पुरुष प्रधान समाज को चुनौती देना शुरू किया। 19वीं सदी में जैसे-जैसे यह आंदोलन उग्ररूप धारण करता गया वैसे-वैसे नारियों को सम्पत्ति रखने, तलाक, पुनर्विवाह, उत्तराधिकार, पति का चुनाव करने जैसे अधिकार मिलते गये। नारी आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि नारियों द्वारा मताधिकार प्राप्त करना रहा, जो यह अधिकार उसे 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में मिला। याद रहे कि मताधिकार प्राप्त करने के लिए ब्रिटेन की महिलाओं को हिंसक आंदोलन पर उतर जाना पड़ा था।

19वीं सदी में यूरोपीय नारी मुक्ति आंदोलन ने संपूर्ण विश्व का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। फलतः दक्षिण एशिया भी इसके प्रभाव से अछूता न रहा। उल्लेखनीय है कि 18वीं सदी दक्षिण एशिया के इतिहास में 'अंध युग' के नाम से जाना जाता है। इस काल में यहाँ सर्वत्र सामाजिक अधोपतन, आर्थिक जर्जरता और सांस्कृतिक सड़ांध फैला हुआ था। कई प्रकार की कुरीतियां व कुप्रथाएं प्रचलित थीं। नारियों की दशा अत्यन्त ही कारुणिक थी स्त्रियों को पुरुषों के पैरों की जूती समझा जाता था। बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा शिशु बलि जैसी कई प्रकार की कुरीतियां प्रचलित थीं। भारत इसी दक्षिण एशिया का आरंभ से केन्द्रीय राष्ट्र रहा है। अपने गौरवशाली अतीत, संस्कृति व इतिहास के लिए विश्व विख्यात वह भारत और इसका पुरुष प्रधान समाज न सिर्फ सदियों तक नारियों को परतन्त्रता की बेड़ी में जकड़े रहा, बल्कि उसे अबला, शोषिता व भोग्या समझता रहा है। उसे छलता-प्रताड़ता रहा, उसकी बेबसी पर हंसता रहा है। इन सब बातों ने भारत में नारी मुक्ति आंदोलन के लिए पर्याप्त पृष्ठभूमि का निर्माण किया। भारत में इस आंदोलन की शुरुआत 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध से ब्रह्म समाज की स्थापना से शुरू हुई। ब्रह्म समाज ने न सिर्फ परम्परागत रुढ़िवादी मूल्यों व कुप्रथाओं का विरोध किया, बल्कि स्त्री की दशा सुधारने के लिए उनकी मांगों के समर्थन में अपनी आवाज भी बुलंद की। राजा राम मोहन राय जो ब्रह्म समाज के संस्थापक थे, के प्रयासों का ही फल था कि 'लार्ड विलियम बैंटिक' ने 1829 में सती प्रथा को निषिद्ध कर दिया था। बाद में नारी मुक्ति आंदोलन सुधारवादी आंदोलन का प्रमुख अंग बना रहा। आर्य समाज, राम कृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसायटी व अन्य सुधारवादी संगठनों के नेतृत्व में जब नारी मुक्ति आन्दोलन ने जोर पकड़ा तो 19वीं सदी में ही भारतीय नारियों को संपत्ति रखने, उत्तराधिकार, विधवा विवाह, तलाक जैसे अधिकार मिलते गये और कई कुप्रथाओं को निषिद्ध कर दिया गया। स्वतंत्र भारत के संविधान के कई अनुच्छेदों में न स्त्री-पुरुष समानता के सिद्धांत को लागू करने का प्रयास किया गया है, बल्कि शिक्षा, रोजगार, व्यवसाय, राजनीति के क्षेत्र में समान अधिकार भी प्रदान किए गए हैं तथा नारियों को कई प्रकार के विशेषाधिकार भी दिये गये हैं। उल्लेखनीय है कि भारत विश्व का पहला राष्ट्र है जिसने स्त्री-पुरुष को एक साथ 'राइट टू वोट' दिया है। 1992 में स्थापित राष्ट्रीय बाल व महिला आयोग व महिला कोष नारी सुधार की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम है। इसके अलावा महिला मानवाधिकार के संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु कई प्रकार की संवैधानिक, कानूनी एवं सांस्थानिक

व्यवस्थाएं भी की गई हैं। इस तरह के प्रयास आज भी जारी हैं।

नारी-मानवाधिकार : संवैधानिक एवं विधिक उपबंध

भारतीय संविधान के निर्माता पुरुषों के साथ महिलाओं के मानवाधिकार के प्रति भी काफी सजग थे। यही कारण था कि जब भारत के संविधान का निर्माण हुआ तो उसके अंतर्गत स्त्री-पुरुष समानता के आदर्शों को सुनिश्चित किया गया है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना, भारत के सभी स्त्री-पुरुष नागरिकों को "सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता: प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता को सुनिश्चित करने वाली बंधुता के संवर्द्धन का उद्घोषणा करती है। वस्तुतः भारतीय संविधान वह महत्वपूर्ण दस्तावेज है जिसके अंतर्गत समानता के आदर्श को ध्यान में रखते हुए महिलाओं को पुरुषों के समान दर्जा दिया गया है और दोनों को समान स्वतंत्रताएं एवं अधिकार प्रदान किए गए हैं। इतना ही नहीं, महिलाओं को उनकी उम्र के अनुकूल भेदभाव की स्थिति को ध्यान में रखते हुए विशेष सुरक्षा भी प्रदान की गई है। हमारे संविधान के अंतर्गत मानवाधिकारों को मौलिक अधिकार का नाम दिया गया है। ये अधिकार महिलाओं के मानवाधिकारों की दृष्टि से काफी अहमियत रखते हैं। भारतीय संविधान के भाग-4 में अनु. 36 से 51 तक नीति-निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत भी महिलाओं के अधिकार संरक्षण, कल्याण, विकास, शोषण-उन्मुक्ति तथा दशा-सुधार हेतु राज्य को महत्वपूर्ण अनुदेश दिए गए हैं। इसके अलावा, हमारे संविधान के अन्य विभिन्न अनुच्छेदों में भी महिलाओं की विशेष स्थिति को देखते हुए उन्हें संरक्षण प्रदान करने की कोशिश की गई है। इस संदर्भ में यहाँ भारतीय संविधान के अंतर्गत मौलिक अधिकार एवं कतिपय नीति-निर्देशक सिद्धांतों की चर्चा जरूरी है।

मौलिक अधिकार

भारतीय संविधान के भाग 3 में अनु. 12 से 32 तक भारत के सभी महिला-पुरुष नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लेख किया गया है :-

समानता का अधिकार

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 से 18 में समानता के अधिकारों की चर्चा की गई। अनुच्छेद 14 के अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को कानूनी समानता प्रदान की गई है अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति को कानून का समान संरक्षण प्राप्त है। अनुच्छेद 15 के अंतर्गत धर्म, जाति, लिंग, वंश एवं जन्म स्थान के आधार पर व्यक्ति-व्यक्ति के

भेदभाव को मिटाया गया है। अनुच्छेद 16 के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई है कि राज्य अपनी सेवाओं के पदों की नियुक्ति में सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करेगा। इस संदर्भ में वह किसी प्रकार का भेदभाव किसी आधार पर नहीं करेगा। उल्लेखनीय है कि अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत राज्यों को अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करने का अधिकार है। 1990 में इसी शक्ति का प्रयोग करने के लिए सरकारी सेवाओं में 27 प्रतिशत आरक्षण देने का वी.पी. सिंह सरकार ने निर्णय लिया जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने उचित ठहराया। अनुच्छेद 17 के अंतर्गत अस्पृश्यता का अंत कर इसे दण्डनीय घोषित किया गया है। अनुच्छेद 18 के अंतर्गत शौर्य, समाज सेवा अथवा विद्या संबंधी उपाधियों को छोड़कर अन्य उपाधियों का अंत कर दिया गया है। हालांकि अनुच्छेद 18 (1) के अंतर्गत सैनिक या शिक्षित विशिष्ट्यों का प्रयोग करने की छूट दी गई है।

स्वतंत्रता का अधिकार

भारतीय संविधान के अनु. 19 से 22 तक स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लेख है। उल्लेखनीय है कि मूल संविधान अनुच्छेद 19 के अंतर्गत सात प्रकार की स्वतंत्रता का उपबंध था, किंतु 44वें संवैधानिक संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 19 (च) को, जो कि संपत्ति प्राप्त करने, रखने व बेचने के अधिकारों से संबंधित था, मौलिक अधिकार से संबंधित था, मौलिक अधिकार के भाग से निकाल कर उसे कानूनी अधिकार का दर्जा दिए जाने के बाद अब अनुच्छेद 19(1) के अंतर्गत नागरिकों को छह प्रकार की स्वतंत्रताएं प्राप्त हैं, ये हैं -

- वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
- शांतिपूर्ण एवं निरायुध सम्मेलन
- संस्था एवं संघ बनाना
- भारतीय राज्यक्षेत्र में अबाध संचरण की स्वतंत्रता
- भारतीय राज्य क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने तथा बसने की स्वतंत्रता
-(44वें संशोधन द्वारा निरस्त)
- कोई वृत्ति व्यापार, आजीविका या कारोबार की स्वतंत्रता

अनुच्छेद 20 से 22 तक नागरिकों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की व्यवस्था की गई है

अनुच्छेद 20 के अनुसार किसी व्यक्ति को किसी अपराध के, सिवाय उस कानून के तोड़ने पर, जो कि तोड़े जाने के समय लागू हो, सजा नहीं दी जाएगी और न ही उस अधिक दंड दिया

जाएगा, जो कि अपराध के समय लागू कानून के अंतर्गत दिया जा सकता था; किसी व्यक्ति को एक अपराध के लिए दो बार सजा नहीं दी जा सकती; किसी अभियुक्त को अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

अनुच्छेद 21 के अंतर्गत नागरिकों को प्राण एवं दैनिक स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इसमें यह उपबंध किया गया है। किसी व्यक्ति को विधि के अनुसार ही प्राण एवं स्वतंत्रता से वंचित किया जा सकता है अन्यथा नहीं। 86 वें संवैधानिक संशोधन (दिसम्बर, 2002) द्वारा शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार की श्रेणी में रखा गया है। इसके लिए 21(a) के रूप में एक नया अनुच्छेद बनाया गया है।

अनुच्छेद 22 के अंतर्गत व्यक्ति की मनमानी गिरफ्तारी और नजरबंदी को निषेध किया गया है। इसमें यह कहा गया है कि गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को गिरफ्तारी के तुरंत बाद उसकी गिरफ्तारी के कारणों से परिचित कराया जाए; उसे अपनी पसंद के वकील से परामर्श लेने और उसके द्वारा सफाई पेश करने का अधिकार है; बंदी व्यक्ति को बंदीगृह से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक की यात्रा के लिए आवश्यक अधिकार निकालकर 24 घंटों के अंदर-अंदर निकट मजिस्ट्रेट की न्यायालय में उपस्थित किया जाए; बिना मजिस्ट्रेट की आज्ञा के 24 घंटे से अधिक समय के लिए किसी व्यक्ति को कारावास में नहीं रखा जाएगा।

शोषण के विरुद्ध अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 23 एवं 24 के अंतर्गत मानव देहव्यापार एवं बच्चों के शोषण को निषेध किया गया है। अनुच्छेद 23 के द्वारा बेगार और जबरन मजदूरी को गैर कानूनी घोषित किया गया है। अनुच्छेद 24 के द्वारा 14 से कम उम्र के बच्चों को कारखानों, खानों और अन्य जोखिम भरे कामों में लगाये जाने को दंडनीय घोषित किया गया है। इस प्रकार के शोषणों को खत्म करने के उद्देश्य से सरकार ने बंधुआ मजदूर (उन्मूलन) अधिनियम 1976 पारित किया था, जिसके अंतर्गत दास प्रथा को पूरी तरह समाप्त कर दिया गया था।

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 25 से लेकर 28 तक नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रताएं प्रदान की गई हैं। अनुच्छेद 25 के अंतर्गत सभी व्यक्ति को अन्तःकरण की स्वतंत्रता के साथ धर्म में विश्वास रखने, धार्मिक कार्य करने तथा धर्म का प्रचार करने की स्वतंत्रता है। अनुच्छेद 26 सभी व्यक्ति को धार्मिक मामलों का प्रबंध करने की स्वतंत्रता देता है। अनुच्छेद 27 के अंतर्गत किसी विशेष धर्म के

विकास के लिए करों की अदायगी से छूट प्रदान की गई है। अनुच्छेद 28 के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई कि राजकीय निधि से संचालित किसी भी शिक्षण संस्थानों में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी। धर्म के अनुसरण व प्रचार करने में किसी अन्य धर्म का विरोध करने व धर्म-परिवर्तन शामिल नहीं है तथा लोक व्यवस्था, नैतिकता एवं स्वास्थ्य व सामाजिक हित में राज्य धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है।

सांस्कृतिक एवं शिक्षा संबंधी अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 29 एवं 30 में भारत के सभी नागरिकों को संस्कृति एवं शिक्षा संबंधी स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 29 के अंतर्गत भारतीय जनता के प्रत्येक वर्ग को अपनी भाषा, लिपि अथवा संस्कृति को सुरक्षित रखने का पूरा अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 30 धर्म एवं भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना एवं प्रशासन का अधिकार देता है।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार (Right to Constitutional Remedies)

संविधान का अनुच्छेद 32 नागरिकों को संवैधानिक उपचारों का अधिकार देता है। इस अधिकार अथवा अनुच्छेद की प्रभावोत्पादकता के मद्देनजर ही डॉ. अम्बेडकर ने इसे संविधान का हृदय एवं आत्मा कहा है। संवैधानिक उपाचारों के अधिकार का निहितार्थ है कि यदि किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है तो सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय क्रमशः अनुच्छेद 32 एवं 226 के अंतर्गत उसके अधिकारों की रक्षा करते हैं। इस हेतु से पांच प्रकार के निर्देश या रिट जारी कर सकते हैं –

- बंदी प्रत्यक्षीकरण
- परमादेश
- प्रतिषेध
- उत्प्रेषण
- अधिकार-पृच्छा

इस प्रकार स्पष्ट है कि ये सभी मूलभूत अधिकार भारत में महिलाओं को भी प्राप्त हैं। इनमें से कई उपबंध 14 के अंतर्गत महिला एवं पुरुष सभी को कानूनी समानता तथा कानून का समान संरक्षण प्रदान किया गया है। अनु. 15 के अपवादस्वरूप राज्य को महिलाओं तथा बच्चों के लिए, जो आर्थिक, शैक्षणिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े हैं, विशेष व्यवस्था करने की अति

देता है। अनु. 16 के अंतर्गत सरकारी नियुक्तियों में अवसर की समानता प्रदान की गई है। अनु. 21 के अंतर्गत जो प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता प्रदान की गई है वह भी नारी-अधिकार की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें यह कहा गया है कि विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा अन्य किसी भी तरीके से व्यक्ति को जीवन या निजी स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता। अनु. 22 के अंतर्गत जो व्यक्ति के मनमानी गिरफ्तारी एवं नजरबंदी का निषेध किया गया है, वह भी नारी-मानवाधिकार की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। चूंकि मौलिक अधिकारों को न्यायिक संरक्षण प्राप्त है, अतः कोई भी पीड़ित महिला या पुरुष अपने अधिकारों के हनन की स्थिति में न्यायालय की शरण ले सकता है और कोई अन्य व्यक्ति भी पीड़ित पक्ष की तरफ से न्यायालय में हित याचिका दायर कर सकता है।

राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांत

इतना ही नहीं, भारतीय संविधान के भाग-4 में अनु. 36 से 51 तक राज्य के जिन नीति-निर्देशक सिद्धांतों का उल्लेख है, वे भी नारी-मानवाधिकार की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण हैं। क्योंकि संविधान का यह भाग राज्य को महिलाओं के लिए विशेष उपबंध करने की शक्ति प्रदान करता है।

इस भाग के अनु. 38 के अंतर्गत राज्यों को यह निर्देश दिया गया है कि वह लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था को संरक्षण प्रदान करेगा। अनु. 39 के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई है कि राज्य सभी नागरिकों, पुरुषों एवं स्त्रियों को आजीविका के लिए पर्याप्त साधन जुटाने का प्रयत्न करेगा। अनु. 39 (b) के अंतर्गत यह कहा गया है कि राज्य ऐसी आर्थिक नीतियों का अनुसरण करेगा, जिससे कि देश के भौतिक संसाधनों का उचित बंटवारा हो सके। अनु. 39 (c) के अनुसार राज्य आर्थिक व्यवस्था का संचालन इस प्रकार करेगा कि संपत्ति एवं उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण किसी विशेष समुदाय के हाथ में न हो। अनु. 39(d) के अनुसार, पुरुष एवं स्त्रियों के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन दिए जाने का उल्लेख है तथा अनु. 39(e) के अंतर्गत मजदूरों, महिलाओं एवं पुरुषों तथा बालकों को विवशतावश आयु एवं शक्ति के प्रतिकूल रोजगार में संलग्न होने को निषिद्ध करने की बात की गई है। अनु. 39(a) के अंतर्गत राज्य के सभी नागरिकों के लिए समान न्याय एवं निःशुल्क कानूनी सहायता उपलब्ध कराये जाने का अनुदेश दिया गया है। अनु. 41 के अंतर्गत काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने के अधिकार पर बल दिया गया है। अनु. 42 के अंतर्गत काम के न्यायसंगत एवं

मानवोचित दशाएं पैदा करने तथा महिला कामगारों के लिए प्रसूति सहायता उपलब्ध कराए जाने का अनुदेश दिया गया है। अनु. 47 के अंतर्गत लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने एवं लोक स्वास्थ्य को सुधारने के लिए समुचित कार्यवाही किए जाने पर बल दिया गया है।

इसके अतिरिक्त, 73वें संवैधानिक संशोधन (अप्रैल 1993) तथा 74वें संवैधानिक संशोधन (जून 1993) के माध्यम से क्रमशः पंचायती राज संस्थाओं एवं नगरपालिकाओं में महिलाओं के 1/3 स्थान आरक्षित किया गया है जोकि महिला सशक्तीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

महिला-मानवाधिकार से संबंधित अन्य महत्वपूर्ण कानून

हालांकि भारतीय विधिक व्यवस्था में महिलाओं के लिए समानता को औपचारिक रूप से मान्यता दी गई है, परन्तु इस पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं के साथ भेदभाव अभी भी जारी है। अतः मौलिक अधिकारों तथा राज्य के नीति-निर्देशक तत्त्वों के अतिरिक्त भारतीय सरकार ने महिलाओं के मानवाधिकारों की प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से रक्षा के लिए अनेक महत्वपूर्ण कानून बनाए हैं। ये कानून महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए समय-समय पर लागू किए जाते रहे हैं। इन कानूनों में शामिल हैं

-
1. बाल विवाह (प्रतिबंध) अधिनियम, 1929.
2. न्यूनतम वेतन अधिनियम, 1948.
3. गैर-कानूनी परिवहन अधिनियम, 1956.
4. हिन्दू-उत्तराधिकार अधिनियम, 1956.
5. दहेज प्रतिबंध अधिनियम, 1961.
6. प्रसूति सहायता अधिनियम, 1961
7. मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेगनेंसी एक्ट, 1971
8. समान वेतन अधिनियम, 1976.
9. बंधुआ मजदूरी (नियंत्रण एवं उन्मूलन) अधिनियम, 1976.
10. परिवार अधिकरण अधिनियम, 1984.
11. महिलाओं के अश्लील चित्रण पर रोक संबंधी अधिनियम, 1986.
12. बाल मजदूरी (प्रतिबंध तथा नियमन) अधिनियम, 1986.
13. सती निवारण अधिनियम, 1987.
14. प्रसव-पूर्व निदानसूचक तकनीक (दुरुपयोग के संबंध में नियमन एवं नियंत्रण), 1994—
15. 73वां तथा 74वां संवैधानिक संशोधन अधिनियम, 1993.
16. घरेलू हिंसा अधिनियम, 2006.

17. कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न 2013

18. सैरोगेशी (विनियमन) अधिनियम 2021

उपरोक्त सभी अधिनियम महिलाओं की स्थिति में सुधार तथा महिला सशक्तीकरण की दृष्टि से महिलाओं को सबल बनाने के लिए समय-समय पर पारित किए गए हैं। वर्ष 2006 में पारित घरेलू दमन, हिंसा कानून महिलाओं की हर प्रकार के शोषण, उत्पीड़न, दमन, हिंसा व अत्याचार से रक्षा के लिए बनाया गया है। इन सभी कानूनों का उद्देश्य समाज में महिलाओं की स्थिति को दृढ़ करना तथा उन्हें सम्मान एवं प्रतिष्ठा का उचित स्तर उपलब्ध कराना है।

घरेलू हिंसा अधिनियम 2006

महिला अधिकार एवं न्याय की दिशा में घरेलू हिंसा अधिनियम काफी महत्वपूर्ण कदम है। महिलाओं को आए दिन होने वाली घरेलू हिंसा से बचाने वाला घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 में संसद में पास हुआ था। संसद की रजामंदी के बाद लगभग एक साल तक इस मुद्दे पर बहस का दौर चलता रहा। तब जाकर कहीं 26 अक्टूबर, 2006 को इस अधिनियम ने कानून का रूप लिया। इस कानून ने हर महिला यानी पत्नी, बहन, विधवा, मां और लिव-इन पार्टनर हरेक को सबल बनाया। उल्लेखनीय है कि इस अधिनियम का आधार सबसे पहले राष्ट्रीय महिला आयोग ने तैयार किया था। इसके बाद कई महिला संगठनों ने इसका समर्थन किया। 2002 में इस मुद्दे पर चर्चा शुरू हुई। जब यह अधिनियम बना था, उसमें सिर्फ विवाहित महिला, गोद लिए हुए और सगे रिश्तों की महिलाओं की ही बात की गई थी। लेकिन मौजूदा कानून अंतर्गत न सिर्फ शारीरिक, बल्कि मानसिक, मौखिक, आर्थिक और दैहिक हिंसा की भी बात की गई है बल्कि इसमें पत्नी के साथ मारपीट, उसको मानसिक रूप से सताना, बिना मर्जी उससे अश्लील काम करवाना और उसे खर्च के पैसों नहीं देना इत्यादि बातें भी शामिल हैं।

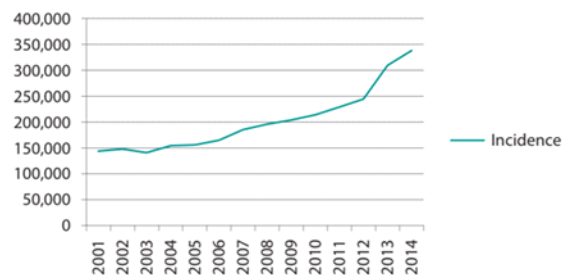
महिला विरोधी अपराधों के कारण महिला मानवाधिकारों का अतिक्रमण

महिलाओं के साथ किए जाने वाले अपराध जैसे कि मारना-पीटना, बलात्कार, अपहरण, दहेज हत्या, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, छेड़छाड़ तथा अन्य संबंधित अपराध महिलाओं के मानवाधिकारों का अतिक्रमण करते हैं, क्योंकि ऐसे अपराध उन्हें जीवन की सुरक्षा तथा समाज में उनके मौलिक मान-सम्मान से वंचित करते हैं। सभी अपराधों में बलात्कार तथा दहेज हत्या सबसे घृणित अपराध हैं। बलात्कार एक स्त्री को मानसिक रूप से

झकझोर देता है तथा किसी की भी परछाई उसे शारीरिक रूप से आहत कर देती है। दहेज हत्या उस मानसिकता का परिणाम है जो एक स्त्री को उसके अपने घर में बराबरी का दर्जा तथा सम्मान देने से बंचित कर देती है।

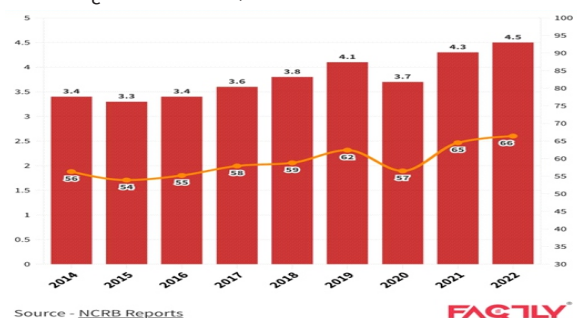
भारत सरकार, गृह मंत्रालय के अधीन नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) समस्त भारत में महिलाओं के विरुद्ध कुछ बड़े अपराधों पर दृष्टि रखने का प्रयास कर रहा है। परन्तु फिर भी महिलाओं के विरुद्ध अन्य प्रकार के अपराधों जैसे कि सामूहिक बलात्कार अथवा महिलाओं का संगठित अवैध व्यापार या लड़कियों की खरीद-फरोख्त आदि के बारे में कोई व्यवस्थित रिपोर्ट दर्ज नहीं की गई है।

महिलाओं के विरुद्ध अपराधों के संबंध में वर्ष 1995-97 के NCRB आंकड़े पर आधारित अध्ययन की महत्वपूर्ण रिपोर्ट का उल्लेख करना जरूरी है। 1995-97 में प्रति एक करोड़ जनसंख्या पर राजस्थान में महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की संख्या 2106 थी, मध्य प्रदेश में 2089, दिल्ली में 2000, महाराष्ट्र में 1752 तथा अन्य राज्यों में यह संख्या 1400 से कम थी।



स्रोत:—<https://images.app.goo.gl/UtniKpn3E3V AfvpV7>

ऊपर दर्शाए गए ग्राफ से स्पष्ट होता है कि 2001 से लेकर 2014 तक महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की संख्या में लगातार वृद्धि दर्ज की गई।



इस ऊपर दर्शाए गए ग्राफ के अनुसार, 2014 में समस्त भारत में

महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की संख्या 3,37,922 दर्ज की गई थी। 2022 में ये आंकड़ा बढ़कर 4,45,526 हो गया, जो एक दशक से भी कम समय में 31 प्रतिशत से अधिक की उल्लेखनीय वृद्धि दर्शाता है। 2019 में लॉकडाउन के कारण 2020 में इन आंकड़ों में पूर्व की तुलना में कमी देखी गई।

2023 व 2024 के स्पष्ट आंकड़ों के उपलब्ध नहीं होने कारण निश्चित रूप से कुछ कह पाना उचित नहीं होगा, परन्तु पिछले दो दशकों के आंकड़ों का मुल्यांकन यह दर्शाता है कि 2022 के बाद भी इन अपराधिक मामलों में वृद्धि ही दर्ज हो सकती है।

उल्लेखनीय है कि विश्व स्तर पर, राज्यों ने महिलाओं के अधिकारों के व्यक्तिगत अतिक्रमण होने के अनेक मामले सामने आने के बावजूद भी निष्क्रिय रुख अपनाया हुआ है। अधिकांश कानून पीड़ितों की रक्षा करने या अपराधी को दोषी सिद्ध करने में नाकामयाब साबित हुए हैं। राज्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि यदि वे एक बार राष्ट्रीय कानून अपनाए, तो वे उन्हें पूरी तरह से लागू भी करेंगे।

महिलाओं के संबंध में लोगों की मनोवृत्ति से परिवर्तन होना जरूरी है, पर ऐसा होने में बहुत लम्बा समय लगेगा। महिलाओं के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए जितना कानूनी प्रावधानों को लागू करना जरूरी है, उतना ही जरूरी है कि समाज के विकास में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के प्रति जागरुकता फैलाई जाए तथा लड़कों एवं पुरुषों को स्त्री के प्रति सम्मानपूर्ण दृष्टिकोण रखने के लिए शिक्षित किया जाए। हिंसा को रोकना इसलिए भी जरूरी है ताकि समाज के विभिन्न सदस्यों के बीच विवादों का समाधान गैर-हिंसक साधनों द्वारा किया जा सके। और आज के समय में सरकार तथा गैर सरकारी संगठनों के बीच तथा न्यायपालिका एवं मीडिया के बीच सक्रिय सहयोग द्वारा महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को रोकना भी अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्ष

संक्षेप में, यदि इस अध्याय पर एक समग्र दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट है कि नारी-मानवाधिकारों के संरक्षण एवं संवर्द्धन की दिशा में बहुतेरे संवैधानिक, विधिक व कानूनी प्रयत्न किये गये हैं, जो महिलाओं को उनकी वास्तविक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति प्रदान करने हेतु तथा उन्हें राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने हेतु प्रयत्नशील हैं। इन तमाम सरकारी उपायों के बावजूद आज भी महिलाएं शोषित एवं प्रताड़ित हो रही हैं, घरेलू हिंसा की शिकार हैं। वैसे इन प्रयासों से महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरुकता अवश्य आयी है, फिर भी पिछले 60-62 सालों में

महिलाओं की स्थिति में जो सुधार हुआ है वह अभी भी काफी नहीं है। बड़े-बड़े शहरों को छोड़ दें तो छोटे-छोटे शहरों एवं गांवों में आज भी महिलाओं की स्थिति दयनीय बनी है।

सरकार द्वारा महिलाओं की सुरक्षा के लिए कदम उठाए हैं। जैसे: पोक्सो एक्ट, महिला हैल्प लाईन नंबर जारी किए हैं। (181 और 1091) महिला पुलिस बल की नियुक्ति, सुरक्षा और जागरुकता अभियान फास्ट ट्रैक स्पेशल को कोर्ट को स्थापित किया गया उपरोक्त अध्ययन बाद ये कहा जा सकता है कि संवैधानिक, कानूनी व सस्थाओं और आयोगों के द्वारा किए गए प्रयास सराहनीय हैं। परन्तु आंकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट संकेत देते हैं कि महिलाओं के खिलाफ अपराधों को रोकने के लिए अभी लंबा रास्ता तय करना बाकी है, जिससे महिलाएं अपने घर कार्य स्थल और समाज में सुरक्षित सहसूस कर सकें। महिलाओं की सुरक्षा सिर्फ कानून व्यवस्था का नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक जिम्मेदारी भी है। हमें सुनिश्चित करना होगा कि महिलाएं भयमुक्त वातावरण में सांस ले सकें और अपने सपनों को साकार कर सकें।

संदर्भ सूची:-

- For detail see A. Avasthi and R.K. Avasthi, Modern Indian Social and Political Thought (New Delhi Research Publications, 2004), pp. 14-27
- P.M. Bakshi, The Constitution of India of India (New Delhi Universal Law Publishing Co. Pvt. Ltd., 2003),
- See D.D. Basu, Introduction to the Constitution of India Hindi Version (New Delhi Wadhwa and Company, 2004)
- For detail sec, The Constitution of India (New Delhi Govt of India, Ministry of Law and Justice, 2003)
- For detail see Tapan Biswal (ed.), Human Rights Gender and Environment (New Delhi Viva Books, 2007)
- HH Syed, Human Rights The New Era (New Delhi Kilaso Books, 2003)
- राष्ट्रीय उजाला 24 अगस्त, 2024

- 18 दिसम्बर, 2024 पीआईबी दिल्ली महिला एवं बाल विकास मंत्रालय
- न्यूज क्लिक रिपोर्ट, 05 दिसम्बर, 2023
- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय रिपोर्ट, दिल्ली, 18 दिसम्बर, 2024

डॉ० ममता देवी

सहायक प्रोफेसर

राजनीति विज्ञान, विभाग

महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय,

रोहतक (हरियाणा)

mamtadevi.polsc@mdurohtak.ac.in

सारांश

लोकगीत किसी भी प्रदेश की संस्कृति का आइना होते हैं। वहाँ पर प्रचलित लोकगीतों के माध्यम से हम यह पता लगा सकते हैं कि उस प्रदेश में कैसी सामाजिक व्यवस्था रही है? वहाँ पर रहने वाले लोगों का जन-जीवन कैसा है? या हम कह सकते हैं कि लोकगीत किसी प्रदेश की दशा का यथार्थ वर्णन करते हैं। लोकगीत मुख्यतः स्त्रियों द्वारा गाए जाते हैं। लोकसाहित्य के विद्वानों का मत है, “नारी जीवन की वेदना, हास्य, उमंग, शृंगार, अभिषेक, चांचल्य, रागद्वेष, कुढ़न, घृणा आदि सभी गीतों की पंक्तियों में प्रकट हुए हैं; नारी ने रीति-रिवाजों, उत्सवों, प्रथाओं और त्योहारों से सम्बन्धित जो गाया है उसमें अनजाने ही उसके मन के विभिन्न भावों को गति मिल गई है।” लोकगीतों में हमें नारी जीवन का इतिहास, उसके सुख, दुःख, उसकी पीड़ा सहज रूप से मुखरित होती है। लोकगीतों में नारी के कई रूप दृष्टिगोचर होते हैं। लोकगीतों में नारी को मां, बहन, बेटी, पत्नी, सास, ननंद, भाभी, देवरानी, जठानी, सौतन, प्रेमिका आदि सभी रूपों में चित्रित किया है। इन सभी रूपों में समाज का नारी के प्रति जैसा व्यवहार है, उसको जिस रूप में सम्मान दिया गया उसके जिस व्यवहार से उसको प्रताड़ना मिली, सभी कुछ नारी ने लोकगीतों के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। लोकगीतों के माध्यम से नारी ने समाज में फैली कुप्रथाओं का भी वर्णन किया है। एक नारी को समाज में रहकर किन-किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है, उसकी उन परिस्थितियों से बाहर निकलने की छटपटहाट साफ महसूस की जा सकती है। गृहस्थ जीवन में आए उन सभी क्षणों का वर्णन नारी लोकगीतों के माध्यम से करती है जो उसके जीवन में सुख की ठण्डी छाया और दुःख के बादल लेकर आए थे।

माता के रूप में

एक स्त्री के लिए मातृत्व सबसे बड़ा सुख माना जाता है। कहा भी जाता है एक स्त्री तभी पूर्ण मानी जाती है जब वह माँ बनती है। लेकिन जो नारी इस सुख से वंचित रह जाती है समाज में उसको तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है। उसे किसी भी शुभ कार्य में नहीं बुलाया जाता। उसको यह सब देखकर बहुत पीड़ा होती है ऐसे में एक नारी अपनी कोख चीरने के लिए तैयार हो जाती है –

“चीरूँ ए फाड़ या कोख नै, या कोख मेरे मारै सै मान,

खाल कड़ा कै भूस भराऊँ, कोए भूस में दिला दंयूगी आग।”

लेकिन जब स्त्री माँ बनने वाली होती है तो परिवार यह इच्छा रखता है कि वह एक पुत्र को जन्म दे ताकि उनका वंश आगे बढ़ सके। पुत्र

या पुत्री होना नारी के ऊपर निर्भर नहीं करता। इसमें पुरुष व स्त्री दोनों की भागीदारी होती है। लेकिन पुरुष प्रधान समाज में पुत्र न होने पर यह सारा दोष नारी के सिर ही मढ़ता है। एक लोकगीत में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि कैसे एक पति अपनी पत्नी को पुत्र पैदा करने की इच्छा व्यक्त करता है –

“बालम जी से अरज करूँ थी

मन्नै हरी हरी दाख मंगाद्यो जी,

ओ गए पंसारि की दुकान पै, ल्याए हरी हरी दाख तुला कै
खा कै सोई पिलंग पै

बालम तै कर री बात बड़े प्यार तै

जे गोरी थम छोरी जणोगी

बुरी बात करो गो हम तै

जो गोरी थम पूत जणोगी,

दाख मंगा द्यूँ और कहीं तै”

पत्नी के रूप में

लोकगीतों में पत्नी को कर्तव्यपरायण, पतिव्रता और एक सुघड़ गृहिणी के साथ-साथ उसको विरहणी नारी के रूप में दर्शाया गया है। जब एक बेटी विदा होकर अपने ससुराल में आती है तो उस अलग तरह का परिवेश मिलता है। ऐसे में उसको तालमेल बनाना कठिन लगता है। उसे पत्नी के साथ-साथ ससुराल में बाकी रिश्तों के साथ भी तालमेल बनाकर रहना पड़ता है। ऐसे में उसका सबसे नजदीकी रिश्ता पति-पत्नी का होता है। वह अपने इस रिश्ते को बड़े श्रद्धापूर्ण ढंग से निभाती है। हरियाणवी लोकगीतों में पत्नी को पति की प्रेरणास्त्रोत के रूप में भी उजागर किया गया है। एक पत्नी जब अपने पति को घर में बिना काम करते हुए देखती है तो उसके बहुत बुरा लगता है। वह अपने पति से सेना में भर्ती होने के लिए कहती है ताकि उसका परिवार में सभी सम्मान करे –

“क्यूँ सोवै सेर धरती पै लिखवा ले नाम भरती म्हां

पहरया करिए बूँट रबड़ ओड़ै चश्में लाया करिये।

पहरया करिए खाकी वरदी हाथां पै घड़ी सजाया करिये

ले ले रै गोरी म्हारी नमस्ते चलते की लेले राम – राम

बेटी के रूप में

लोकगीतों में दिखाया गया है कि घर में जो खुशी एक पुत्र होने पर होती है वह पुत्री होने पर नहीं होती। पुत्री को जन्म से ही पराया धन कहा जाता है। समाज में जब एक पुत्र जन्म लेता है तो चारों तरफ खुशियाँ का माहौल होता है। लेकिन जब एक पुत्री का जन्म होता है तो ऐसा लगता है जैसे कोई मातम छा गया है। अनेक

ऐसे लोकगीत प्रचलित हैं जिनसे यह साबित होता है कि पुत्र होना सौभाग्य की बात है और पुत्री दुर्भाग्य की —

“मेरे जन्म पर बजे ठीकरे,
भाई के पर थाली।
बूढ़ा भी रोवै बुढ़िया भी,
रोवै हाली — पाली

बहन के रूप में

समाज में सबसे पवित्र रिश्ता भाई बहन का होता है। परिवार के सभी रिश्तों से बढ़कर इस रिश्ते को माना गया है। ग्रामीण परिवेश में यह अक्सर कहा जाता है कि संसार में हर रिश्ता दोबारा बनाया जा सकता है। लेकिन माँ-जाया भाई एक ही बार मिलता है। पति या पत्नी की मृत्यु होने पर दोबारा विवाह किया जा सकता है लेकिन सगे भाई बहन का रिश्ता अनमोल होता है। रक्षा बन्धन जैसा पावन पर्व एक भाई बहन के रिश्ते से ही सजता है। जिसमें एक बहन अपने भाई की कलाई पर राखी बाँधकर उसको अपनी रक्षा करने के लिए कहती है। लोकगीतों में अनेक ऐसे प्रसंग मिलते हैं जहाँ एक भाई अपनी बहन को दिए वचन की खातिर अपनी जान भी न्योछावर कर देता है —

“निर्मला राखी बाँधे हे, उसके नैणां म्हं भर आया नीर
बेबे साची-साच बता दे हे, तेरै किस विध आया नीर
पूरणमल, पूरणमासी नै रे तेरा जीजा टूटै फाँसी
बेबे हे मेरी रोवै मत न्या, बदले म्हं खपा दयूं जान

विवाह गीतों में भात के अवसर पर गाए जाने वाले गीतों में भी बहन का अपने भाई के प्रति प्यार और अभिलाशा बखूबी जताई जाती है। ‘नरसी का भात’ भाई बहन के प्रेम को ही दर्शाता है कैसे एक बहन को भाई न होने पर ससुराल में किस व्यथा से गुजरना पड़ता है।

गृहस्थ जीवन में नारी

गृहस्थ जीवन में नारी को अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है। उसे परिवार में रहकर सभी संबंधों के प्रति अपने दायित्वों को पूरा करना होता है। वह कभी माँ बनकर अपने बच्चों को स्नेह देती दिखाई देती है, तो कभी गुरु बन कर उनको सही रास्ता भी दिखाती है। गृहस्थ जीवन से संबंधित लोकगीतों में अनेक ऐसे प्रसंग आते हैं जिनमें उसको गृह कार्यों में दिन-रात लगे रहना पड़ता है। उसको एक पल के लिए भी आराम नहीं मिलता। एक गीत के माध्यम से वह अपने मन की व्यथा बताती हुई कहती है —

“मैं तो माड़ी हो गई राम
धंधा कर के इस घर
बखते उठ कै पीसणा पीसूं
सदा पहर का तड़का।।”

फसलों की बुआई, नलाई, कटाई आदि में नारी को पुरुष के बराबर काम करते हुए देखा जा सकता है। खेतों में सूखा बाढ़ अकाल आदि के कारण फसलों के बर्बाद होने पर वह दुःखी होती है। उसके चेहरे पर घर-परिवार के पालन-पोषण चिन्ता उभरने लगती है। इसके विपरीत जब अच्छी फसल होती है तो वह खुशी से फूले नहीं समाती और अपने पति से आभूषण बनवाने की बात कहती है। उसका आभूषण बनवाने की चाह रखना इस बात की ओर संकेत करता है कि वह समाज में अपनी तथा अपने परिवार की प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहती है। एक लोकगीत में उसकी इस भावना को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है —

“कितना एक उपज्या रे हालिड़े बाजरा,
कोये, कितनी — एक उपजी जवार, बरसण
लागी रे काली बादली।
कोये, सौ मण निपज्या रे गोरी धन बाजरा,
कोये, दो सौ मण निपजी जवार, बरसण
लागी रे, काली बादली,
कोये, अपने घड़ा ले रे हालिड़े ‘गोखरू’
कोये, मेरी घड़ा दे नाथ, बरसण लागी रे
काली बादली।”

पारिवारिक सम्बन्धों में नारी

परिवार के दो आधार स्तम्भ होते हैं— पुरुष एवं नारी। ये दोनों मिलकर ही परिवार को बनाते और चलाते हैं। लेकिन किसी भी परिवार के वातावरण को सुसंस्कृत एवं सुव्यवस्थित बनाने का उत्तरदायित्व नारी के ही कंधों पर होता है। वह अपने पारिवारिक जीवन की गाड़ी को स्नेह, प्रेम, त्याग, उदारता, सेवा, सहिष्णुता और परस्पर आदर भाव से चलाती है। जिससे पारिवारिक सम्बन्धों में मधुरता बनी रहती है। लेकिन जब परिवार के सदस्यों में आपसी ईर्ष्या, स्वार्थ, संकीर्णता, असहिष्णुता आदि भाव भर जाते हैं तो परिवार बिखरने लगता है। पारिवारिक सम्बन्ध ही मनुष्य को मजबूत बनाते हैं और उसे जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं।

लोकगीतों में सास-ननद, देवरानी, जेठानी को बहु पर कटाक्ष करते हुए ऐसे अनेक प्रसंग सामने आए हैं। जहाँ एक सास बहु के खिलाफ अपने बेटे के कान भरती है, तो उसका बेटा अपनी पत्नी पर हाथ उठाने लगता है तो सास को बड़ी खुशी मिलती है। ननद का अपनी भाभी की जासूसी करना और देवरानी- जेठानी के व्यंग्य सुनाने के कारण एक बहु का सुसराल के इन सभी सम्बन्धों के बीच रहना उसके जीवन को कष्टकारी बनाता है ऐसे अनेक लोकगीत हैं जिनमें इन पारिवारिक घटनाओं का यथार्थ वर्णन मिलता है इसी सम्बन्ध में एक लोकगीत देखिये –

“हे तड़के के बज गए आठ सास मेरी और पिसावै सै
हे रोटियों नै हो सै वार नणद मेरी पाणी भरवावै सै
हे मैं रोटी ले कै जाय पति एक मेरा खड़या लखावै सै
गौरी सब नै नुला लिया ईख ईब तूँ रोटी ल्याई सै
मेरै मारै रैपटे, च्यार राही तै मेरे गाम की बतावै सै
मै उल्टी घर नै आई, सास मेरी, भाई नै सिखावै सै
रे बेटा तेरी भाण बदमास, काम पै राड़ नचावै सै।

निश्कर्ष

अतः लोकगीतों में नारी के सभी रूपों को सहज एवं स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। लोकगीत नारी जीवन के सुख, दुःख, आशा, आकांक्षा, विरह, वेदना, पितृसत्तात्मक समाज की जकड़न आदि सभी भाव चित्रित करते हैं। इतना ही नहीं भाई- बहन के प्रेम की व्यथा, सास-ननद के अत्याचारों से पीड़ित स्त्री की मनोव्यथा, शैक्षिक विशमता, बेमेल विवाह, कृशक जीवन की कठिनाइयों आदि के भी भाव इन गीतों में मिलते हैं। हम कह सकते हैं कि कन्या जन्म के प्रथम कृन्दन से लेकर जीवन की अंतिम कड़ी तक के सभी भावों को लोकगीतों में अभिव्यक्त किया गया है।

उपरोक्त विवरण के आधार पर हम कहते हैं कि नारी चेतना का सम्बन्ध नारी का अपने अस्तित्व की पहचान और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने से है। प्राचीन काल से लेकर अब तक नारी अपने अधिकारों को लेकर संघर्षरत है। समाज, इतिहास व साहित्य के बदलते स्वरूपों का प्रभाव नारी जीवन पर स्पष्ट रूप से देखा गया है। कभी उसे देवी स्वरूपा समझा गया तो कभी भोग की वस्तु समझकर उसका अनादार किया गया, कभी उसे अबला कहकर शक्तिहीन समझा गया तो कभी उसे पैरों की जूती के समान समझकर उसको घर की चारदीवारी में कैद किया गया। जहाँ समाज में नारी के माँ, बहन, पुत्री पत्नी रूपों को सम्मान दिया गया वहीं उसके कामिनी, रमणी व वैश्यारूप की

निंदा भी की गई है। नारी के इन सभी स्वरूपों का वर्गीकरण उसके मानसिक व दैहिक तत्वों के कारण किया गया।

बदलती हुई सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक परिस्थितियों ने नारी जीवन को प्रभावित किया। उसमें एक नई चेतना शक्ति का संचार हुआ जिसके फलस्वरूप नारी ने अस्तित्व की पहचान कर परम्परा की बेड़ियों को तोड़कर समाज में अपनी अलग पहचान बनाई। अपनी इसी अलौकिक शक्ति के कारण उसने अपने साथ हो रहे अन्याय व अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाई और समाज में फैली पर्दा प्रथा, बेमेल विवाह बाल विवाह जैसी कुरीतियों का खुलकर विरोध किया।

शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण नारी के आत्मविश्वास में वृद्धि तो हुई ही है साथ में उसने समाज में यह भी साबित कर दिखाया कि पुरुष प्रधान में आज स्त्रियाँ किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं हैं। आज वह त्याग व बलिदान की मूर्ति बनकर जीना नहीं चाहती अपितु संसार में अपनी एक अलग पहचान बनाकर देश की प्रगति में अपना योगदान देना चाहती है। आज नारी अपने स्वाभिमान की रक्षा के संघर्षरत है। उसने अपने पुरातन रूप ‘अबला’ को त्याग कर समाज में ‘सबला’ रूप को स्थापित कर लिया है।

संदर्भ सूची

1. डॉ० श्यामपरमार, भारतीय लोक साहित्य, पृ० सं०- 125
2. डॉ० साधुराम शारदा, हरियाणा के लोकगीत, पृ० सं०- 41
3. डॉ० साधुराम शारदा, हरियाणा के लोकगीत, पृ० सं०-52
4. जनार्दन शर्मा, लोकरंग हरियाणवी जकड़ी गीत, पृ० सं०-100
5. ओमप्रकाश कादयान, हरियाणा के लोकगीत, भाग-II पृ० सं०- 21
6. जनार्दन शर्मा, लोक रंग हरियाणवी जकड़ी गीत, पृ० सं०- 66
7. डॉ० साधुराम शारदा, हरियाणा के लोकगीत, पृ० सं०- 209
8. डॉ० सावित्री वशिष्ठ, हरियाणा की लोकगीत, पृ० सं०- 101
9. जनार्दन शर्मा, लोक रंग हरियाणवी जकड़ी गीत, पृ० सं०- 67

डॉ० रेखा

सहायक प्रोफेसर
हिन्दू गर्ल्स कॉलेज
सोनीपत (हरियाणा)

Email: rekhadahiya9609@gmail.com

सारांश:

साठोत्तरी हिन्दी-कथा साहित्य के महिला कथाकारों में मालती जोशी जी का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपनी कहानियों में समकालीन सामाजिक परिवेश, नारी जीवन की संवेदना, नारी-मन तथा नारी की विद्रोह भावना आदि को बखूबी स्वर दिया है। मालती जी ने अपनी कहानियों में नारी-जीवन के आंतरिक एवं बाह्य जगत का चित्र संजीदगी के साथ खींचा है। अभिप्राय यह कि उन्होंने नारी-हृदय का कोना-कोना छान मारा है। संदर्भों की मौलिकता तथा घटनाओं की विभिन्नता आदि के कारण उनकी कहानियों की रोचकता में कहीं से कोई बाधा उत्पन्न नहीं हुई है। उनकी कहानियों में प्राचीन मान्यताओं का, शोषण का, सम्बन्धों में आये अजनबीपन का, सामाजिक प्रतिष्ठा की होड़ का, पारिवारिक जीवन की जटिलता का, दाम्पत्य-सम्बन्धों में आयी कटुता तथा नारी-मन आदि का वर्णन विशेष रूप से दृष्टव्य होता है।

मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मी मालती जोशी जी का व्यक्तित्व निष्ठावान अध्येता के रूप में सर्वाधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। वे नारी-समस्याओं की पक्षधर रही हैं। वे एक संवेदन-शील, सुधारवादी तथा कर्तव्यनिष्ठ नारी थीं, जिनका व्यक्तित्व बहुआयामी था।

मालती जोशी जी ने अपनी रचना-यात्रा का आरंभ कविता-लेखन से किया था, किन्तु बाद में उनका झुकाव कथा-साहित्य की ओर हुआ। उन्होंने दो सौ से भी अधिक कहानियाँ लिखी हैं, जो उनके कुल बाइस कहानी-संग्रहों में संकलित हैं। जबकि उनके कुल पन्द्रह उपन्यास, छः बाल कथाएँ, आठ अनुवाद साहित्य, एक व्यंग्य साहित्य, एक गीत-संग्रह तथा कुछ रूपांतरित नाट्य-साहित्य हैं, जो उनके रचना-संसार को समृद्ध बनाते हैं।

भारत में कहानियों की एक सम्पन्न परम्परा रही है। प्राचीन काल में सदियों तक प्रचलित वीरों तथा राजाओं के शौर्य, ज्ञान, वैराग्य, प्रेम, न्याय, समुद्री यात्रा तथा अगम्य पर्वतीय प्रदेशों में प्राणियों का अस्तित्व आदि की कथा है, जिनकी कथानक घटना-प्रधान हुआ करती थीं, भी कहानी के ही रूप हैं।

हिन्दी कहानी के उद्भव और विकास के संदर्भ में कुछ विद्वानों का मानना है कि भारत की प्राचीन कथाओं, यथा-पंचतंत्र, जातक कथा तथा हितोपदेश आदि को न मानकर इसे अंग्रेजी-साहित्य की “शॉर्ट स्टोरी” से माना जाना चाहिए। पश्चिम में कहानी एक लोकप्रिय साहित्य विधा के रूप में स्थापित हो चुकी

थी। हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में पश्चिम का कहानी-साहित्य धीरे-धीरे लोकप्रिय होने लगा था। उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक तथा बीसवीं सदी के आरंभ में बंगला तथा मराठी में कहानी-लेखन की शुरुआत हो गयी थी। इन्हीं से प्रेरणा ग्रहण कर हिन्दी साहित्यकारों ने कहानी-लेखन की शुरुआत की। भारतीय विद्वानों ने मुख्य रूप से कहानी को “प्रेमचंदपूर्व कहानी”, “प्रेमचंदयुगीन कहानी” तथा “प्रेमचंदोत्तर” कहानी को अलग-अलग बाँटकर देखने का प्रयास किया।

प्रेमचंदपूर्व की कहानियों को देखने से ऐसा लगता है कि इसमें धार्मिकता, अलौकिकता, चमत्कार-पूर्ण बातें तथा देवी-देवताओं आदि का चित्र खींचा गया। इस युग की कहानियाँ आम की जन-जीवन से जुड़ी नहीं होती थी और न ही इनमें कोई वास्तविकता का चित्रण मिलता है। हिन्दी कहानी का मुख्य रूप से बीसवीं सदी के आरंभ में विकास दिखने लगता है। लेकिन हिन्दी की पहली कहानी किसे माना जाय, इसमें विद्वानों का मतभेद दिखता है। हिन्दी कहानी के विकास में सन 1900 में “सरस्वती” पत्रिका का प्रकाशन एक निर्णायक घटना की तरह है।

हिन्दी कहानी-साहित्य में प्रेमचंद का प्रादुर्भाव कहानी-साहित्य की सबसे अभूतपूर्व घटना थी। कहानी के क्षेत्र में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। वे हिन्दी कहानी के क्षेत्र में “युग-प्रवर्तक” कहानीकार माने जाते हैं। प्रेमचंद ने उर्दू से आकर हिन्दी कहानी-साहित्य को लगभग तीन सौ कहानियाँ दीं, जिनके अनेक कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। प्रेमचंदयुगीन हिन्दी कहानी का काल 1916 ई० से 1936 ई० तक माना जाता है। इस युग में प्रायः दो कहानीकार हैं। जयशंकर प्रसाद तथा प्रेमचंद एक दूसरे के समानान्तर चलते दिखायी देते हैं। इन दोनों कहानीकारों ने हिन्दी कहानी को दो अलग-अलग शैली एवं विषय-वस्तु प्रदान की। हालाँकि प्रेमचंद हिन्दी कहानी के पहले कहानीकार हैं, जिन्होंने राजमहलों का साहित्य झोपड़ी तक पहुँचाया। कहानी को उन्होंने घटनाओं के जंजाल से मुक्त करके उसे चारित्रिक विशेषता प्रदान की। प्रेमचंदयुगीन कहानीकारों में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, विश्वम्भरनाथ शर्मा ‘कौशिक’ आचार्य चतुरतेन शास्त्री, राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह, वृन्दावनलाल वर्मा, जैनेन्द्र कुमार तथा गंगाप्रसाद श्रीवास्तव आदि प्रमुख थे, जिन्होंने हिन्दी कहानी विधा को एक नयी दिशा प्रदान की।

प्रेमचंदोत्तर कहानी हिन्दी का पहला ऐसा आंदोलन है, जिसमें पहली बार पश्चिमी विचार-धाराओं का सीधा, प्रभाव पड़ा।

इस रूप में प्रेमचंदोत्तर कहानी—युग हिन्दी कहानी को विश्व के बौद्धिक फलक के साथ जोड़ने वाला पहला साहित्यिक युग है। इसका काल 1936 से 1950 तक माना जाता है। प्रेमचंदोत्तर काल में हिन्दी कहानी को न सिर्फ नवीन आयाम प्राप्त हुए, बल्कि उसे एक नयी दिशा भी मिली। इस काल की कहानी की रचना—प्रक्रिया के निर्माण में मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा राजनीति आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस काल के कहानीकारों पर कार्ल मार्क्स के समाजवादी विचार तथा फ्रायड एवं युंग के मनोविश्लेषणवादी विचार का गहरा प्रभाव रहा है। इस युग के कहानीकारों में यशपाल, जैनेन्द्र कुमार, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, रांगेय राघव, मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, भैरवप्रसाद गुप्त, मार्कण्डेय, अमरकांत, भीष्म साहनी तथा शिवप्रसाद सिंह आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस युग में एक तरफ प्रेम, बलिदान, त्याग आदि उदात्त भावनाओं को लेकर चलने वाले अनेक कहानीकार हुए तो दूसरी तरफ जीवन के कटु यथार्थ, वर्ग—संघर्ष एवं वास्तविकताओं का चित्रण करने वाले भी कहानीकार हुए। इस युग की कहानियाँ धीरे-धीरे यथार्थवाद की ओर उन्मुख होती रहीं।

1947 से 1990 तक की हिन्दी की आधुनिककालीन महिला साहित्यकारों ने नारी—जीवन की समस्याओं का गहन विश्लेषण करके उनके कारण एवं निवारण दोनों को ही प्रस्तुत किया है। हिन्दी कहानी—लेखन में महिला कहानीकारों का अवदान महत्वपूर्ण रहा है। उनकी कहानियों में नारी अस्मिता, नारी—चेतना तथा नारी जागरण आदि का चित्र बखूबी खींचा गया है। इस काल के महिला साहित्यकारों में शशिप्रभा, शिवानी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, राजी सेठ, मालती जोशी, मंजुल भगत, मृदुला गर्ग, चंद्रकांता, ममता कालिया, सूर्यबाला, मैत्रेयी पुष्पा, मेहरुन्निसा परवेज, चित्रा मुद्गल, नमिता सिंह, दीप्ति खंडेलवाल, कृष्णा अग्निहोत्री, सुधा अरोड़ा, मीना अग्रवाल, निरुपमा सेवती, गीतांजलिश्री, जया जादवानी, मधु कांकरिया तथा अलका सरावगी आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिन्होंने नारी के विभिन्न रूपों का चित्रांकन अपनी—अपनी कहानियों में किया है। इन कहानीकारों अपनी कहानियों में न सिर्फ घरेलू कामकाजी नारियों के जीवन में हो रहे बदलावों को रेखांकित किया है, बल्कि उन चरित्रों को भी सामने लाने का प्रयास किया है, जो महानगर में अपने बड़े सपनों के साथ जीना चाहती हैं।

1990 से अब तक की आधुनिककालीन महिला

लेखिकाओं पर विचार करें तो इसमें प्रत्यक्षा सिन्हा, गीताश्री, वंदना राग, मनीषा कुलश्रेष्ठ, आकांक्षा पारे काशिव, इंदिरा दाँगी, अल्पना मिश्र, ममता गोयल, रजत रानी 'मीनू', डॉ० कुसुम वियोगी तथा सुमन प्रभा रजनी आदि प्रमुख हैं। इन महिला साहित्यकारों ने अपनी कहानियों में भारतीय समाज का एक नया चेहरा प्रस्तुत किया है। वह ऐसा चेहरा है, जिसे देखा नहीं जा सकता, लेकिन अनुभूति की जा सकती है।

1990 के बाद की कहानियों में दलित, आदिवासी, साम्प्रदायिकता तथा नारी अस्मिता की बातें उभरकर सामने आयी हैं। दलित—आदिवासी कहानी की विकास—यात्रा में सशक्त भूमिका निभाने वाली लेखिकाओं में डॉ० सुशीला टाकभौर, वंदिता कमलेश्वर, डॉ० कुसुम वियोगी, डॉ० कुसुम मेघवाल, डॉ० हेमलता महीश्वर, अनीता भारती तथा सुजाता पारमिता आदि के नाम प्रमुख हैं। इन महिला कहानीकारों ने दलित—आदिवासी कहानी के जरिये इस समाज की संवेदनाओं को बारीकी से उकेरा है। इनकी कहानियाँ शोषणकारी व्यवस्था को मिटाने के लिए इस समाज में आयी हीनता—बोध को तोड़ती हुई उन्हें संघर्ष के लिए अभिप्रेरित करती दिखती हैं। 1990 के बाद आये उदारीकरण, अस्मिताओं के उभार, जातीय समीकरण, क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के गठन, शिक्षा तथा आर्थिक स्रोतों का बढ़ना आदि ने सामाजिक स्तर पर बहुत बड़े बदलाव का संकेत दिया है। इन बदलावों से उद्योगों तथा बाजार के विकास की भी संभावनाएँ बढ़ी हैं। बाजार—वाद एवं पूँजीवाद ने अमीरी तथा गरीबी के फासले को भी बढ़ाया है। ऐसे समय में महिला साहित्यकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से व्यापक जन—समूह की संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने का हरसंभव प्रयास किया है।

कहानी के मुख्यतः कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र—चित्रण, संवाद, भाषा—शैली, देशकाल अथवा वातावरण तथा उद्देश्य कुल छः तत्व माने गये हैं। मालती जोशी जी ने भी अपनी कहानियों में इन तत्वों को समाविष्ट किया है।

जिस घटनाक्रम या कथा के आधार पर कहानी की रचना की जाती है, उसे उस कहानी की “कथावस्तु” कही जाती है। कथावस्तु की श्रेष्ठता सम्पूर्ण कहानी को श्रेष्ठ बनाने में सहायक होती है। मालती जोशी जी की कहानियों की कथावस्तु में टूटते परिवार, रूढ़ि परम्पराओं का खंडन, बदलती मानसिकता, बिगड़ते कौटुम्बिक सम्बन्ध, गरीबी के कारण विवाह की समस्या, बिखरता प्रेम, बदलते संदर्भ तथा आधुनिकता के नाम पर स्त्रियों का शोषण आदि सभी का चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

कहानी में पात्रों का चरित्र-चित्रण विविध कार्य-व्यापारों द्वारा तथा पात्रों के कथोपकथन के माध्यम से किया जाता है। पात्रों के व्यक्तित्व का सहज विकास तथा विश्वसनीयता बहुत आवश्यक है। पात्रों के चरित्र की संक्षिप्त, स्पष्ट एवं संकेतात्मक अभिव्यक्ति कहानी के गुण हैं। मालती जोशी जी ने अपनी कहानियों में नारी के अनेक रूपों का चित्रांकन किया है। कहीं प्रेयसी-रूप, पत्नी-रूप तो कहीं माता आदि के रूपों में उनके चरित्रों का निर्माण किया है। ये चरित्र कथावस्तु को आगे ले जाने में काफी सहायक सिद्ध हुए हैं।

संवाद या कथोपकथन को कहानी का अनिवार्य अंग माना गया है। संवाद के माध्यम से ही पात्रों की मनःस्थिति स्पष्ट होती है। संवाद कहानी की घटना को गतिमान तो बनाते ही हैं, कहानी को रोचक, सजीव तथा प्रभावी बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मालती जी ने संवाद के स्वरूप और उसकी महत्ता को ध्यान में रखते हुए अपनी कहानियों की संवाद-योजना पर विशेष ध्यान दिया है। उन्होंने संवादों में अपने पात्रों की विचाराभिव्यक्ति की है। अपनी कहानियों में मालती जोशी जी ने व्यंग्यात्मक, भावात्मक तथा हास्य-व्यंग्य आदि संवादों का बखूबी प्रयोग किया है।

हमारी अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम भाषा है। इसके अभाव में कहानी की रचना कर पाना मुश्किल सा हो जाता है। जबकि शैली कहानीकार के व्यक्तित्व के अनुरूप होती है। जितने भी कहानीकार हैं, स्वाभाविक है, उनकी शैलियाँ भी अलग होंगी, क्योंकि एक व्यक्ति का व्यक्तित्व दूसरे व्यक्ति के समान कभी नहीं हो सकता। मालती जोशी जी ने अपनी कहानियों में पात्रानुरूप भाषा का प्रयोग किया है। इनकी कहानियों में मालवांचल के शब्दों के साथ तद्भव, तत्सम तथा विदेशी भाषा के शब्दों का भी प्रयोग बखूबी दृष्टव्य होता है। उन्होंने अपनी कहानियों में काव्यात्मक चित्रात्मक तथा व्यंग्यात्मक आदि भाषाओं का प्रयोग किया है, जिससे कहानी शिल्प की दृष्टि से अच्छी बन सकी है। साथ ही उन्होंने अपनी कहानियों में शैली, स्मृति-प्रधान शैली, संवाद शैली तथा आत्मकथात्मक शैली आदि का भी प्रयोग किया है।

जिस तरह संवाद तथा शैली कथावस्तु को सजीव, रोचक एवं प्रभावी बनाकर पाठक को अपने से जोड़कर रखते हैं, उसी प्रकार देशकाल अथवा वातावरण तत्व भी कथावस्तु में तत्कालीन परिस्थितियों का उद्घाटन कर कथानक को मजबूत तथा यथार्थ बनाने में योगदान देता है। देशकाल के अंतर्गत

तत्कालीन समस्त परिस्थितियाँ, यथा-सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा नैतिक समाहित रहती हैं। देशकाल कहानियों में चित्रित घटनाओं को विश्वसनीयता, स्वाभाविकता एवं यथार्थ आधार प्रदान करता है। मालती जोशी जी की कहानियों में सामाजिक एवं पारिवारिक देशकाल का अत्यधिक चित्रण हुआ है।

मालती जोशी जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से नयी मूल्य-दृष्टि, नया नैतिकता का बोध, यौन-सम्बन्धों का चित्रण, आर्थिक पक्षा का चित्रण, अकेलापन एवं अजनबीपन की अभिव्यक्ति, परिवेश के प्रति जागरूकता, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य, विद्रोह का स्वर एवं दुर्दम जिजीविषा जैसे कई विषय को अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में जिस तरह आधुनिक मध्यवर्गीय शहरी तथा दाम्पत्य एवं पारिवारिक जीवन का बहुआयामी चित्र खींचा गया है, उसी तरह उक्त परिवार के भीतर के स्त्री-जीवन की यातनाओं का भी विभिन्न कोणों से अंकन करने का उनका उद्देश्य है।

नारी और पुरुष दोनों ही समाज के परस्पर पूरक अंग हैं, फिर भी प्रत्येक काल में नारी के प्रति समाज का अपना दृष्टिकोण बदलते रहा है। आरंभिक काल में नारी और पुरुष में कोई भेदभाव नहीं था, उन्हें पुरुष के समान ही समाज में अधिकार प्राप्त था, किन्तु जैसे-जैसे समाज में बदलाव होता गया, वैसे-वैसे नारी के अस्तित्व को चोट पहुँचने लगी। धीरे-धीरे नारी के सारे अधिकार छिनते गये और वह अनेक बंधनों में जकड़ती चली गयी। पति के आज्ञा का पालन, उनकी सेवा तथा पारिवारिक सदस्यों के कर्तव्यों का पालन एकमात्र उनका कर्तव्य माना जाने लगा और वह पूरी तरह से परिवार के प्रति सिमटी हुई पायी जाने लगी। मालती जोशी जी की बहुत-सी कहानियों में सामाजिक संदर्भ उभरकर सामने आये हैं, जहाँ स्त्रियाँ समाज की कुत्सित मानसिकता से ग्रसित दिखती हैं। यद्यपि कि बहुत-सी कहानियों में यह भी दृष्टव्य होता है कि मालती जोशी स्त्रियाँ समाज में प्रचलित रुढ़ियों और परम्पराओं को तोड़ते हुए आगे अग्रसर हो रही हैं और अपने अधिकारों के लिए निरन्तर संघर्ष कर रही हैं।

परिवार सामाजिक दृष्टि से सबसे प्राथमिक प्रभावी तथा महत्वपूर्ण इकाई है। अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए मानव समाज में परिवार से अटूट सम्बन्ध स्थापित करता है। हिन्दी कहानियों में पारिवारिक संदर्भों का विस्तृत चित्रण प्रस्तुत हुआ है। मालती जोशी जी ने अपनी कहानियों में परिवार को

केन्द्र में रखते हुए आधुनिक युग में मध्यवर्गीय शहरी परिवार को अपनी विषयवस्तु बनाते हुए समाज में परिवार की महत्ता स्पष्ट किया है। मालती जोशी जी ने जहाँ युगानुरूप संयुक्त परिवारों को टूटते हुए दिखाया है, वही एकल परिवारों की समस्याओं एवं कुंठाओं को भी अपनी कहानियों में उद्धृत किया है।

विवाह या दाम्पत्य पारस्परिक जीवन का मूल केन्द्र है। दाम्पत्य-जीवन के सुचारु रूप से निर्वहन के लिए दम्पति एक अतिरिक्त आचार संहिता का पालन करते हैं, जिनसे दाम्पत्य-जीवन सम्बन्धी मूल्यों का विकास होता है। मालती जोशी जी ने दाम्पत्य-जीवन में आये बिखराव तथा टूटन को स्पष्ट करते हुए दोनों का जीवन दुःखमय एवं अवसादग्रस्त होते अपनी कहानियों में दर्शाया है। उनकी कहानियों में कहीं दाम्पत्य-जीवन सुखद दिखता है तो कहीं अनेक कारणों से पति-पत्नी के जीवन में आये टूटन, संत्रास तथा तनाव आदि भी दृष्टव्य होता है।

मनोविज्ञान से अभिप्राय उस पद्धति-विशेष से हैं, जिनके माध्यम से पात्रों की मनःस्थिति या मनोदशा को उसके परिवेश के साथ जोड़कर देखा जाता है। मालती जोशी जी की कहानियों को देखने से स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपनी कहानियों में नारी की अव्यवस्थित मानसिक स्थितियों तथा विवशताओं का बखूबी चित्रांकन किया है। उनकी कहानियों में पारिवारिक-सम्बन्धों के बीच नारी की अनेक मानसिक स्थितियों का चित्र खींचा गया है। उनकी कहानियों में परम्परागत रूप में नारी अत्यन्त पीड़ित, शोषित, उपेक्षित तथा रुढ़ियों के बंधन में बँधी हुई दिखती है। उनकी अनेक कहानियों की नारियाँ अपने पारिवारिक तथा दाम्पत्य-जीवन में आये कड़वाहट की वजह से मानसिक रूप से ग्रसित दिखायी देती हैं। अतएव बदलते सामाजिक परिवेश, टूटते मूल्य एवं विखंडित होते संयुक्त परिवार के कारण अकेलेपन के संताप तथा नारी-पुरुष के रिश्तों के ठंडेपन को अपनी कहानियों में मालती जोशी जी ने अपने दृष्टिकोण से देखने का हर संभव प्रयास किया है।

संदर्भ सूची

1. हिन्दी कहानी का इतिहास, डॉ० गोपाल राय, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2014
2. आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य और मनोविज्ञान, डॉ० देवराज उपाध्याय, साहित्य भवन, इलाहाबाद-2007
3. समकालीन हिन्दी कहानी, डॉ० अमर सिंह बधान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली- 2006

4. रहिमान धागा प्रेम का, मालती जोशी, परमेश्वरी प्रकाशन दिल्ली-2003
5. आनंदी, मालती जोशी, मनु प्रकाशन, जयपुर-2010
6. हादसे और हौसले, मालती जोशी, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली-2017

अनीता कुमारी

शोध-छात्रा, हिन्दी विभाग
राँची विश्वविद्यालय, राँची।

शोध सारांश

श्रीमद्भागवत गीता भगवान श्री कृष्ण द्वारा समाज को दिया गया एक उत्तम उत्कृष्ट समाधान है जिसमें से हताशा, निराशा, डिप्रेशन, बैचनी, निष्क्रियता या भयंकर अवसाद में पड़े हुए जीवों को निकालने का एक सरल व पूर्ण समाधान है।

अर्जुन प्रतिकूल परिस्थितियों को देखकर हताश, निराश व डिप्रेशन और अवसाद में पड़ा हुआ वह जीव होता है जिसे निकालने के लिए भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को दिव्य साइकोलॉजिकल ट्रीटमेंट प्रदान किया जिसके माध्यम से वह गिरा, थका व हारा हुआ योद्धा पुनः खड़ा होकर अपने जीवन युद्ध को लड़ने के लिए फिर से तैयार हुआ।

श्रीमद्भागवत गीता श्री कृष्ण भगवान के मुख से निकली वह दिव्य औषधि है जो समस्त मानव जाति के लिए कल्याणकारी है। आज भी गीता उसी प्रकार से मानव को अवसाद से निकाल रही है जिस प्रकार से अर्जुन को निकाला। श्रीमद्भागवत गीता आध्यात्मिक, वैज्ञानिक व मनोवैज्ञानिक अनेकों प्रकार के रोगों की औषधि है।

श्रीमद्भागवत गीता जीवन के विभिन्न पहलुओं को ठीक करने में पूर्णरूपेण मददगार है। कोई व्यक्ति अगर श्रीमद्भागवत गीता को वैज्ञानिक दृष्टि से अथवा व्यवस्था की दृष्टि से देखना चाहता है तो गीता उसके अंदर मैनेजमेंट के समस्त गुणों का समावेश उत्पन्न करती है। यह उसके जीवन में हताशा और निराशा में भी दीप बनकर उसका मार्ग प्रशस्त करती है तथा जीवन में लक्ष्य की ओर पहुंचाने का कार्य करती है।

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को जीवन व्यवस्था का वह सूत्र प्रदान करते हैं जिसके माध्यम से आज हम सभी मानव यदि श्रीमद्भागवत गीता का अध्ययन करें तो वह हमें आत्मऊर्जा से ओतप्रोत करती है। भगवान श्री कृष्ण कहते हैं : हे अर्जुन!

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।

एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा”।

13/12

आध्यात्म ज्ञान अर्थात् आत्मा का ज्ञान सदैव रहता है, तत्त्व ज्ञान अर्थात् आत्मारूप का दर्शन ही आध्यात्म ज्ञान कहलाता है और जो इसके विपरीत है वह अज्ञान है।

भूमिका :

सन् 1970 में तिरुवनंतपुरम् में समुद्र के किनारे एक

सज्जन बैठे गीता पढ़ रहे थे, तभी एक नौजवान वहां आया और सज्जन को गीता पढ़ते हुए देखकर उसने कटाक्ष करते हुए कहा कि विज्ञान के इस युग में आप गीता पढ़ रहे हैं। इससे अच्छा होता कि आप किन्हीं अन्य कार्यों में अपना समय लगाते ताकि देश के लिए कुछ अच्छा कर पाते। सज्जन ने सुना और मुस्कराते हुए पुछा कि तुम कहां से आये हो? नौजवान ने उत्तर में कहा मैं कलकत्ता से हूँ और Bhabha Atomic Research Centre में अपना Career बनाना चाहता हूँ। सज्जन फिर मुस्कुरा दिये और उठ खड़े हुए। उनके उठते ही चार अंगरक्षक उनके पास आ गये और एक बड़ी सी गाड़ी उनके पास आकर रुक गई। नौजवान यह सब देखकर हैरान रह गया और सोचने लगा की अवश्य ही यह कोई बड़ी हस्ती है परन्तु मैं तो इनका परिचय लेना ही भूल गया। दौड़ता हुआ वह नौजवान उस सज्जन व्यक्ति के पास गया और उनसे उनका परिचय पूछा। बड़े ही सहज भाव से सज्जन व्यक्ति ने कहा – मेरा नाम विक्रम सारा भाई है (डॉ. विक्रम सारा भाई एक महान भारतीय भौतिक विज्ञानिक हुये हैं, इन्हें भारत के अंतरिक्ष अनुसंधान का जनक माना जाता है।) नौजवान ने जब यह सुना तो वह शर्मसार हो गया। विक्रम सारा भाई उस नौजवान की पीठ थप-थपाते हुए बोले भले ही महाभारत हो या आज का भारत ईश्वर को कभी मत भूलना। विज्ञान को भी ज्ञान का सम्बल चाहिए। विज्ञान भी भगवान के बिना अधूरा है।

संत आशुतोष महाराज जी इस बात को इस प्रकार समझाते हैं :- वो कहते हैं कि एक मोटर में दो आपेक्षित यंत्र चाहिए 1. गति वर्धक 2. दिशा सूचक। विज्ञान ने गति तो दी मगर दिशा नहीं दे पाया। इसलिए दशा बिगड़ने लगी। “गीता” बिगड़े हुए मानव की दशा सुधारने का काम करती है।

कई बार हम बाह्य युद्ध लड़ते – लड़ते आंतरिक युद्ध हारने की स्थिति में आ जाते हैं। जब हम अपने भीतर चल रहे संग्राम से लड़ नहीं पाते तब आत्मिक, मानसिक तथा बौद्धिक रूप से अस्वस्थ महसूस करते हैं और इससे निकलने के लिए हमारे पास कोई रास्ता नहीं होता। ऐसी अवस्था में हम किसी ऐसे मनोचिकित्सक की खोज में होते हैं जो हमारे मन की दशा को ठीक कर दे। एक हद तक हो सकता है कि कोई ठीक कर भी दे लेकिन वे हमें पूर्णरूपेण स्वस्थ करने में समर्थ नहीं होते। इसके लिए तो वर्तमान परिवेश में भगवान श्री कृष्ण जैसा मनोचिकित्सक चाहिए जो हमें हमारे मानसिक रोगों व विकारों से निकालकर पूरी तरह से स्वस्थ कर सके और जीवन युद्ध को लड़ने के लिए हमें पुनः खड़ा

कर सके।

अर्जुन श्री कृष्ण से कहते हैं कि केशव मेरा शरीर कांप रहा है। मेरा मुख सूख रहा है और मेरे हाथ से गांड़ीव छूट रहा है।

“सीदंती मम गात्राणी मुखं च परिशुष्यति” गीता 1/29

हे केशव मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं, शरीर कंपन कर रहा है, मेरे हाथ से गांड़ीव छूट रहा है। मेरी त्वचा जल रही है, मैं खड़ा होने में असमर्थ हूँ और ऐसा कह कर अर्जुन रथ के पिछले हिस्से पर जा कर बैठ जाता है।

यह सारे लक्षण एक ऐसे डिप्रेशन से युक्त मनुष्य के हैं जो भयंकर डिप्रेशन का मरीज़ होगा। इसलिए अर्जुन भी एक प्रकार के डिप्रेशन की गहन अवस्था में था। यह सभी मनोरोगियों के लक्षण हैं जो विकृत मानसिकता के परिचायक हैं।

अनेकों प्रकार के बहाने खोजना, कार्य न करना, कार्य करने से भागना और विचारों का ग़लत प्रभाव ग़लत दिशा में ही लेकर जाता है और ऐसा तब होता है जब व्यक्ति कार्य करने में असफल महसूस करता है। उसे लगता है कि जीवन में मैं कुछ नहीं कर पाऊँगा। अब मैं जीवन युद्ध को लड़ने में असमर्थ हूँ, मैं जीवन में कुछ बन नहीं सकता, मैं कोई परीक्षा पास नहीं कर सकता या फिर इस तरह के विचार उसे घेर लेते हैं कि मैं किसी अच्छी Post पर Appoint नहीं हो सकता। ऐसी मानसिकता रखने वाले व्यक्ति में यह समस्त लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

ऐसे ही अर्जुन भी कहता है कि मैं अपने परिवार के पतन का कलंक अपने जीवन में लेकर नहीं चल सकता क्योंकि यह महापाप है। कुल नाश होने का पाप उसे अपने ऊपर लगने का भयंकर डर सता रहा है।

वह अत्यधिक चिंता (Excessive Worry) घोर निराशा (Anticipating Disorder) के बाद भयंकर नकारात्मक विचारों से घिरा हुआ है। यहां तक कि उसका स्वाभिमान भी खत्म हो गया है। ऐसे में अर्जुन में आत्मविश्वास की कमी (Loss of Self Esteem) साफ दिखाई देने लगती है। उसमें Suicidal Thoughts Develop होते चले जाते हैं। अपने मन की यह दशा श्री कृष्ण से कहकर वह बैठ जाता है।

आज के समय में भी अनेकों बिजनेसमैन, विद्यार्थी, टीचर, प्रोफेसर, डॉक्टर, इंजीनियर, साइंटिस्ट और यहां तक कि मनोवैज्ञानिक सभी के सभी लोग इसी तरह मनोरोगी हो रहे हैं।

भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को समाधान देने की सोच रहे हैं। श्री कृष्ण अर्जुन को पहले बौद्धिक स्तर पर तैयार करते हैं फिर

मानसिक स्तर पर तैयार करते हैं। लेकिन अर्जुन पर इसका कोई असर दिखाई नहीं देता। उसकी मानसिकता वैसी-की-वैसी बनी रहती है। इसके पश्चात् श्रीकृष्ण अर्जुन के आत्मिक स्तर के धरातल पर उतरते हैं। इन तीन स्तर पर किसी भी समस्या का समाधान हो सकता है बशर्ते ईलाज समस्या को समझ कर किया जाये। यदि कोई समस्या बौद्धिक तौर पर है तो शिक्षा का ज्ञान, जीविका का ज्ञान प्रदान कर उसे उसकी समस्या से निकाला जा सकता है। शिक्षा अनेक प्रकार से दी जा सकती है। यह उसे बौद्धिक रूप से बल प्रदान करने वाली होती है।

वर्तमान समय में मनोरोगी को उसके रोग से निकालने के लिए वैज्ञानिकों द्वारा केमिकल प्रोसेस प्रदान किया जाता है अर्थात् दवाईयों के माध्यम से उसका ईलाज कर एक हद तक उसे बीमारी से निकालने की कोशिश की जाती है परन्तु ऐसा संभव नहीं हो सकता कि वह पूर्ण रूपेण स्वस्थ हो सके बल्कि उसके बदले में कंपन, पसीना, कमजोरी, कब्ज़, पेट दर्द और कई बिमारियां इन केमिकल प्रोसेस के माध्यम से उसके जीवन में आ जाती हैं क्योंकि इस प्रोसेस के माध्यम से मनोवैज्ञानिक ईलाज कई बार संभव हो जाता है अथवा कई बार नहीं।

अक्सर देखा गया है कि मनोरोगियों को ईलाज के रूप में दवाईयां तो दी ही जाती हैं परन्तु कई बार दिमाग में Electric Shock (ECT) भी दिए जाते हैं। इस Process के बाद मरीज़ का शरीर बिल्कुल शिथिल पड़ जाता है। थकान, जी मितलाना, सिरदर्द, याददाश्त पर असर भ्रम की स्थिति इत्यादि मरीज़ में इस तरह के कई Side Effects देखने को मिलते हैं।

क्योंकि अर्जुन मानसिक रूप से शिथिल पड़ गया था इसलिए श्रीकृष्ण ने अर्जुन को Psychological Treatment (मनोवैज्ञानिक ईलाज) दिया। "A Transcendental Treatment" (पारलौकिक ईलाज) जिसके माध्यम से अर्जुन का अवसाद पूरी तरह से जाता रहा और वह कर्म करने के लिए तत्पर हो गया।

अंतर्यामी श्रीकृष्ण ने आज अर्जुन के मन में बैठे उस मोह रूपी बीज को देखकर उसका पूर्ण निदान किया जो उसके अंतःकरण को हीन भावना से ग्रस्त कर रहा था। तदोपरांत अर्जुन कर्म करने के लिए सज्ज हो गया। Psychological Treatment के दौरान रोगी जो भी बातचीत करता है तब Psychologist उसके अंतःकरण में छिपे हुए भावना रूपी प्रश्न अथवा विचारों को बिल्कुल शांत और धैर्य के साथ सुनता है फिर उसके बाद उसका समाधान देता है और यही कार्य भगवान श्री

कृष्ण ने किया।

अर्जुन कहता है :

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः ॥

गीता 2/7

अर्थात् मुझ मोह चित्त से युक्त के लिए कोई कल्याणकारी साधन कहिए।

श्री कृष्ण सबसे पहले वैचारिक और बौद्धिक (Conceptual) स्तर पर अर्थात् विचारों के माध्यम से अर्जुन के नाकारात्मक विचारों को बदलने का प्रयास करते हैं।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।

गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥

गीता 2/11

अर्थात् हे अर्जुन! तू शोक न करने वाले मनुष्यों के लिए शोक करता है। पंडितों के जैसे बातें करता है लेकिन विचार तेरे हमेशा नकारात्मक हैं।

इसके बाद श्रीकृष्ण दूसरी पद्धति अपनाते हैं और व्यवहारिक तथा मानसिक स्तर पर इस प्रकार से अर्जुन के नकारात्मक विचारों को बदलने और उसके स्थान पर सकारात्मक विचार देने का प्रयास करते हैं।

योगस्थः कुरु कर्माणि सं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग

उच्यते ॥ गीता 2/48

भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं : हे अर्जुन! सफलता और असफलता की आसक्ति को त्यागकर तुम दृढ़ता से अपने कर्तव्य का पालन करो। यही सम्भव योग कहलाता है।

परंतु इससे भी बात नहीं बनी। अर्जुन का मोह और अवसाद कम नहीं हुआ। तत्पश्चात् भगवान् श्री कृष्ण तीसरी पद्धति अर्थात् अर्जुन के आध्यात्मिक स्तर के धरातल पर उतरकर आध्यात्मिक ज्ञान पद्धति का प्रयोग करते हैं। जिसके फलस्वरूप भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को पूर्ण कारगर आत्मिक ज्ञान प्रदान किया जिसके माध्यम से अवसाद से घिरा अर्जुन उस भयंकर मानसिक स्थिति से निकल सका।

भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भागवत् गीता में उस दिव्य ज्ञान के बारे में स्पष्ट कहा है जिससे उन्होंने निराश-हताश अर्जुन को उस भयंकर मानसिक अवसाद से निकाला :-

ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥ गीता -

13/18

वह ज्ञान जो जानने योग्य है वह तत्त्व ज्ञान के द्वारा ही

प्राप्त किया जा सकता है जो सभी के हृदय में समाया हुआ है।

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।

ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा

मोक्षसेऽशुभात् ॥ गीता - 9/1

अर्थात् - हे अर्जुन! मैं तुझे दोषदृष्टि से रहित, अत्यंत गोपनीय ज्ञान का विज्ञान सहित अनुभव करवाऊंगा अर्थात् यह ज्ञान प्रायोगिक (Practical) है जिसे जानकर तू पाप से मुक्त हो जाएगा अर्थात् उस ज्ञान को जो जान लेता है वह सभी बन्धनों से मुक्त हो जाता है।

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा।

दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे

योगमैश्वरम् ॥ गीता-11/8

हे अर्जुन! तुम्हें ये नेत्र माया को देखने के लिए दिए गए हैं। इन नेत्रों के द्वारा तू मुझे नहीं देख सकता। तेरे यह चर्म चक्षु मुझे देखने में असमर्थ हैं। इन नेत्रों से केवल भौतिक जगत को ही देखा जा सकता है।

कहने का अभिप्राय है कि प्रभु हमसे अलग नहीं है परन्तु हमारे पास वह आँख ही नहीं है, जिसके द्वारा ईश्वर को देखा जाता है। वही आँख पूर्ण सत्गुरु प्रदान करते हैं। जैसा कि भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं 'दिव्यं ददामि ते चक्षुः।' मैं तुझे वह दिव्य नेत्र प्रदान करता हूँ जिसके द्वारा तू मेरे परम ऐश्वर्यमय स्वरूप को जान पाएगा। दिव्य शक्ति को अर्थात् उस शाश्वत स्वरूप को दिव्य नेत्र द्वारा अपने हृदय में ही देख पाएगा।

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।

यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य

महात्मनः ॥ गीता - 11/12

यदि आकाश में एक हजार सूर्य एक साथ उदय हो जाएं, वह भी उस प्रकाश के समान शायद ही हो। ऐसा प्रकाश इस समय दिव्य नेत्र के द्वारा अर्जुन देख रहा है। गीता में दिव्य नेत्र के बारे में स्पष्ट बताया है कि दिव्य नेत्र मिलने के पश्चात् प्रकाश के दर्शन होते हैं।

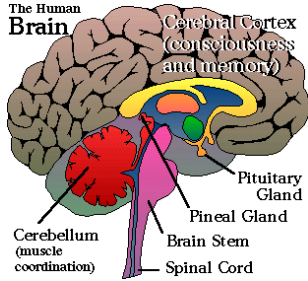
नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।

स्थितोऽस्मि गतसन्देह करिष्ये वचनं

तव ॥ गीता - 18/73

अर्थात् अर्जुन कहता है, हे कृष्ण आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है और मैंने अपनी स्मृति वापिस पा ली है। अब मैं संशय रहित होकर स्थिर हूँ। मेरी सारी शंकाएं अब दूर हो गई हैं अतः अब मैं आपके वचन का पालन करूंगा।

श्री कृष्ण ने अर्जुन को जो दिव्य चक्षु प्रदान किया Medical और Biology Terms में इस दिव्य चक्षु अर्थात् तीसरे नेत्र को Pineal Gland कहा गया है। Researches में Pineal Gland को ही "Third- Eye" कहा गया है। वैज्ञानिकों के अनुसार यह Gland (ग्रंथी) दोनों Eyebrows के मध्य स्थित है तथा Headbones से घिरी हुई है।



पीनियल ग्रंथि को आमतौर पर कई करणों से "तीसरी आंख" कहा जाता है जिसमें मस्तिष्क के केंद्र में गहरा स्थान और सर्कैडियन रिदम और मेलाटोनिन साव के माध्यम से प्रकाश से इसका संबंध शामिल है। कई आध्यात्मिक परंपराओं का मानना है कि यह भौतिक और आध्यात्मिक दुनिया के बीच एक संबंध के रूप में कार्य करता है।



Pineal gland or "Spiritual third eye" is regarded as the gateway of spiritual life as per ancient concepts about the soul. Recently, modern neuroscience has proven that pineal gland is not only the melatonin-secreting neuroendocrine organ which controls the circadian rhythm, but it also has mystical and energetic associations with spirituality.



11वें अध्याय के 8वें श्लोक "दिव्य ददामी ते चक्षुः" गीता –

11/8 में जो जिक्र किया गया है वो इसी Pineal Gland (तीसरा नेत्र) के बारे में है। श्री कृष्ण ने अर्जुन की इसी ग्रंथी को खोला था और हमारे संत महापुरुष आध्यात्मिक Theoretical पक्ष अर्थात् मात्र प्रवचनों की आपेक्षा ईश्वर दर्शन की ही बात करते हैं अर्थात् आध्यात्म के व्यावहारिक पक्ष की बात करते हैं। इन सभी संत महापुरुषों ने दोनों Eyebrows के मध्य इसी स्थान पर अपने अंतर्घट में ईश्वर के तत्त्व रूप के दर्शन किए। इस दिव्य चक्षु को एक पूर्ण गुरु ही खोल पाने में समर्थ होता है।

आगे भगवान श्रीकृष्ण उस दिव्य ज्ञान की प्राप्ति के बारे में सूत्र देते हैं। वे कहते हैं कि किसी भी देश में पहुँचने के लिए भिन्न-भिन्न मार्ग हो सकते हैं क्योंकि वह एक स्थान पर स्थित है। परन्तु परमात्मा किसी एक स्थान पर स्थित नहीं है। सभी देशों की एक सीमा है परन्तु परमात्मा हर सीमा से परे है। इसलिए उस परमात्मा को जानने के मार्ग भी अनेक नहीं, एक ही है। उसी एक ज्ञान के स्रोत की चर्चा करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि –

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं

ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥ गीता— 4/34

हे अर्जुन! परमात्मा को तत्त्व से जानने वाले किसी ज्ञानी पुरुष अर्थात् सत्गुरु की शरण में जाकर उन्हें दण्डवत प्रणाम करके और निष्कपट भाव से परमात्मा के सम्बन्ध में प्रश्न पूछ, तत्पश्चात् उनके चरणों की सेवा कर और उस ज्ञान को तत्त्व से जान। जब सत्गुरु तुझे ज्ञान की दीक्षा देंगे, उसी समय तुझे उस प्रभु का तत्त्व से दर्शन करवाएँगे।

श्रीकृष्ण उस दिव्य ज्ञान की महिमा में आगे कहते हैं :-

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्।

प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्॥

गीता — 9/2

यह ज्ञान सब विद्याओं की राजविद्या है, अत्यंत गोपनीय है, पवित्र करने वाला और श्रेष्ठ ज्ञान है। यह ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा ही प्राप्त करने योग्य है। जिस ज्ञान के अनुभव के लिये किसी प्रकार के माध्यम की जरूरत नहीं अर्थात् वह इन्द्रियों के बिना भी अनुभव गम्य है, जो कि धर्मानुकूल है। यह सब सुखों को प्रदान करने वाला है, करने में अत्यंत सरल, और अव्यक्त है। हमें ज़रूरत है इसी महान ज्ञान को प्राप्त करने की जो ज्ञान भगवान श्रीकृष्ण ने कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन को प्रदान किया था यह

वही ज्ञान है यह जो मनुष्य को जीवन में सुख, समृद्धि एवं शाश्वत शांति प्रदान करता है। इस ज्ञान की प्राप्ति के लिए आवश्यकता है, पूर्ण सत्गुरु की। उसके द्वारा ही सत्य मार्ग को जाना जा सकता है।

इस दिव्य ज्ञान के अस्तित्व के संदर्भ में श्रीकृष्ण इस श्लोक में कहते हैं :-

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।

विवस्वान्मनवे प्राह मनुर्दिक्वाकवेऽब्रवीत्॥

गीता 4/1

हे अर्जुन! मैं तुझे वही अव्यक्त योग बताता हूँ जो योग मैंने विवस्वान को बताया था। विवस्वान ने वही योग मनु को दिया और मनु से यह ज्ञान इक्ष्वाकु को प्राप्त हुआ था।

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।

स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप॥

गीता - 4/2

इस प्रकार राजर्षियों ने इस परम्परागत ज्ञान को एक दूसरे से जाना। अन्त में हे शत्रुओं को सताने वाले अर्जुन, बहुत काल बीत जाने पर यह ज्ञानयोग लुप्त हो गया।

इस श्लोक में श्रीकृष्ण “योग” शब्द को बताते हैं :-

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।

भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं

ह्येतदुत्तमम्॥ गीता - 4/3

श्रीकृष्ण कहते हैं कि वही प्राचीन योग मैंने तुझे बताया है। तू मेरा भक्त है और सखा भी है। यह योग सबसे श्रेष्ठ है। उपरोक्त कथन के द्वारा भगवान श्रीकृष्ण प्राचीन योग के बारे में स्पष्ट करते हैं - योग शब्द ‘युज’ धातु से बना है जिसका अर्थ है जुड़ना। वह युक्ति जिसके द्वारा हम परमात्मा से जुड़ जाते हैं। उसी जुड़ने की प्रक्रिया को योग कहते हैं। वह योग जो कभी बदलता नहीं सनातन है, पुरातन है, आदि काल से एक ही है। भगवान श्रीकृष्ण समस्त मानव जाति के प्रति अपने उद्देश्य के सम्बन्ध में कहते हैं कि मैं धर्म की स्थापना के लिए आया हूँ क्योंकि उस समय लोग मनमाने ढंग से धर्म का व्यवहार करने लग गए थे और वास्तविक ज्ञान को भूल चुके थे। मानव जाति के कल्याण के लिए, ईश्वर में श्रद्धा, विश्वास को पुनः जीवित करने के लिए ही महापुरुषों का अवतरण होता है। भगवान श्रीकृष्ण अपने कथन द्वारा मानव को सन्देश दे रहे हैं कि वह कोई नई परम्परा को जन्म देने नहीं आए अपितु सनातन ज्ञान को जो लुप्त हो चुका था प्रकट करने आए हैं।

निष्कर्ष :-

क्या आज के इस माहौल में हम अपने आप को इस तरह से नहीं देख रहे जहां चारों ओर निराशा, हताशा या फिर डिप्रेशन का वातावरण है। उसमें हर मानव अशांत और दुःखी है। अशांत मानव को अनेक संतापों से निकालने के लिए आज भी किसी न किसी रूप में एक नर रूप में नारायण की आवश्यकता है। मानवजाति को मार्गदर्शन की आवश्यकता है और उसे एक अच्छे साइकोलॉजिस्ट की आवश्यकता है जिसके माध्यम से वह अपने जीवन युद्ध को जीत सके।

कृष्ण को सभी मानते हैं परन्तु कृष्ण की भी माने। इधर-उधर भटकने से अच्छा है अपने पौराणिक ग्रंथों का आधार लेकर परमात्मा से जुड़ने का सही मार्ग खोजें।

आज हम सभी को जगत गुरु श्री कृष्ण जैसे आधार की आवश्यकता है ताकि हम अपनी शक्तियों से जुड़ कर स्वयं को तो सही मार्ग की ओर लेकर जाएँ ही और देश के लिए भी कुछ अच्छा कार्य कर पाएं।

अतः हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि मन के गहरे से गहरे विषाद, हताशा, निराशा, डिप्रेशन को सिर्फ और सिर्फ आध्यात्मिक ज्ञान ही पूर्णतया खत्म किया जा सकता है।

श्री कृष्ण अर्जुन की हर प्रकार से काउंसलिंग की लेकिन Situations हर बार Relapse कर रही थीं। अन्त में उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के माध्यम से अर्जुन को उस मानसिक विषाद तथा घोर निराशा से निकाला।

अगर सिर्फ बातों से बात समझ आती तो Counselors को कभी Counseling की आवश्यकता ना होती क्योंकि उन्हें तो पता है कि क्या सही है, क्या गलत है, क्या सोचना है और क्या नहीं सोचना।

उदाहरण के लिए किसी मानसिक रूप से परेशान व्यक्ति की Counseling की जाती है तो उस समय तो उसे मानसिक परेशानी से राहत मिल जाती है लेकिन यह परेशानी उस व्यक्ति में दौबारा भी उभर सकती है। इसी तरह से Clinical Psychology में दवाईयां देने का प्रावधान है लेकिन दवाईयों का असर हमेशा नहीं रहता तथा बार-बार दवाईयां खानी पड़ती है और यह आवश्यक नहीं कि इन सबके बाद भी उसे Permanent Solution मिल पाए।

आमतौर पर इन्हीं दो स्तरों पर मानसिक ईलाज किये जाते हैं परन्तु केवल आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा Permanent Psychological Treatment संभव हो सकता है जैसा कि

श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन का उपचार संभव हुआ और अर्जुन की वह मानसिक परेशानियां वापिस नहीं आई। Now this is called "The Ultimate Psychological Treatment Through Spiritual Enlightenment".

संदर्भ ग्रंथ –

1. गीता – 13 / 12
2. गीता – 1 / 29
3. गीता – 13 / 12
4. गीता – 2 / 11
5. गीता – 2 / 48
6. Medical News Today
7. Moral Stories 26.com
8. गीता – 11 / 8
9. गीता – 11 / 12
10. गीता – 8 / 21
11. गीता – 8 / 17
12. गीता – 9 / 1
13. गीता – 9 / 2
14. गीता – 4 / 1
15. गीता – 4 / 2
16. गीता – 4 / 3
17. The Bhagwavad Gita : God Talks with Arjuna - Yogananda Paramahansa
18. Pineal Gland - A Spiritual Third Eye : An Odyssey of Antiquity to Modern Chronomedicine - Rajkumar, Arushi Kumar, Jayesh Sardhara - Reserch Article
19. गीता – 18 / 73
20. गीता – 4 / 34
21. गीता – 13 / 18

Dr. Swati

Assistant Professor

Music (Vocal)

F.G.M. Govt. Collage, Adampur- 125052

Hisar (Haryana)

Email : swatisharma24783@gmail.com

Ph : 9416763885

शोध सारांश

हिन्दी गद्य की अनेक विधाओं में एक विधा जीवन-साहित्य का स्वरूप तथा विकास भी है। मानव-जीवन में संस्कारजन्य, परिस्थितिजन्य एवं शिक्षाजन्य अनेक प्रभाव स्वाभाविक रूप से परिलक्षित होते हैं। इस दृष्टि से व्यक्तित्व-निर्माण जीवन पर आधारित होता है। सचमुच जब व्यक्तित्व का आधार दृढ़ बन जाता है, तब उसके जीवन पर प्रभाव पड़ता जाता है। इसी कारण व्यक्ति जीवन-प्रवाह के साथ आगे बढ़ता है।

कथाकार रणेन्द्र का जीवन शुरू से ही एक प्रतिभा-सम्पन्न विद्यार्थी का रहा है। उनका व्यक्तित्व निष्ठावान अध्येता एवं कथाकार के रूप में सर्वाधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। अतः संक्षेप में यहाँ उनके व्यक्तित्व और कृतित्व को देखा जा सकता है।

1. शैक्षणिक एवं सामाजिक जीवन-संघर्ष

कथाकार रणेन्द्र का जन्म 4 मार्च, 1960 ई० को बिहार प्रदेश के नालंदा जिलान्तर्गत सोहसराय में हुआ था। इनके पिता डॉ० शत्रुघ्न प्रसाद नालंदा के 'किसान कॉलेज' में हिन्दी विभाग के विभागाध्यक्ष रहे थे। एम मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मे रणेन्द्र को पारिवारिक परिवेश ने लेखन की ओर प्रेरित किया। इनकी आरंभिक शिक्षा की शुरुआत सोहसराय से हुई, बाद में रणेन्द्र ने बी.एस-सी. की परीक्षा पास की।

रणेन्द्र के पिता की हार्दिक इच्छा थी कि बेटा इंजीनियरिंग सेवा में जाए, लेकिन उन्होंने इससे अलग हटकर बिहार प्रशासनिक सेवा का चयन किया और इसमें उन्हें सफलता भी मिली। रणेन्द्र 1988 में बिहार प्रशासनिक सेवा में चयनित होने के पश्चात अनेक जगहों पर अपनी प्रशासनिक क्षमता का परिचय दिया और अपने सेवा-काल में गरीब, असहाय एवं लाचार लोगों की बखूबी मदद की। रणेन्द्र का प्रशासनिक काल सबसे ज्यादा झारखंड में रहा, जहाँ उन्हें गरीब आदिवासियों को बड़ी करीब से देखने का अवसर प्राप्त हुआ। उनके जितने भी साहित्य हैं, आदिवासी-जीवन के विभिन्न पहलुओं से सन्नद्ध हैं। बिहार से वर्ष 2000 में अलग हुए झारखंड के प्रशासनिक अधिकारी के तौर पर अपने दायित्वों का पूरी योग्यता और दक्षता से निर्वहन करते हुए रणेन्द्र 2020 में सेवा-निवृत्त हुए। सेवा-निवृत्ति के बाद भी वे अप्रैल, 2024 तक झारखंड सरकार के जनजातीय कल्याण शोध संस्थान के निदेशक रहे।

रणेन्द्र जी का मान-सम्मान आदिवासी समाज में बहुत रहा है, क्योंकि उन्होंने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से इस समाज का बहुत बड़ा उत्थान किया है। साथ ही अपने सेवा-काल में भी जनजातियों गरीब लोगों के उत्थान के ही बारे में सोचा और

उनकी सहायता की। किसी भी तरह के सामाजिक कार्यों में उनके द्वारा बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया जाता है, भले ही उन्हें किसी भी संघर्ष से क्यों न गुजरना पड़े। सामाजिक संघर्ष करके ही रणेन्द्र ने अपनी एक अलग पहचान बनायी है। पराये के दर्द को भी अपना दर्द समझकर उसकी सेवा करना उनके संस्कार में है। मौन रहकर किसी पात्र तक अपनी भावना एवं विचारों का सम्प्रेषण उनका नैसर्गिक तथा जन्मजात गुण रहा है। उन्होंने इस क्षमता को सामाजिक संघर्ष, साधना और चिंतन से ही हासिल किया है।

2. रचनात्मक योगदान

रणेन्द्र की रचनात्मक कार्य की प्रेरणा अपने पिताजी से विरासत के रूप में प्राप्त हुई है। उन्होंने महाश्वेता देवी, अरुन्धती राय तथा संजीव आदि को अपना प्रमुख आदर्श माना है। इन सभी की रचनाओं के अध्ययन से उन्हें साहित्य-सृजन करने में बहुत मदद मिली है।

रणेन्द्र ने समय-समय पर भारत सरकार की अनेक परियोजनाओं पर कार्य किया और उस परियोजनाओं पर कार्य करते हुए अपनी सेवा भावना का परिचय दिया। उन्हें विभिन्न आदिवासी समुदायों के बीच रहने, घुलने-मिलने, सुख-दुःख में भागीदारी होने तथा विशिष्ट संस्कृति को सीखने-समझने का मौका मिलता रहा। 'आदिवासी समुदायों की सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं, अंतःसम्बन्ध, वैश्वीकरण, विकास के प्रभावों का विज्ञासु विद्यार्थी की भाँति के अध्ययन करते रहे।'¹

भारत सरकार के खादी ग्रामोद्योग में 1999 से 2004 ई० तक झारखंड प्रदेश कार्यालय प्रभारी पदाधिकारी के रूप में रणेन्द्र को पूरे झारखंड में घूमने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसी पाँच वर्षों को अवधि में उन्होंने 'झारखंड एन्साइक्लोपीडिया' के चार खण्डों का संपादन भी किया। साथ ही प्रसिद्ध समालोचक डॉ० खगेन्द्र ठाकुर के निर्देशन में मित्रों के एक साहित्यिक पत्रिका 'काँची' का संपादन भी प्रारंभ किया। इस त्रैमासिक पत्रिका के पाँच-छः अंक प्रकाशित हुए थे, जिसका संपादन रणेन्द्र ने बड़ी कुशलता से किया था।

रणेन्द्र जी के रचनात्मक कार्यों के लिए अनेक पुरस्कार एवं सम्मान मिले हैं, जो निम्न हैं—

1. श्रीलाल शुक्ल स्मृति इकको सम्मान
2. प्रथम विमला देवी स्मृति सम्मान
3. वनमाली कथा-सम्मान
4. बनारसी प्रसाद भोजपुरी सम्मान
5. जे. सी. जोशी स्मृति जनप्रिय लेखक सम्मान
6. दींगरा फाउण्डेशन अन्तरराष्ट्रीय कथा-सम्मान

रणेन्द्र का रचनात्मक कार्य बहुत ही समृद्ध है। उनके

कृतित्व को निम्नरूपेण देखा जा सकता है—

काव्य-संग्रह	प्रकाशक
का नाम	प्रकाशन वर्ष
1. थोड़ा-सा स्त्री होना चाहता हूँ— दिल्ली 2010	शिल्पाजन प्रकाशन,
2. उपन्यास	
प्रकाशक का नाम	प्रकाशन वर्ष
1. ग्लोबल गाँव के देवता दिल्ली 2009	भारतीय ज्ञानपीठ, नयी
2. गायब होता देश दिल्ली 2014	पेंगुइन बुक्स इंडिया,
3. गूँगी रुलाई का कोरस— नयी दिल्ली 2021	राजकमल प्रकाशन,
3. कहानी-संग्रह	
1. रात बाकी एवं अन्य कहानियाँ नयी दिल्ली 2010	राजकमल प्रकाशन,
2. छप्पन छुरी बहत्तर पेंच— आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा 2020	

रणेन्द्र के रचनात्मक कार्यों को यहाँ संक्षिप्त रूप से देखने का यह एक सफल प्रयास है, जिसमें उनके पद्यात्मक तथा गद्यात्मक दोनों ही रचनाएँ सम्मिलित हैं ।

1. थोड़ा-सा स्त्री होना चाहता हूँ

रणेन्द्र के इस काव्य-संग्रह में 'साइकिल सवार लड़की', 'अवसान बेला पर', 'पन्ना धाय', 'अधरतिया गाड़ी', 'पानी और स्त्री', 'धनरोपनी' तथा 'थोड़ा-सा स्त्री होना चाहता हूँ' प्रमुख कविताएँ संकलित हैं । उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से आदिवासी, किसान एवं मजदूर, परिवार तथा समाज के दर्द को बखूबी उभारा है । यहाँ उनकी कुछ कविताओं को देखा जा सकता है ।

सामाजिक धारणा है कि पृथ्वी हमारी माया है और हम सब उसकी संतान हैं । इस पृथ्वी रूपी माँ की गोद में खेलते हुए तथा उसके द्वारा हमें प्रदान की हुई सभी संसाधनों का प्रयोग करते हुए उसके शोषण तथा उस पर आधिपत्य जमाने को किस तरह से तत्पर हैं, वे देखने के लिए हमें पूरी पृथ्वी घूमने की जरूरत नहीं, बल्कि जरूरत है अपने आसपास के समाज के पर्यावरण-सम्बन्धी विचारों को टटोलने को प्रकृति विनाशक तथाकथित विकास परियोजनाओं के विरोध में हुए कुछ पर्यावरणीय आंदोलनों, यथा-नर्मदा बचाओ आंदोलन, चिपको आंदोलन, भोपाल त्रासदी आदि जैसे कई राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय

आंदोलनों को जानने की, जिससे हमें यह अनुभूति होगी कि हम अपनी प्रकृति-रूपी माँ के प्रति कितने संवेदनहीन हो गये हैं तथा अपनी अंतहीन लालसा को पूरा करने के लिए उसके शोषण के चरम पर पहुँचकर भी हम कुछ खास चिंतित दिखयी नहीं देते । ऐसे ही तथाकथित प्रगति की आड़ में प्रकृति के शोषण के लिए आये तथाकथ्य मुख्यधारा के लोगों की मानसिकता का एक दृश्य रणेन्द्र जी ने अपनी कविता 'अवसान बेला पर' में कुछ इस तरह से दर्शाया है—

मुख्यधारा की फनफनाती लहरों पर
सवार होकर आए
आरियाँ, बुलडोजर, डम्पर, बाजार
दपतर, कुर्सियाँ, वर्दी, हथियार
मोटी-मोटी कानूनी किताबें
माननीय भाष्यकार ।”

प्रकृति और स्त्री अपनी जननी स्वरूप में न सिर्फ जन्म देकर जीवनचक्र को गतिमान रखने का अनमोल कार्य करती है, बल्कि संतान के पालन-पोषण प्राप्त कर उसके ही शोषण के लिए तैयार हो जाती है, इससे हम भलीभाँति परिचित हैं और अगर नहीं हैं तो इस परिस्थिति का जीवन्त उदाहरण हम अपने आस-पास के समाज तथा परिवार में अब आसानी से देख सकते हैं । जहाँ एक माँ का प्यारा-दुलारा बच्चा जो बचपन में अपनी माँ से चिपका रहता है एवं जिसका कोई भी छोटा-बड़ा काम माँ के बिना होना मुश्किल होता है, वही उसके युवा होते ही उसके जीवन की बागडोर पिता के हाथ में आ जाती है । जीवन से जुड़े बड़े-से-बड़े फैसले माँ के बिना मौजूदगी तथा मंजूरी के हो जाते हैं, ऐसी स्थिति में संतान के लिए माँ को कुछ बात अहमियत नहीं रह जाती और वह भी अपनी आवश्यकताओं के हिसाब से माँ को सहज एक सेवाकर्मी जान शोषण करता चला जाता है । ऐसे राजदुलारों की मानसिकता को रणेन्द्र जी ने अपनी कविता 'पन्ना धाय' में निम्न पंक्तियों में दिखाने का प्रयास किया है—

“जिन गेंदा-गुलाब राजदुलारों पर
छिड़कती हो जान तमाम
युवराज बनते
अंगवस्त्रम के धूल-सा झाड़
रथारूढ़ हो बढ़ जाएंगे ।”

रणेन्द्र के रचनात्मक कार्यों में उनके उपन्यास तथा कहानियाँ छः कविताओं के अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हैं । यद्यपि कि उन्होंने रचनात्मक कार्यों की शुरुआत कविताओं से ही की, लेकिन आज के जीवन में अनुभवों की इतनी विविधता होती है कि इन सबको एक ही विधा में समेट पान संभव नहीं होता । अतएव

संक्षिप्त रूप से उनके उपन्यास और कहानियों को भी देखे जाने का प्रयास है ।

उपन्यास

1. ग्लोबल गाँव के देवता

रणेन्द्र का यह पहला उपन्यास है, जिसमें विशेष रूप से झारखंड के असुर आदिवासी-समुदाय का अपने अस्तित्व, आत्म-सम्मान तथा अस्मिता की रक्षा के लिए लम्बे संघर्ष एवं निरंतर गायब होते जाने की प्रक्रिया का संवेदनशील चित्रण है। उपन्यासकार ने इसमें वह बताने का प्रयास किया है कि आदिम जनजातियाँ वनों पर ही आधृत रही हैं। प्राचीन काल से लेकर आज तक वे जनजातियाँ वनों में रहकर अपना जीवन व्यतीत करती रही हैं। लेकिन अपने को देवता कहने वाले शहरवासियों तथाकथित आधुनिक काल के ग्लोबल गाँव के देवता के व्यापारियों ने लगातार उनका शोषण, दोहन एवं उत्पीड़न किया है। सम्यता तथा विकास के नाम पर वहाँ को वन-सम्पदा को नष्ट करते हुए प्राकृतिक जीवन जीने वाले मानव समुदायों के जीवन के साथ बर्बर, अश्लील, छेड़छाड़ तथा हिंसक घात किया है। उनकी परम्पराओं को तोड़ते हुए उनके जीवन-साधनों और संसाधनों को नष्ट करके उनकी आस्था के साथ खिलवाड़ किया है।

उपन्यास में ग्लोबल गाँव के देवताओं का उल्लेख है, जिनमें पहला देवता विदेशी वेदांग है, जो ग्लोबल गाँव का देवता है। कम्पनी विदेशी है, किन्तु नाम देशी है। दूसरा देवता टाटा है, जिसने आदिवासी समुदाय के लोहा गलाने और औजार बनाने की हुनर का अंत कर दिया है। इसलिए असुर आदिवासी का मानना है कि टाटा कम्पनी ने उसका जो विनाश किया है, वह असुर जाति के पूरे इतिहास की सबसे बड़ी हार है।

“बीसवीं शताब्दी की हार हमारी असुर जाति की अपने पूरे इतिहास में सबसे बड़ी हार थी। इस बार कथा-कहानी वाले सिंगबोंगा ने नहीं, टाटा जैसे कंपनियों के लोहा, कुदाल, गैंता तथा खुरपी आदि सुदूर बाजारों तक पहुँच गये। हमारे गलाये लोहे के औजारों की पूछ समाप्त हो गयी। लोहा गलाने का हजारों-हजार साल का हमारा हुनर धीरे-धीरे समाप्त हो गया।”

इस उपन्यास में उपन्यासकार ने छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, केरल तथा मणिपुर के आदिवासियों के संघर्ष में स्त्रियों की नेतृत्वकारी भूमिका और बहादुरी के प्रति भी गहरा सम्मान व्यक्त किया है। इन आदिवासियों की लड़ाई अपनी धरती को बचाने की लड़ाई है। उपन्यासकार ने कहा है कि—“धरती भी नारी, सरना माई भी नारी और उसके लिए लड़ाई लड़ती सत्यभामा, सुरेखा दबली, इरोम शर्मिला, सी. के. जानू और यहाँ

तक की बुधनी दी और साहिया, ललिता भी स्त्री। सम्भवतः नारी ही नारी की व्यथा समझती है। सीता की भाँति धरती की बेटियाँ धरती में समाने को तैयार हैं।” संक्षेप में कहा जा सकता है कि अपने हित साधने में वे देशी-विदेशी कंपनियाँ इन भारतीय आदिवासियों को अपराध और भ्रष्टाचार के लिए भी जगह देने में कोई संकोच नहीं करते हैं।

2. गायब होता देश

रणेन्द्र का यह दूसरा उपन्यास झारखंड के राँची के आस-पास की धरती से उपजी मुण्डा जनजातियों पर आधृत है। उपन्यासकार ने इसमें यह बताना चाहा है कि ग्लोबल के गाँव के देवताओं के साथ मिलकर प्रशासन भी यहाँ के मुण्डा जनजातियों को खत्म कर देना चाहता है। जिस धरती पर सदियों से वे रहते आये हैं, उन्हें हर तरह का लालच दिखाकर उनकी जमीन को हड़पने का कुकृत्य जारी है। इस तरह से मुण्डा जनजाति लगातार टूटते-बिखरते गायब होते जा रहे हैं। उपन्यासकार ने इन्हीं सब बातों को इसमें दिखाने का प्रयास किया है। किस तरह से वहाँ के बस्तियों लगातार गायब होती जा रही हैं, इसका मार्मिक चित्र इस उपन्यास में खींचा गया है।

कंक्रीट के जंगलों में बदलता खेतों का दर्द और उस पर उदास फसलों की सबब तो किसान ही जान सकता है। राँची की आदिवासी बस्तियाँ लगातार गायब होती दिखायी दे रही हैं।

वहाँ पर किसी समय में बरगद-वृक्षों पर जीवन की चहचहाहट सुनायी पड़ती थी, किन्तु अब वहाँ आलिशान अपार्टमेंट या उसके प्रस्तावित विज्ञापन की पीढियाँ भीषण जन्तु के समान घर कर रही हैं। बस्ती समाप्त होने का आशय वहाँ की संस्कृति का समाप्त होना तथा पूरा जीवन ही खत्म होने जैसा है। पूँजी के वैश्विक दौर में भू-माफिया, कॉर्पोरेट तथा राज्य सरकारों के चरित्र में कोई वस्तुगत अंतर नहीं दिखायी देता।

इस उपन्यास में आदिवासी-जीवन और संस्कृति तथा प्रकृति की समीपता, सहजता तथा उन्मुक्तता का सहज चित्रांकन हुआ है। साथ ही लोक-मान्यता है, रीति-रिवाजों एवं विश्वास की रचनात्मक पहचान की गयी है। छोटे-छोटे इक्यावन अध्यायों में बँटा इस उपन्यास में मर्डर-मिस्ट्री, प्रेमकथा और संघर्ष, इन तीनों में किसका पलड़ा भारी है, यह तो सब नहीं हो पाता है, किन्तु ‘मुण्डाओं’ की संघर्ष-गाथा और प्रेम का रूमानी रंग मन के कैनास पर छा जाते हैं।

“गायब होता देश” उपन्यास में कहीं जंगल की हरीतिमा है तो कहीं उजड़ती बस्ती का सन्नाटा भी है। अपराध और साजिश को अंजाम देती मानसिकता है, तो कहीं उसके सामानांतर संघर्ष करने वाली प्रतिरोधी तथा मानवीय क्षमता भी है

3. गूँगी रूलाई का कोरस

रणेन्द्र का उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' ने जिस तरह से हिन्दी पाठकों के बीच हलचल पैदा कर दिया था, उसी तरह से 'गूँगी रूलाई का कोरस' भी पाठकों में अपनी रुचि बढ़ा दी है। इस उपन्यास में भारतीय संगीत-परम्परा के ताने-बाने में बुना गया सामूहिकता के स्वप्न का आख्यान है, जिसे बुनने के लिए उपन्यासकार ने एक संगीत घराने को लिया है। यह संगीत घराना महताबुददीन खान का है, जिनकी चार पीढ़ियों की कहानियों के जरिये भारती संगीत परम्परा को सच्चाई को दिखाये जाने की कोशिश की गयी है। उपन्यास के केन्द्र में मौसिकी-मंजिल अर्थात् संगीत का घर को रखा गया है। यद्यपि कि इसके केन्द्र में मौसिकी-मंजिल जरूर है, किन्तु इसके चारों तरफ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का यथार्थ भी है। इस उपन्यास के आवरण पृष्ठ पर आलोचक रविभूषण ने लिखा है—“गूँगी रूलाई का कोरस” सिर्फ उस्ताद महताबुददीन खान की चार पीढ़ियों के कुल सात सदस्यों की पारवारिक कथा न होकर, हिन्दुस्तान तथा इस उपमहाद्वीप के साथ ही विश्व के एक बड़े भू-भाग की भी कथा है। यह मौसिकी मंजिल को सिर्फ एक मकान और स्थान के रूप में न देखकर व्यापक अर्थों में देखता है। हिन्दुस्तानी संगीत की प्रगति यात्रा, धर्म-सम्प्रदाय, हिंसा की राजनीति, अन्य के प्रति घृणा विद्वेष, राष्ट्र-राष्ट्रवाद, अखबार, न्याय-न्यायपालिका, पुलिस, हिन्दुत्ववादी, स्पेशल टास्क फोर्स, जाति-धर्म, सोशल मीडिया, अनेक अमेरिकी-यूरोपीय नीतियाँ सब और उपन्यासकार की निगाहें हैं। फलक व्यापक है।” उपन्यास में साम्प्रदायिकता की भावनाओं को सजगता से उठाया गया है, जिसके पीछे कुटिल राजनीति और धार्मिक कट्टरता प्रमुख कारण हैं।

कहानी-संग्रह

1. रात बाकी एवं अन्य कहानियाँ

इस संग्रह की कहानियाँ बिहार और झारखंड की पृष्ठभूमि पर आधृत हैं, जहाँ की व्यवस्था, पुलिस-प्रशासन तथा नेताओं को क्रूरताएँ कुछ अधिक दिखायी देती हैं। कभी किसी को नक्सलवादी कहकर मार दिया जाता है तो कभी किसी के ऊपर 'पोटा' लगाकर जेल में डाल दिया जाता है। अतः इस तरह की घटनाओं का इस कहानी संग्रह में भरमार है।

रणेन्द्र की कहानी 'रात बाकी' की पुष्पा, 'चम्पागाछ', 'अजगर और तालियाँ' कहानी की सरस्वती, 'वह बस धूल थी' की सोमा तथा 'ठीक बा नू सायराबानू' की पदमजा जैली स्त्रियों की दुर्दशा देखकर तो सरकारी तंत्र से वितृष्णा होने लगती है। यह

ये कहानियाँ यह प्रमाणित करती हैं कि समाज की समस्याएँ अभी भी समाप्त नहीं हुई हैं। सामाजिक, राजनीतिक, तथा प्रशासनिक-व्यवस्था की चक्की में आज भी आम अवाज कैसे पिसा जा रहा है, इन सभी बिन्दुओं की कहानीकार ने अपनी कहानियों में साहस और सहजता के साथ दर्शाया है।

2. छप्पन छुरी बहतर पेंच

रणेन्द्र का लेखन विशेष रूप से आदिवासी-जीवन को समर्पित रहा है। उनके पहले कहानी-संग्रह 'रात बाकी एवं अन्य कहानियाँ' जिस तरह से आदिवासी-समाज के दोगम दर्जे तथा अस्मिता की अभिव्यक्ति करता है, उसी तरह इस कथा-संग्रह की भी कहानियाँ आदिवासी-समाज की विद्रूप तस्वीर को बड़ी ही सच्चाई के साथ सामने लाने का प्रयास करती है। आदिवासी समाज की समस्याएँ अभी भी खत्म नहीं हुई हैं, बल्कि पहले से कहीं अधिक भयावह होती जा रही हैं।

रणेन्द्र की कहानी 'छप्पन छुरी बहतर पेंच' की बात करें तो यह लोक-प्रचलित मुहावरा है, क्योंकि किसी रूपगर्विता के लिए 'छप्पन छुरी' शब्द का प्रयोग मुहावरे के रूप में होता है। यह कहानी एक नारी के देह-शोषण से उबरने की कथा है। कहानी का केन्द्रीय कथा-पात्र 'झलक' है और वही 'छप्पन छुरी' है, क्योंकि वह सौभाग्य से तो सुन्दर है, लेकिन दुर्भाग्य से अत्यन्त गरीब हैं। यद्यपि कि 'झलक' साहस और धैर्य के साथ अपनी घर-गृहस्थी में कोई कलह नहीं होने देती, लेकिन अंततः वह अपने आप को भेड़ियों की शिकार से बचा नहीं पाती।

सारांशतः रणेन्द्र झारखंड के आदिवासियों के जीवन से बखूबी परिचित हैं, इसी लिए उनके कथा-साहित्य में आदिवासी समाज के विभिन्न पहलुओं के दर्शन होते हैं। अतएव उनके कृतित्व पर आम तौर से आदिवासियों की जीवन-व्यथा अत्यधिक मुखरित हुई हैं।

3) आदिवासी-संस्कृति और समाज के प्रसार में रणेन्द्र का योगदान

रणेन्द्र इक्कीसवीं सदी के एक प्रगतिशील कथाकार हैं, जिन्होंने नव-उपनिवेशवाद के प्रतिरोध में आदिवासी-जीवन तथा लोक-परम्पराओं को महत्व दिया है। उनके द्वारा उन ज्वलंत समस्याओं को निदान करने का पीड़ा उठाया गया जो समाज में निम्न तबके में गिने जाते हैं, और जो अभी भी विलुप्त होते जा रहे हैं। जबकि भारत एवं विश्व में आदि-जीवन को स्थापना आदिवासियों ने ही की है। सभ्यता और संस्कृति की मात्रा मनुष्य ने उन्हीं के पदचिह्नों पर चलकर आरंभ की है।

आज आदिवासी जिस विकराल संकट का सामना कर रहे हैं, उसका मूल कारण राष्ट्र एवं राज्य की अपार ताकत और

आतंककारी हिंसक प्रवृत्ति है। हमारे देश की लोकतांत्रिक सरकार बहुराष्ट्रीय कम्पनी के हित के लिए येन-केन-प्रकारेण मे आदिवा सियों का पूर्णरूपेण सफाया कर देने में लगी हुई है। 'विकास' के साथ ही उनके साथ 'विनाश' जुड़ गया है और विकास की संकल्पना जीवन बनकर उनके सामने आयी है। अतः इस 'विकास' नामक शब्द से ही रीति-रिवाज, उन्हें डर लगने लगा है। उनकी प्राकृतिक जीवन-शैली, प्रकृति से प्रेम, जंगल से रिश्ता, भाषा-संस्कृति, झरना वनस्पति-जगत्, मारंग बुरु-बोंगा तथा जल-देवता आदि सबकुछ नष्ट हो गया है। अतएव कथाकार रणेन्द्र ने आदिवासी समाज और संस्कृति को अपनी रचनाओं का केन्द्र बनाया है, विशेष तौर पर झारखंड के आदिवासी जीवन को उन्होंने अपने कथा-साहित्य में बखूबी दिखाने का प्रयास किया है।

रणेन्द्र का आदिवासी-संस्कृति और समाज के प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अपने कथा-साहित्य में आदिवासी-संस्कृति, उनके रहन-सहन, सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक बदलावों को दर्शाया है, जिससे लोगों को उनकी संस्कृति और जीवन-शैली के संदर्भ में जानने का मौका मिला है।

रणेन्द्र ने अपनी कृतियों में वैश्वीकरण और विकास के दौर में आदिवासी समुदायों पर पड़ने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक प्रभावों का बारीकी से विश्लेषण किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं के जरिये आदिवासी समाज को गरीबी, बेरोजगारी, शिक्षा की घोर कमी तथा अन्य समस्याओं पर बखूबी प्रकाश डाला है, जिससे समाज में इन समस्याओं के प्रति जागरूकता बढ़ी है।

रणेन्द्र के लेखन में आदिवासी संस्कृति एवं समाज के प्रति गहरा सम्मान और श्रद्धा दिखती है, जो उनके लेखन को और भी खास बनाता है। उनके द्वारा आदिवासी-विमर्श को अपने साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जिससे आदिवासी साहित्य को बढ़ावा मिला है। अतएव आदिवासी-साहित्य को समृद्ध बनाने में रणेन्द्र को मुख्य भूमिका रही है और उनकी कृतियाँ आदिवासी-साहित्य के देव में एक अमूल्य धरोहर हैं।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि रणेन्द्र एक सफल कथाकार हैं, जिन्होंने आदिवासी समुदाय को अपने कथा-साहित्य के केन्द्र में रखा है। यही कारण है कि उनकी रचनाएँ आदिवासी समाज और संस्कृति के बारे में लोगों को जागरूक करने में सर्वाधिक सफल रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. सं०- विश्वकर्मा, विनोद- "रणेन्द्र के उपन्यासों में

आदिवासी विमर्श", प्रलेक प्रकाशन, मुम्बई- 2023

2. रणेन्द्र- थोड़ा सा स्त्री होना चाहता शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली-2010
3. रणेन्द्र- "ग्लोबल गाँव के देवता", राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली -2009
4. गूँगी रुलाई कोरस- रणेन्द्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2021
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आ० रामचन्द्र शुक्ल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2003

कुमारी श्वेता रानी (नेट उत्तीर्ण)

शोध-छात्रा, हिन्दी विभाग
नीलांबर-पीतांबर विश्वविद्यालय,
मेदिनीनगर, डालटेनगंज
चलभाष:- 8825300370

शोध सारांश

आदि कवि वाल्मीकि—रचित रामायण में पुरुषोत्तम राम के मुख से उच्चारित ये शब्द आज भी समस्त भारतीय जन—मानस को राष्ट्रीय एकता की भावना से अभिभूत कर रहे हैं। इन शब्दों में अगाध देशभक्ति तथा प्रबल राष्ट्रीयता की भावना स्पष्टः परिलक्षित है। यहाँ मातृभूमि को स्वर्ग से भी श्रेयस्कर कहा गया है। स्वर्णपुरी लंका की तो जन्मभूमि के समक्ष कोई बिसात ही नहीं।

किसी राष्ट्र के विकास में सम्पूर्ण देशवासियों की एकता महत्वपूर्ण कारक बनती है। भारत एक बहुत बड़ा और विविधताओं वाला देश है।

आतंकवाद एक प्रत्यक्ष भारतीय सुरक्षा के आन्तरिक खतरे के रूप में दिखाई दे रहा है, परन्तु इससे भी अधिक खतरनाक उक्त अन्य तत्व हैं। जो राष्ट्रीय विकास के समग्र स्वरूप को प्रभावित करते हैं। ऐसी प्रवृत्तियों से राष्ट्र कमजोर होता है। अतः सरकारी, गैर—सरकारी एवं समाजिक संगठनों का यह दायित्व बनता है कि ऐसे तत्वों को पनपने न दें और अलगाववादी प्रवृत्तियों को राष्ट्र की मुख्य धारा में लाने का प्रयत्न करें। इसके लिए राष्ट्रीय एकता स्थापित करने वाले तत्वों एवं सूत्रों के बढ़ावा मिलना चाहिए। राष्ट्रीय एकता, राष्ट्र प्रेम और राष्ट्र भक्ति की भावना राष्ट्र के विकास में शक्ति प्रदान करती है

1. वेदों में 33 कोटि देवताओं की कल्पना के साथ ही अन्त ऐकेश्वरवाद और एकात्मवाद को स्थापित किया गया है।

2. भारत की प्रचीन संस्कृति सम्पूर्ण विश्व प्राणियों में दया की भावना, विश्व बन्धुत्व, भलाई एवं सौहार्द का संदेश देती है। जैसे वसुधैव कुटुम्बकम्, सर्वेशि सुशिनाः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः इत्यादि। इन सूत्रों में कहीं कोई भेद—भाव नहीं है। सभी मनुष्यों को एक समान समझा गया है। धार्मिक सहिष्णुता हमारी संस्कृति का मूलधार है।

3. भारत के लोकतन्त्रीय स्वरूप और धर्म निरपेक्ष नीति की सर्वत्र प्रशंसा होती है।

4. भारती सेनाओं में सभी जाति और धर्मों के व्यक्ति हैं जो मिलकर राष्ट्र की रक्षा करते हुए अस्मिता बचाये हुए हैं।

5. भारत देश में सभी जातियों और धर्मावलम्बियों को समान अवसर उपलब्ध हैं। राष्ट्रपति जाकिर हुसैन, मुख्य न्यायाधीश हिदायतुल्ला, एअर चीफ मार्शल लतीफ इत्आदि भारत के सर्वोच्च और प्रतिष्ठित पदों पर रह चुके हैं।

6. शंकराचार्य ने भारत के चारों कोनों पर चार मठों को स्थापित कर अखण्ड भारत को जोड़ने का कार्य किया है।

7. दक्षिण के ही आधिकांश धर्माचार्यों ने राम एवं कृष्ण के अवतार

बाद को प्रतिष्ठित किया है।

8. तुलसीदास ने शैव और वैष्णव मतों में विभेद को हटाया।

9. मुसलमान कवि रसखान, रहीम, जायसी इत्यादि उदार एवं वैष्णव प्रभावित कवि माने जाते हैं

10. सम्राट अकबर होली, दीपावली उत्साह से मनाता था तथा तिलक लगाता था एवं सूर्य और अग्नि की पूजा भी करता था। हिन्दुओं के प्रति उसकी उदार नीति और धार्मिक सहिष्णुता की आज भी प्रशंसा की जाती है।

11. बरेली में चुन्ना मियों द्वारा निर्मित लक्ष्मी—नारायण का मदिन्द विद्यमान एवं विख्यात है।

12. नैनीताल का हेड़ाखान, अजमेर शरीफ, मैहर इत्यादि मुस्लिम धार्मिक स्थानों की मान्यता हिन्दुओं में भी प्रचलित है।

13. दीपावली—होली पर हिन्दुओं को मुसलमान, ईद पर मुसलमानों को हिन्दू और किसमस डे पर ईसाइयों को सभी जाति के लोग मुबारकबाद देते हैं।

14. कश्मीर पहले राष्ट्रीय एकता का प्रतीक माना जाता था परन्तु वहाँ अब पाकिस्तान ने हिन्दू मुसलमानों के बीच घृणा को पैदा कर दिया है।

हम अनायास ही जातिगत हिंसा, आपसी दंगा एवं क्षेत्रीयता को लेकर लड़ते रहते हैं। कुछ राष्ट्रदोही लोग राष्ट्रीय एकता को तोड़ने का प्रयत्न करते हैं और ऐसे तत्वों को उभारते रहते हैं। अतः हमें ऐसे लोगों की पहचान करनी होगी और सभी स्तरों से हमें उन्हें दबाना होगा क्योंकि यहाँ सभी जाति और धर्मों के मानने वाले लोग रहते हैं। परन्तु हमें उन समस्त कड़ियों या जोड़ने वाले तत्वों को लेकर आगे बढ़ना होगा। राष्ट्रप्रेम, धार्मिक सहिष्णुता, हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में प्रतिस्थापित करना होगा। राष्ट्रीय चरित्रा निर्माण और सद्भाव के लिए भारतीय विद्यालयों में पढ़ रहे बच्चों के संस्कार में राष्ट्रीय एकता और देश प्रेम की भावना भरनी होगी तभी एक समग्र राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होगा जो राष्ट्रीय हितों के विकास में और भारत को विश्व शक्ति बनाने में सहायक होगा।

नाभिकीय युग इन तत्वों को चुनौती नहीं दे सकता। आधुनिक विप्लवी (विद्रोह रूपी) आन्दोलन सुनिश्चित मनोवैज्ञानिक एवं राजनीति रूपी हथियारों द्वारा चलाया जाता है।

— नियमित सेनाओं की सैन्य कार्यवाहियों में सहायता प्रदान करना, विशेष कर उस समय जब शत्रु ने सम्पूर्ण क्षेत्र पर या किसी भू—भाग पर अधिकार कर लिया हो।

— उस दशा में देश की रक्षा करना जबकि उसकी सशस्त्र सेनाओं को शत्रु ने पूर्ण रूप से पराजित कर दिया हो।

— देश पर शत्रु का अधिकार हो जाने के पश्चात उसके चंगुल से इसे छुड़ाने हेतु एवं उसके विरुद्ध राष्ट्रीय कार्यवाही करने हेतु नागरिकों को प्रेषित करना।

— देश की निरंकुश या तानाशाही सरकार के शासन का तख्ता पट देने हेतु कार्य वाही करना तथा — देश की वर्तमान सरकार को परेशान करना एवं कमजोर बनाना ताकि उसे बाद में हटाया जा सके और उसके स्थान पर एक नवीन सरकार का गठन किया जा सके।

हिंसा की अवधारणा

_____ सभी को साथ लेकर चलने वाली विचाराधारा की आदर्शवादी परिकल्पना जितनी सरल है उसको व्यवहारिक स्तर पर लागू करना उतना ही कठिन है। फिर भी भविष्य के समाज को हम आदर्शवादी परिकल्पना के बिना जीवित नहीं रह सकते हैं। जब तक कि हम किसी विग्रह रहित उदार एवं शान्तिपूर्ण समाज के लक्ष्य को राज्य के लक्ष्य के रूप में और आकांक्षा के स्थापित नहीं कर देते तब तक हम एक आतंक मुक्त समाज की परिकल्पना नहीं कर सकते। भारत में इस दिशा में शुरुआत राज्य और सामान्य लोगों के स्तर से होनी चाहिए। राज्य का यह दायित्व होना चाहिए कि उसकी ओर से किसी भी स्थिति में उन प्रवृत्तियों और व्यवहारों को प्रोत्साहन न मिले जो अपनी परम्पराओं अपने विश्वासों और अपनी रीतिनीतियों के आधार पर स्वयं को दूसरों से पृथक ठहराना आदि हो। राज्य को किसी भी मूल्य पर उन विचारों को या धार्मिक आस्थाओं। विद्रोही भावनाओं को पनपने नहीं देना चाहिए जिनकी पृष्ठ भूमि पर एक व्यक्ति दूसरे के विरुद्ध हिंसा के लिए प्रेरित किया जा सकता हो। वर्तमान युग की समूची पवित्रता तथा समस्त नैतिकता व्यक्ति के उदार संवेदनशील होने में ही निहित है और जो व्यक्ति व्यवस्थावद्ध धर्म या विचारधारा से जुड़े हैं उनसे किसी प्रकार की उदारता की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

भारत राज्य एक शक्तिशाली, लोकतान्त्रिक व्यवस्था है। अतः उसे पृथककारी शक्तियों से दृढ़ता पूर्वक निबटने के लिए कठोरता से संकल्पबद्ध होना चाहिए। भारत को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी वैचारिक संकल्प बद्धता को तीव्र करना होगा ताकि विश्व के किसी भी भाग में यदि धर्म, क्षेत्र, संस्कृति इत्यादि के नाम पर कोई अलगाव वादी मांग उठ रही हो तो उसे आधार बनाकर कोई आंकलवादी संगठन पनप रहा हो तो उसे अवैध घोषित किया जा सके। व्यक्तियों या समूहों के नाम पर या उनके कथित अधिकारों के लिए अनुदार प्रवृत्तियों को आश्रय देने का अर्थ भयंकर परिणाम को आमंत्रण देना होता है। इस प्रकार सही अर्थों में देखा जाये तो विद्रोह या अलगाव के विरुद्ध संघर्ष वास्तव में

मानव समाज को अधिक से अधिक उदार बनाने का अभियान नहीं कठिन चुनौती और दायित्व भी है। उन व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से किसी भी प्रकार से किसी भी रूप में भिन्न बनाये रखने में सहायक है।

भारतीय समाज में भी अपनी अनेक पारम्परिक रूढ़ियां और व्यवस्थाएं जो आज के युग में प्रांसागिक नहीं हैं। इनसे स्वयं को मुक्त करना होगा। रूढ़ समाजों/कबीलाई संगठनों की त्रासदी यही है कि वे अपने से बाहरी समाज के साथ प्रतिद्वन्द्विता में पिछड़ कर आपस में अथवा व्यस्था के विरुद्ध लड़ते हैं अथवा हिंसा का प्रसार करते हैं। अपनी धार्मिक मान्यताओं को श्रेष्ठ घोषित करने के लिए वह समाज अथवा राज्य के लिए घातक बन बैठते हैं। कोई भी ऐसा विचार या कोई भी ऐसी परम्परा जो एक व्यक्ति को स्वयं से श्रेष्ठ होने का सुख प्रदान करती है वर्तमान युग में असामाजिक अमानवीय और मनुष्य घाती है और यही प्रवृत्ति विद्रोह गतिविधियों को किसी वर्ग विशेष की ओर से वैधता प्रदान करती है। विद्रोह गुटों की मानसिकता क्या रहती है? इन्हें पोषण कैसे प्राप्त होता है इन्हें सैद्धांतिक समर्थन किन शक्तियों से प्राप्त होता है इनके प्रेरक तत्व क्या है? इन्हें समता मूलक समाज, समानता, समन्वयता तथा लोकतान्त्रिक मूल्यों के प्रति आस्था क्यों नहीं होती? वे दूसरे के सहानुभूति से वंचित क्यों रहते हैं? उक्त प्रश्नों का समाधान खोजा जाना अपेक्षित है। विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारत की स्थिति कही अधिक जटिल है।

वस्तुतः विप्लवियों के आंख एवं कान होती हैं। शत्रु के विरुद्ध तीव्रतम प्रचार करती है तथा उसमें भ्रम एवं आतंक पैदा करने का भी कार्य करती हैं ताकि अन्त में उसे सहज से नष्ट किया जा सके। स्थानीय जनता शत्रु के प्रचार के विरुद्ध प्रचार करती हैं। परन्तु इस कार्य हेतु विद्रोहियों की अपनी एक प्रभावशाली नियन्त्रण प्रणाली होनी चाहिए। जनता द्वारा शत्रु के विरुद्ध तोड़-फोड़ की क्रिया को और तेज किया जाता है वहा तोड़-फोड़ के सभी तरीके प्रयोग में लाने का प्रयास करती है। परन्तु कार्यवाही का विस्तार इस प्रकार से किया जाना चाहिए ताकि शत्रु को यह विश्वास हो जाये कि उस क्षेत्र में कोई भी व्यक्ति उसका साथ नहीं दे रहा है, यहां तक कि निद्रा में भी वह भयभीत बना रहे।

विप्लवी युद्ध या विद्रोही कार्यवाहियों में सफलता प्राप्त करने हेतु जो दशाएं आवश्यक हैं वे अग्रलिखित हैं: स्थानीय जनता का सहयोग, लाभप्रद भूगोल या पर्यावरण तथा एक लम्बी लड़ाई। जनता अपनी विचारधारा पर दृढ़ रहती है तथा शत्रु के विरुद्ध सफलता प्राप्त करने में उसकी पूर्ण आस्था होती है।

भौगोलिक दशाएँ इस प्रकार की होनी चाहिए कि भू-भाग का विस्तार अधिक हो एवं इस क्षेत्र में बहुत कम सड़कें होनी चाहिए तथा यहां पर पर्वत एवं पहाड़ियां तथा जंगल एवं झाड़ियां बहुतायत में होनी चाहिए। भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्गत भूमि, सड़कें संचार—व्यवस्था, स्थानीय आर्थिक दशाएँ, गांवों एवं शहरों की अव्यवस्थित तथा स्थानीय आबादी की मनोवृत्ति आते हैं। इनके अतिरिक्त जातीय कारक का भी अपना एक विशेष महत्व है आन्तरिक पर्यावरण की तुलना में बाह्य पर्यावरण अधिक लाभप्रद सिद्ध हो सकता है। यकद पड़ोसी मित्र है तो वह विद्रोहियों को साज—सामान प्रदान करने के साथ—साथ स्थल भी प्रदान कर सकता है। इस प्रकार की गुरिल्ला कार्यवाहियों में समुद्र भी सहायक हो सकता है।

उपर्युक्त प्रकार की भौगोलिक दशाओं में शत्रु की टेक्नालोजी एवं अन्य उपस्कर निरर्थक सिद्ध हो सकते हैं। विद्रोहियों एवं स्थानीय समुदाय दोनों को उस समय तक धीरज और दृढ़ निश्चय के साथ लड़ना पड़ सकता है जब तक कि उन्हें अन्तिम विजय नहीं मिल जाती। स्थानीय जनता एवं विद्रोही नेता शत्रु से किसी प्रकार समझौता नहीं करते तथा वे यातनाओं को सहर्ष झेलते हुए उससे असहयोग करते रहे हैं, भले ही वह उनको नौकरी प्रदान करने, उनके घरों की रक्षा करने एवं उनके नगरों की रक्षा करने का आश्वासन ही क्यों न दे। उसी अवस्था में शत्रु के विरुद्ध अबाध गति से संघर्ष किया जा सकता है जब जनता एवं विद्रोहियों दोनों में स्वाधीनता प्राप्त करने हेतु तीव्र लालसा हो एवं सामान्य जीवन व्यतीत करने में पूर्ण आस्था हो।

— आज के युग में अपने राष्ट्रीय हितों के रक्षार्थ एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से युद्ध करता है और विजय प्राप्त करने हेतु सशस्त्र सेनाओं के प्रयोग के साथ—साथ राजनीतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक स्तर पर भी युद्ध करता है। अतः अब सम्पूर्ण राष्ट्र की सुरक्षा करना अनिवार्य है। आधुनिक युद्ध का सम्बन्ध केवल रणनीति, सामरिकी एवं सम्भारिकी से नहीं वरन् इसका सम्बन्ध राजनीति विज्ञान, प्रचार, अर्थशास्त्र तथा सामाजिक विज्ञान से भी है। अतः सैन्य नेताओं को इन सभी विषयों का अध्ययन करना चाहिए। आज के युद्ध के सन्दर्भ नेतृत्व का विकेन्द्रीकरण करना अति आवश्यक है। — प्रति विप्लवकारी युद्ध के सफल संचालन हेतु नेतृत्व विकेन्द्रीकरण करना नितांत आवश्यक है। परन्तु नेतृत्व के गुणों एवं नियमों पर उचित ध्यान देना चाहिए। विद्रोही कार्यवाहियां क्षेत्रीय स्तर पर एवं छिपाव स्थल के आधार पर की जाती हैं। अतः विकेन्द्रित नेतृत्व के ही द्वारा इस प्रकार के युद्ध के संचालन सुचारु रूप से किया जा सकता है। यदि विद्रोही इस तथ्य की अवहेलना करते

हैं। तो शत्रु के हाथों उनकी हार सुनिश्चित है परन्तु विभिन्न विद्रोही दलों के बीच एकता और तादात्म्य स्थापित करना एक कठिन समस्या है। वे गुटवाद से भी प्रभावित होते हैं। उनके संगठन को सुव्यवस्थित करने हेतु समय एक मुख्य तत्व है। संचार—साधनों की कमी के कारण एवं भौगोलिक अवरोधों के कारण से विद्रोही दल एक दूसरे के समीप नहीं आ पाते। कभी—कभी इनमें व्यक्तिगत स्पर्धा भी दृष्टिगोचर होती है।

सन्दर्भ :

1. परशुराम गुप्त, गुरिल्ला युद्धकर्म, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2003 पृ. 4.
2. वही, पृ. 7.
3. ऑटो हेलबर्न पार्टेशन वारफयर, लंदन, 1962. पृ. 40.
4. सिंह टण्डन एवं अग्रवाल, युद्ध और शान्ति का अध्ययन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 19.
5. ओम प्रकाश तिवारी, राष्ट्रीय सुरक्षा, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001.

डॉ० एम०के० सिंह

रीडर, रक्षा—अध्ययन विभाग

रक्षा—अध्ययन

बरेली कालेज, बरेली

सत्यवीर सिंह

शोध छात्र

बरेली कालेज, बरेली

शोध सारांश :-

समकालीन विद्वानों का मानना है कि समय अंतराल के साथ स्त्री के दिव्य गुण धीरे-धीरे अवगुण में परिवर्तन परिवर्तित होने लगे। वे हर क्षेत्र में अयोग्य घोषित की जाने लगी। उनको सभी संस्कारों से वंचित कर दिया गया था। समाज में अनेक कुप्रथाएं फैल गयी थीं, जैसे सतीप्रथा, बालविवाह, परदा प्रथा, अनमेल विवाह आदि। स्त्री की दयनीय स्थिति को देखकर 'विवेकानंद' कहते हैं "स्त्रियों की अवस्था को सुधारे बिना जगत के कल्याण की कोई सम्भावना नहीं है। पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना सम्भव नहीं है।" विवेकानंद जी महिला समाज की वास्तविक दशा से चिंचित, वे मानते थे कि स्त्रियों की दिशा में सुधार करना समाज और देश एवं समाज के भलाई महिला समाज के तरक्की के बगैर असंभव बताया है। 'डॉ. आंबेडकर' "महिलाओं की उन्नति के प्रबल पक्षधर थे। उनका मानना था कि किसी भी समाज का मूल्यांकन इस बात से किया जाता है कि उसमें महिलाओं की क्या स्थिति है? दुनिया की लगभग आधी आबादी महिलाओं की है, इसलिए जब तक उनका समुचित विकास नहीं होता कोई भी देश चहुंमुखी विकास नहीं कर सकता.....वे आगे लिखते हैं कि सही मायने में देश में प्रजातंत्र तब आएगा जब महिलाओं को पैतृक संपत्ति में बराबरी का हिस्सा मिलेगा और उन्हें पुरुषों के समान अधिकार दिए जाएंगे। उनका दृढ़ विश्वास कि महिलाओं की उन्नति तभी संभव होगी जब उन्हें घर परिवार और समाज में बराबरी का दर्जा मिलेगा। शिक्षा और आर्थिक तरक्की उन्हें सामाजिक बराबरी दिलाने में मदद करेगी।" साथ ही इन विद्वानों के लेखन ने स्त्री विमर्श को विभिन्न दृष्टिकोणों से समृद्ध किया है। सिमोन द बोउआ और बेल हुक्स ने वैश्विक स्त्रीवाद को दार्शनिक और अंतर्सनादित आधार दिया, जबकि सावित्रीबाई फुले, ताराबाई शिंदे, और कमला भसीन ने भारतीय संदर्भ में पितृसत्ता और सामाजिक असमानता के खिलाफ आवाज उठाई। स्पिवक और चक्रवर्ती ने उपनिवेशवाद और इतिहास के स्त्रीवादी विश्लेषण को बढ़ावा दिया। ये सभी विद्वान सामाजिक परिवर्तन, समानता, और स्त्रियों की स्वायत्तता के लिए प्रतिबद्ध हैं।

बीजशब्द :- पितृसत्ता, संरचनात्मक, असमानता, पुरुष वर्चस्ववादी, हाशिए, लैंगिक असमानता, प्रजातंत्र, आत्मशक्ति और शोषणकारी।

मूल आलेख :-

स्त्री विमर्श :- स्त्री विमर्श ने पितृसत्तात्मक समाज की संस्कृति और सभ्यता के अंतर्निहित स्वरूप को उजागर कर उसकी संरचनात्मक असमानताओं और शोषणकारी प्रवृत्तियों को प्रकाश में लाया है। यह विमर्श आधुनिक युग की एक विचारधारात्मक उपलब्धि है, जिसका मूल उद्देश्य स्त्री की स्वायत्त अस्मिता की पहचान को स्थापित करना

है। स्त्री विमर्श पुरुष-प्रधान सामाजिक व्यवस्था में स्त्री की अधीनस्थ स्थिति, उसके कारणों, और समाधान के उपायों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। यह विमर्श स्त्री के वाणीविहीन, आत्महीन, और स्वत्व-रहित अस्तित्व को रेखांकित करता है, जो पितृसत्तात्मक संरचनाओं द्वारा हाशिए पर धकेलकर परजीवी-जैसा जीवन जीने को विवश किया जाता है।

वैश्विक स्तर पर स्त्री मुक्ति को लेकर काफी बहस हो चुकी है। इस बहस में मार्क्सवादी चिंतकों ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। स्त्री विषयक सवाल और उसकी लड़ाई में फ्रांसीसी लेखिका 'सीमोन द बोउवार' की किताब 'द सेकेन्ड सेक्स' की भूमिका अहम है। सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि अन्य देशों में भी स्त्री को दोगुना दर्जे की नागरिक समझा और हीन दृष्टि से देखा जाता रहा है। दुनिया की आधी आबाद के प्रति इस दृष्टि और सोच को बदलने के लिए अपने हक और अधिकार के प्रति जागरूक स्त्रियों ने संघर्ष करना शुरू किया। इसके फलस्वरूप उन्होंने अपनी इच्छाओं, रुचियों आदि को साहित्य के रूप में भी व्यक्त किया। पश्चिम से प्रेरित स्त्रीविमर्श विचारधारा को भारतीय संदर्भ में स्थापित करने का श्रेय उन समाज सुधारकों को है, जिन्होंने सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध संघर्ष किया। दयानंद सरस्वती, भीमराव अंबेडकर, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, और राजा राममोहन राय जैसे सुधारकों ने सतीप्रथा, बालविवाह, और विधवा पुनर्विवाह जैसे अमानवीय प्रथाओं के उन्मूलन हेतु सशक्त आवाज उठाई। साथ ही, रमाबाई, ताराबाई शिंदे, और सावित्रीबाई फुले जैसी महिला सुधारकों ने स्त्री के अधिकार, स्वतंत्रता, और सम्मान के लिए सामाजिक जागृति का बीड़ा उठाया। इन प्रयासों ने स्त्री विमर्श की आधारशिला रखी।

साहित्य में स्त्रीवादी लेखन :- मनुस्मृति (अध्याय 3, श्लोक 56) में कहा गया है, "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता," कहकर उसे महिमामण्डित किया गया है, और सभी महान पुरुषों की प्रेरक शक्ति के रूप में स्त्री का उल्लेख कर उसे गौरवान्वित किया गया है, लेकिन हमारे समाज ने सम्मान के नाम को परतन्त्रता ही दी है न कि एक मानव होने का हक दिया है। नारी को समाज में अपना स्थान बनाने के लिए सदैव संघर्ष करना पड़ा है। चाहे वह सीता, द्रोपदी, कुन्ती, गाँधारी, उर्मिला, सावित्री बाई फुले, ताराबाई शिंदे, साराह, एंजीला, ग्रिमिके, जॉन आफ आर्क हो।

साहित्य में स्त्रीविमर्श लेखन का प्रश्न केवल स्त्री के दैहिक अनुभवों तक सीमित नहीं है, अपितु यह उसकी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, वर्गीय, जातीय और लैंगिक अस्मिताओं की जटिलताओं को समेटने का प्रयास करता है। स्त्रीवादी सिद्धांतों का उद्देश्य लैंगिक असमानता की प्रकृति एवं कारणों को समझना तथा

इसके परिणाम से पैदा होने वाले लैंगिक भेदभाव का राजनीतिक और सामाजिक सिद्धांतों पर इसके प्रभाव की व्याख्या करना है। स्त्रीविमर्श आंदोलन, जो साठ के दशक में पुरुष वर्चस्ववादी सामाजिक सत्ता और संस्कृति के विरुद्ध एक प्रबल राजनीतिक आंदोलन के रूप में उभरा, केवल स्त्री की मुक्ति तक सीमित नहीं है। यह सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और दैहिक स्वतंत्रता की व्यापक मांग करता है, जो संपूर्ण मानवता की मुक्ति की अनिवार्य शर्त है। स्त्रीवादी विमर्श स्त्री की अस्मिता की लड़ाई है, जो यह दर्शाती है कि आधी आबादी की सहभागिता के बिना कोई भी सामाजिक या क्रांतिकारी परिवर्तन संभव नहीं है। इतिहास साक्षी है कि स्त्री की शिरकत के बिना क्रांतियाँ अधूरी रहती हैं।

श्रुति गौतम (भारत में महिला सशक्तिकरण) में लिखती है कि "विश्व स्त्री आंदोलन की नींव 19वीं शताब्दी में ही रखी गई। पश्चिम के कई राष्ट्र उस दौर में इस आंदोलन में भागीदार बने। स्त्री आंदोलन जब सामने आए तब ही स्त्री सशक्तिकरण की एक अवधारणा दुनिया के समक्ष प्रमुखता से आई। इसलिए स्त्री सशक्तिकरण को समझने के लिए स्त्री आंदोलन को समझना भी अतिआवश्यक है। सरल शब्दों में कहें तो स्त्री आंदोलन की शुरुआत समाज द्वारा स्त्री को निम्नतर समझने से हुई। स्त्रीवाद का महत्वपूर्ण सिद्धांत है कि इस पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री को हीन दर्जा प्राप्त है। यह समाज ही उसके लिए जीवन जीने के नियम और स्वरूप को गठित करता है। स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को नकार देता है। स्त्री आंदोलन किसी पुरुष का नहीं बल्कि पितृसत्तात्मक विचार का विरोध करता है। यह आंदोलन मानता है कि स्त्री को भी पुरुष के बराबर सम्मान, अधिकार व अवसर मिले। स्त्री आंदोलन लैंगिक असमानता के स्थान पर इस अवधारणा को मानता है कि स्त्री भी एक मनुष्य है। मनुष्य होने के साथ-साथ वह दुनिया की आधी आबादी है। सृष्टि के निर्माण में उसका भी उतना ही सहयोग है जितना कि पुरुष का।"

'राजेन्द्र यादव' 'कथा जगत की बागी मुस्लिम औरतें', में स्त्री की स्थिति के प्रश्न पर कहते हैं कि "स्त्री का अपना 'घर' नहीं होता। घर बाप का होता है, पति का होता है या बाद में बेटे का होता है वह वहाँ सिर्फ मेहमान या शरणार्थी होकर रहती है। चूंकि वह आर्थिक या भौतिक रूप से पराश्रित है, इसलिए जानती है कि गैर-जरूरी या असुविधाजनक होने पर किसी भी समय उसे यह घर या संसार छोड़ना पड़ सकता है। उसके लिए बेहद जरूरी है कि वह दूसरों के इस घर में अधिक से अधिक उपयोगी बनकर रहे। उसका कर्तव्य है कि घर के हर सदस्य के स्वास्थ्य, भोजन और क्षमता को बनाए रखने की

व्यवस्था में ढील न आने दे, वंश-परम्परा चलाए। वह अधिकार हीन कर्तव्यों की गौरवशाली प्रतीक है, वह अन्नपूर्णा है। उधार के अधिकारों का उसकी सीमा तक प्रयोग कर सकती है, जितने की अनुमति गढ़ स्वामी उसे सौंपता है—या जो परिवार, घर के लिए असुविधाजनक नहीं होते। उसे कही या अनकही सख्त हिदायत होती है कि अपना सारा जीवन और संसाधन वह सिर्फ परिवार के संवर्धन और संरक्षण में लगाए रखेगी। कर्तव्यों में जरा—सी भी ढील उसे न केवल सारे अधिकारों से वंचित कर सकती है, बल्कि उसे फालतू बोझ की तरह ठिकाने भी लगा सकती है, उसके सम्मान की एकमात्र शर्त है परिवार के प्रति उसकी निष्पक्ष वफादारी.....।" आगे 'राजेन्द्र यादव' लिखते हैं कि यह सामंती परिवार में स्त्री का न नाम होता, न धर्म, न भाषा, न जाति सभी कुछ पुरुष का होता है। जो अपने स्वार्थ तक स्त्री को अधिकार प्रदान करता है न की सुरक्षा के लिए। 'गरिमा श्रीवास्तव' का कहना है— "इधर पितृसत्ता के कई छद्म रूप हमारे सामने हैं, जिनका सामना करना अब पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा कठिन है। कामकाजी स्त्री और घरेलू स्त्री के लिए पितृसत्ता के अलग-अलग रूप हैं। कार्य-स्थलों पर कई बार स्त्रियाँ ही पितृसत्ता की अभिकर्ता बन जाती हैं। स्त्रियों की सुरक्षा जैसे मुद्दे भी गंभीर हैं, क्योंकि जाति और लिंग के आधार पर बंटे समाज के तंतु पहले से ढीले हुए हैं। एक स्त्री द्वारा यदि कहीं पितृसत्ता का विरोध किया जाता है तो हो सकता है कि वह कुंठा किसी और जगह किसी और अपेक्षाकृत कमजोर स्त्री के शोषण और दमन के रूप में निकले। सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों की सक्रियता के बावजूद यौन-हिंसा के अलग-अलग मामले सामने आते हैं, जिसका प्रभाव एक बड़े समूह की स्त्रियों के अवचेतन पर पड़ता है। एक घटना कहीं होती है, सैकड़ों लड़कियों के माता-पिता सहम जाते हैं और उनपर सुरक्षा के नाम पर पाबंदियाँ लगा दी जाती हैं। भारत में बलात्कार संबंधी कानून स्त्री के पक्ष में नहीं हैं, बल्कि फ्लेविया एग्नेस से सहमत होते हुए उन्हीं के शब्दों में कहें तो पवित्रता, कौमार्य, विवाह के लाभ तथा स्त्री—यौनिकता के भय पर आधारित हैं।"

'मैत्रेयी पुष्पा' अपने एक साक्षात्कार में कहती हैं, "मेरी अवधारणा सबसे पहले पुरुषवादी दृष्टिकोण का निषेध करती है। स्त्री-पुरुष के लिए एक सजावट है, देह है, वस्तु है...उसके ज्वार को समेटने का जरिया है। सदियों से यही सब चल रहा है। इन सबके बीच एक स्त्री क्या सोचती है, यह किसी ने नहीं पूछा।..... वादों-विवादों के कटघरे में स्त्री प्रश्नों से जूझती हुई 'मैत्रेयी पुष्पा' अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री जीवन के उन तमाम मुद्दों को उठाती हैं जो सामाजिक नियमों की घुटन और दबाव में जन्म

लेते हैं। “उन दिनों बार-बार मन में सवाल उठता था, वह कौन सा संसार है, जहाँ लड़की अपनी इच्छा से जीवन साथी चुनती है? विश्वास अर्जित करने का अवसर पाती है? हम इस अंधी-बहरी दुनिया के वाशिंग्टन हैं, जहाँ उम्र आने पर एक पुरुष का हाथ थमाकर कह दिया जाता है कि यह तुम्हारा पति है, परमेश्वर है।” वे आगे लिखते हैं कि स्त्री सामाजिक रूढ़ियों, कुरीतियों, परम्परागत सोच में बदलाव के लिए साहित्य का सहारा लेती है। स्त्री विरोधी दृष्टि और व्यवहार के विरुद्ध वे साहित्य के रचनात्मक उपयोग की ओर प्रवृत्त होती हैं। डॉ. पति भी मैत्री पर संदेह करता है वह मौहल्ले-बस्ती के लड़कों के बारे में कुरेद-कुरेदकर पूछता है। पति द्वारा पत्नी का इस तरह आगा-पीछा खंगालना उससे बर्दाश्त नहीं होता। पहली रात में ही वह अपनी उग्र प्रतिक्रिया व्यक्त करती हुई पति से कहती है – “क्यों छिपाऊँगी ? तुम्हारा डर लग रहा है क्या? मुझे तुमसे ज्यादा ताकतवर और तंदुरुस्त लड़कों से डर नहीं लगा।” वहीं स्त्रीवादी आलोचक व कथाकार ‘रोहिणी अग्रवाल’ अपनी कविताओं में स्त्री-दृष्टि को एक नई गहराई और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करती हैं। उनकी कविताएँ न केवल व्यक्तिगत अनुभवों को उजागर करती हैं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं पर भी सवाल उठाती हैं, जो स्त्री की स्वतंत्रता और पहचान को सीमित करती हैं। अपनी कविता ‘सम्यक् सम्बुद्ध’ में लिखती है:- “हे सम्यक् सम्बुद्ध! तुम्हारे शासन को स्वीकार लिया है मैंने कि धर्म-शास्त्र, उत्सव-कर्मकाण्ड सब मिथ्या हैं मिथ्या हैं राजाज्ञाएँ और लोक-मर्यादाएँ मिथ्या हैं दुर्बलताएँ जो रच-बस जाती हैं चमड़ी में रोएँ की तरह। छोटे से टेंगे पर उठा कर समस्त जन्मों का बोझ देह पर धारण करती हूँ जीन्स और टॉप पैरों के नीचे हरहराता ग्लोब तृषित रूह में अमृत छलकाते मोजार्ट-बीथोवन के जादुई रोब। अहा! मैं स्त्री नहीं, मुक्ति हूँ साक्षात् अनुभव और बोध की मिट्टी में विवेक और संवेदना की नमी से रची स्वयं सम्यक् सम्बुद्ध !!” कविता के माध्यम से एक स्त्री की आंतरिक मुक्ति और आत्मबोध की गहन अभिव्यक्ति है, जो सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक बंधनों को चुनौती देती है। कविता में रोहिणी अग्रवाल पारंपरिक मान्यताओं/कृधर्म-शास्त्र,

कर्मकांड, राजाज्ञा, लोक-मर्यादा और शारीरिक दुर्बलताओं को ‘मिथ्या’ घोषित कर उन्हें अस्वीकार करती है। वह इन बंधनों को त्वचा में उगे रोएँ की तरह तुच्छ और उखाड़ फेंकने योग्य मानती है। जीन्स और टॉप पहनकर वह अपनी देह पर समस्त जन्मों का बोझ उठाती है, जो उसकी आत्मशक्ति और स्वतंत्रता का प्रतीक है। ‘पैरों के नीचे हरहराता ग्लोब’ विश्व को उसके अधीन दर्शाता है, जबकि मोजार्ट और बीथोवन की संगीतमयी रचनाएँ उसकी आत्मा को अमृत से भर देती हैं। यह पंक्ति पाश्चात्य संस्कृति और कला के माध्यम से आत्मिक उन्नति की बात करती है। कविता का चरम बिंदु है नायिका का स्वयं को ‘स्त्री’ न मानकर ‘मुक्ति साक्षात्’ घोषित करना। वह स्वयं को विवेक, संवेदना, अनुभव और बोध से रची हुई ‘सम्यक् सम्बुद्ध’ (पूर्णतः जागृत) मानती है। यहाँ ‘सम्यक् सम्बुद्ध’ बौद्ध दर्शन का संदर्भ है, जो पूर्ण ज्ञान और मुक्ति की अवस्था को दर्शाता है। कुल मिलाकर, कविता स्त्री के आत्म-साक्षात्कार, स्वतंत्रता और सामाजिक बंधनों से मुक्ति की प्रबल घोषणा है, जो उसे न केवल एक व्यक्ति, बल्कि स्वयं में पूर्ण और जागृत चेतना का प्रतीक बनाती है।

‘सुशीला टाकभौरे’ लिखती है कि स्त्री विमर्श के माध्यम से धार्मिक ग्रंथों का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक “हिंदू समाज व्यवस्था में ‘मनुस्मृति’ धर्मग्रंथ का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें पितृसत्ता के आधार पर पुरुषों को प्रथम स्थान और स्त्रियों को दोयम स्थान दिया गया है। ‘स्त्रियों को पुरुषों के पीछे ही रहना चाहिए, यह निर्देश देने वाला धर्मग्रंथ स्त्रियों के बराबरी के अधिकार को कभी स्वीकार नहीं करता। धर्मग्रंथों के विरुद्ध जाना अधर्म माना जाता है। पर इस तरह की धार्मिक कट्टरता पितृसत्ता को सतत मजबूत करती है। पुत्र को महत्व देने के कारण बेटियों की उपेक्षा की जाती है। समाज की रीति-परंपराएँ भी पितृसत्ता के पक्ष में बनाई गई हैं, जिनका अनुकरण स्त्रियों के लिए 21वीं शताब्दी में भी आवश्यक माना जाता है। धार्मिक अनुष्ठान, स्त्रियों के व्रत-उपवास पितृसत्ता का पोषण करते हैं। सधवा-विधवा के प्रति अलग-अलग भावना, इसी तरह पुत्रवती और निपूती स्त्री के प्रति पुरुषों के साथ स्त्रियों का दृष्टिकोण भी पितृसत्ता को ही मजबूत करता है। ‘सुशीला टाकभौरे’ ‘विद्रोहिणी’ कविता में लिखते हैं कि “आज रोम-रोम से ध्वनि गूँजती है और पोर-पोर से पाँव फूटते हैं प्रचलित परिपाटी से हटकर मैं भागती हूँ-सब ओर एक साथ विद्रोहिणी बन चीखती हूँ गूँजती है आवाज सब दिशाओं में-

मुझे अनंत असीम दिगंत चाहिए
छत का खुला आसमान नहीं
आसमान की खुली छत चाहिए!
मुझे अनंत आसमान चाहिए!"

तस्लीमा नसरीन (स्त्री समाज और धर्म) मानना है कि पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं को आज भी कोमल और लाजवंती के रूप में देखा जाता है, जबकि वास्तविकता यह है कि महिलाएं पितृसत्तात्मक बंधनों को तोड़कर आगे बढ़ रही हैं। उन्होंने स्त्री स्वतंत्रता और अधिकारों के लिए संघर्ष किया है, और उनके लेखन में स्त्री की पीड़ा, समाज में उसकी स्थिति, और धार्मिक कट्टरता के खिलाफ आवाज उठाई गई है। इकनॉमिक टाइम्स अखबार की ईशानी दत्तागुप्ता को दिए इंटरव्यू में तस्लीमा ने "यूनिफॉर्म सिविल कोड को महिलाओं के अधिकारों के लिए जरूरी बताया और कहा कि किसी भी धर्म में महिलाओं को बराबरी का अधिकार नहीं दिया गया है। तार्किक सोच रखने वाले और ईश्वर, खुदा या गॉड पर यकीन न रखने वाले मेरे जैसे कई दूसरे लोग भी हैं। इसलिए मुझे अक्सर अकेलापन महसूस नहीं होता है। हमारे लिए यह अहम नहीं है कि हमारे परिवार किस धर्म को मान रहे हैं। हम मानवता में विश्वास करने वाले लोग हैं। ऐसे लोगों के लिए तार्किक और वैज्ञानिक सोच ज्यादा अहम है। जब मैं कहती हूँ कि धर्म और कट्टरपंथ में कोई फर्क नहीं है और धर्मों को आधार बनाने वाले आतंकवाद की जड़ ही धर्म है, तो मैं पूरी तरह जानती हूँ कि मैं सच बोल रही हूँ।"

निष्कर्ष :- स्त्री विमर्श प्राचीन काल से चली आ रही पितृसत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ स्त्रियों की मुक्ति और समानता की लड़ाई है, जहाँ पुरुष-प्रधान समाज ने मान-मर्यादा, धर्म, और सामाजिक रूढ़ियों के नाम पर स्त्रियों को शोषित और सीमित रखा। रूपेश कुमार यादव (स्त्री विमर्श-नए मुद्दे प्रस्तुति) के शब्दों में कहें तो स्त्री विमर्श आधी आबादी के संघर्ष और उत्थान का विमर्श है। फ्रांसीसी राज्य क्रांति (1789) के तीन प्रमुख बिंदु थे- समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व। ये किसी भी देश में मानवता के हक में जरूरी हैं। पश्चिमी देश और भारत के इसी समानता के सिद्धांत के तहत स्त्री के हक और स्त्री विमर्श। स्त्री प्रश्न के मुद्दों पर चर्चा शुरू हुई। भारत में नवजागरण के उदय के साथ ही स्त्री के सवाल पर गंभीरता से विचार होने लगा था। आगे चलकर स्त्री-मुक्ति आंदोलन के सामने दोहरी चुनौतियां थीं। स्त्रियों को दो स्तरों पर लड़ाई करनी पड़ी थी। पहला, अपने अधिकारों और समानता के लिए तो दूसरा औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध। आगे चलकर स्त्री-पुरुष के समान अधिकार की मांग और पुरुषसत्तात्मक समाज द्वारा स्त्रियों पर थोपी गई रूढ़ियों और

अंधविश्वासों का विरोध भी स्त्री-आंदोलन के विषय बने। समय के साथ कई नई समस्याएं जुड़ती गईं। स्त्रियों की राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक हिस्सेदारी की चर्चा भी होने लगी। कई नए कानून बनाकर स्त्रियों के अधिकारों को सुरक्षित करने की घोषणा भी की गई। लेकिन बहुत कुछ कागज पर ही दिखाई देता है। अभी भी स्त्रियों का यौन उत्पीड़न थमा नहीं है। पिछले लगभग चार दशकों से स्त्री-विमर्श ने दुनिया भर में अपना खास प्रभाव दिखाया है।"

संदर्भ सूची :-

1. आजकल: मार्च 2013 – पृष्ठ संख्या 20
2. नवभारत टाइम्स ऑनलाइन 6 दिसंबर 2012,
3. संस्कृत भारती यूके: मनुस्मृति श्लोक (<https://www-sanskritabatiuk>)
4. दृष्टि ऑनलाइन पत्रिका आईएस ब्लॉग
5. सं० राजेन्द्र यादव, 'कथा जगत की बागी मुस्लिम औरतें', पृष्ठ संख्या 10
6. रूपेश कुमार यादव, 'स्त्री विमर्श-नए मुद्दे प्रस्तुति' वागर्थ ऑनलाइन पत्रिका
7. मैत्रयी पुष्पा 'कस्तूरी कुंडल बसै' आत्मकथा, पृष्ठ संख्या –132
8. मैत्रयी पुष्पा कस्तूरी कुंडल बसै आत्मकथा, पृष्ठ संख्या – 240
9. रोहिणी अग्रवाल, 'लिखती हूँ मन' कविता संग्रह पृष्ठ –32-33
10. रूपेश कुमार यादव, 'स्त्री विमर्श-नए मुद्दे प्रस्तुति' वागर्थ ऑनलाइन पत्रिका
11. 'सुशीला टाकभौरे' 'विद्रोहिणी' कविता हिन्दवी ऑनलाइन
12. नवभारत टाइम्स (इकनॉमिक टाइम्स हिंदी) 18 जुलाई 2016
13. रूपेश कुमार यादव, 'स्त्री विमर्श-नए मुद्दे प्रस्तुति' वागर्थ ऑनलाइन पत्रिका

अनिल कुमार

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय,
रोहतक, हरियाणा।

ईमेल :- anil22panwar@gmail-com

शोध सारांश

आदि कवि वाल्मीकि—रचित रामायण में पुरुषोत्तम राम के मुख से उच्चारित ये शब्द आज भी समस्त भारतीय जन—मानस को राष्ट्रीय एकता की भावना से अभिभूत कर रहे हैं। इन शब्दों में अगाध देशभक्ति तथा प्रबल राष्ट्रीयता की भावना स्पष्टः परिलक्षित है। यहाँ मातृभूमि को स्वर्ग से भी श्रेयस्कर कहा गया है। स्वर्णपुरी लंका की तो जन्मभूमि के समक्ष कोई बिसात ही नहीं।

आज स्वाधीन भारत को जिन आंतरिक समस्याओं से जूझना पड़ रहा है, उनमें राष्ट्रीय एकता की समस्या सर्वोपरि है। सारे देश में वैमनस्य, फूट एवं विघटन की प्राणघाती धारा व्याप्त है। भाषा, क्षेत्र, धर्म, अर्थ, एवं वैयक्तिक स्वार्थजनित झगड़ों तथा दंगों की खबरें आये दिन समाचार पत्रों की सुर्खियाँ बनकर आती ही रहती हैं। लगता है राष्ट्रीय समुदाय बिखराव के कगार पर खड़ा है। भाई—भाई के खून के प्यासे हो रहे हैं। सभी अपने—अपने की सोचते हैं, देश की कोई नहीं सोचता। भावात्मक दृष्टि से भी स्थिति अत्यंत भयावह हो चुकी है। कोई बंगाली है तो कोई द्रविड़, कोई महाराष्ट्री है तो कोई असमी, कोई हिन्दू है तो कोई मुसलमान और कोई सिख है तो कोई बौद्ध, किन्तु कोई भारतीय नहीं है। वस्तुतः राष्ट्रीय एकता आज घोर संकट में है, सदियों के उसके सांस्कृतिक अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लग गया है। लगता है, राष्ट्रीय एकता की समस्या ने राष्ट्रीय पौरुष को सूर्य को ही धूमिल कर दिया है।

वस्तुतः हमारे देश में राष्ट्रीय एकता की समस्या एक व्यापक जन समस्या है। सच तो यह है कि इस देश में स्वाधीनता—प्राप्ति के छः दशक के बाद भी जनता के मन—प्राणों में राष्ट्र को एक समझने की भावना जाग्रत नहीं हुई है।

वस्तुतः भारत के राष्ट्रीय एकतामूलक शिक्षा का ही अभाव है। इससे इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीय एकता की समस्या मुख्यतः भावत्मक है और इसीलिये उसका सही समाधान शिक्षा में ही है। वैसे राजनीतिक एकता तो कर्मोवेश स्थापित हो गयी है, किन्तु भावात्मक एकता के अभाव में वह भी चरमारा रही है।

क्षेत्रीयता इन विघटनकारी शक्तियों में सर्वाधिक नवीन है। विभिन्न प्रकार की क्षेत्रीय सेवायें इसी के गर्भ से उत्पन्न हुई हैं। इनमें शिव सेना, लच्छित सेना, तमिल सेना, खालिस्तान कमांडो फोर्स, भिडरावाले टाइगर्स फोर्स तथा आदिवासी सेना प्रमुख हैं। हाल के कश्मीर बड़ोदरा, मेरठ, मुरादाबाद, अलीगढ़ आजमगढ़ आदि स्थानों के क्षेत्रीय दंगों के सूक्ष्म अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय एवं आर्थिक विशमतायें ही क्षेत्रीयता के मूल में हैं।

अंतराष्ट्रीय एकता की समस्या को विकट बनाने में उक्त विशमताओं के आधार पर उभरी क्षेत्रीयता बहुत अंशों में उत्तरदायी

है। समस्या की भयंकरता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि सन् 1968 ई. में शिव सेना द्वारा प्रोत्साहित क्षेत्रीय दंगे में अमहाराष्ट्रियों की हजारों दुकानें लूटी तथा जलाई गयीं। तमिल फिल्मों के प्रदर्शन पर भी आपत्ति की गयी। इस आन्दोलन में अने निरपराध व्यक्तियों की जानें भी गयीं। उसी वर्ष तथा 1983 में असम में हुये असमियों तथा गैर असमियों के बीच के दंगों में हजारों निरपराध व्यक्तियों की मौतें हुयीं। यहां तक कि नन्हे—मुन्ने बच्चों को भी नहीं छोड़ा गया। इस प्रकार क्षेत्रीयता एवं भाषावाद ने राष्ट्रीय एकता के समक्ष एक विकट समस्या खड़ी कर दी है।

आज राष्ट्रीय एकता की समस्या इतनी विकट और जटिल हो गयी है सारा राष्ट्र ही चिन्तित हो उठा है। वस्तुतः आज राष्ट्रीय अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लग गया है। दैनिक समाचार पत्रों पृष्ठ प्रतिदिन आग लगी, लूट, दंगे तथा व्यापक हिंसा के समाचारों से भरे होते हैं। हम एक भयावह परिस्थिति से गुजर रहे हैं। राजनीतिक अनिर्णय, प्रशासनिक दृढ़ता, आर्थिक विशमता, जातीय विरोध आदि भी कुछ अंशों में अवश्य ही हिंसा के लिये उत्तरदायी हैं। असहिष्णुता की दानवी तो जैसे समाज और राष्ट्र को चबाकर ही दम लेगी। सांप्रदायिकता, क्षेत्रीय, भाषावाद तथा आर्थिक विशमता इस प्रकार की सामाजिक असहिष्णुता को जन्म देती हैं। राष्ट्रीय एकता की समस्या का यह पक्ष आज अत्यधिक प्रबल एवं घातक है।

संप्रति उसकी सबसे बड़ी समस्या भोजन तथा आवास की है। शोषकों के एक छोटे, किन्तु सम्पन्न वर्ग ने भारत के विशाल जन समुदाय को विपन्न एवं शोषित बना रखा है। ऐसी परिस्थिति में राष्ट्रीय एकता की उपलब्धि एक स्वप्न ही है। सच तो यह है कि राजनीतिक स्थिरता तथा राष्ट्रीय चेतना का आधार देश का समवेत आर्थिक विकास है। राष्ट्रीय एकता इन तीनों घटकों से निर्मित होती है। श्री बी.के. माथुर ने इसे गणित के रूप में इस प्रकार रखा है

(आ) आर्थिक विकास

(ब) राजनीतिक स्थिति

(स) राष्ट्रीय चेतना

(अ) + (ब) + (स) = राष्ट्रीय एकता

वस्तुतः आर्थिक विशमता के दंश से पीड़ित जन समुदाय के अन्दर राष्ट्रीय की भावना का विकास सर्वथा सम्भव है। आज भारत का जन समुदाय आर्थिक शोषण एवं विपन्नता के घातक प्रहार से कुंठित है। फलस्वरूप सामाजिक तनाव एवं हिंसा की लपटों का उभरना स्वाभाविक ही है। स्पष्ट है कि राष्ट्रीय एकता के मार्ग में आर्थिक विशमता एक बहुत ही प्रबल बाधक तत्व है।

इस सन्दर्भ में जवाहरलाल नेहरू के शब्द बड़े ही उपयुक्त हैं—हमारी आर्थिक—सामाजिक व्यवस्था पुरानी एवं लचर हो चुकी है

तथा अपने समस्त देशवासियों की समृद्धि एवं सुख के लिये उसका परिष्कार करना आवश्यक हो गया है। अतः हमें पारस्परिक सहयोग एवं सबके लिये समान अवसर के ऊपर आधारित वर्ग विहीन समाज की स्थापना का लक्ष्य रखकर आगे बढ़ना है। इन पंक्तियों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने से इतना तो अवश्य ही स्पष्ट हो जाता है कि नेहरू जी की दृष्टि में भी भारतीय समाज की विपन्नता तथा विषमता कौंधती रहती थी। वह भी समाज में व्याप्त शोषण एवं आर्थिक विषमता को जड़ मूल से विनष्ट करना चाहते थे। उनकी दृष्टि से भी राष्ट्रीय एकता का यह बाधक तत्व ओझल नहीं था। यों हिन्दू समाज का आंतरिक विरोध भी राष्ट्रीय एकता की छोटी समस्या नहीं है। इस समाज के अन्दर अनेक प्रकार का आस्थाये, पंथ एवं जातियाँ उपजातियाँ हैं। ये सभी विघटनकारी प्रक्रिया को तीव्रता प्रदान करती हैं। विशेषकर स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त इन विघटनकारी प्रवृत्तियों ने अपने सिर उठाये। इन्हें यदि अबाध छोड़ा गया तो राष्ट्रीय एकता के उद्देश्य की प्राप्ति सर्वथा अपूर्ण हो रह जायेगी। उदारहण के लिये एक आयोध्या में ही दर्जनों पंथ और आखड़े हैं तथा उनके आपसी वैमनस्य आये दिन उीरते ही रहते हैं। काशी, पुरी, हरिद्वार आदि स्थानों में भी इन आंतरिक तनावों को हिंसक रूप लेते देखा जा सकता है। अलग-अलग झंडे देखकर तो इस समाज के आंतरिक खोखलेपन का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। इनके अतिरिक्त जातियों एवं उपजातियों के वैमनस्य का तो कहना ही क्या।

राष्ट्र की तत्कालीन स्थिति पर प्रकाश डालते हुये स्वं प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भारतीय उप महाद्वीप को कमजोर बनाने के विदेशी शङ्कित की ओर भी स्पष्ट संकेत किया, परन्तु विभाजन के बाद वे (विदेशी) ऐसा नहीं कर सकते। इसलिये जो शक्तियाँ इस उप महाद्वीप को कमजोर बनाये रखना चाहती हैं। उनका प्रयास है कि इस उप महाद्वीप के विभिन्न भागों में यह संघर्ष चलता रहे ताकि हम इस प्रकार के झगड़ों में और ज्यादा उलझे रहें और अपनी मूल समस्याओं को न सुलझा पायें और अपने को शक्तिशाली न बना पायें। यहां भारत की आंतरिक विघटनकारी तत्वों के अतिरिक्त बाह्य विभाजक शक्तियों की ओर भी स्पष्ट संकेत है। आज भारत के अन्दर तथा बाहर ये बाह्य शक्तियाँ अत्यधिक सक्रिय हैं।

भारत तथा भारतीय उप महाद्वीप के अन्य दो देश (पाकिस्तान तथा बंगलादेश) इन्हीं शक्तियों के सक्रिय होने के कारण शांति, समृद्धि, प्रगति तथा विकास के पथ पर निर्विघ्न होकर अग्रसर नहीं हो पा रहे हैं। यह स्थिति राष्ट्रीय एकता के लिये भी निश्चय ही घातक एवं चिंत्य है।

इतना तो स्पष्ट है कि आज हमारे देश में राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता सर्वोपरि है। इसके अभाव में हम बाह्य एवं आंतरिक विघटनकारी शक्तियों का सामना करने में सर्वथा असमर्थ रहेंगे। वस्तुतः राष्ट्रीय एकता का उद्देश्य राष्ट्रीय शक्ति को बढ़ाना तथा राष्ट्र के पौरुष को मांसल बनाना होता है। इस सन्दर्भ में भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व. इन्दिरा गांधी के ये शब्द बड़े ही उपयुक्त हैं। एकता किसी उद्देश्य के लिये होती है आप केवल एकता के लिये एकता नहीं करते। आपको देश मजबूत बनाने के लिये एकता करनी होती है। देश को नीचे की ओर ले जाने, नीचता दिखाने, क्षुद्रता का प्रदर्शन करने तथा राजनीतिक सूझबूझ की कमी दिखाने के लिये एकता नहीं की जाती।

आज भारत में सर्वाधिक प्रबल एवं विनाशकारी विघटक तत्व हमारे समाज में व्याप्त आर्थिक असमानता है। यह धुन की तरह हमारी राष्ट्रीय जीवनी शक्ति एवं एकता को खाती जा रही है वर्तमान महंगाई, दोषपूर्ण वितरण व्यवस्था, अपर्याप्त खाद्य आपूर्ति तथा जन जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार ने तो आर्थिक असमानता की खाई और चौड़ी एवं गहरी कर दी है।

भारत में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय है 645.4 (रूपये)। विश्लेषण करने पर जन साधारण की प्रति व्यक्ति आय इससे प्रायः आधी रह जाती है राष्ट्रीय स्तर पर प्रति व्यक्ति आय में तो दस प्रतिशत (10 प्रतिशत) उच्च आय वाले व्यक्ति भी शामिल है। स्व. डा० राममनोहर लोहिया ने तो भारतीय संसद में अपने भाषण के क्रम में स्पष्ट शब्दों में कहा था कि भारतीय मजदूर किसान की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन आय (इस सदी के छठे दशक में) मात्र साढ़े तीन आने है। आज कई दशक बीत जाने तथा छः पंचवर्षीय विकास योजनाओं की कार्यविधि के बाद भी स्थिति अपेक्षित रूप से नहीं सुधर पाई है। यह तथ्य भारतीय जन समुदाय में व्याप्त आर्थिक विपन्नता तथा असमानता को ही प्रमाणित करता है।

आर्थिक विपन्नता एवं असमानता के फलस्वरूप आज सारे देश में अंशाति एवं वैमनस्य व्याप्त हो गया है। राष्ट्रीय एकता इसका शिकार बन गयी। फिर, स्वतंत्र भारत में इस आर्थिक असमानता की वृद्धि ही हुई। क्षुधित एवं पीड़ित बहुसंख्य जन समुदाय से राष्ट्र प्रेम एवं राष्ट्रीय एकता की आशा करना व्यर्थ ही होगा। ऐसी स्थिति में उसका विदेशी प्रलोभनों में फँस जाना सहज सम्भव होगा। स्पष्ट है कि वर्तमान स्थिति में राष्ट्रीय एकता की सबसे बड़ी समस्या आर्थिक असमानता तथा शोषण है।

अपने देश में राष्ट्रीय एकता की समस्या की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करने के क्रम में यह स्पष्ट होता है कि इस समस्या के मूल में भारतीय जन समुदाय की दारुण अशिक्षा है। भारतीय जन जीवन में अशिक्षा की स्थिति का इसी से अनुमान

लगाया जा सकता है कि सन् 1981 ई. की जनगणना से उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार साक्षरों का प्रतिशत मात्र 36.23 है। इनमें महिलाओं की स्थिति तो और भी दयनीय है। उनमें साक्षरता का प्रतिशत मात्र 24.82 है। यह प्रतिशत तो मात्र साक्षरता का है, मानक शिक्षा का प्रतिशत यदि 10 प्रतिशत भी आ जाये तो गनीमत है। इस भयाकन स्थिति में यदि विघटनकारी शक्तियों भारतीय जन जीवन पर हावी है तो आश्चर्य ही क्या? आशिक्षा के कारण ही सामान्य जनता भ्रमण प्रचार एवं विघटनकारी शक्तियों के प्रभाव में आ जाती है। अशिक्षित जन मानस में विचार एवं विवेक विकसित नहीं हो पाती और फलस्वरूप निहित जन मानस में विचार एवं विवेक विकसित नहीं हो पाती और फलस्वरूप निहित स्वार्थ वाले उसे गलत मार्ग पर प्रवृत्त करने में सफल हो जाते हैं। आर्थिक असमानता, शोषण तथा सामाजिक अन्याय के लिये आधार भी अशिक्षा ही तैयार करती है। भारतीय संविधान के 45 वें अनुच्छेद में 10 वर्षों के अन्दर निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की स्पष्ट व्यवस्था है। किन्तु 40 वर्षों के उपरान्त भी पवित्र राष्ट्रीय संकल्प अपने पूरे रूप में लागू नहीं हो सका। सन् 1981 तक 6 से 11 वर्ष वर्ग के केवल 87.5/ तथा 11 से 14 वर्ष वर्ग के मात्र 43.9/ बच्चे ही प्राथमिक शालाओं में लाये जा सके। स्पष्ट है कि हम अपने शत प्रतिशत के घोषित राष्ट्रीय लक्ष्य से बहुत पीछे हैं। इस स्थिति में राष्ट्रीय एकता की स्थायी भावना का विकास अत्यधिक कठिन है।

आंतरिक घटकों में सांप्रदायिकता, आर्थिक असमानता, भाषावाद, क्षेत्रीय विशमता, संकुचित क्षेत्रीयता, क्षुद्र राजनीति, बिलगाव भावना, ओछी जातीयता, शोषण तथा अशिक्षा प्रमुख हैं। ये सभी ऐसी विघटनकारी तत्व हैं जो राष्ट्रीय जीवन में एकता तथा शक्ति का संचार होने ही नहीं देते। हां, इतना अवश्य है कि इनमें से कभी कोई घटक प्रबल हो जाता है तो कभी कोई।

संप्रति सांप्रदायिकता, भाषावाद, जातीयता, आर्थिक विशमता, विपन्नता, शोषण, अशिक्षा, क्षुद्र राजनीति तथा क्षेत्रीयता के घटक अपनी पूरी विकरालता के साथ राष्ट्रीय जीवन पर छाये हुये हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर इस घातक समस्या से निपटने की दिशा में प्रयत्न अवश्य किये जा रहे हैं, किन्तु समस्या की भयानकता अभी भी अपनी पूरी जटिलता के साथ बनी हुयी है।

सन्दर्भ

1. साहित्य-परिचय (जनवरी-फरवरी, 1970) एस.एस. माथुर, पृ. 91
2. नेशनल इंटिग्रेशन (एम.एम. चौधरी का भाषण) रफीक खान, पृ. 06

3. नेशनल इंटिग्रेशन (शोभना राणाडे का निबंध) रफीक खान, पृ. 168
5. शिमला समझौता का महत्व-ऑल इंडिया सांप्रदायिक विरोधी कमेटी द्वारा प्रकाशित पुस्तक, पृ. 05
6. इंडिया 1974 भारत सरकार प्रकाशन, पृ. 133

डॉ० एम०के० सिंह

रीडर, रक्षा-अध्ययन विभाग

रक्षा-अध्ययन

बरेली कालेज, बरेली

सत्यवीर सिंह

शोध छात्र

बरेली कालेज, बरेली

सारांश

निराला—कृत वर दे, वीणावादिनी वर दे ! नवोन्मेष की एक अप्रतिम छायावादी कविता है। इसमें निराला की विशिष्ट स्वच्छंतावादी दृष्टि की प्रमुख भूमिका है; क्योंकि इसमें एक पौराणिक देवी सरस्वती से बिल्कुल नयी संस्कृति के सृजन की अभ्यर्थना की गयी है। नयी संस्कृति के सृजन से अभिप्राय रुढ़ि—मुक्त नये जीवन—मूल्यों को सार्वभौम स्वरूप प्रदान करना है। यह नव्यता तब तक सम्भव नहीं; जबतक प्रिय और अमर स्वातंत्र्य—कामना पूरे भारत में न भर जाये और जबतक समस्त अंधकार को नष्ट कर प्रकाश पूरे विश्व को ज्योतित न कर दे। कवि कि यह प्रार्थना नवोन्मेष से भरी हुई है और धायावाद में अन्यत्र दुर्लभ है।

विषय—प्रतिपादन : आधुनिक हिन्दी कविता सुप्रसिद्ध छायावादी कवि महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी निराला—कृत 'वर दे, वीणावादिनी वर दे !' 'गीतिका' में संकलित है। इसमें कवि निराला ने पौराणिक देवी सरस्वती से श्रद्धापूर्वक प्रार्थना की है, जो सामान्य ढंग की नहीं है, बल्कि बिल्कुल भिन्न ढंग की है। यहाँ एक तरफ कवि सनातन हिन्दू धर्म में समादृत वाग्देवी को नारी की सर्वोत्तम आराध्या और शक्ति—सम्पन्न 'जननि'² यानी माँ के परम्परित रूप में सम्बोधित किया है; तो दूसरी तरफ इन्हीं से अमरत्व से भरी हुई ऐसी नव्य स्वतंत्रता की याचना करता है, जो केवल भारत के लिए ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व के लिए हो। कविता के अगले छंद में 'जगमग जग' कर देने की स्पष्ट कामना है; जो खासकर कथ्य की नव्यता के कारण सार्वभौम और धर्म की परिधि विशेष से परे हो जाती है।

कहना न होगा, हिन्दी का छायावाद स्वच्छंदतावाद की परिणति है और स्वच्छंदतावादी कवियों ने प्रायः पौराणिक गाथा अथवा मिथ से नये अर्थों की खोज की है। यहाँ पौराणिक देवी या मिथ वही है, परंतु क्रांतिकारी कवि निराला ने यहाँ विलक्षण स्वच्छंदतावाद के तहत देवी सरस्वती से नव्य प्रकृति की प्रार्थना की है। यहाँ रुढ़ि—स्तुतिगान नहीं; आधुनिकता—विश्वव्यापी —चेतना है। विलक्षणता यह भी कि कवि देवी सरस्वती के प्रति श्रद्धावनत भी है और उसके मूल स्वरूप के विरुद्ध कोई स्वर नहीं है। इसकी खासियत यह कि जब कवि 'वीणावादिनी' से वर माँगता है तो क्रांतिकारी हो जाता है³ 'प्रिय स्वतंत्र रव, अमृत मंत्र नव' ही नहीं मेघ की गुरु—गम्भीर गर्जना की भी माँग करता है। इस प्रकार, यह अभ्यर्थना परम्परित स्तुतिगान न होकर नवीन संचेतना की क्रांति—संवाहिका हो जाती है। अस्तु, यह मिथ की पुनर्रचना से बनी हुई नव्य चेतना की कविता है!

यह कम आश्चर्यजनक नहीं कि कवि यहाँ क्रांतिकारी होकर भी माँ सरस्वती के प्रकृत रूप (ब्रह्माधिष्ठात्री देवी) को जस—का—तस छोड़ देता है; लेकिन अपने काम्य नवीन मूल्य के अनुसंधान में अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय देता है।

इस अभ्यर्थना के संदर्भ में क्रांतिकारिता और परम्परित मान्यता के भीतर अन्तर्विरोध तो है; पर एक समावेशी अनुशासन में अनुस्यूत भी। यह निराला के स्वच्छंदतावाद की अनुशासनात्मक स्थिति है; कहीं वे ऐसे अनुशासन से भिन्न स्वच्छंदतावाद का परिचय देते हैं; जैसे दृ 'कुकुरमुत्ता' कविता में।

कविता जैसे आगे बढ़ती है कवि 'जननी' से प्रार्थना करता है कि समस्त मानव हृदय में परित्याप्त अंधकार के समस्त बन्धन—स्तरों को छिन्न—भिन्न कर उसमें ज्योति की ऐसी निर्झरिणी मनुष्य के मन में बसे सारे कलुष और पाप के तम को मिटा कर प्रकाश—ही—प्रकाश भर दे। कवि की यह ज्योतिष्कामना न केवल भारत के लिए है; बल्कि पूरे विश्व के लिए है।

कविता का अंतिम छंद इस कविता की नाभि है: केन्द्र—बिन्दु है। यहाँ साहित्य (रुढ़ और नवीन), संगीत(शास्त्रीय और सुगम), राजनीति (भारत और विश्व), प्रकृति (सम्पूर्ण) के पारिभाषिक अथवा 'नव'—युक्त विशिष्ट अर्थवान शब्दों — गति, लय, छंद, कंठ, जलद—मंद—रव, नभ, विहग—वृंद तथा नव—पर—नव स्वर— के माध्यम से विश्व में नव्यता दृ प्रसार की जो उत्कट अभिलाषा अभिव्यक्त की गयी है; वह हिन्दी में आधुनिकतावाद का बीजवपन ही सही, महाप्रस्थान से कम नहीं है। यह नव्यता—प्रसार वस्तुतः रुढ़ियों के विरुद्ध नवीन गतिशील मूल्यों का महाप्रस्थान⁴ है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में यह लक्षित किया था कि निराला ने कविता का संगीत के साथ निकटतम सम्बन्ध स्थापित किया। कहना न होगा कि इस कविता की सांगीतिकता व नाद—सौन्दर्य केवल संगीतात्मक चारुता व्युत्पन्न करने के लिए नहीं है; बल्कि सूक्ष्म—से—सूक्ष्म अर्थ—विन्यास के लिए भी है।⁵ शब्द—संयोजन, अर्थ—व्यंजना में सांगीतिक सन्निवेश अद्वितीय है।

—2—

यह भी, कि यह कविता भारत के स्वतंत्रता—संग्राम के दौर में लिखी गयी कविता है, जिसका मूल मंत्र —'प्रिय स्वतंत्र रव अमृत मंत्र नव' है। इसमें जो 'स्वतंत्र रव' है, वह राजनीतिक स्वतंत्रता के अतिरिक्त मानव जीवन की उस गहन और व्यापक

स्वतंत्रता की ध्वनि है, जो स्वयं के जीवन-तंत्र की निर्मिति को आत्मसात् किये हुए है। इस प्रकार, इसमें उल्लिखित अमरत्व वह नहीं है, जहाँ जीव के ब्रह्म में लीन होने से मोक्ष यानी जन्म-मृत्यु के बंधन से मुक्त होकर अमर होने का है; बल्कि यह अमरता विश्वव्यापी स्वतंत्र-कामना को अमरत्व प्रदान करने की है।

निष्कर्ष: इस प्रकार, यह कविता नयी संस्कृति — रचना और नवोन्मेष — की अप्रतिम कविता है। पौराणिक देवी से अभिनव सृष्टि की प्रार्थना विच्छेदनवाद/विसंरचनावाद की दृष्टि से एक ख्यात अर्थ के आस्थगन और दूसरे नवीन अर्थ की अभिव्यंजना है। निस्संदेह, यह कविता स्वच्छंदतावादी कविता है, परंतु इसमें भी नव्यता है, आधुनिकता है। कवि की प्रार्थना किसी भी धर्म की परिधि से घिरी हुई नहीं है और यही इसकी नयी संस्कृति है, नवोन्मेष है।

संदर्भ—संकेत :

1. सं० डॉ. रामविलास शर्मा, — राग—निराग, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गाँधी मार्ग, प्रयागराज, लोकभारती संस्करण — 2022, पृ.सं. दृ 74, मूल्य दृ 60/—
2. डॉ.बच्चन सिंह, क्रांतिकारी कवि निराला, —‘प्रार्थना—प्रधान समस्त गीतों में माँ या जननि को सम्बोधित किया गया है ।.... नवीनता का उपासक कवि सर्वत्र नूतनता का स्वागत करता है ।.....कवि स्वदेश में ही स्वातंत्र्य—रव फैलने की आकांक्षा नहीं करता अपितु सम्पूर्ण विश्व को ज्योतिपूर्ण देखने की अभिलाषा .. है । ... कवि परम्परा को छोड़कर किसी नये मार्ग का अनुसंधान करने जा रहा है ।’ ——— पाँचवाँ संस्करण: 2003 ई., विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी, पृ. सं. 58
3. सं० डॉ. राम विलास शर्मा, — राग—विराग, लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गाँधी मार्ग, प्रयागराज, लोकभारती संस्करण दृ 2022, पृ. सं. दृ 74, मूल्य — 60/—
4. डॉ. रामखेलावन पांडेय, — निराला प्रत्येक क्षेत्र में नए मार्ग बनाते हुए, किसी निर्मित पथ के पथचारी नहीं अतः सर्वत्र एक ताजगी, एक नवीनता और एक विलक्षण स्फूर्ति मिलती है ।
निराला में नाद—सौन्दर्य की अंतरंगता है, शब्दों की पकड़ विलक्षण है, अर्थ—सूक्ष्मता का अंतरंग दर्शन है । हिन्दी साहित्य का नया इतिहास, पृ.सं. 229, अनुपम प्रकाशन, पटना —1968
5. उपर्युक्त, 4

डॉ. कपिल देव पांडेय

पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
चुनार, मीरजापुर, उत्तर प्रदेश

सारांश

भारत-भारती हिन्दी साहित्य की श्रेष्ठ रचना है। मैथिलीशरण गुप्त तत्कालीन समय की परिस्थितियों से बहुत अधिक निराश थे लोगों में देश भक्ति की धार मंद हो चुकी थी लोग स्वयं को निर्बल समझ कर स्वतंत्रता की आश खोते नजर आ रहे थे। गुप्त जी इन परिस्थितियों से निकलकर देशवासियों को दृढ़ता देते हुए देश की स्वतंत्रता के प्रति प्रोत्साहन देना चाहते थे। पर भारतीय लोग बहुत सी भ्रांतियों का शिकार हो चुके थे। गुप्त जी इन भ्रांतियों को दूर करके स्वदेश प्रेम से लोगों को ओतप्रोत करना चाहते थे। भारत की पूर्व स्थिति की वर्तमान स्थिति से तुलना करते हुए देशवासियों को बताते हैं की हम क्या थे और क्या हो गए। आज हम जितने निर्बल हैं उतने निर्बल हम कभी नहीं थे। हमें अपने अतीत को पहचानना पड़ेगा और उससे सीखना होगा तब जाकर हमारी निर्बलता दूर होगी। अगर ऐसा नहीं हुआ तो आज नहीं तो कल हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। “एक वह समय था कि यह देश विद्या, कला-कौशल और सभ्यता में संसार का शिरोमणि था और एक यह समय है कि इन्हीं बातों का इसमें शोचनीय अभाव हो गया है।”⁰¹ विद्या, कला-कौशल एवं सभ्यता में सर्वश्रेष्ठ देश आज क्यों पिछड़ रहा है।

इस रचना के माध्यम वर्तमान समय की समस्याओं का वर्णन किया गया है। इस कालजयी रचना में बहुत-सी वर्तमान समस्याओं पर प्रकाश डाला गया पर शोध पत्र में धर्म, उपदेशक, तीर्थ, मन्दिर, महन्त एवं साधु-संतो में फैली बुराईयों पर प्रकाश डाला गया है। इन सब में हम अन्य देश एवं लोगों से श्रेष्ठ थे पर आज इनमें बराईयों फैल जाने के कारण हम अपनी दिशा से भट गये इस दशा से हमें बाहर आना होगा तभी हमारा समाज उन्नति कर पाएगा।

हमारा सनातन धर्म सबसे पुराना और लोगों को मार्ग दिखाने वाला था पर आज इसमें पाखंडों एवं रूढ़ियों का बोल-बाल है। इस सब को हमें समाप्त करना होगा तभी हम फिर से श्रेष्ठ बन पाएंगे।

“था धर्म प्राण प्रसिद्ध भारत बन रहा अब भी वही;

पर प्राण के बदले गले में आज धार्मिकता रही।

धर्मोपदेश सभा-भवन की भित्ति में टकरा रहा;

आडम्बरों को देखकर आकाश भी चकरा रहा!⁰²

हमारे धर्म का देशों-विदेशों में दूर-दूर तक नाम था पर उसमें आज पाखंड एवं आडम्बरों ने अपना स्थान बना लिया है। इसी कारण आज हमारे धर्म के उपदेश केवल हमारे देश की दिवारों से टकरा रहे हैं और उस पर आज कोई भी विश्वास करने को तैयार नहीं है इसमें हमें सुधार करना ही होगा।

हिंदू धर्म ने संसार में मानवता को स्थापित करके अपना परचम

पूरे पृथ्वी पर फैला दिया था। सभी उसमें अपना भविष्य देखते थे और उसके पवित्र विधान पर चल कर अपनी तरक्की स्थापित करना चाहते थे। पर आज उससे बच कर चलना चाहते हैं।

“हिन्दू सनातन धर्म के ऐसे पवित्र विधान हैं—

संसार में सबके लिए जो मान्य एक समान हैं।

धृति, शान्ति, शोच, दया, क्षमा, शम, दम, अहिंसा सत्यता,

पर हाय! इनमें से किसी का आज हममें है पता?”⁰³

पृथ्वी पर शान्ति, दया, क्षमा, अहिंसा एवं सत्य स्थापित करने वाला धर्म आज इसमें यह कुछ भी नहीं रहा है। ऐसा क्यों हुआ इस पर विचार करना होगा और भ्रांतियों को दूर करते हुए। फिर से अवगुणों के स्थान पर गुणों को स्थापित करना होगा।

हमारे देश में उपदेशको का विशेष स्थान था। इनका जीवन अति सरल था और यह जो भी उपदेश देते थे पहले उसे अपने जीवन में चरित्रार्थ करते थे फिर वह सब अन्य लोगों को बताते थे लेकिन अब ऐसा नहीं है।

“हैं वेश तक उनका विदेशी और यह उपदेश है—

“त्यागो विदेशी वस्तुएँ, पहला यही उद्देश्य है।।”

लो, पीट दो सब तालियाँ, उपदेश है कैसा खरा,

उपदेशको! पर आप अपनी ओर तो देखो जरा!।।”⁰⁴

अब तो ये उपदेशक दोगले चरित्र के हो गए हैं। ये अपने जीवन में तो भोग-वासना को महत्व देते हैं, विदेशी वस्तुओं का प्रयोग करते हैं पर अन्य लोगों को इनसे दूर रहने को कहते हैं। यह सच्चे उपदेशक कभी नहीं हो सकते और नहीं ये देश का हितकर सकते हैं।

तीर्थ एवं तीर्थ-पण्डों का हमारे सनातन धर्म में विशेष महत्व रहा है। जब सनातन धर्म में किसी की मृत्यु होती है तो मृतक व्यक्ति की अस्तियों को तीर्थ स्थल पर बहाया जाता है और इस कार्य में ये पण्डें विशेष योगदान देते हैं। जब हम तीर्थ करने जाते हैं तो भी ये पण्डें हमें सरल जीवन व्यक्त करने और दान देने का उपदेश देते हैं और तीर्थ करना सफल हो जाता था। पर अब ये सद्वृत्ति को त्याग चुके हैं।

“वे तीर्थ-पण्डें हैं जिन्होंने स्वर्ग का ठेका लिया :

हैं निन्द्य, कर्म न एक ऐसा हो न जो उनका किया।

वे हैं अविद्या के पुरोहित, अविधि के आचार्य हैं।

लड़ना-झगड़ना और अड़ना मुख्य उनके कार्य हैं।।”⁰⁵

अब इन पण्डों ने इस कार्य को व्यवसाय बना लिया है। अब ये केवल पैसों के लालच में ये सब कार्य करते हैं। ये पैसों के लिए यजमानों से लड़ाई-झगड़ा करते हैं। इन्हें मुँह मांगे पैसे चाहिए तभी ये कार्य करते हैं। और कहते हैं, हम से ही पूजा-पाठ एवं स्तुति करवाओंगे तो सीधा स्वर्ग का मार्ग मिलेगा नहीं तो ऐसा नहीं होगा। इसके पीछे

लालच बहुत बड़ा कारण है।

तीर्थ क्षेत्रों पर पहले परमात्मा को याद किया जाता था और वहां पहुंच कर हम पर्ण लेते थे की हम बुरे कार्य आज से बंद कर देंगे क्योंकि तीर्थ स्थलों हमें सत्य-संगति मिलती थी उसी के आधार पर मानव के जीवन में परिवर्तन अवश्य होता था। पर आज इन तीर्थ स्थलों पर भी बुराइयों ने अपना घर कर लिया है।

“आरम्भ से ही जो हमारे मुख्य धर्म-क्षेत्र हैं—

अब देखकर उनकी दशा आँसू बहाते नेत्र है।

हा। गूढ़ तत्वों का पता ऋषि-मुनि लगाते थे जहाँ—

सबसे अधिक अविचार का विस्तार है सम्प्रति वहाँ।”⁰⁶

सनातन धर्म में सबसे पवित्र स्थल तीर्थ को माना जाता है। वहाँ पर प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन-काल में एक बार अवश्य जाना चाहता है। क्योंकि वहाँ जाकर मनुष्य के विचारों और मन को शुद्ध होने का अवसर मिलता है। लेकिन आज के समय में भी तीर्थ स्थलों पर व्यभिचार फैला हुआ है। जहाँ ऋषि-मुनि अपने विचारों द्वारा समाज में शुद्धता स्थापित करते थे। पर आज यह सब समाप्त हो चुका है। न तो उपदेश देने वाले ऋषि-मुनि ही रहे और न शुद्ध विचार प्राप्त करने वाले मनुष्य रहे हैं। जिन तीर्थ-स्थलों के दर्शन मात्र से मन-मस्तिष्क शुद्ध हो जाते थे आज उन्हें देखकर रोना आता है।

सनातन धर्म में तीर्थ स्थलों के साथ-साथ मन्दिर का भी विशेष महत्व रहा है। प्रत्येक हिन्दू अपने दिन का आरम्भ मन्दिर में ईश्वर की पूजा करके करते थे। और महन्त भी ईश्वर पूजा का महत्व बताते थे एवं मानवता का ज्ञान देते थे। लोग उस ज्ञान का प्रयोग करके अपना और अपने आस-पास के लोगों का जीवन सफल बनाते थे। पर आज ये अंशभव नजर नहीं आता है प्रत्येक व्यक्ति मन्दिर में तभी आता जब उसे या तो कुछ प्राप्त करना हो या फिर वो संकट में हो। अन्यथा कोई भी ईश्वर का स्मरण नहीं करता है। ऐसे हम कब से हो गए।

“हा! पुण्य के भण्डार में हैं भर रहीं अंध-राशियाँ

है देव आप महन्त जी ही, देवियाँ हैं दासियाँ!

तन, मन और धन भक्तजन अर्पण किया करते वहाँ—

वे भण्ड साधु सु-कर्म का अर्पण किया करते वहाँ!!”⁰⁷

अब मन्दिरों में ईश्वर का स्थान तृष्णा एवं भोग-विलास ने ले लिया है। महन्त जो ईश्वर के भक्त होते थे वो अब स्वयं ईश्वर बन बैठे हैं और स्वयं को ईश्वर की दासियाँ कहने वाली स्त्रियाँ अब देवी बन बैठी हैं। ये स्वयं को ईश्वर से भी उच्चा स्थापित कर चुके हैं। सु-कर्म के स्थान पर कुकर्म होने लगे हैं। मन्दिर में ईश्वर के भजन होते थे वहाँ जाकर मनुष्य भजन सुनते थे, ईश्वर में ध्यान लगाते थे एवं उपदेश सुन कर मन शुद्ध करते थे। अब वहाँ

अश्लीलता स्थापित हो गई वहाँ अश्लील भजन गाये जाते हैं और वहाँ अब अश्लीलता फैलाई जा रही है।

“अब मन्दिरों में रामजनियों के बिना चलता नहीं ;

अश्लील गीतों के बिना वह भक्ति-फल फलता नहीं ;

”⁰⁸

बहुत से कृष्ण भक्त आज के समय में रासलीला के माध्यम से अश्लीलता फैला रहे हैं, इनका मुख्य उद्देश्य होता है अपनी तृप्ति पूर्ण करना। महन्त स्वयं तो कृष्ण का रूप धारण कर लेते हैं और दासियों को गोपी बना कर रासलीला करते हैं। ऐसी भक्ति को अश्लीलता की श्रेणी में ही रखा जाएगा।

हमारा देश साधु-संतों का देश है। भारत में इनका बहुत सम्मान है, पर आज के समय में संत शुद्ध नहीं रहे हैं। इस पावन भूमि पर कबीरदास, रविदास एवं नानक जैसे संत पैदा हुए और इन्होंने हमेशा लोगों को श्रेष्ठ मार्ग दिखाया था। रुढ़ि, आड़म्बरों को समाप्त करने का प्रयास किया पर ये सब आज के समय में स्वप्न मात्र हैं।

“जो कामिनी-कंचन न छूटा फिर विराग रहा कहाँ?

पर चिह्न जो वैराग्य का अब है जटाओं में यहाँ!

भूखों मरे कि जटा रखाकर साधु कहलाने लगे,

चिमटा लिया, ‘भस्मी रमायी, माँगने खाने लगे!’”⁰⁹

आज के समय के साधु माया और स्त्री के मोह में फँसे हुए हैं और स्वयं को साधु कहते हैं। बाल बड़े-बड़े कर लेते हैं, भस्म लगा लेते हैं शरीर पर और चिमटा-कमंडल उठा कर मांग के खाने लग जाते हैं। शराब का सेवन करते हैं और घर छोड़ आवारा घूमते रहते हैं। यह साधु के नहीं राक्षसों के गुण हैं। भक्ति काल के संतों ने शोषित जनता को संभाल कर उन्हें परिस्थितियों से भागना नहीं उनसे संघर्ष करना सिखाया था और जनता के मृत हौसले को जीवित कर दिया था और जनता साथ मिल कर शोषकों से टक्कर लेते हुए समाज और संस्कृति को स्थापित रखा था इनको मिटने नहीं दिया था।

“यदि ये हमारे साधु ही कर्तव्य अपना पालते—

तो देश का बेड़ा कभी का पार ये कर डालते।

पर हाय! इनमें ज्ञान तो बस राम का ही नाम है

दम की चिलम में लौ उठाना मुख्य इनका काम है।”¹⁰

साधु-संतों का प्रथम कर्तव्य है समाज में फैले रुढ़ि एवं आडम्बरों को समाप्त करके समाज का मार्ग प्रशस्त करना पर तत्कालीन एवं आज के समय के साधु-संत तो केवल राम का नाम लेते हैं और सुल्फे-गांजे की चिलम भर कर पीते रहते हैं। इन्हें समाज से कोई मतलब नहीं ये बस नशे में धुत रहते हैं।

निष्कर्ष— भारत वर्ष सनातन धर्म को मानने वाला देश है। इस धर्म ने सम्पूर्ण पृथ्वी का समय-समय पर मार्ग प्रशस्त किया था। पर आज के समय में इस में रूढ़ि, आडम्बरों एवं दिखावे का महत्व रह गया है। धर्म हमें अच्छी शिक्षा देता था। तीर्थ एवं मन्दिर मनुष्य का आचरण शुद्ध करते थे। उपदेशक, महन्त, साधु-संत हमेशा मानव को बुरा मार्ग छोड़कर शुद्ध मार्ग की ओर अग्रेशित करते थे। पर अब ये सभी अशुद्ध, दुराचारी एवं दोहरे आचरण के हो गए हैं तो समाज का पतन संभव है। गुप्त जी ने इन सब की शुद्धि पर बल दिया है जब ये शुद्ध एवं श्रेष्ठ हो जाएंगे तो प्रत्येक मनुष्य अपना कर्तव्य समझ कर समाज के लिए कार्य करेगा तब ही हम श्रेष्ठ समाज की स्थापना करते हुए भारत को स्वतंत्र करवा सकेंगे और हमारे देश में हमारा स्वयं का शासन हो जाएगा।

1. मैथिलीशरण गुप्त, भारत-भरती, प्रस्तावना से
2. वही, पृ० 109
3. वही, पृ० 110
4. वही, पृ० 108
5. वही, पृ० 111
6. वही, पृ० 110
7. वही, पृ० 111
8. वही, पृ० 111
9. वही, पृ० 112
10. वही, पृ० 112

देवेन्द्र कुमार
नजदीक पुराना बस स्टैण्ड,
कुम्हारों का मोहल्ला,
सिविल लाइन के पीछे भिवानी
127021(हरियाणा)
सम्पर्क सूत्र-9068859229
neh.devender309@gmail.com

सारांश

21वीं सदी में तकनीकी के साथ-साथ और साहित्य में भी बदलाव देखने को मिल रहा है। यह समय भूमंडलीकरण का है, जिसमें पूरा विश्व सिमट कर एक हो गया है। प्रौद्योगिकी और तकनीकी की अभूतपूर्वी प्रगति तथा क्रांति के देश में हुए बदलाव ने सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिवेश को प्रभावित किया है, जिसके कारण समाज और संस्कृति में बहुत से परिवर्तन आ गये हैं। इसने मानवीय मूल्यों से अलगाव की स्थिति उत्पन्न कर दी। पुराने मूल्य खंडित हो रहे हैं, और नगे विचार अपनी जगह बना रहे हैं। नये युग तथा नये समाज को साकार करने के नाम पर पूँजीवाद की जटिल व्यवस्था ने सांस्कृतिक साम्राज्यवाद की स्थिति उत्पन्न की, जिसने सांस्कृतिक विस्थापन को बढ़ावा दिया।

‘विस्थापन’ का अर्थ ऐसे तो अपने मूल स्थान से अन्यत्र जाकर निवास करना है, लेकिन विभिन्न शब्दकोशों ने विस्थापन को अपने स्तर से परिभाषित करने की कोशिश की है। हिन्दी साहित्य के मानक शब्दकोश के अनुसार बलपूर्वक किसी स्थान से हटाना ही ‘विस्थापन’ है। ‘विस्थापन’ एक व्यक्ति की समूल संवेदना, जगह और अपने मूल से पूरी तरह से अलग होने की प्रक्रिया है। एक व्यक्ति रोजगार के लिए अपनी जमीन, अपना गाँव छोड़कर शहर की ओर भागता है, उसे पलायन कहा जा सकता है, जो जीवन की जरूरतों और आर्थिक तंगी के कारण उत्पन्न होता है। ‘पलायन’ कहें या ‘विस्थापन’ दोनों में व्यक्ति अपनी जमीन छोड़कर जाता है और यह प्रक्रिया कभी भी सहर्ष नहीं होती है।

21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में ग्रामीण जीवन की समस्याओं में मानविक विटन, उत्पीड़न तथा अपनी जमीन से अलग होने का दंश आदि को उपन्यासकारों ने बखूबी दर्शाने का प्रयास किया है। इस संदर्भ में मैत्रेयी पुष्पा, रामधारी सिंह दिवाकर, संजीव कुमार कमल, नासिरा शर्मा, शिवमूर्ति, मधु कांकरिया, सच्चिदानंद चतुर्वेदी, रणेन्द्र, काशीनाथ सिंह तथा हुआ माजी आदि अनेक उपन्यासकारों ने अपनी लेखनी के बरिने 21वाँ दो उपन्यासों में ग्रामा-जीवन की अनेक समस्याओं को आधार बनाया है।

21वीं सदी में गाँव की संरचना, गुल्म, परम्पराएँ, पारस्परिक सम्बन्ध आदि सबकुछ बदलते नजर आ रहे हैं। आज ग्रामीण-समाज की संस्कृति ऐसे संक्रमण के दौर गुजर रही है, जिसमें बहुत कुछ नष्ट होते दिख रहा है। गाँव में सामूहिकता की भावना, गाँवों को परम्पराएँ, रीति-रिवाज, वेश-भूषा, रहन-सहन आदि सबकुछ संक्रमित हो रही हैं। आज गाँवों के गीतों में अब मिठास वह मिठास नहीं और न ही रिश्तों के बीच सामंजस्य है। ऐसी

स्थिति में ग्रामीण-समाज जो भारत का आधार था, पूरी तरह से टूट रहा है। आज गाँव के किसान शहरों की ओर पलायन करने को विवश हैं। स्पेशल इकोनॉमिक जोन के नाम पर पैदावार वाली मीन को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को बहुत सस्ते दामों पर दिया जा रहा है। खेती में पैदावार बढ़ाने के नाम पर किसानों को हर बार बहुत उच्च स्तर पर बीज खरीदने पड़ रहे हैं, जो जमीन की उर्वरा शक्ति को क्षरित कर रही हैं। यह आयातित बीज अमेरिका आदि विकसित देशों से आ रहे हैं, जिनसे फसलों की पैदावार तो बढ़ रही है, लेकिन जमीन की उर्वरा शक्ति क्षीण होती नजर आ रही है। इन सभी कारणों से किसान आत्महत्या करने पर विवश हो रहे हैं। यह सबकुछ विकास के नाम किया जा रहा है।

समाज में बदलाव होता है तो साहित्य में भी बदलाव निश्चित है। 21वीं सदी का परिदृश्य बदला, गाँव की संरचना बदली, पलायन और विस्थापन की वजह से जो सांस्कृतिक विदूषता आयी, उसे उपन्यासों के माध्यम से इन समस्याओं को गाँव के संदर्भ में चित्रित किया गया। इस सदी के उपन्यासों में विस्थापन, उपभोक्तावादी संस्कृति तथा बाजारवाद आदि इन सभी बिन्दुओं को जोरदार ढंग से उपन्यासकारों ने उठाया है।

उपन्यास को गद्य की प्रमुख विधाओं में सर्वाधिक आधुनिक विधा माना जाता है। हिन्दी उपन्यास को प्राचीन भारतोग कथा-साहित्य को परम्परा का कृषिक विकास माना जाता है, जो सर्वथा अनुचित है, क्योंकि अधिकांश प्राचीन कथा-साहित्य, कुलदास, अली विक घट नाओं से पूर्ण प्रेममूलक तथा उपदेश कृति को भंगिमा से परिषया है। जबकि आधुनिक हिन्दी उपन्यास यथ में लिखित वैयक्तिक दृष्टिकोण, विरसनी गता, स्वाभाविकता और यथार्थपरक स्थितियों पर बल देता है, जो निश्चित रूप से पश्चिमी शिक्षा के सम्पर्क का परिणाम है।

हिन्दी उपन्यास श्परीक्षा गुरु हिन्दी में वस्तु और शिल्प इहें दोनों ही दृष्टियों से उपन्यास- साहित्य की शुरुआत करता है। यद्यपि कि हिन्दी के क्षितिज पर भारतेन्दु के क्रिया- शील होने है पर हिन्दी में भी इसका प्रचलन हुआ, बाद भी इसके हिन्दी उपन्यास का विकास प्रेमचंद के आगमन से हुआ। प्रेमचंद पूर्व काल में हिन्दी उपन्यास पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि लगभग बच्चीस वर्ष तक हिन्दी उपन्यास एकरसता की स्थिति में बड़ा रहा, किन्तु उपन्यास- साहित्य में प्रेमचंद का आविर्भाव एक ऐतिहासिक घटना है। उनके उपन्यासों में अपने युग की ध्वनि स्पष्ट रूप से सुनायी देती है। प्रेमचंद ने हिन्दी उपन्यासों के कलात्मक विकास का मार्ग भी प्रशस्त किया। चरित्र चित्रण, कथोपकथन और भाषा-शैली की दृष्टि से उन्होंने हिंदी उपन्यास को नयी दिशा प्रदान की

प्रेमचंद युगीन हिन्दी उपन्यास विकास के सोपानों पर चढ़ते हुए अनेक युगों को अपने में समेटते हुए आज बुलंदियों को छू रहा है। उपन्यासकारों ने विभिन्न दृष्टिकोण को माध्यम बनाकर अत्यन्त गंभीर विषयों को अलग-अलग कालखंडों में लेखनी बद्ध किया।

भारतीय समाज ग्रामीण लोक-जीवन, लोक-सभ्यता तथा संस्कृति और ग्रामीण कृषिशस्त्र पर सदियों से आधारित है। इसी लिए भारत को 'गाँवों का देश' कहा जाता है। यही खुशहाली, ग्रामीण जीवन की तस्वीर हिन्दी-साहित्य में प्रस्तुत होती रही है।

आज के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन का स्वरूप तथा वैश्वीकरण के कारण बदलता हुआ ग्रामीण जीवन यथार्थ में अंकित है। ग्रामीण किसान-मजदूर, दलित-आदिवासी तथा नारी आदि वर्गों का जीवन-संघर्ष आज के उपन्यासों में दृष्टिगोचर होता है। 21वीं सदी के ग्रामीण समस्याएँ गुरुग रूप से गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी तथा बुनियादी ढाँचे की कमी आदि से सन्नद्ध हैं। ग्रामीण-क्षेत्रों में गरीबी एक प्रमुख समस्या है। आय के स्तर में कमी, खराब पोषण तथा बुनियादी सुविधाओं की घोर कमी की वजह से ग्रामीण गरीबी के जाल में फँसते जा रहे हैं। इसी तरह ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की घोर कमी एक और बड़ी समस्या है। कम साक्षरता दर की वजह से ग्रामीण रोजगार के अवसरों का लाभ उठाने और अपने जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए संघर्ष करते दिखते हैं।

उपन्यासों का सम्बन्ध मुख्यतया ग्रामांचल से रहा है। एक साहित्यिक कृति के रूप में यह ग्रामीण समाज की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक आदि समस्याओं को उजागर करने के साथ मानवीय मूल्यों को रेखांकित करता है। ग्रामीण उपन्यास भारतीय ग्रामीण जीवन की वास्तविकता को दर्शाते हैं, जिसमें किसानों की समस्याएँ, स्त्रियों की पीड़ा, सामाजिक संरचना तथा गरीबों की पीड़ा आदि सम्मिलित हैं।

21वीं सदी के ग्रामीण-केन्द्रित प्रमुख उपन्यासों में मैत्रेयी पुष्पा के 'अगनपाखी', शिवमूर्ति के 'तर्पण', सच्चिदानंद चतुर्वेदी के अधबुनी रस्सी : एक परिकथा, रामधारी सिंह दिनकर के दाखिल खारिज तथा 'अकाल संध्या', सुनील चतुर्वेदी के 'काली चाट', हृषिकेश सुलभ के 'अग्निनीक', रणेन्द्र के 'ग्लोबल गाँव के देवता' तथा 'गायब होता देश', मधु कांकरिया के 'ढलती साँझ का सूरज', संजीव के 'फॉस', नीलोत्पल मृणाल का 'औघड़' कुमार कमल का 'पासवर्ड', अलका सरावगी का 'एक ब्रेक के बाद', नासिरा शर्मा का 'कुइयाँजान' तथा महुआ माजी का 'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ' आदि सम्मिलित हैं।

भारत जहाँ संस्कृति व संस्कारों का देश है, वही समस्याओं का भी देश है। भारतीय ग्रामीण समाज में अनेक ऐसी समस्याएँ हैं, जो सदियों से चली आ रही हैं और यह 21वीं सदी में भी विद्यमान है। 21वीं सदी के ग्रामीण अंचलों में नारी-शोषण, दहेज-प्रथा, विवाह, बाल-विवाह, दलित-आदिवासियों का शोषण तथा गाँवों के दबंग लोगों द्वारा स्त्रियों के प्रति अत्याचार आदि की समस्याएँ वर्ग दृष्टव्य होती हैं। साथ ही इस सदी के को ग्रामीण समस्याओं में कृषि संकट, बेरोजगारी, जातिवाद, अंधविश्वास, पलायन तथा भ्रष्ट राजनीति आदि के साथ भूमंडलीकरण तथा बाजारवादी चकाचौंध में बदलती मनोवृत्ति भी शामिल हैं, जिसका चित्रण आज के उपन्यासों में बखूबी देखने को मिलता है। अतएव 21वीं सदी के उपन्यासों में ग्रामीण समस्याओं का चित्रण ग्रामीण समाज को यथार्थवादी तस्वीर पेश करता है और पाठकों को ग्रामीण जीवन की चुनौतियों से अवगत कराता है।

21वीं सदी के उपन्यासों को देखने से मालूम होता है कि इसमें भाषा-शिल्प की विशेषताएँ व्यापक और विविध हैं। इस सदी के उपन्यासकारों ने सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आदि संदर्भों को समझने में सहायता के लिए भाषा-शिल्प का प्रयोग किया है। इस सदी के उपन्यासकारों ने अपने-अपने उपन्यासों में सरस, सहज अभिव्यक्ति तथा विचारों के द्वारा शिल्प को विविधता चित्रित की है। उपन्यासों की भाषा-शिल्प का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उपन्यासकारों ने बोलचाल की भाषा, चित्रात्मक भाषा, प्रतीकात्मक भाषा आदि प्रयोग किया है। शब्द-योजना में तत्सम तद्भव, अंग्रेजी, अरबी तथा फारसी आदि शब्दों का समावेश है, जिसके कारण विवेच्य उपन्यासों में प्रभावात्मकता तथा कलात्मकता दृष्टिगोचर होती है। साथ ही उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में विविध शैलियों का भी प्रयोग किया है। अतएव भाषा एवं शिल्प की दृष्टि से उपन्यास पूर्णरूपेण सफल दिखते हैं।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि भारतेन्दु-युग से शुरू हुई औपन्यासिक यात्रा नित नये शिखरों पर अपना परचम लहरा रही है। समाज के हर एक वर्ग के साथ कदमताल करने वाली इस विधा में जीवन एवं जगत् की विविध समस्याओं को सशक्त अभिव्यक्ति दी है व्यक्ति से लेकर गाँव, कबीले, नगर तथा राष्ट्र एवं संपूर्ण विश्व की पीड़ा में भागीदारी रहते हुए हिन्दी उपन्यासकारों ने उनके दर्द को बाँटने का हरसंभव प्रयास किया है। इस सदी के उपन्यासकारों ने विशेष रूप से ग्रामीण-जीवन की विविध समस्याओं को उजागर करते हुए समाज में आ रहे बदलाव की सूक्ष्म अनुभूतियों को वाणी प्रदान की है।

संदर्भ—सूची

1. चौहान, डॉ० रायगोपाल – आधुनिक हिन्दी साहित्य, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा— 1962
2. बख्शी, पदुमलाल— हिन्दी उपन्यास में कथा शिल्प का विकास, विद्या मंदिर प्रेस लखनऊ—1964
3. सिंह, डॉ० त्रिभुवन हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी – 1965
4. त्रिपाठी, डॉ० सरोजिनी आधुनिक उपन्यासों में वस्तु—विन्यास, आराधना प्रेस, कानपुर – 1972
5. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली— 2020

रणजीत कुमार

शोधार्थी

हिन्दी विभाग,

वीर कुँअर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

सारांश

मानवदृमस्तिष्क पर संसार के विविध रूपों, रसों, गंधों और दृश्यों की अनवरत छाया पड़ती रहती है; जैसे हर क्षण कोई अदृश्य कलाकार हमारी चेतना के कैनवास पर रंग बिखेर रहा हो।

कुछ दृश्य ऐसे होते हैं जो हमारी मन की गहराइयों तक उतरकर चेतना को झकझोर देते हैं। कुछ अनुभवों की सुगंध हमारे भीतर की संवेदना को जागृत कर देती है, और कुछ दृश्य कल्पना की उड़ान को ऐसा पंख दे जाते हैं कि हम यथार्थ की सीमाओं से परे एक नए संसार का निर्माण करने लगते हैं। यह जगत हमारी अनुभूति, कल्पना और चेतना को निरंतर रचता, सजाता और विस्तार करता है। विचारों को उत्तेजित करने का कार्य कल्पना करती है और इसी कल्पना शक्ति के सहारे काव्य—सृजन आरम्भ होता है और कवि की सत्ता अस्तित्व में आती है।

कवि तथा पाठक की सत्ता को स्वीकार किये बिना तथा कविता के कल्पनात्मक और भावात्मक तत्वों पर ध्यान दिये बिना काव्यशास्त्र को पूर्ण नहीं माना जा सकता है। भारतीय काव्यशास्त्रियों ने अपनी प्रारम्भिक कृतियों में नये कवियों के प्रशिक्षण को उद्देश्य बनाया था। इसलिए उनमें सैद्धांतिक चिंतन—विवेचन के लिए कम अवकाश था; लेकिन उन्होंने काव्य के मूल स्रोतों पर जरूर विचार किया है।

संस्कृत काव्यशास्त्र में प्रतिभा का पर्याय कल्पना है। इसे ललित कल्पना तथा शक्ति भी कहते हैं। शक्ति अथवा प्रतिभा समस्त कृतियों तथा सृष्टियों के मूल में रहती है। भारतीय काव्यशास्त्र के अंतर्गत देखा गया है कि हमारे काव्यशास्त्री भारतीय दर्शन के कतिपय सिद्धांतों को पूरी तरह स्वीकारते हैं एवं अनुसरण भी करते हैं। अलंकार—सिद्धांत के प्रवर्तकों ने काव्य—प्रतिभा को आगम, न्याय और जैन—दर्शनों के सहज ज्ञान—सिद्धांतों के साथ जोड़ा है। इस संदर्भ में उत्पलदेव द्वारा रचित 'प्रत्यभिज्ञादर्शन' को देखा जा सकता है। यह भारतीय सौंदर्य—चिंतन का एक उत्कृष्ट प्रतिमान है; जो कश्मीर में विकसित हुआ था। इसलिए काव्य—प्रतिभा से संबद्ध उक्तियां कश्मीरी शैवागम सिद्धांत की अनुयायी हैं। आचार्य अभिनवगुप्त द्वारा रचित निम्नोक्त पद को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया जा सकता है—

“यदुन्मीलनशक्त्यैव विश्वमुन्मीलति क्षणात्।

स्वात्मायतनविश्रांतां तां वन्दे प्रतिभां शिवाम्।।१।

उक्त पद में परम प्रतिभा अथवा शिव की उस परम शक्ति की आध्यात्मिक व्याख्या की गई है; जो सदैव शिव में ही वास करती है। और, यह परम शक्ति आत्मप्रकाशन की प्रक्रिया में संपूर्ण सृष्टि को प्रकाशित करती है। इस प्रकार कवि—प्रतिभा के समक्ष सारा संसार

स्पष्ट हो जाता है।

अधिकांश अलंकारशास्त्रियों ने काव्य—हेतुओं पर विचार करते हुए उक्त विषय पर सामान्य चर्चा की और किसी प्रसंग का विवेचन समाप्त कर दिया है; लेकिन राजशेखर ने अपनी 'काव्यमीमांसा' में काव्य—प्रतिभा पर विस्तार से गंभीर विवेचन किया है। उन्होंने कवि की कारयित्री प्रतिभा एवं भावयित्री प्रतिभा को मान्यता प्रदान की है। इसी क्रम में अन्य एक विशिष्ट आचार्य कुंतक का नाम आता है; जिन्होंने 'वक्रोक्तिजीवित' ग्रंथ में काव्य की चर्चा के संदर्भ में कवि—कल्पना अथवा प्रतिभा के प्रयोजन पर विशेष चर्चा की है। उन्होंने वस्तुतः कल्पना को ही अलंकार का जीवन माना है। उन्होंने अभिव्यंजना की प्रक्रिया में कवि—प्रतिभा को अनिवार्य माना है।

अन्य आलंकारिकों में दो प्रमुख आचार्य—आनंदवर्धन और अभिनवगुप्त आते हैं। उनकी कतिपय उक्तियों से उनकी प्रतिभा—विषयक अवधारणा स्पष्ट हो जाती है। इनके अतिरिक्त अभिनवगुप्त के गुरु भट्टतौत का नाम आदर के साथ लिया जा सकता है। उनके ग्रंथ 'काव्यकौतुक' के कुछ ही अंश आज उपलब्ध हैं; जो अत्यंत मूल्यवान हैं। इनके अतिरिक्त इस संदर्भ में ध्वनिसिद्धांत के प्रमुख आलोचक महिम भट्ट को हम विस्मृत नहीं कर सकते हैं। उनके ग्रंथ 'व्यक्तिविवेक' में प्रतिभा के स्वरूप पर संक्षिप्त विवेचन मिलता है; जो स्वभावोक्ति अलंकार के संदर्भ में आनुषंगिक रूप से उपलब्ध होता है। यहां यह भी उल्लेख्य है कि महिमभट्ट की दार्शनिक कृति 'तत्त्वोक्तिकोश' आज अनुपलब्ध है; जिसमें उन्होंने प्रतिभा—तत्त्व की विशेष व्याख्या की थी।

अपनी कल्पना या प्रतिभा से ही कवि नवीन विचारों और बिंबों का निर्माण करता है और जीवंत शब्दों में उसको अभिव्यक्त करता है। आचार्य भट्टतौत द्वारा प्रस्तुत प्रतिभा की परिभाषा इन्हीं चीजों की ओर संकेत करती है; उदाहरणस्वरूप

“प्रज्ञा नवनवोल्लेखशालिनी प्रतिभा मता।

तदनुप्राणनाजीवद्वार्णननिपुणः कविः।।

तस्य कर्म स्मृतं काव्यम्।।”२।

अर्थात् नव—नव उल्लेख करने वाली प्रज्ञा को प्रतिभा कहते हैं। उससे प्रेरित होकर निरूपण या वर्णन में निपुण व्यक्ति को कवि कहते हैं और उसका कार्य काव्य कहलाता है।

आचार्य अभिनवगुप्त ने भी प्रतिभा के लक्षण बताते हुए स्पष्ट शब्दों में लिखा है कृ “प्रतिभाअपूर्ववस्तुनिर्माणक्षमा प्रज्ञा।

तस्या विशेषः रसावेशवैशद्या—सौन्दर्यकाव्यनिर्माणक्षमत्वम्।।”३।

अर्थात् अपूर्व वस्तु के निर्माण में समर्थ प्रज्ञा प्रतिभा है। उसकी विशेषता है कि वह रस के आवेश से विशुद्ध और सुंदर काव्य के

निर्माण की क्षमता रखती है। आचार्य अभिनवगुप्त के अनुसार, समस्त सृजनात्मक कर्म प्रतिभा से ही जन्म लेते हैं और काव्य—प्रतिभा उसका एक प्रकार है।

काव्य—आलोचकों के अनुसार, काव्य एक कल्पना का संसार होता है। अपने उत्कृष्ट रूप में वह एक रमणीय असत्य है। इसलिए कुछ उदारचेता विचारकों ने काव्य को वहीं तक स्वीकार किया है, जहां तक वह नैतिकता का पोषण करता है; लेकिन काव्य की सत्ता तो स्वतंत्र होती है; जो कवि—कल्पना के द्वारा यथार्थ को देखने की एक विधि है: जिसे तर्क की पद्धति के समान न्यायसंगत माना जा सकता है।

मनुष्य के लिए प्रतिभा और बुद्धि दो नेत्र के समान हैं। आनंदवर्धन ने इस सत्य को किसी मंगलाचरण में स्वीकार किया है। उन्होंने कवि की कल्पना—शक्ति और दार्शनिक की बौद्धिक शक्ति दृ इन दोनों की आवश्यकता को काव्य—रचना की पृष्ठभूमि के रूप में आवश्यक माना है। आचार्य महिमभट्ट ने ध्वनि को अनुमान के प्रकार के रूप में परिसीमित करने का विशद प्रयास किया। उन्होंने न्याय—दर्शन की शब्दावली में प्रतिभा का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि कवि की प्रतिभा से प्रवाहित होने वाले शब्दों में वस्तु की विशिष्ट प्रकृति का प्रकाशन होता है। जब वह अपनी प्रमुख सर्जनात्मक मनोस्थिति के अनुकूल शब्द और अर्थ की चिंता करता हुआ ध्यानावस्थित होता है तो अचानक उसमें एक ऐसी अंतर्दृष्टि का आविर्भाव होता है; जो वस्तुओं के सार—रूप को छू लेती है तो प्रतिभा कहलाती है। यह वस्तुतः शिवजी का तीसरा नेत्र है; जो वर्तमान, भूत और भविष्य के सभी तथ्यों का प्रकाशन करता है।

अतः कल्पना को हम एक प्रकार की दृष्टि मान सकते हैं; जिससे हम सृष्टि को देखते हैं। कवि की तुलना कभी—कभी प्रजापति से की जाती है; जिससे प्रजापति शब्द का अर्थ—संकोच होता है। इस संदर्भ में ऐसी मान्यता मिलती है कि काव्य—संसार नियति—कृत नियमों से स्वतंत्र है और कवि बिना किसी उपादान कारण के उसकी रचना करता है। तात्पर्य यह है कि कवि को अपनी रचना अपनी ही कल्पना से उत्पन्न रूपों एवं ध्वनियों के द्वारा करनी होती है। और, यह लौकिक कल्पना भी जीवन से प्राप्त संस्कारों के आधार पर ही कार्य कर सकती है; उदाहरण के लिए 'अग्निपुराण' में व्यासमुनि कहते हैं—

“अपारे काव्यसंसारे कविरेव प्रजापतिः।

यथस्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते।।”४.

अर्थात्, कवि संसार द्वारा प्रस्तुत सामग्री का ही उपयोग करता है। वह अपने काव्य की रचना शून्य में से नहीं करता। आचार्य कुंतक ने इस संदर्भ में यह बताया—

“यन्न वर्ण्यमानस्वरूपाः पदार्थाः कविभिरभूताः सन्तः कियन्ते, केवलं सत्ता मात्रेण परिस्फुरतां चैषां तथाविधः कोप्यतिशयः पुनराधीयते, येन कामपि सहृदयदृढयहारिणी रमणीयतामधिरोप्यते।” ५.

अर्थात् कवि असत् पदार्थों की रचना नहीं करता। वह जीवन से चित्र नग्न रूप में ग्रहण कर उन्हें वर्णन की प्रक्रिया के अंतर्गत विशेष चारुता से मंडित कर देता है जिससे यह चारुत्व वस्तु के मौलिक स्वरूप को प्रभावी रीति से आच्छादित कर लेता है और कविदृकल्पना द्वारा व्यक्त रूप में वस्तु एक नवीन रचना के समान चमक उठती है। इसी कारण से कवि स्रष्टा के गौरव का अधिकारी बन जाता है। कविदृकल्पना से आविर्भूत चित्र वास्तव में नया प्रतीत होता है। इसलिए कवि उसे लोकोत्तर सौंदर्य से मंडित करता है।

प्रतिभा के लक्षणों के अंतर्गत शब्द और अर्थ, अभिधेय और अभिधान, दर्शन और वर्णन अथवा भावना और उसकी शाब्दिक अभिव्यक्ति दोनों को कल्पनाद्वयापार का गुण माना गया है। कोई भी भावना कितनी भी मौलिक क्यों न हो, जब तक उपयुक्त शब्दों में निरूपित नहीं की जाती, तब तक उसकी सत्ता सतही ही मानी जा सकती है। अर्थात् कवि सच्चे अर्थ में तभी कवि बनता है, जब वह अपनी समृद्ध भावनाओं को सम्यक् शब्दों में पिरो सकता है।

शास्त्रानुसार, कवि अनिवार्यतः ऋषि होता है, द्रष्टा होता है। कवि अपनी विशेष दृष्टि से विश्व की अनेक वस्तुओं, रूपों और उनके गुणों के मूल में स्थित यथार्थ को देख लेता है। किंतु सामान्य व्यवहार में 'कवि' शब्द का व्यवहार तभी किया जाता है जब उसके पास 'वर्णन' और 'दर्शन' दोनों हों। अतः हम यह मान सकते हैं कि आदि कवि वाल्मीकि को ऋषि होने के नाते 'दर्शन' या दृष्टि तो प्राप्त थी ही; लेकिन जब तक उनकी कृति या वर्णन साकार नहीं हुई अर्थात् रामायण की रचना नहीं हुई तब तक उन्हें समाज ने कवि होने का गौरव प्रदान नहीं किया।

'ध्वन्यालोकलोचन' में सारस्वत तत्व का वर्णन करने वाले प्रसिद्ध मंगल श्लोक में अभिनव गुप्त ने संकेत किया है कि उपाख्या प्रख्या का अनुसरण करती हैदृ “क्रमात् प्रख्योपाख्याप्रसासुभंग भासयति।६. 'क्रमात्' की व्याख्या टीकाकार ने इस प्रकार की हैदृ “प्रथम हि प्रख्या तदनंतरमुपाख्येति क्रमः”। अर्थात् शब्दों में व्यक्त होने से पहले प्रख्या पूर्ण होती है; लेकिन शब्दाभिव्यक्ति के पश्चात् संशोधन की आवश्यकता होती है। वस्तुतः कविदृकल्पना में उदित होने वाली प्रख्या प्रथम स्फुरण में पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकती; जैसे— खान से निकले रत्न अनगढ़ ही होते हैं। अर्थात् वे सामान्य प्रस्तर खंडदृ जैसे ही होते हैं। लेकिन खराद और पॉलिश

के बाद ही उनमें चमक आती है। ठीक यही स्थिति अभिव्यक्तिदृष्टिक्रिया में भी होती है। और यही प्रक्रिया काव्यदृष्टि का प्रथम चरण मानी जाती है। अर्थात्, इस स्तर पर रचनाकार एक पद हटाकर दूसरा उससे योग्य पद जोड़ता है और रचनाकार का मन तब भी अनिश्चय की स्थिति में रहता है। और, धीरे-धीरे जब मन की यह अनिश्चित स्थिति समाप्त होकर निश्चित के स्तर पर पहुँचता है तभी उसे शब्दपाक माना जाता है और रचना की पदावली में परिवर्तन की संभावना समाप्त जाती है, जिससे शब्दपाक और अर्थपाक में अंतर ही मिट जाता है। अर्थात् इससे समर्थ शब्दों से सटीक, पर्याप्त और अभिप्रेत अभिव्यक्ति हो जाती है। तात्पर्य यह है कि शब्दार्थ परिपूर्णता को प्राप्त कर लेता है। काव्यदृष्टि के विवेचन के अंतर्गत शक्ति या प्रतिभा (कल्पना), व्युत्पत्ति (निपुणता अर्थात् बहुज्ञता और विवेक का योग) और अभ्यास आते हैं। उक्त हेतुओं में से प्रतिभा को काव्य का बीज माना गया है; जिसके बिना कविता का उन्मेष नहीं हो सकता। इस संदर्भ में एक आम प्रश्न उठता रहता है कि "क्या केवल प्रतिभा के बल पर काव्य की सृष्टि संभव है?" इस संदर्भ में पंडितराज जगन्नाथ ने कहा कि काव्य का एकमात्र हेतु प्रतिभा या कल्पना है। आचार्य मम्मट के अनुसार, अकेली प्रतिभा ही सबकुछ नहीं होती है; बल्कि तीनों हेतुओं के सहयोग से ही श्रेष्ठ कविता की रचना हो सकती है। दूसरी ओर आनंदवर्धनाचार्य के अनुसार, तीन हेतुओं में प्रतिभा का ही सर्वाधिक महत्व रहता है। लेकिन यह भी सच है कि उक्त तीनों हेतुओं का धनि कवि विरल ही होता है। वास्तव में काव्यदृष्टि में प्रतिभा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान होता है; जिसके पास प्रतिभा नहीं होती है, उसके पास कुछ नहीं होता। व्युत्पत्ति और अभ्यास कविदृष्टि का संस्कार और नियमन कर अप्रत्यक्ष रूप से अपना योगदान देते हैं।

अब प्रश्न यह उठना है कि मनुष्य इस अनमोल प्रतिभा को प्राप्त कैसे करता है? बहुतदृष्टि काव्यशास्त्री प्रतिभा का उद्गम कवि के पूर्वजन्मदृष्टिकारणों में मानते हैं। ७. पंडितराज जगन्नाथ प्रतिभा के जन्म के संदर्भ में यह विचार रखते हैं कि इसका जन्म किसी अदृश्य कारण से हो सकता है; जैसे— देवता या साधु की कृपा से अथवा व्युत्पत्ति और अभ्यास के अभूतपूर्व विकास के कारण। पुनः उनका यह मानना है कि कुछ व्यक्तियों के जीवन की प्रौढ़ावस्था में अचानक काव्य का स्फुरण या काव्यदृष्टि का जागरण हो जाता है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि एक लंबी अवधि तक मौन रहने के बाद किसी व्यक्ति की वाणी कैसे सिद्ध हो सकती है? इस प्रश्न का उत्तर हमें मनोविज्ञान में मिल सकता है।

जैन दार्शनिक हेमचंद्र के अनुसार, प्रतिभा के दो भेद माने जा सकते हैं दृष्टि सहजा और औपाधिकी। औपाधिकी का

आधार मंत्र या दैवी कृपा हो सकता है। उनके अनुसार, आत्मा का स्वरूप सूर्य के समान होता है। लेकिन कुछ काम ऐसे होते हैं जो बादल के समान आत्मा के प्रकाश को ढक देते हैं। पुनः जब वह आवरण क्षीण होने लगता है तो प्रतिभा अपने सहज रूप में प्रकट हो जाती है, जहाँ प्रतिभा अपने आप प्रकट होती है, उसे सहजा कहते हैं और जब प्रतिभा के जागरण के लिए दैवी सहायता ली जाती है, तो उसे औपाधिकी प्रतिभा कहते हैं।

अब कविदृष्टिकल्पना के एक महत्वपूर्ण बिंदु पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। रस को काव्य की आत्मा माना गया। साथ ही काव्य का उद्गम रसानुभूति से होता है और रसदृष्टिप्रकाश उसका उद्देश्य होता है। वस्तुतः रस ही कविदृष्टिकल्पना का नियमन करता है। यहाँ 'रसावेशवैशध्य' (अभिनव गुप्त) अथवा 'रसानुगुणदृष्टिचिंतन' (महिप भट्ट) का महत्व निश्चय ही अनुमेय है। जो प्रतिभा के महत्व को दर्शाते हैं। मनुष्य के हृदय में भावोल्लास के कारण ही कल्पना जन्म लेती है। यह कल्पना सम्यक् होनी चाहिए, न कि निरंकुश। अर्थात् रसदृष्टिप्रतीति में यह कल्पना बाधक न बने। अलंकारों के प्रयोग के संदर्भ में भी कवि को अपनी सम्यक् बुद्धि का प्रयोग करना चाहिए; चूँकि अलंकारों का कविदृष्टिकल्पना के साथ विशेष संबंध रहता है। अर्थात्, अलंकार तभी सार्थक माना जाता है जब सावधानीपूर्वक रसदृष्टिप्रतीति को ध्यान में रखते हुए उसका प्रयोग किया जाए।

आचार्य आनंदवर्धन के अनुसार, कवि की कल्पना में अभिव्यक्ति के लिए अनेकों बिंब निर्मित होते हैं; लेकिन उसे तो केवल उन्हीं बिम्बों का प्रयोग करना चाहिए, जो रसायनकूल हो; अन्यथा रसाभास की संभावना बनी रह जाती है। अर्थात् रस के द्वारा ही कल्पना का सटीक रूपायन होना चाहिए; जिससे पाठक विस्मृतदृष्टिमूढ़ बना रह जाय। वस्तुतः कवि कल्पना के पीछे दौड़ नहीं लगता है; बल्कि कल्पनाएँ ही कवि-अनुमति पाने के लिए लंबी कतार में खड़ी हो जाती हैं— "अलंकारांतराणि हि निरूप्यमाणदुर्घटनान्यपि रससमाहितचेतसः प्रतिभानवतः कवेरहंपूर्विकया परापतन्ति।" ८.

अर्थात्, कवि का श्रेष्ठत्व काव्य में व्यक्त प्रतिभा के असाधारण उत्कर्ष पर ही निर्भर करता है। उक्त विचार के उदाहरण के रूप में हमें कालिदास, व्यास एवं वाल्मीकिदृष्टिसे महाकवि मिलते हैं।

जिस प्रकार उत्तम काव्य के सृजन के लिए कवि में उत्कृष्ट कल्पना की आवश्यकता है; ठीक उसी प्रकार कवि-कल्पना से रू-ब-रू होने के लिए पाठक में भी कल्पना-शक्ति की प्रखरता आवश्यक होती है। इसलिए माना जाता है कि पाठक की भावयित्री प्रतिभा और कवि की कारयित्री

प्रतिभा में सामानता मिलती है। परंतु यह सच है कि पाठक की कल्पना कवि-कल्पना की अपेक्षा कम सक्रिय होती है।

निष्कर्षतः, डॉ. भगीरथ मिश्र ने बताया है कि –“वास्तव में कल्पना की सामर्थ्य ही कवि की प्रतिभा है।” ६.

कवि कल्पना पर निर्भर नहीं करता; बल्कि कल्पना कवि की अनुमति पर निर्भर करती है। जैसे वह भी भाव-जगत में प्रवेश की आकांक्षी हो। इस प्रकार कल्पना कवि-प्रतिभा बनकर कविता तथा कवि को विशिष्ट बनाती है। साथ ही कल्पना का उत्कर्ष केवल कवि के लिए अनिवार्य तत्व नहीं है; बल्कि पाठक वर्ग के लिए भी आवश्यक है। पाठक की कल्पना जितनी सूक्ष्म होगी, वह उतना ही रससिक्त हो जाएगा। हाँलाकि यह भी सत्य है, उसकी कल्पना की उड़ान कवि-कल्पना से अधिक ऊँची नहीं हो सकती। कवि कल्पना-शक्ति से सत्य की खोज कर सकता है; वहीं पाठक को केवल सत्य का आभास मात्र ही हो सकता है।

सर्वसम्मति से कल्पना को ही प्रतिभा का पर्याय माना गया तथा उसके दो भेद स्वीकार हुए— सहजा और उत्पाद्या। किन्तु, इस संदर्भ में गणपतिचंद्र गुप्त के विचार भिन्न हैं। उनके मतानुसार, प्रतिभा को ही मनोविज्ञान में ‘कल्पना’ कहा गया है; और यह कल्पना न तो शिक्षा-दीक्षा एवं पूर्वाभ्यास पर आधारित है और न ही किसी दैवी शक्ति के आशीर्वाद पर; बल्कि यह तो मानव की एक प्राकृतिक शक्ति है, जो न्यूनाधिक मात्रा में सभी में होती है। केवल कवि में यह थोड़ी अधिक मात्रा में होती है, जिससे काव्य-सृजन सफल होता है। भारतीय काव्यशास्त्र ने केवल प्रतिभा का ही उल्लेख नहीं किया; बल्कि प्रतिभा के अलावा व्युत्पत्ति और अभ्यास पर भी बल दिया है। आचार्य दण्डी ने कहा भी है—

“नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रूत च बहुनिर्मलम्।

अमन्दाश्चाभि योगोडस्याः कारणं काव्य संपदः ।।” १०.

अर्थात् नैसर्गिक प्रतिभा, निर्मल शास्त्र-ज्ञान व सुदृढ़ अभ्यास से काव्य-सृजन संभव है। भारतीय काव्यशास्त्र के विशाल दृष्टिकोण ने अभ्यास को महत्त्व देकर समाज व विश्व को एक सकारात्मक संदेश दिया है कि— ‘करत-करत अभ्यास जड़मति होत सुजान।’ अतः भारतीय दर्शन ने हमेशा मानव के गौरव की, श्रेष्ठता की बात की है। उसे मनुष्य पर अखंड विश्वास है और उसकी अस्मिता पर गर्व है। वह यह मानता है कि मानव के लिए सब कुछ संभव है और कुछ भी असंभव नहीं है।

सहायक ग्रन्थ सूची :—

१. ध्वन्यालोकलोचन-अभिनवगुप्त, पृष्ठ ६०

२. काव्यानुशासन-हेमचन्द्र, द्वि०सं०, पृष्ठ ३

३. ध्वन्यालोकलोचन-अभिनवगुप्त, पृष्ठ २६

४. अग्निपुराण-महर्षि वेदव्यास, पृष्ठ ३३६/१०

५. वक्रोतीजीवितम्-कुंतक, पृष्ठ १४०

६. ध्वन्यालोकलोचन-अभिनवगुप्त

७. काव्यालंकारदृशूत्रवृत्ति-वामन, पृष्ठ १/३/१६

८. ध्वन्यालोक;-आनंदवर्धन, पृष्ठ-८६-८७

९. काव्यशास्त्र-डॉ.भगीरथ मिश्र, पृष्ठ २३

१०.काव्यादर्श-दण्डी, पृष्ठ १/१०३

शोधछात्रा

निकिता कुमारी

विश्वभारती, शांतिनिकेतन

सारांश

मानस भवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती ।

भगवान् भारत वर्ष में गूँजे हमारी भारती ।

हो भद्र भावोद्भाविनी, वह भारती हे भगवते ।

सीतापते सीतापते, गीतापते गीतापते ।

मैथिलीशरण गुप्त—भारत—भारती

तीन सजावत देश को, सती, संत और शूर ।

तीन लजावत देश को, कपटी, कायर क्रूर ।।

भारतवर्ष की पुण्य भूमि पर अनेक ऋषि मुनि और संतों का पदार्पण हुआ है, इनमें यागवल्क्य, भारद्वाज, अष्टावक्र, वेदव्यास, शंकराचार्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र, संदीपनी, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, यमदग्नि, परशुराम, राम, कृष्ण, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद आदि मुख्य हैं, जिनके ज्ञान और विवेक से भारतवर्ष गौरान्वित हुआ है। भारतवर्ष को सजाने संवारने वाले और विश्व गुरु बनाने वाले सती, संत और शूर हैं, जिनपर हमें नाज और ताज है।

भारत दो शब्दों के योग से बना है:—

भा+रत । भा का अर्थ ज्ञान और रत का अर्थ लीन होता है; अर्थात् वह देश जो ज्ञान में लवलीन है—भारत है। भा का दूसरा अर्थ भरण—पोषण करना है और रत का लीन का अर्थ है; अर्थात् वह देश जो भरण—पोषण में लीन है—वह भारत है। भा का तीसरा अर्थ प्रकाश और रत का अर्थ लीन है अर्थात् वह देश जो प्रकाश का आग्रही है। भा का चौथा अर्थ सत्य और लीन का अर्थ लीन है अर्थात् वह देश जो सत्य का पुजारी है, भारत है। भा का पाचवां अर्थ ईश्वर है और रत का अर्थ आस्था वान है; अर्थात् वह देश जो आस्तिक है, भारत है।

इतिहास में यह उल्लेख मिलता है कि चक्रवर्ती सम्राट दुष्यंत और शकुंतला के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा। चक्रवर्ती सम्राट दशरथ के चार पुत्रों में से एक का नाम बशिष्ठ मुनि ने भरत रखा था और इस नाम के औचित्य पर प्रकाश डालते हुए कहा था कि:

विश्व भरन पोषन कर जोई ।

ताकर नाम भरत अस होई ।। भारतीय जीवन दर्शन की मान्यताएं हैं: आचार्य देवो भवः, मातृ देवो भवः, पितृ देवो भवः, अतिथि देवो भवः। सत्य, तप—त्याग, सहिष्णुता, मानवता, उदारता, समदर्शिता, भक्त—वत्सलता, शरणागत की रक्षा भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषताएं हैं। इसीलिए राष्ट्र कवि दिनकर ने 'नील—कुसुम' काव्य संग्रह में संकलित 'किसको नमन करूँ मैं भारत?' शीर्षक कविता में भारत को केवल स्थान का वाचक नहीं माना है अपितु नर का गुण विशेष

घोषित किया है, शांति का प्रतीक माना है, सत्यमेव जयते का विग्रह और मानवता के ललाट का चंदन स्वीकार किया है:—

भारत नहीं स्थान का वाचक, गुण विशेष नर का है ।

एक देश का नहीं, शील यह भूमंडल भर का है ।

जहाँ कहीं एकता अखंडित, जहाँ प्रेम का स्वर है ।

देश देश में वहाँ खड़ा, भारत जीवित भास्वर है ।

निखिल विश्व की जन्म—भूमि, वंदन को नमन करूँ मैं?

किसको नमन करूँ मैं भारत, किसको नमन करूँ मैं?

.....

उठे जहाँ भी घोष शांति का भारत तेरा स्वर है ।

धर्म—दीप हो जिसके भी कर में, वह नर तेरा है ।

तेरा है वह वीर, सत्य पर जो अड़ने जाता है ।

किसी न्याय के लिए प्राण अर्पित करने जाता है ।

मानवता के इस ललाट चंदन को नमन करूँ मैं!

किसको नमन करूँ मैं भारत, किसको नमन करूँ मैं?

दो हृदय के तार जहाँ भी जो जन जोड़ रहे हैं ।

मित्र—भाव की ओर विश्व की गति को मोड़ रहें हैं ।

घोल रहे हैं जो जीवन सरिता में प्रेम रसायन ।

खोल रहे हैं देश—देश के बीच मुंदे वातायन ।

आत्म—बंधु कहकर ऐसे जन—जन को नमन करूँ !

किसको नमन करूँ मैं भारत, किसको नमन करूँ मैं?

भारत की वैश्विक दृष्टि पर विचार करने के पूर्व अतीत के भारत का सिंहावलोकन करना यत्किंचित समीचीन है। प्राचीन भारत विश्व गुरु, धन—धान्य से परिपूर्ण सोने की चिड़िया और सब प्रकार से आत्मनिर्भर था। यही कारण है कि हम पर अनेक आक्रमण हुए और हम किसी न किसी प्रकार लूटे गए। हममें फूट डाली गई और हम बुरी तरह पराजित हो गए। कभी हम स्वालंबी थे, बाद में परावलंबी बनकर परमुखापेक्षी बनने को विवश हो गए। भारतवर्ष के अतीत की श्रेष्ठता का गान करते हुए राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भारत—भारती के अतीत खंड में लिखा है:—

भूलोक का गौरव प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहाँ?

फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगा—जल जहाँ!

संपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है!

उसका कि जो ऋषि भूमि है, वह कौन? भारतवर्ष है ।

हां वृद्ध भारतवर्ष ही संसार का सिरमौर है ।

ऐसा पुरातन देश कोई विश्व में क्या और है!

भगवान् की भव—भूतियों का यह प्रथम भाण्डार है ।

विधि ने किया नर सृष्टि का पहले यही विस्तार है ।

यह पुण्य भूमि प्रसिद्ध है, इसके निवासी आर्य हैं ।

विद्या, कला, कौशल्य, सबके जो प्रथम आचार्य हैं।
संतान उनकी आज यद्यपि हम अधोगति में पड़े।
पर चिह्न उनकी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े।

भारत ने अपने बलबूते अपनी खोई समृद्धि और श्रेष्ठता को हस्तगत किया; क्योंकि अब हम एक और नेक बन गए हैं। राष्ट्र पिता महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है और गांव की आत्मा कृषि संस्कृति पर अवलंबित है। इसीलिए मात्र 18 महीने तक भारत के प्रधानमंत्री रहनेवाले स्व. लाल बहादुर शास्त्री ने भारत के विकास के लिए जोरदार नारा दिया था :

जय जवान, जय किसान

जवान सबल एवम् जागरूक हैं तो सीमाएँ अक्षुण्ण और सुरक्षित हैं, किसान सक्रिय और कर्मठ हैं तो हम खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर हैं। भारत ने अपने सुकर्मा से इन दोनों क्षेत्रों में अभूतपूर्व सफलता पाई और हम विश्व में प्रथम पांक्तेय हो गए। पर भारत की बात इतने से बनने वाली नहीं थी, हमें वैज्ञानिक तकनीक का आविष्कार और विकास करना था और भारत के इस सपने को साकार किया भारत के राष्ट्रवादी पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने, जिन्होंने जय जवान, जय किसान के साथ जय विज्ञान का नारा बुलंद किया। हमने पोखरण में अपने परमाणु का विस्फोट किया और दुनिया को भनक तक न लगी। हम परमाणु के क्षेत्र में भी आत्मनिर्भर बने। हमने चांद पर पहुंच कर तिरंगा फहराया और दुनिया को बताया कि हम किसी से कम नहीं हैं।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भारत की दृष्टि का उल्लेख करते हुए लिखा है कि:—

नहीं चाहते हम धन वैभव, नहीं चाहते हम अधिकार।

हम स्वतंत्र रहें और स्वतंत्र रहे संसार।

भारत सत्य, अहिंसा करुणा, मैत्री, सहिष्णुता, ईमानदारी, एकता—नेकता और प्रेम का पुजारी रहा है यही भारत की वैश्विक दृष्टि रही है और भविष्य का भारत अपने इन्हीं मूल्यों को आत्मसात कर प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा और हमारे ऋषि मुनियों ने विश्व को वसुधैव कुटुंब कम् का संदेश दिया:—

अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसाम्।

उदार चरितानाम तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

ईशोपनिषद् में कहा गया है कि यह संपूर्ण चराचर जगत ईश्वरमय है, अतः हमें त्याग पूर्वक भोग करना चाहिए। भारत की त्याग पूर्वक भोग की दृष्टि एक बहुत बड़ी वैश्विक दृष्टि है, जिसका अनुसरण करने पर संपूर्ण विश्व का कल्याण अवश्यभावी है।

भारत की वैश्विक दृष्टि का ही परिणाम है कि हमने पर नारी को माता की तरह, पर धन को मिट्टी की तरह और संसार के सभी जीवों को आत्मवत् देखा ही नहीं विश्व को संदेश भी दिया कि:—

मातृवत् परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्वत्।

आत्मवत् सर्वभूतेषु, यः पश्यति सः पंडितः।

हमारे वर्तमान कर्मठ, उदार, सहिष्णु, सत्यवादी, ईमानदार और न्यायप्रिय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र दामोदर भाई मोदी का संकल्प है कि भारत वसुधैव कुटुम्बकम् के सपने को साकार करेगा। हम किसी से खा—मोकाह रार नहीं करेंगे, लेकिन अगर कोई जान बूझकर रार पर उतर आए, तो हम उसे बेकरार और यमलोक का रास्ता दिखा देंगे। पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की यह कविता इसी ओर संकेत कर रही है:—

हार नहीं मानूंगा, रार नहीं ठानूंगा।

काल के भाल पर लिखता मिटाता हूँ।

गीत नया गाता हूँ।

भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का संकल्प एवम् नारा है:—सबका साथ, सबका विकास और सबका विश्ववास। भारत और विश्व के सर्वांगीण विकास के लिए गंगा यमुनी (हिंदू मुस्लिम) संस्कृति की एकता एवम् नेकता, मंदिर मस्जिद में समरूपता, अगड़े पिछड़े में अभिन्नता, गोरे काले में समानता परम अपेक्षित है। भारत ने विश्व को संदेश दिया है कि:—

हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई।

आपस में सब भाई भाई।

हमारे माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी इस दिशा में सकारात्मक ढंग से सक्रिय और प्रयासरत हैं। भारत युवाओं का देश है। हमारे माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र दामोदरदास मोदी बराबर कहा करते हैं कि भारत की 65 आबादी युवा है। युवा शब्द को उल्टा करने पर शब्द बनेगा वायु। अर्थात् युवा हमारे देश के प्राण वायु हैं। अतः हम आशान्वित हैं। राष्ट्र कवि मैथिली शरण गुप्त के शब्दों में मोदी जी की अपील है:—

हे नव युवाओं! देशभर की दृष्टि तुम पर ही लगी।

हे मनु! जीवन की तुम्ही में ज्योति जगमगी।

दोगे न तुम तो कौन देगा योग देशोंद्वार में।

देखो कहाँ क्या हो रहा है आज कल संसार में।

शक्तिशाली देशों को यह ध्यान और ज्ञान रहे कि पृथ्वी पर अनावश्यक विध्वंस का तांडव न हो, कोई निरवंश न रहे और पृथ्वी पर प्रेम, धर्म और नीति का राज्य हो। भारत विश्व मैत्री का आकांक्षी है। रामानंद सागर की रामायण सीरियल में रवीन्द्र जैन ने ठीक ही गाया है कि:—

महाशक्तिन्ह को यह ज्ञान रहे, पृथ्वी पै वृथा विध्वंस न

हो।

कोई न अकाल मरै जग में, और वंश कोई निरवंश न हो।

कैसे नीति अनीति में भेद करै, यदि राम सरीखे हंस न हो।

पृथ्वी धंस जाए रसातल में, पृथ्वी पै जो धर्म का अंश न हो।

भारत और विश्व के सर्वांगीण कल्याण और विकास के लिए राष्ट्र

कवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में परमपिता परमेश्वर से हमारी

प्रार्थना है:—

सबकी नसों में पूर्वजों का पुण्य रक्त प्रवाह हो।

गुण, शील, साहस, बल तथा सबमें भरा उत्साह हो।

सबके हृदय में सर्वदा, संवेदना की दाह हो।

हमको तुम्हारी चाह हो, तुमको हमारी चाह हो।

अंत में राम भक्त महाकवि तुलसी के शब्दों में संपूर्ण चराचर जगत

के जीवों को सिया राम मय समझकर सादर प्रणाम करता हूँ:—

सिय राममय सब जग जानी।

करौं प्रणाम जोरी जुग पानी।

संदर्भ ग्रंथ —

1 श्रीरामचरितमानस — तुलसीदास, गीता प्रेस गोरखपुर 2001

2 संस्कृति के चार अध्याय — दिनकर, लोक भारती प्रकाशन,
इलाहाबाद 1990

3 चक्रवाल — दिनकर, उदयाचल प्रकाशन, पटना 1990

4 रश्मि-रथी — दिनकर, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद 1995

5 हमारी संस्कृति की कहानी — डा. वासुदेव उपाध्याय, ज्ञानदा
प्रकाशन पटना 1985

6 भारत-भारती — मैथिली शरण गुप्त, चिरगांव झांसी 1995

डॉ० चक्रधर त्रिपाठी

कुलपति

ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय,

कोरापुट 763004

चलभाष: 9434210155

सारांश

गीत भावना का वरदान है—विश्व हृदय का राज एवं वसुंधरा का सौंदर्य है। मानव का सुख—दुख आशा—निराशा तथा प्रेम में संयोग वियोग की साधना का प्रतीक है। गीत मानव के मन की वह आकुल व्याकुल सीमा है, जहां समष्टि व्यष्टि में एवं व्यष्टि समष्टि में आबद्ध हो जाता है। गीत हृदय वीणा की वह राग ध्वनि है; जो वेदना की थाप से झंकृत हो उठती है। छायावादी काव्य में यह राग ध्वनि अपने चरमोत्कर्ष पर थी। छायावाद गीत काव्य का स्वर्ण काल है।

प्रो. केसरी कुमार ने गीत की परिभाषा इन शब्दों में दी है—“हृदय की मार्मिक अनुभूतियों की संगीतात्मक अभिव्यक्ति ही गीत है। गीत ह्रतंत्री की मीढ़ की झंकार है, मर्म की मुखरता है और यह भीतर का मर्म तभी बोलता है जब बाहर के अवयव हार मान लेते हैं। यह स्थिति तभी आती है, जब अनुभावक दारुण दुख से भीगा होता है अथवा अनंत आनंद में विभोर।”

मौज में आकर ही आनंद ईश्वर ने अपनी क्रीडा भूमि रूपी इस संसार की सृष्टि की। नटराज के अलक्ष्य तांडव और नटवर की लास्य मूल में इसी आनंद का जादू है। मानव उस विराट अनंत आनंद का एक लघु अंश है, उसके हृदय में भी परमानंद बैठा है। कभी—कभी अभाव का दर्द भी मधुर होता है; क्योंकि उसके कारण उसे परमानंद की स्निग्ध स्मृति ताजी हो जाती है। इसीलिए तो मीरा और महादेवी कबीर और जायसी दुख की दुनिया में ही हृदय की बस्ती बसाना चाहते हैं; क्योंकि वहीं उनके आनंददाता का निवास है और इसीलिए इस दुख की भूमि में भी मधुर गीत की बेल उगती है। मानव जीवन का अधिकांश इसी अभाव की वेदना में पला होता है। यही कारण है कि संसार के अधिकांश गीत वेदना के गीत हैं। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि गीत का मानव से अटूट संबंध है और ये मनुष्य की वाह्य संपत्ति न होकर अंतर की निधि हैं।

नाटकों में गीत योजना के प्रश्न पर विद्वानों में गहरा मतभेद पाया जाता है। कुछ आलोचकों का कथन है कि नाटकों में गीत योजना के लिए स्थान नहीं रहना चाहिए। आधुनिक नाटकों में विशेषतः पाश्चात्य नाटकों में गीतों का अभाव सा पाया जाता है। इसके दो मुख्य कारण हैं। प्रथमतः नाटकों का उद्देश्य संघर्ष होने के कारण संगीत की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। दूसरे कुछ आलोचकों का यह भी कथन है कि गीत रंगमंच पर स्वाभाविक नहीं लगते। पात्रों से गीत गवाना अस्वाभाविक बात है।

लेकिन भारतीय नाटकों का उद्देश्य रस सृष्टि होने के कारण प्रभाव वृद्धि के उद्देश्य से गीतों का स्थान अनिवार्य माना गया है। अरस्तू ने भी गीत की आवश्यकता पर बल दिया है और उसे नाटक के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया है। यूनानी त्रासदी

(जतमेंकल) में गीत को आभरण के रूप में ग्रहण किया गया है। भारतीय नाट्य परंपरा में नाटकों में गीतों का प्रयोग स्तुत्य रहा है। प्राचीन नाटक प्रायः भावपूर्ण और काव्यात्मक होते थे। उनमें प्रगीत मुक्तक बड़ी स्वाभाविकता के साथ और प्रभाव वृद्धि के उद्देश्य से जुड़े रहते थे। नाटक की कथावस्तु का उनसे कोई विरोध नहीं था। भारतीय नाटककार नाट्य व्यापारों को तीव्र और गतिशील बनाने के पक्ष में थे। वे नाटक में रमणा जानते थे, घटनाओं के साथ दौड़ लगाना नहीं। गीत योजना को प्रसिद्ध नाटककार डॉ. हरि कृष्णा प्रेमी ने भी नाटक का आवश्यक तत्व माना है। इस विषय में उनका वक्तव्य महत्वपूर्ण है—“इस युग के कलाकार चाहते हैं कि नाटकों के भीतर गीत दिए जाएं। यदि रंगमंच या चित्रपट का ध्यान न हो तो नाटकों से गीत निर्वासित किया जा सकता है। रस सृष्टि में संगीत बहुत सहायक सिद्ध होता है।

इन दृष्टियों से विचार करने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि रस सृष्टि एवं प्रभावोत्पादकता के लिए नाटकों में गीतों का अनिवार्य स्थान है। शर्त इतनी ही है कि गीत कथानक के अनुकूल हों और जो रस, प्रभाव और वातावरण नाटककार उत्पन्न करना चाहता है उसको गहरा करने वाले हों। वस्तुतः गीत रस निष्पत्ति में सहायक होते हैं। वातावरण को गहरा भी करते हैं और उनमें प्रभावोत्पादन की क्षमता भी होती है।

प्रसाद के नाट्य कला में रस की धारा का अक्षुण्ण स्थान है। नाटकों का लक्ष्य संघर्ष के साथ—साथ रस सृष्टि भी इन्होंने माना है। इसलिए उनके प्रमुख नाटकों चंद्रगुप्त, स्कंद गुप्त, अजातशत्रु और ध्रुवस्वामिनी में गीतों का बड़ा ही सुंदर सटीक और उपयोगी आयोजन हुआ है। चंद्रगुप्त नाटक में कुल 13 गीत आए हैं। इनमें 3 सुहासिनी 3 मालविका 3 अलका 1 कार्नेलिया 1 कल्याणी गाती है। शेष 2 में से 1 राक्षस द्वारा तथा दूसरा नेपथ्य से गया जाता है। इन नाट्य गीतों में काव्यात्मक सौष्ठव की उत्कृष्टता के संबंध में दो मत नहीं होने चाहिए। इसके अधिकांश गीत मुक्तक प्रगीत हैं, परंतु नाट्य व्यापार की योजना की पूर्ति में भी अधिकाधिक समर्थ हैं। समय और परिस्थिति के अनुरोध को मानकर चलने वाले हैं। परिणामतः इनसे ऐसे वातावरण की सृष्टि होती है, जिससे रस प्रवाह में जीवंत गत्यात्मकता आती है। कथा प्रवाह के साथ प्रेक्षक या पाठक के भाव तादात्म्य को अक्षुण्ण बनाए रखना उत्कृष्टता की कसौटी है। प्रेषनीयता के सिद्धांत की सार्थकता भी यही है। इसी को रस की सफलता भी कहते हैं।

चंद्रगुप्त के गीत दर्शक या रसिक को कथा प्रवाह की अक्षुण्णता के साथ गहरी तालीनता में डूबने के साधन मात्र हैं। अतः उनकी उपादेयता और सार्थकता असंदिग्ध है। उदाहरण के लिए चंद्रगुप्त

के कुछ गीतों पर विचार करना आवश्यक है। नाटक के प्रथम दो गीत प्रथम अंक के द्वितीय दृश्य के प्रारंभ में गाए गए हैं। नाटक के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में सुहासिनी ने भाव सहित निम्न गीत गाया है –

तुम कनक किरण के अंतराल में,
लुक छुप कर चलते हो क्यों?
नतमस्तक गर्व वहन करते,
यौवन के घन रस कन झरते?,
हे लाज भरे सौंदर्य!
बता दो मोन बने रहते हो क्यों?

यह गीत नाटक में उत्पन्न संघर्ष पूर्ण वातावरण के तनाव को दूर करने के लिए सुहासिनी द्वारा नंद की सभा में गवाया गया है। सुहासिनी मद्यपी नंद के वसंतोत्सव पर अपने प्रणयी राक्षक के लिए संगीत सौंदर्य की मादक सुव्यंजना करती है। वह एक नर्तकी है, जिसने आजीविका का माध्यम संगीत को बना लिया है। फिर भी राक्षक के प्रेम पास में बद्ध वह कोमल हृदया लज्जाशील नारी है। वह स्वयं प्रेम करने में हिचकती है, लज्जा उसे समझाती है और बस यही लज्जा एवं सौंदर्य के भार से नत सुहासिनी मौन रह जाती है। साथ ही प्राचीन काल के वसंतोत्सव के चित्रण से देश काल का भी सफल चित्रण हुआ है। अतः इस गीत का नाटक में विशिष्ट स्थान है।

दूसरा गीत राक्षस सुहासिनी के समक्ष मूक अभिनय सहित गाता है –:

निकल मत बाहर दुर्बल आह!
लगेगा तुझको हंसी का शीत,
शरद नीरद माला के बीच,
तड़प ले चपला सी भयभीत।

हिलाकर धड़कन से अविनीत,
जगा मत सोया है सुकुमार।
देखता है स्मृतियों का स्वप्न,
हृदय पर मत कर अत्याचार।

वस्तुतः यह गीत पहले गीत का पूरक है। इस गीत के माध्यम से राक्षस अपने हृदय के अंतर्द्धों को सुहासिनी तक पहुंचता है और सुहासिनी के हृदय के उठते तूफानों का मनोहरी चित्र भी प्रस्तुत कर देता है। राक्षस ने इस गीत में सुहासिनी द्वारा गाए गीत के प्रश्नों का उत्तर दिया है। उसके हृदय में भी सुहासिनी के समान भयंकर द्वंद है, जलन है और गहरी टीस है। दोनों गीत पर स्थिति के अनुकूल हैं।

नाटक के द्वितीय अंक में संघर्ष जमकर शुरू होता है। राष्ट्रीय

आंदोलन के प्रत्येक कार्य के पूर्व राष्ट्रीय गायन वंदे मातरम् का गायन हुआ करता था। इस अंक में ग्रीक राजकुमारी कार्नेलिया के द्वारा –अरुण यह मधुमय देश हमारा का गायन कराकर कार्नेलिया के भावों एवं व्यक्तित्व को स्पष्ट करने की कोशिश की गई है। साथ ही इस गीत के गायन द्वारा राष्ट्रीय वातावरण उत्पन्न करने में प्रसाद ने अद्भुत सफलता पाई है। इस गीत में भारतीय संस्कृति एवं उसके अतीत की महिमा का गान बड़े ही ओज पूर्ण भाषा एवं शैली में सहज ढंग से हुआ है। उसके चित में भारतीय संस्कृति के प्रति विशेष आस्था का भाव है। वह भारत के प्राकृतिक वातावरण, रीति- नीतियों एवं ज्ञान के ऐश्वर्य से अत्यधिक प्रभावित है। भारतीयता के प्रति उसका अनुराग प्रकारांतर से उसके चंद्रगुप्त के प्रति प्रेम को व्यक्त करता है। वह चंद्रगुप्त के रूप सौंदर्य पर अनुरक्त है और भारत भूमि के प्रत्येक कण में निजत्व खोजती है। अतः यह गीत भी पात्र एवं परिस्थिति के सर्वथा अनुकूल है।

इसी तरह अलका द्वारा गाया गया यह राष्ट्रीय गीत भी हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है –

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती,
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला ज्वाला स्वतंत्रता पुकारती।
अमर्त्य वीर पुत्र हो दृढ़ प्रतिज्ञा सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पथ है बड़े चलो बड़े चलो।
असंख्य कीर्ति रश्मियां विकीर्ण दिव्य दाह सी,
सपूत मातृभूमि के रूको न शूर साहसी।
अराति सैन्य सिंधु में, सुवाडवाग्निसे जलो,
वीर हो जयी बनो, बढ़ें चलो बड़े चलो।

इस गीत में निहित वीरता एवं राष्ट्रीयता की भावना अद्भुत ही नहीं, काबिले तारीफ है। वस्तुतः नाटककार के समय स्वतंत्रता संग्राम देशभर में चल रहा था। अतः नाटककार का सामाजिक हृदय इस गीत के रूप में मुखरित हो उठा है। भारतीयता की पुकार एवं नवयुग की चेतना इस गीत की अनूठी विशेषताएं हैं।

अलका द्वारा पर्वतेश्वर की कैद शिविर में गाए गए दो गीत पर्वतेश्वर की भावुकता को जगाने और अलका के आकर्षण पाश में आबद्ध करने में बहुत ही सफल हुए हैं। अपने बलिदान के समय मालविका द्वारा गाया गया गीत –

ओ मेरे जीवन की स्मृति! और कल्याणी द्वारा गाया गया गीत—
सुधा सीकर से नहला दो— भी बहुत ही नाटक के समस्त वातावरण को विषाद पूर्ण बनाने में अत्यंत ही सफल हुए हैं। इन्हीं गीतों के प्रभाव से नाटक सुखांत न होकर प्रसादांत हो गया है।

अंतिम गीत की योजना कार्नेलिया के प्रस्ताव के परिणाम

स्वरूप कराई गई है। इस गीत का उपयोग नाटक में विलक्षण है।
सुवासिनी पूर्व स्मृतियों के झूले में पेंगे बढ़ा रही है –
सखे! वह प्रेममयी रजनी,
आंखों में स्वप्न बनी
सखे! वह प्रेममयी रजनी।

यहां पर आकर कनक किरण के गीत वाली सुहासिनी माधवी कुंजों की कोकिल सुहासिनी यौवन मदिरा को आंखों से झलकाने वाली सुहासिनी प्राणों में स्वर्ण स्वप्निल भार को वहन करती है। यहां उसके यौवन का छूँछा राग मिलता है।

चतुर्थ अंक में सर्वाधिक 7 गीत हैं। इस संबंध में डॉ जगन्नाथ प्रसाद शर्मा का कथन है कि – “चंद्रगुप्त में कार्नेलिया, कल्याणी, मालविका और सुहासिनी सभी गाती हैं और इतना अधिक गाती हैं कि संगीत भी अप्रिय हो जाता है। चतुर्थ अंक के चतुर्थ दृश्य में मालविका तीन बार गाती है। तीन गीतों में 40 मिनट से कम समय न लगेगा। रंगमंच के विचार को छोड़कर यह स्थिति बुद्धि ग्राह्य नहीं, कला कौशल के विचार की तो बात ही बहुत दूर है। इसके अतिरिक्त एक पात्र चाहे कितना भी गान प्रिय क्यों न हो, यदि मात्रा से बहुत अधिक गाता है तो अप्रिय हो जाता है।

एक ही अंक में नाटककार का 7 गीतों का समाहार करना उसकी काव्य-प्रियता का परिचायक है। प्रसाद मूल रूप में कवि हैं। इनकी कारयित्री प्रतिभा का जोड़ मिलने वाला कम से कम इतिहास में तो बिरला ही मिलेगा। विचारों के संगुम्फन के साथ भाव और कल्पना की तीव्रता उनकी सभी साहित्य सरणियों में देखी जा सकती है।

विषय की दृष्टि से तो इनके गीतों की अद्भुत गरिमा दृष्टिगोचर होती है। प्रसाद के नाटकों के गीतों में विरहिणी का अतिरिक्त प्रेम, प्रमादोन्मत्त नारी का मत प्रलाप, असफल व्यक्ति का हृदयोद्गार श्रद्धालु का दृढ़ विश्वास, संन्यासी का अचल वैराग्य, प्रेम पिपाशु का अनुनय विनय, नारी का आत्म समर्पण, मातृभूमि का महत्व, देश प्रेमी की सत्य निष्ठा, पराजित के अश्रु, अतीत स्मृति की टीस और कसक भावना का आरोह-अवरोह आध्यात्म का चिंतन आदि लौकिक पारलौकिक अनेक भावों और विचारों का एक स्थल पर सम्मेलन दिखाई पड़ता है।”

नाट्य गीत-योजना की कलात्मक परिणति अंतिम तीन नाटकों में हुई है। उनके गीत अत्यंत उपयुक्त समय और परिस्थिति के अनुरूप बन पड़े हैं। उनके गीत काव्यात्मक गरिमा, भाव सुषमा एवं लाक्षणिकता के साथ ही स्थान की उपयुक्तता के आग्रह भी हैं। इनके कतिपय गीत अपनी विशिष्टता में हिंदी साहित्य की अमर निधि बन गए हैं। वे प्रगीत मुक्तक बड़ी ही

स्वाभाविकता के साथ प्रभाव वृद्धि के उद्देश्य से जुड़े हुए हैं। इस तरह कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि प्रसाद के नाट्य गीतों की अपनी विशेषता है और उपयोगिता एवं वातावरण की सृष्टि के साथ ही ये गीत चरित्र विश्लेषण में भी सहायक हैं। उनसे कथा प्रवाह में बाधा उत्पन्न नहीं होती। प्रसाद के गीतों का शिल्प विधान प्राचीन नाट्य गीतों से सर्वथा भिन्न हैं। प्रो. केसरी कुमार ने गीत योजना पर विचार करते हुए निर्णायक स्वर में कहा है – “प्रसाद के नाटक साहित्यिक हैं। अतः गीत उनके प्राण हैं। प्रसाद के नाटकों में इतिहास की विस्तृता चाहे एक दोष बन गई हो, उसमें एकांत संभाषण लंबे हो गए हों, हास्य नीरस हो गया हो, किंतु उनके गीत अवश्य मनोरम हैं। प्रसाद के नाटकीय पात्रों को चाहे हम भूल जाएं, उनका कथानक विस्मृत हो जाए, किंतु उनके गीतों को भूलना आसान नहीं। वे तो वड्सवर्थ की सॉलिटेरी रीपर्स (वसपजंतल त्मंचमत) के गीत की भांति अनंत काल तक कर्ण कुंहरों में गूंजते रहते हैं। उनके गीत कहीं-कहीं आवश्यकता से अधिक लंबे हो गए हैं, वे कहीं-कहीं साधारण पाठकों के लिए दुरुह हो गए हैं, किंतु पाठक इन गीतों में इतना रम जाता है कि उनकी लंबाई का ध्यान नहीं रहता और दुरुह स्थल पर क्षण भर टिकने के बाद जब वह उस पर जाता है तब तो उसके हर्ष का ठिकाना ही नहीं रहता। वास्तव में गीत प्रसाद के नाटकों की एक बड़ी विभूति हैं, उसका अपरिहार्य अंश हैं।

संदर्भ ग्रंथ:-

- 1 चंद्रगुप्त –जय शंकर प्रसाद, प्रसाद प्रकाशन गोवर्द्धन सराय वाराणसी 1985
- 2 प्रसाद के नाटक –डा सिद्ध नाथ कुमार अनुपम प्रकाशन पटना 1990
- 3 चंद्रगुप्त: संवेदना और शिल्प अनुपम प्रकाशन पटना 1990
- 4 प्रसाद के नाटक प्रो. केशरी कुमार मोतीलाल बनारसी दास पटना 1950
- 5 हिंदी नाटक उद्भव और विकास –डा दशरथ ओझा राजपाल एण्ड सन्स काश्मीरी गेट दिल्ली 1961
- 6 सुकवि समीक्षा –डा आनंद नारायण शर्मा, भारती भवन पटना 1967

डॉ० चंद्र मणि किशोर

वरीय हिंदी शिक्षक
जिला स्कूल रांची –834001
चलभाष –8862827946
8797687656



सारांश

मनुष्य इस परमात्मा की सृष्टि की अनुपम सृष्टि है। संसार की 84 लाख योनियों में श्रेष्ठ कर्म का फलाफल मनुष्य योनि में जन्म की प्राप्ति है। महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में लिखा है कि—

बड़े भाग मानुष तन पावा ।
सुर दुर्लभ सदग्रंथन गावा ।
आकर चारि लाख चौरासी ।
जाति जीव जल थल नभ वासी ।
सीय राम मय सब जग जानी ।
करऊं प्रणाम जोरि जुग पानी ।

तात्पर्य स्पष्ट है। मनुष्य जीवन में चार प्रकार के सुखों की चर्चा शास्त्रों में कहीं गई है—

प्रथम सुख स्वस्थ काया

दूजा सुख घर में माया ।
तीजा सुख पुत्र आज्ञा कारी
चौथा सुख कहे में नारी ।।

मानव जीवन का प्रथम सुख स्वस्थ काया है और इसके संरक्षक डाक्टर हैं। देवासुरों ने समवेत रूप से रत्न प्राप्ति हेतु समुद्र मंथन किया था। समुद्र मंथनोपरांत 14 रत्न निकले थे—

श्री, मणि, रंभा, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज ।

कल्पतरु, शशि, धेनु, धनु, धनवंतरि, विष, बाज ।।

संसार के 14 महारत्नों में डाक्टर भी एक हैं। ईश्वर इस सृष्टि का कर्ता हैं; लेकिन यह सृष्टि सुरक्षित, संरक्षित एवं स्वस्थ रहे— एतदर्थ परमात्मा ने धनवंतरि के रूप में (स्वयं चिकित्सक के रूप में) इस संसार में आ गया और अपने द्वारा सृजित सृष्टि को संरक्षित, संवर्धित एवं स्वस्थ करने लगा ।

स्वास्थ्य को मनुष्य की अन्यतम संपत्ति कहा गया है। न तो भरे हुए बोरे की तरह मोटा हो जाना अच्छे स्वास्थ्य की निशानी है और न सीक जैसी दुर्बलता ही स्वास्थ्य का उदाहरण है। अपने शरीर और मन को पूरी क्षमता के साथ संचालित करने का सामर्थ्य ही स्वास्थ्य है। बिना किसी कृत्रिम प्रसाधन के जो सौंदर्य चेहरे पर खिलता है, वही स्वास्थ्य का प्रमाण है ।

आचार्य शिवपूजन सहाय ने अपनी सुप्रसिद्ध कहानी 'कहानी का प्लाट' में लिखा है कि— " कहते हैं प्रकृत सुन्दरता के लिए कृत्रिम श्रंगार की जरूरत नहीं होती क्योंकि जंगल में पेड़ की छाल और फूल-पतियों से सजकर शकुंतला जैसी सुंदरी मालूम होती थी, वैसी दुष्यंत के राजमहल में सोलहों श्रंगार करके भी वह कभी नहीं फबी ।"

अंग्रेजी की कहावत है कि:—

मीमदू मंजी पे सवेज,

छवजीपदह पे सवेज

मीमदू बेंतबजमत पे सवेज,

वउम जीपदह पे सवेज.

।दकूमीमदीमंसजी पे सवेज,

म्मतलजीपदह पे सवेज.

अर्थात् जब धन जाता है, तब कुछ नहीं जाता ।

जब चरित्र जाता है, तब बहुत कुछ जाता है ।

लेकिन जब स्वास्थ्य जाता है, तब सब कुछ चला जाता है ।

अगर हम संसार के सुखों का वास्तविक उपभोग करना चाहते हैं, तो सबसे पहले हमें अपने स्वास्थ्य रुपी धन की रक्षा करनी होगी। स्वास्थ्य को किसी मूल्य पर खरीदा नहीं जा सकता। इसीलिए स्वास्थ्य की महिमा सभी कालों और सभी देशों में गाई गई है। स्वस्थ होना मनुष्य का सबसे महत्वपूर्ण वैशिष्ट्य है, क्योंकि स्वस्थ मानव को सृष्टि का सर्वोत्तम श्रृंगार कहा गया है। स्वास्थ्य रुपी धन जिसके पास है, उसके लिए यह पृथ्वी ही स्वर्ग है, अन्यथा नरक से भी बदतर है ।

भारत रत्न डा. विधान चंद्र राय (प्रथम भूतपूर्व मुख्य मंत्री प. बंगाल) की जयंती और पुण्य तिथि के उपलक्ष्य में प्रत्येक वर्ष 1 जुलाई को भारत में नेशनल डाक्टर्स डे मनाया जाता है। उनका जन्म 1 जुलाई 1882 को बांकीपुर पटना में हुआ था और 1 जुलाई 1962 को कोलकाता में उनकी मृत्यु हुई थी। उन्हें 4 फरवरी 1961 को भारत रत्न मिला था। भारत में पहली बार 1991 में डाक्टर्स डे मनाया गया था। अमेरिका में 30 मार्च, क्यूबा में 3 दिसम्बर, और ईरान में 23 अगस्त को डाक्टर्स डे मनाया जाता है। यह विशेष दिवस उन सभी डाक्टरों और स्वास्थ्य कर्मियों को समर्पित है, जो अपनी जान जोखिम में डालकर लोगों की सेवा कर रहे हैं। कोरोना काल में राज्य के 61 डाक्टरों ने मानवता की सेवा करते हुए अपनी जान गंवाई, उन्हें नमन, वंदन अभिनंदन करते हुए परमात्मा से सबके मंगल की कामना है: सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे संतु निरामयाः । स्रवे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुख भागभवेत् ।।

डॉ० जंग बहादुर पाण्डेय

पूर्व अध्यक्ष हिंदी विभाग

रांची विश्वविद्यालय, रांची

चलभाष-8797687656

9431595318, 9386336807



सारांश

हमारे भारतीय समाज में आदिकाल से ही पुरुष नारी-भक्ति स्वस्थ देवी की पूजा-अर्चना या देवी सर्वभूतेषु के मन्नीच्चारण से करते आ रहे हैं। लेकिन जब किसी और के मान-मर्यादा की बात आती है, तब वे विदक जाते हैं। इस दोहरेपन का श्रेय बहुत हद तक हमारे मनुस्मृति और उस तरह के शास्त्रों को जाता है। जिसमें नारी को घर की सजावट और पुरुषों के मन बहलाने का खिलीना माना गया है। अन्यथा पांचाली दौप पर नहीं लगती। सत्य हरिषचन्द्र अपने दान की दक्षिणा चुकाने अपनी स्त्री सध्या को नहीं बेचते। राम द्वारा सीता की अग्नि परीक्षा नहीं ली जाती। हमारे शास्त्रों में इस तरह की कहानियों या किस्सों से यह साफ जाहिर होता है कि उस समय हमारा समाप्त कितना मनुवादी था।

महात्मा बुद्ध को ही लीजिये, वे भी पितृसत्तात्मक मूल्यों के विरुद्ध स्त्र३

(10:11 चउ, 5/7/2025) टपअमा ज्ञांचववतः कौषल्या और तारा दोनों मंत्रविद थीं, द्रोपदी पंडिता थीं, वे नित्य वैदिक प्रार्थनायें किया करती थीं।

सह शिक्षा का ऐसा उदाहरण महाभारत काल में भी मिलता है, अम्बा और शैखावत्य, एक साथ शिक्षा ग्रहण करते थे। बौद्धकाल में आनंद के प्रयास से जब संघ में स्त्रियोग को आने का अधिकार प्राप्त हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में अनेकों स्त्रियों ने ख्याति प्राप्त की। इन भिक्षुणियों में बतीस तो आजीवन ब्रह्मचारिणी थी, उनमें सुमेधा, शोभा, अनोपमा उच्चवंश की कन्याएँ थी। राजगृह के सेठ की पुत्री यद्वाकुंडकेषा ग्यानवान महिला थी। पूर्व वैदिक काल में अपला नामक कन्या, अपने पिता के कृषि कार्य में पूर्णरूपेण सहयोग किया करती थी। उस युग में कन्याएँ गाय दुहना जानती थी। इसलिए उन्हें दुहिता भी कहा गया। कुछ स्त्रियों ऐसी भी हुई जो शासन व्यवस्था और राज के प्रबन्ध में भी दक्ष होती थीं। मत्संग कीमहारानी ने सिकंदर के आक्रमण का प्रतिरोध पति की मृत्यु के बाद, पुत्र की अल्पावस्था के कारण स्वयं शासन किया था। स्पष्ट है कि महिलायें ज्ञान-विज्ञान, तर्क-वितर्क, शासन, युद्ध, सब कुछ कर सकती हैं। उनको केवल समाज में मौका मिलना चाहिये। बेटियाँ, बेटों से कम नहीं होती। शायद पुरुषों को यह समझ अभी तक नहीं आई या आई भी तो मानने के लिए तैयार नहीं हैं, जब तक स्त्रियों को समाज में उचित मान-सम्मान और पुरुषों के बराबर का दर्जा नहीं मिलेगा, स्त्री, शिक्षा और आर्थिक उत्थान से दूर रहेगी और जब तक यह नहीं होगा तब तक हमारा समाज पिछड़ा रहेगा। खुषी की बात है कि आजकल पुरुषों के द्वारा भी कविता कहानी के जरिये स्त्रियों की दयनीय अवस्था को महसूस करने की कवायद शुरू हो चुकी है। जिस दिन स्त्री-पुरुष के बीच की अधिकारिक भिन्नता मिटेगी,

बेटियों को भी बेटों की तरह, पिता के धन में बराबर का हिस्सा मिलना शुरू होगा उसी दिन पालकी और अर्थी वाली कहावत खत्म हो जाएगी। बेटे ससुराल वालों की प्रताड़ना को सहने के लिए मजबूर नहीं होगी। वह वापस अपने घर आ सकेगी। जब समाज इसे कबूल नहीं करेगा बेटियाँ बहू बनकर जलती रहेगी। उनमें कभी आत्म सम्मान, आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता की बात नहीं आयेगी। मेरे हिसाब से महिला सबलीकरण की मुहिम केवल संसद में नहीं, उसके साथ पीहर में भी होनी चाहिए। बेटियों को जब तक निजी जिंदगी में पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा नहीं मिलेगा, संसद में सबलीकरण के बिल को पास करवाकर कुछ नहीं होगा। आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति सामाजिक उत्पीड़न का मुकाबला नहीं कर सकता। धन का अभाव उसे आत्महत्या करने के लिए मजबूर करता है। इसलिए सामाजिक और धार्मिक जीवन दोनों ममें ही, स्त्रियों की पुरुषों के साथ, समान हिस्सेदारी होनी चाहिए। अन्यथा खुद प्रकृति कही जाने वाली नारी, प्राकृतिक, लौकिक अलौकिक सभी सुखों से दूर जीती रहेगी, उसके जीवन में कभी कोई प्रकाश नहीं आयेगा।

सन् 1971 में श्रीमती गाँधी के शासनकाल में पहली बार एक कमेटी का गठन किया गया था। जिसमें बताया गया था कि स्त्रियों के विकास में यदि कोई बात सबसे अधिक बाधक है तो वे हैं हमारी रुढ़ियों, परम्परा और रिति-रिवाज। एक आदर्श स्त्री के समाज के जो मानक हैं वे ये हैं कि स्त्री कभी घर से बाहर नहीं निकलती कभी अपने लिए नहीं मांगती। हमेशा त्याग और तपस्या में लगी रहती है। सन् 1975 में ही संयुक्त राष्ट्र ने 'अन्तराष्ट्रीय महिला वर्ष' या इंटरनेशनल वुमन ईयर मनाया था। इस बात को भी 40 वर्ष हो गए।

यही वह निर्णायक बिन्दू था जहाँ से स्त्रियों की भूमिका में बदलाव आया। आज जो लड़कियों कर रही हैं उन्हें देखकर समाज यही कहेगा :-

हे ईश्वर, हमें बेटियों जरूर देना।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

पुस्तक

स्वीत्ववादी विमर्ष

स्माज और साहित्य

पृष्ठ 18,19,20

डॉ० बबली

पिता श्री रमेश कुमार

दूरभाष 9728919256

विषय स्त्री विमर्ष

पता - पूरणमल कॉलोनी, गुड़गांव रोड, झज्जर 124103

हरियाणा

सारांश

चेतना शब्द बड़ा ही व्यापक है। चेतना की प्रमुख विशेषता परिवर्तनशील है। चेतना प्राणी मात्र में रहने वाला वह तत्व है, जो उन्हें निर्जीव, जड़ पदार्थों से भिन्न बनाता है और उन्हें बोध से परिपूर्ण मानकर जीवधारी सिद्ध करता है। इस प्रकार आत्मा या चैतन्य वह सत्य है जिसका ज्ञान मनुष्य को पशु जगत से भिन्न करता है। चेतना शब्द आत्मा और बुद्धि दोनों से सम्बन्धित है। चेतना स्वयं को और अपने आस-पास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।

हिन्दी विश्वकोश के अनुसार – “चेतना मनुष्य की वह विशेषता है, जो उसे व्यक्तिगत विषय में तथा अपने वातावरण के विषय में ज्ञान कराती है। इसी ज्ञान को विचार-शक्ति कहा गया है। विज्ञान के अनुसार चेतना वह अनुभूति है, जो मस्तिष्क में पहुंचने वाले अभिगामी आवेगों से उत्पन्न होती है। इन आवेगों का अर्थ तुरंत या बाद में लगाया जाता है।”¹

डॉ० रामविलास शर्मा के अनुसार – “चेतना मस्तिष्क में निहित पदार्थ गुण है, प्रकृति के एक अंश का गुण है। इसलिए वास्तविक विचार केवल चिंतन द्वारा अपने भीतर से उत्पन्न नहीं किए जा सकते। विचार के लिए मानव-चेतना और बाह्य जगत का सम्पर्क आवश्यक होता है।”²

चेतना का मूल उद्देश्य ‘सर्वे भवन्तु सुखिन’ है। इसका स्वतंत्र अस्तित्व है और यह मनुष्य का समुचित मार्गदर्शन करती है। मनुष्य की चेतना दृष्टिगत और समाजगत दोनों रूपों में दिग्दर्शित होती है। वैयक्तिक चेतना से ही सामाजिक चेतना का विकास होता है। चेतना ही सारी सृष्टि का आधार है। जिस व्यक्ति के जीवन में चेतना का अभाव रहता है, वह प्रतिक्रिया और उपद्रव को सहन करता सुखमय जीवन व्यतीत नहीं करता, उसकी भौतिक निःस्पृहता में छिपा अन्तर अशान्त रहता है। चेतना जीवन में सदैव प्रवाहित होती रहती है।

सामाजिक चेतना मानसिक प्रक्रिया है। सामाजिक चेतना एक जीवन दृष्टि है। जब समाज के आंतरिक एवम् सम्पूर्ण परिवेश में परिवर्तन होता है, तभी सामाजिक चेतना का जन्म होता है। डॉ० रत्नाकर पाण्डेय लिखते हैं कि – “सामाजिक चेतना अभावात्मक या नकारात्मक नहीं होती। यह प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान रहती है। परन्तु रूढ़ि, अशिक्षा, अभावों के कारण दुश्प्रभावित एवम् कुंठित हो जाती है। इस दुश्प्रभाव से मुक्त रहना और कुंठा को अपनी अंतःवृत्ति से तिरोहित बनाए रखना ही सामाजिक चेतना है।”³

व्यक्ति की सामाजिक चेतना विकासशील है तथा युग के

साथ बदलती रहती है। सामाजिक चेतना व्यक्ति की भी हो सकती है और समूह की भी। लौकिक जीवन में चेतना की व्यापकता सामाजिक तादात्म्य में ही अभिव्यक्त होती है। व्यक्ति की सामाजिक चेतना विकासशील है तथा प्रत्येक युग के साथ बदलती रहती है।

सन् 1986 में साहित्य अकादमी से पुरस्कृत श्रीकान्त वर्मा समकालीन हिन्दी कविता के विशिष्ट हस्ताक्षर हैं। मार्क्सवादी और समाजवादी विचारधारा से प्रभावित श्रीकान्त वर्मा की राजनीति में सक्रिय दिलचस्पी थी। सरहद पर, भटका मेघ, मायादर्पण, दिनांरभ, जलसा घर, गरुड़ किसने देखा आदि उनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं। 18 सितम्बर 1931 को जन्में श्रीकान्त वर्मा का देहांत 29 मई 1986 को न्यूयार्क, अमेरिका के स्लोन केंटरिंग मेमोरियल अस्पताल में हुआ।

श्रीकान्त वर्मा साठोत्तरी कविता के बहुचर्चित और विवादास्पक कवि रहे हैं। इसके मुख्यतः दो कारण हैं – एक तो कविता में नया प्रयोग और दूसरा उनकी राजनीति में हिस्सेदारी। परन्तु श्रीकान्त वर्मा ने अपनी राजनीति की दुनिया और साहित्य की दुनिया को अलग-अलग सिद्ध करते हुए कहा है कि – “मेरे साहित्य और मेरी राजनीति की दुनिया अलग-अलग हैं। मेरा विरोध अधिक होने का कारण शायद मेरे राजनीतिक विचार हैं – कविताएँ नहीं। मान्यताओं को समझने की कोशिश कम की गयी है। मेरे पोलिटिकल ऐंसेशिएशन को दृष्टि में रखकर एल्ट्रालेफ्ट की ओर से मुझ पर लगातार आक्रमण किये गये हैं। मगर मैं इसका बुरा नहीं मानता। आलोचना और आक्रमण का अधिकार प्रत्येक नागरिक को है। यह जरूर है कि यदि हम किसी की राजनीतिक मान्यताओं के आधार पर उसके कृतित्व को जांचने का प्रयत्न करेंगे तो तुलसीदास से लेकर इलियट, ग्राटफीड ब्रेन जैसे संसार के अच्छे से अच्छे, लेखकों-कवियों को रद्द करना पड़ेगा। क्या यह उचित होगा।”⁴

श्रीकान्त वर्मा के काव्य में जीवन के प्रति आस्था का सुन्दर राग है। जीवन में व्याप्त घृणा, कुंठा, अनास्था, अराजकता को भेदकर उनकी कविता में अद्भुत, अपूर्व उल्लास मिलता है जो जीवन में गीत-संगीत का समावेश करता है।

मैं बिन पंखुरी / बिन टहनी का गंधफूल

अब भी ताजा हूँ / सुरभित हूँ।

मैं हर ऋतु में गमगमा रहा / मैं हर मौसम में
जीवित हूँ।

मैं हर बच्चे की आंखों में

मैं हर लैला के / होठों पर

मैं मेहंदी रची / हथेली पर।⁵

आस्था का स्वर जीवन में राग-रंग का समावेश कर रसमय, प्रेममय बनाता है। कवि का प्रेम व्यक्तिनिष्ठ न होकर समष्टि के लिए है। वह उतना प्रेयसी के प्रति विदग्ध नहीं है जितना समाज के दुख-दर्द में पीड़ित है।

तुझको देखता हूँ मैं/ चीर-चीर कर अपने
जाले और धुंध और अपना आसपास।
किन्तु तूने कभी जाना नहीं/ मैं ही हूँ
पीली आभा का विसुध शाप लिए
दुपहर भर अपने सुलगता/ पलाश।⁸

नदी, पहाड़, पीपल, सावन, झाड़ी, झुरमुट, खेत, गुलाब, सूर्य, चांदनी, आदि प्रकृति के सारे अनुचर उनके काव्य में सौन्दर्य भर देते हैं।

परिवेश की सच्चाई का यथार्थ चित्रण करते हुए कवि ने समकालीन कवियों का विरोध भी किया। लेखनी की सच्चाई का पक्ष लेते हुए वे ऐसे कवियों को धिक्कारते हैं जो अपने कवि कर्म की अनदेखी कर स्वार्थ के वशीभूत छद्म कविता लिख रहे हैं।

बरस रहा है अंधकार/ मगर उल्लू के पटटे
स्त्रियाँ रिझाऊ कविताएँ/ लिख रहे हैं।⁷

श्रीकांत वर्मा बेचैन और उत्तप्त कवि इस मायने में ज्यादा है कि उन्होंने अपनी कविता के जरिये न केवल अपने समय का सीधा, तीक्ष्ण और अन्दर तक तिलमिला देने वाला भयावह साक्षात्कार किया बल्कि हर अमानवीय ताकत के विरुद्ध एक निर्भय और नंगी भिड़ंत की।

प्रायः शासक से प्रश्न करने वाला विद्रोही लगता है और उसे अपने साम्राज्य की शांति के लिए खतरा समझ बैठता है। जबकि ऐसे विद्रोही ही शासन के हितैशी होते हैं, बशर्ते उनकी बात पर ध्यान दिया जाए और समस्या का साधान करने में शासक प्रवृत्त हो जाए। पर मगध हो या हस्तिनापुर (या दिल्ली) अहंकारी शासक किसी की नहीं सुनते। शायद शासन में सुनने का रिवाज ही नहीं है। 'मगध' में भी छींकने तक की स्वतंत्रता नहीं है वहाँ का हर नागरिक पराधीन है।

कोई छींकता तक नहीं/ इस डर से
कि मगध की शांति भंग न हो जाए
मगध को बनाए रखना है तो
मगध में शांति/ रहनी चाहिए।
मगध में तो शांति है/ कोई चीखता तक नहीं
इस डर से कि मगध की व्यवस्था में
दखल न पड़ जाए।⁹

इतिहास बोध का प्रमाण उनकी कविताएँ आज की परिस्थिति को उजागर करती हैं। आज की त्रासदी ये है कि – “गणतंत्र दिवस कितना बड़ा शङ्क्यंत्र है गरीब जनता के विरुद्ध। आजादी के पच्चीस साल हो गए मगर आजादी का दिखावा वास्तविक आजादी नहीं। जश्न, समारोह, भारत से अधिक समारोही देश कोई नहीं। समारोह की असलियत पर विचार करने की फुर्सत से उसे वंचित कर दिया जाता है, उसे शामिल कर लिया जाता है। भारतीय व्यवस्था कितनी चतुर रही है।”⁹

ऐसा समाज मरघट के समान होता है, जहाँ न्याय-अन्याय, अच्छा-बुरा सब बेमानी हो जाते हैं। कवि का स्पष्ट संदेश है कि ऐसे बंद समाज और प्रशासन में, जहाँ बहस और असहमति व्यक्त करने का अधिकार नहीं होता उसकी प्रगति रुक जाती है। वह देश कभी भी नये आविश्कार नहीं कर सकता, वहाँ कुछ भी रचनात्मक नहीं हो सकता। कवि की कविताएँ साक्षी हैं इस लोकतंत्र में घुटते हुए जी रहे प्रजाजनों की; जो फैसला नहीं लेती, न कुछ करने की हिम्मत रखती है। केवल डरती रहती है कि पता नहीं उसकी अंतिम घड़ी कब आ जाए।

यहाँ के लोगों की ही तो विवशता है
वे जन्म लेते हैं, चहचहाते हैं, आंख लड़ाते हैं
चौपड़ बिछाते/ जब तक वे लिप्त हो
कैसी विडम्बना है मित्र/ जब तक वे लिप्त

हो

तब तक अवधि समाप्त।¹⁰

श्रीकांत वर्मा सत्ता से ज्यादा उन लोगों का विरोध करते हैं जो चुपचाप अन्याय सहन करते हैं कहीं भी अन्याय का विरोध नहीं करते।

युद्ध हुआ तो मुझको ही मारा जाना है।
नहीं हुआ तो भी मुझको ही मारा जाना है।
उस युग में मुझको कहते थे अश्वत्थामा।
क्या कहते हैं अब जब सब कुछ बदल गया है।

अश्वत्थामा ट्रक के नीचे कुचल गया है।¹¹

उनकी कविताएं आम जनता की, इस सभ्यता में बेसहारा, बेमतलब, शोषित होकर जीवन जीने की स्थिति को दर्शाती हैं। वह न किसी के पक्ष में कोई तर्क करती है न किसी के पक्ष में कोई दलील पेश करती है। आज समाज में सभी खंडित हैं, सब मे टूटन है। इसे व्यक्त करने के लिए पहले के मानदंड बेकार साबित होंगे, जो संसार की नैतिकता, मूल्यपरकता को व्यक्त

करने के लिए बनाये गये थे, या बने थे मनुष्यता की लड़ाई लड़ने के लिए वे साहित्य को सबसे बड़ा हथियार मानते हैं। वे अपनी डायरी में लिखते हैं –

मगर कोई मुझसे/मेरा सत्य नहीं छीन सकता।
मेरी कलम नहीं छीन सकता
जिसे मैंने राजनीति के धूल-धक्कड़ के बीच
हिफाजत से रखा/हर हालत में लिखता रहा।¹²

स्वतंत्रता के बाद राजनीतिक मूल्य बदल गये हैं। राजनीति में चुनाव ही प्रमुख हो गया है। चुनाव को जीतना ही राजनेताओं का प्रमुख ध्येय हो गया है। प्रजा के सुख-दुख से, देश के कलात्मक उत्कर्ष से राजनीति का कोई रिश्ता नहीं रह गया है। राजनेताओं ने जनता को पूरी तरह भुला दिया है। वे राजनेताओं को प्रजा के प्रति कर्तव्यबोध कराते हुए कहते हैं कि –

शून्यों से मुंह फेर खड़े होने वाले
शून्य अगर हट जाएं
टूट की अंगुली से केवल रह जाओगे
मत भूलो/शून्य शक्ति है, शून्य प्रजा है।¹³

राजनीति और राजपथ बड़ा हिंसक होता है। उस पथ पर हिंसा ही हिंसा होती है। राजपथ की प्रतिध्वनियाँ कविता में वे लोगों की बदलती प्रवृत्ति का चित्रण करते हैं। राजनीति में बहुत से ऐसे लोग हैं जो पहले सदाचारी, संयमी, त्याग, सेवा, जैसे गुणों से युक्त थे किन्तु राजनीति के पथ पर चलते हुए वे क्रूर, हिंसक और स्वार्थी हो गये हैं।

यह पथ मनुष्य भक्षी
यह पथ यात्रा भक्षी
इस पथ पर गूँज नहीं, हम गैरों की
इस पथ/में मुक्ति नहीं
दिशा नहीं/दीप नहीं
यह पथ मानुषभक्षी/आओगे क्या तुम भी
क्या तुम भी/क्या तुम भी?¹⁴

राजनीतिक हिंसा और व्यापक संवेदना शून्यता का कवि ने यथार्थ चित्रण किया है। स्पेन, कांगो और वियतनाम के व्यापक जनसंहार को चित्रित किया है। लोग इतने संवेदना शून्य हो गये हैं कि युद्ध में मरते हुए लोगों की करुणापूरित चीखें उन्हें नहीं सुनाई देती वे चैन से क्रिकेट और मौसम का समाचार सुन रहे हैं। उन्हें उस स्त्री की चीखें नहीं सुनाई पड़ती जिसके पति की हत्या कर दी गयी है।

खुशकिस्मत हैं न
जो चुप रहकर देखते रहे सारा दृश्य
गिनते रहे शव/सुनते रहे
क्रिकेट और मौसम के समाचार
मुबारक हो उन्हें यह समय
जिन्हें सब कुछ/सुनाई पड़ता रहा
यहाँ तक कि पत्ते का गिरना भी
केवल सुनाई नहीं पड़ी
उस स्त्री की चीख जिसका पति
घर से निकलते ही ढेर कर दिया गया।¹⁵

आज हमारा देश उस सनातन संदेश की अर्थवत्ता खोता जा रहा है जिसमें कहा गया है कि घृणा नहीं प्रेम करो। यह प्रेम करना कैसे संभव हो सकता है जब चारों तरफ हत्यारे ही हत्यारे हो। क्रूर, हिंसक और हत्यारे लोगों की हिंसात्मक वृत्ति का यथार्थ चित्रण करते हुए कवि कहता है कि –

कायर/धोने आये हो तुम
एशिया की नदियों में/खून से रंगे अपने हाथ
हत्यारे/लौट जाओ
छोड़ दो मुझे मेरे हाल पर।¹⁶

कवि को अपनी धरती, अपनी मिट्टी, अपने देश की वनस्पतियों से गहरा प्यार है। यह प्यार मनुष्य मात्र का प्यार तो है ही साथ ही साथ उनके राजनीतिक जीवन की भी मनोमय परिणति है।

मेरा मन भर आया है कि/अब न रुकूंगा
मूठों पेड़ों, पौधों, अंकुओं की अब मौन पुकार

सुनूंगा

सुखी रहे तेरी अलका, मैं यहीं झरूंगा
अगर मृत्यु भी मिली मुझे तो/यही मरूंगा।¹⁷

प्रवृत्ति कवि की सहचरी है, वह उसकी विश्राम स्थली है। कवि प्रकृति से जुड़कर, उसमें लीन होकर अपने जीवन को सार्थक करना चाहता है। चांद, सूरज, सुबह, संध्या, वृक्ष, वनस्पतियों आदि का चित्रण कवि ने किया है। संध्या के बिम्बात्मक चित्रण से गांव की सांस्कृतिक छटा का दृश्य प्रस्तुत करते हुए कवि कहता है कि –

डूब गये कहीं किसी वंशी के स्वर/सांझ हुई।
म्हुआ डूबे वन की गलियां सुनसान
कहीं उठी लहर, कहीं टूट गये गान
भीगी है दो आंखें, भीगा आंचर/सांझ हुई।

हाथों में फिर थिरकन, ओठों पर गीत
फिर आना ओ पाहुन, फिर आनामीत
सरिता के सूने तट संझा के फूल
रतनारी चांद उगा, बजते मंदिर/सांझ हुई।¹⁸

श्रीकांत वर्मा आस्था-अनास्था, आशा-
निराशा, के बीच जीवित रहे। इनके बीच पिसते रहे। समय को
बदलने की उन्होंने भरसक कोशिश की। समय के साथ नहीं चले,
जीवन के अंत तक लड़ते रहे। जनता के लिए मानवीयता के
लिए। वे हर तरफ से, हर तरह की लड़ाई लड़ते रहे। हर विरोध
का सामना उन्होंने पूरी शक्ति से किया। उनकी सबसे बड़ी
उपलब्धि उनकी खंड-खंड सर्जना है क्योंकि इसके बिना यथार्थ
को सही प्रकट नहीं किया जा सकता। कवि ने अपने काव्य में उन
तमाम रिश्तों को पकड़ने की कोशिश की है, जिनसे मनुष्य जीवन
भर जूझता है। मनुष्य और समाज का रिश्ता, समाज और
राजनीति का रिश्ता, स्त्री और प्रेम का रिश्ता। इन सबके
अतिरिक्त एक और रिश्ता है, जो आदमी के अकेलेपन की नियति
से जुड़ा है। कवि अकेलेपन से बराबर लड़ता है। उनकी कविताएं
आसपास के परिवेश, रोजमर्रा की जिन्दगी और मानवीय रिश्तों
की सच्चाईयों से जुड़ी है। कविका काव्य संसार विविध रंगों से
रंगा है। वहाँ प्रेम के पावन स्वर है, प्रकृति की मनोरम छटाएं है,
जीवन की आशा-आकांक्षाएं है। उनकी कविताओं में गहरी
सामाजिक चेतना और गहरा दायित्व बोध देखा जा सकता है।

संदर्भ —

1. सं० रामप्रसाद त्रिपाठी, हिन्दी विश्वकोश, खंड 4, पृ० 282,
नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी
2. सं० कुँवरपाल सिंह, यथार्थ जगत और साहित्य, पृ० 69
3. रत्नाकर पाण्डेय, हिन्दी साहित्य में सामाजिक चेतना, पृ०
156, पांडुलिपि प्रकाशन, दिल्ली
4. सं० अरविंद त्रिपाठी, श्रीकांत वर्मा रचनावली खण्ड 1, पृ० 11,
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
5. वहीं, पृ० 45
6. वहीं, पृ० 109
7. वहीं, पृ० 43
8. वहीं, पृ० 87
9. श्रीकांत वर्मा, गरुड किसने देखा, डायरी, 26 जनवरी, 1973,
पृ० 19-20
10. वहीं, पृ० 45
11. वहीं, पृ० 42

12. श्रीकांत वर्मा रचनावली(खण्ड 2), पृ० 438
13. वहीं (खण्ड 1), पृ० 80
14. वहीं, पृ० 82
15. वहीं, पृ० 323
16. वहीं, पृ० 326
17. वहीं, पृ० 56-57
18. वहीं, पृ० 61

डॉ० सुमन रानी
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
लालनाथ हिन्दू कॉलेज,
रोहतक (हरियाणा)



सारांश :

हरियाणा की पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका ने सामाजिक और राजनीतिक संरचनाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। यह अध्ययन 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के तहत महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और सशक्तिकरण पर केंद्रित है, जिसमें ग्रामीण और शहरी निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण सुनिश्चित किया गया है। यह शोध हरियाणा के विभिन्न जिलों में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी, शिक्षा का अभाव, पारिवारिक दबाव, वित्तीय कठिनाइयों, और सामाजिक मानसिकता पर केंद्रित है। साथ ही, यह महिलाओं की सफल कहानियों को भी उजागर करता है। यह अध्ययन पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से महिलाओं के सशक्तिकरण के महत्व को स्पष्ट करता है और उनके योगदान को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण, और राजनीतिक जागरूकता पर जोर देता है।

Keyword: हरियाणा, पंचायती राज, महिलाओं का सशक्तिकरण, राजनीतिक भागीदारी, 73वां संविधान संशोधन, ग्रामीण विकास, सामाजिक बाधाएं, महिला नेतृत्व

परिचय :

राजनीति में लंबे समय से पुरुषों का वर्चस्व रहा है। गांधीजी ने कहा था, महिलाओं के प्रति अपने व्यवहार में, पुरुषों ने इस सच्चाई को स्वीकार नहीं किया कि उन्हें समान माना जाना चाहिए।¹ चुनावी राजनीति में, भारत में महिलाओं को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिलता। संसद और राज्य विधानसभाओं में उनकी संख्या कम है। महिलाओं को राजनीति में सक्रिय भागीदार बनाना जरूरी है ताकि वे समाज के परिवर्तन और विकास का हिस्सा बन सकें।¹

स्वामी विवेकानंद ने कहा था, जब तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होगा तब तक दुनिया का कल्याण नहीं हो सकता।² अच्छी शासन व्यवस्था के लिए महिलाओं का उचित प्रतिनिधित्व जरूरी है। पंचायती राज व्यवस्था इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। महिला सशक्तिकरण में पंचायती राज की विशेष भूमिका है, क्योंकि यह सामाजिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देने का प्रयास करता है।²

भारत में महिला सशक्तिकरण एक नई अवधारणा है। भारतीय समाज पारंपरिक दृष्टिकोण की विशेषता है। वैदिक युग में महिलाओं को स्वतंत्रता थी और उन्हें मेलों और सभाओं में जाने की पूरी आजादी थी। मुगल काल में महिलाएं असहाय और पुरुषों पर निर्भर हो गईं। ब्रिटिश साम्राज्य के दौरान महिलाओं की स्थिति में कुछ सुधार हुआ।³

महिलाएं राजनीतिक साम्राज्य की सदस्य हैं, लेकिन उन्हें

राजनीतिक भागीदारी में पुरुषों के बराबर नहीं माना जाता। अनुच्छेद 325 और 326 उन्हें समान राजनीतिक अधिकार प्रदान करते हैं। वे इस अधिकार का पूरी तरह उपयोग नहीं कर रही हैं। राजनीति में महिलाओं को सशक्त बनाने वाले विशेष कानूनों या योजनाओं का या तो अभाव है या उन्हें लागू करने का सुस्त रवैया है।⁴

भारत में सरकार का दृष्टिकोण महिलाओं को कल्याण नीतियों के तहत लक्ष्य बनाना रहा है। पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के कल्याण और विकास पर बल दिया गया है। आठवीं पंचवर्षीय योजना के तहत महिलाओं के विकास के लिए विशेष कार्यक्रम तैयार किए गए। सरकार ने कई नीतियाँ महिलाओं के लिए अपनाई और योजनागत खर्च में बढ़ोतरी की। महिलाओं को प्रदत्त संवैधानिक एवं कानूनी अधिकारों की निगरानी हेतु राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई। 73वाँ एवं 74वाँ संविधान संशोधन विधेयक महिलाओं के लिए स्थान सुरक्षित करते हैं।⁵

पंचायतों में महिलाओं की सहभागिता अनिवार्य हो गई है, लेकिन विधानमाला से बदलाव नहीं आता। भारतीय समाज में महिलाओं को दबाकर रखा गया है। नवीन पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका में कई समस्याएँ उजागर हुई हैं⁶

- शिक्षा का अभाव
- प्रशिक्षण का अभाव
- स्थानीय दलालों की भूमिका
- महिला प्रतिनिधियों के प्रति हिंसा
- सामाजिक समस्याएँ
- पारिवारिक समस्याएँ
- जाति व्यवस्था
- वित्तीय समस्या

एमबीए की एक लड़की सरपंच बनकर सुखियों में आई थी, जिससे पढ़ी-लिखी महिलाओं को भी यह क्षेत्र आकर्षक लगने लगा है। राजनीति में महिलाओं की भागीदारी को लेकर शोध जरूरी है। हमें उनके मतदान व्यवहार, चेतना और राजनीतिक गतिविधियों में उनकी भूमिका का विश्लेषण करना चाहिए। सशक्तिकरण महिलाओं को राजनीतिक रूप से जागरूक बना सकता है।⁷

पंचायती राज की नयी व्यवस्था के बाद महिलाओं की निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी बढ़ रही है, लेकिन समाज की मानसिकता के चलते उन्हें कई कठिनाइयाँ हैं। महिलाएं अब राजनीतिक रूप से जागरूक हो रही हैं और अपने हक के लिए आगे आ रही हैं।⁸

महत्वपूर्ण विषय:

1. पंचायती राज में महिलाओं की भागीदारी

- पंचायतों में महिलाओं की आरक्षित सीटों का प्रभाव।
 - महिला सरपंचों और पंचों की सफलता की कहानियाँ।
- 2. चुनौतियाँ और बाधाएँ:**
- शिक्षा का अभाव और इसका राजनीतिक भागीदारी पर प्रभाव।
 - सामाजिक और पारिवारिक दबाव।
 - वित्तीय कठिनाइयाँ और संसाधनों की कमी।
- 3. सशक्तिकरण के लिए आवश्यक कदम:**
- शिक्षा और प्रशिक्षण की भूमिका।
 - महिलाओं के लिए विशेष नीति और योजनाएँ।
 - जागरूकता अभियान और समुदाय आधारित कार्यक्रम।

निष्कर्ष:

भारत जैसे देश में, जहाँ महिलाएं जनसंख्या का आधा हिस्सा हैं, उनकी राजनीतिक भागीदारी स्वस्थ लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। हरियाणा की पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी ने सामाजिक और राजनीतिक बदलाव लाए हैं। हालांकि आरक्षण के माध्यम से उन्हें स्थान दिया गया, लेकिन समाज और परिवार के स्तर पर कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इनसे निपटने के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण और जागरूकता पर जोर देना जरूरी है।

यह अध्ययन हरियाणा की पंचायतों में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और सशक्तिकरण का विश्लेषण करता है। गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान विधियों के माध्यम से यह निष्कर्ष निकलता है कि सही अवसर और समर्थन मिलने पर महिलाएं समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकती हैं।

References:

1. **Kumar, R.** 2015 "Women Empowerment through Panchayati Raj Institutions." *Global Journal for Research Analysis*, April.
2. **Singh, P.** 2020 "Role of Panchayati Raj in Women Empowerment." *International Journal of Social Sciences and Humanities Research*, vol. 14, no. 2,
3. **Kaur, S.** 2014 "Women Empowerment and Political Participation in India." *International Journal of Political Science*, vol. 8, no. 3.
4. **Sharma, R.** 2017 "Women's Political Participation and Empowerment in India." *International Journal of Women Studies*, vol. 12, no. 2,
5. **Rao, S.** 2016 "Constitutional Provisions and

Women's Rights in India." *Journal of Constitutional Studies*, vol. 16, no. 1,

6. **Patel, A.** 2018 "Barriers to Women's Participation in Panchayati Raj Institutions." *Indian Journal of Social Issues*, vol. 29, no. 4,
7. **Bhat, R.** 2019 "Empowerment of Women in Indian Politics: A Case Study." *Journal of Political Research*, vol. 10, no. 2,
8. **Verma, T.** 2020 "Social Change and Women's Political Participation in India." *Indian Journal of Political Science and Governance*, vol. 11, no. 1,

मोनिका

शोधार्थी

राजनीति विज्ञान एवं सार्वजनिक प्रशासन विभाग,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
(पंजीकरण संख्या: 21-BMU-6507)

डॉ. निशा कुमारी

शोध-निर्देशक

राजनीति विज्ञान एवं सार्वजनिक प्रशासन विभाग,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक, हरियाणा

A STUDY ON INVESTOR'S PERCEPTION TOWARDS INVESTMENT IN MUTUAL FUNDS

Dr. Anju Singla



ABSTRACT

The mutual fund sector is one of the fastest growing sector in Indian Economy and have awesome potential for sustained future growth. Financial markets are becoming more extensive with wide range financial products trying innovations in designing mutual fund portfolios. Mutual fund makes savings and investment simple, accessible and affordable. The advantages of mutual funds include professional management, diversification, variety, liquidity, affordability, convenience and ease of record keeping as well as strict government regulations and full disclosure. Thus, it has become imperative to study mutual funds from a different angle which is to focus on investor's perception and expectations. This research paper focused attention on number of factors that highlights investors perception towards mutual funds. It was found that investors were not fully aware about mutual funds still they were rely upon bank and post office deposits. Most of the investors used to invest in mutual funds for not more than three years and they used to quit from the fund which were not giving desired results. Equity option and SIP mode of investment were on the top priority in investors list. It was also found that maximum number of investors did not analyze risk in their investment and they are depending upon their broker and agent for this work.

KEYWORDS: Investor, Mutual Fund, Risk-return Analysis, Investment preference

INTRODUCTION

Mutual funds are institutions that collect money from several sources – individuals or institutions by issuing units, invest them on their behalf with predetermined investment objectives and manage the same. They invest the money across a range of financial instruments falling into two broad categories – equity and debt. They have a team of skilled people who identify the right stocks and debt instruments and construct a portfolio that promises to deliver the best possible returns at the minimum possible cost. Mutual fund issues units to the investors in accordance with quantum of money invested by them. Investors of mutual funds are known as unit holders. The profits or losses are shared by the investors in proportion to their investment. The mutual funds

normally come out with a number of schemes with different investment objectives which are launched from time to time. A mutual fund is required to be registered with SEBI which regulates securities market.

COMPARISON BETWEEN INVESTMENT IN BANK AND MUTUAL FUND

Factors	Bank	Mutual Fund
Returns	Low	Better
Administrative Exp.	High	Low
Risk	Low	Moderate
Investment Options	Less	More
Network	High Penetration	Low but improving
Liquidity	Less	Better
Guarantee	Maximum Rs. 100000 on deposits	None

REVIEW OF LITERATURE :

Singh and Jha (2009) conducted a study on awareness & acceptability of mutual funds and found that consumers basically prefer mutual fund due to return potential, liquidity and safety and they were not totally aware about the systematic investment plan. The investors will also consider various factors before investing in mutual fund.

Desigan et al (2006) conducted a study on women investor's perception towards investment and found that women investors basically are indecisive in investing in mutual funds due to various reasons.

OBJECTIVES OF THE STUDY :

The research paper focused attention on number of factors that highlights investor's perception about mutual funds.

- To study Preference of investors about different investment options.
- To study investors knowledge of risk in investment and risk analysis.
- To study investors Preference over switching from fund investment.
- To study investors Preference over nature of fund holding and
- To study investors Preference upon time of holding of fund

THE SAMPLE SIZE :

The sample size consists of 150 respondents from Rohtak city divided on the basis of different variables such as income, age, occupation, gender, marital status, family size,

religion, academic qualification and annual savings.

TOOL OF DATA COLLECTION:

The data is collected through structured questionnaire. It is so designed to collect all required information from investors of mutual fund.

DATASOURCE:

The primary and secondary data would be used for the study. Primary data will be collected through questionnaire. Secondary data collected from related research work, published books and reports of SEBI and RBI and other authorised sources of data.

TOOLS OF DATA ANALYSIS:

The data and information collected will be tabulated, processed and its findings presented in a systematic manner. Statistical tools Chi-square test, tally, mean and median used.

RESULTS AND DISCUSSION:

1. Preference of investors about different investment options – To study this objective, respondents are asked to give rank 1-8 (highest rank as 1 and lowest as 8) to following investment options:-

Table 1: Investment preferences of investors

	Life Insurance scheme	Gold	PPF	Bank Deposits	Post office scheme	Mutual Funds	Real Estate	Shares and Debentures etc.
No. of Respondents	150	150	150	150	150	150	150	150
Mean	5.73	6.36	5.05	6.24	5.10	4.92	4.81	3.67
Rank	3	1	5	2	4	6	7	8

It is revealed from the above table 1 that investing in gold is most desirable investment. Bank deposits and fixed deposits are on 2nd number. Life insurance schemes on 3rd. Mutual funds comes on 6th number in investor's rank. It reflects that investor prefers primarily a safe mode of investment and then returns come on second place for investor.

1. Preference of different investment avenues by investors – Here, respondents were asked to give points based on 5 point Likert scale (strongly unimportant strongly important giving 1.....5). Respondents were asked to give

their preference points to different investment options on the basis of safety, liquidity, reliability, tax benefit and high return. Median values were taken in this regard to find clear results.

Table 2: Preference of different investment avenues by investors

	Gold	FDs*	Shares & Debenture	Post Office Schemes	MFs	Life Insurance Policies	NSS Schemes	PPF
Safety	4	4	1	5	3	4	5	5
Liquidity	5	4	4	3	3	2	1	2
Reliability	4	5	2	4	3	4	5	4
Tax Benefits	1	2	3	5	4	4	5	4
High Returns	4	3	5	1	4	2	2	2

It is clear from the above table 2 that except tax benefits gold is most preferred and mutual fund has got average points in all parameters like safety, liquidity, reliability, tax benefit and high returns amongst all popular investment options.

1. Knowledge of risk factors in Mutual Fund Investment – To get insight in this objective, a question was asked to the respondents whether they know about risk factor in their investment in mutual funds. The following table shows the results:

Table 3: Knowledge of risk factor in Mutual Fund Investment

	No. of respondents	Percent	Cumulative Percent
Yes	105	70	70
No	45	30	100
Total	150	100	

Table shows that 70% investors know about risk factors in their investment in mutual fund. It means investors were very well aware of risk factor.

Table 4: Risk analysis in MF investment by investors

	No. of Respondents	Percent	Cumulative Percent
Yes	78	52	52
No	72	48	100
Total	150	100	

Results in table 4 shows that 52% investors analyze the risk in their mutual fund investment though risk awareness percentage was 70%. It means most of the investors know about risk in investment but have not sufficient knowledge to analyze the risk in investment.

5. Another question was asked to respondents that investment in share market is safe when investment was

done through MF then direct investment.

Table 5. Mutual Fund is safe mode to invest in share market then direct investment

	No. of Respondents	Percent	Cumulative Percent
Yes	140	93.33	93.33
No	10	6.67	100
Total	150	100	

Table 5 shows that out of 150 respondents 140 confirms it, as a safe mode. The above table shows that a huge number of investors think that Mutual Fund is safe medium to invest in share market as compared to direct investment.

5. Preference upon nature of fund holding – To know about the nature of fund holding behaviour of investor, a question was asked, “what is the nature of their fund, whether it is (a) Equity fund (b) Debt fund (c) Balanced fund or (d) any other fund”. The table 6 shows the result as-

Table 6: nature of fund holding

	Frequency	Percent	Cumulative Percent
Equity Fund	80	53.33	53.33
Debt Fund	30	20	73.33
Balanced Fund	35	23.33	96.66
Others	5	3.34	100
Total	150	100	

The above table shows that 53% investors have their investments in equity fund. 20% have in debt fund. 23.33% in balanced fund and only 3.34% in other type of funds. The test applied in the present study reveal that most of the investors prefers to invest in equity option.

5. Preference upon information source and time of holding of mutual fund investment – to know about the information source of investors, “a question was asked to put a tick on preferable information source among the options given in the table”. The frequency tally table 7 describe that about 33.33% investors took help of brokers and agents and 28% investors invest in mutual funds as per suggestions and information received from friends and relatives.

Table 7: Preference upon information mode

	Frequency	Percent	Cumulative Percent
Friends and Relatives	42	28	28
TV / Radio	12	8	36
Mails	2	1.33	37.33
Newspaper & magazines	14	9.34	46.67
Brokers & Agents	50	33.33	80
Self Decision	30	20	100
Total	150	100	

5. Fund holding time period – A question was asked to investors regarding their present fund holding time period & results were shown in the table 8 below –

Table 8: Time of holding investments

	Frequency	Percent	Cumulative Percent
Less than 1 Year		13.33	13.33
1-3 Years	75	50	63.33
4-6 Years	30	20	83.33
7-9 Years	10	6.67	90
More than 10 Years	15	10	100
Total	150	100	

The above table reveals that 50% investors prefer to hold the investment in mutual fund for 1-3 years, 20% for 4-6 years holding period.

Suggestions:

There are some suggestions for better investing for investors that they should keep their investment for long time keeping in mind the level of risk and saving pattern. They should take help of private financial consultants to have investment portfolio so as to reduce risk in investment. They should not invest in high volatile funds. They should collect all possible information before investment. Periodical review should be done for investment. Risk analysis should be done regularly. Maintain proper records for each transaction. A careful and reasonable diversification of investment in mutual funds should also be there on investor's part to balance the risk involved in investment. It is also suggested that investor should have a habit of regular savings to earn some more extra consistently through changing market scenario since small savings will grow into bigger base. One of the strong suggestions is that to invest a reasonable part of savings into liquid securities so that to meet any contingency.

Conclusion

Mutual Funds are among the most preferred investment instruments. For middle income individuals investment in mutual funds yields higher interest and comes with good principal amount at the end of the maturity period of the mutual fund investment. It is required from the government and regulatory bodies that more laws

should be there to secure the funds of investors, more tax rebates should be given on mutual fund investment, proper and effective grievance system to protect the investors and more control on asset management companies should be there.

References :

- Agrawal GD. (1992), "Mutual Fund and investors interest (Chartered Secretary) The Journal for Corporate Professionals Vol XXII (I) pp 23-24.
- Aabhas Pandya (2001), "Have Mutual Funds passed the Test?" ICFAI Reader, Vol. III 6 pp 50-51
- Mehta Rajan (2003), "Indian Mutual Fund Industry: Challenging Issues" Chartered Financial Analyst, Vol IX, pp 32-33.
- Salam Abdus and Kulsum Umma (2003), "Savings Behavior in India: An Empirical Study", The Indian Economic Journal Vol 50(1), pp 77-80.
- Banerjee Arindam (2006), 'Mutual Funds: Wealth Creation through Systematic Investment Plans', ICFAI Portfolio Organizer, pp. 53-58.
- Bhayani Sanjay & Patidar Vishal G (2006), 'An Empirical Analysis of Performance Evaluation of Mutual Fund Schemes in India', ICFAI Reader, pp. 15-24.
- AMFI (2011) <http://www.mutualfundindia.com/Assets%20under%20Management.asp>
- <http://www.amfindia.com/spages/aqu-vol10issueIV.pdf>
- <http://www.amfindia.com/spages/aqu-vol11issueI.pdf>

Dr. Anju Singla,

Associate Professor

Department of Commerce, Vaish College, Rohtak

E mail id - anjusingla20@gmail.com

House No. 773/23, D.L.F. Colony, Rohtak
(Haryana) -124001

Mobile No. 9416836181

ABSTRACT

This abstract explores the empowerment of women through alimony laws, shedding light on the transformative potential of these legal provisions. Alimony, often associated with divorce settlements, plays a crucial role in safeguarding women's financial independence and promoting gender equality. It serves as a critical safety net, offering financial support to spouses, predominantly women, who may have made sacrifices during their marriage. This support not only ensures a stable transition after divorce but also opens doors to economic independence by facilitating education, training, and career opportunities. By acknowledging the value of homemaking and childcare contributions, alimony laws affirm the principle of fairness in divorce settlements. They reduce financial dependence, allowing women to rebuild their lives with confidence. Furthermore, alimony encourages equitable distribution of domestic responsibilities and, in turn, fosters gender equality in employment. Overall, alimony laws serve as a vital instrument in empowering women, addressing socioeconomic disparities, and facilitating their journey toward financial autonomy and self-sufficiency.

Keywords: Alimony, Wife's Right, Legal Rights.

I. INTRODUCTION

(A) Objectives of the study:

The ultimate objective of this study is to provide a well-researched and persuasive argument for the positive impact of alimony on women's financial independence and gender equality, with the aim of encouraging informed discussions, policy changes, and societal attitudes that empower women during and after divorce.

- To Analyze how current alimony laws and practices impact women's financial independence and their ability to transition to self-sufficiency after divorce
- To Emphasize the positive outcomes and potential benefits of alimony reform, particularly in terms of promoting women's financial independence and reducing financial dependence on ex-spouses.
- To Provide real-life case studies and success stories that illustrate how alimony reform has positively impacted the lives of

women, showcasing practical examples of financial independence and gender equality.

(B) Sources of the study:

Source such as news papers, articles, research papers, books and reports by law commission are used for this study.

a) Newspaper

- The article in THE ECONOMIC TIMES by Riju Mehta talks about the importance on rights of women on being aware of what they can claim after relationship breaks down. It quotes that "Be it alimony or property, women should not let go of these money rights"
- The Supreme Court on November 4 held that deserted wives and children are entitled to alimony/ maintenance from the husbands from the date they apply for it in a court of law.
- In this INDIAN EXPRESS article quoted the Shah Bano case where, The respondent, Shah Bano, claimed maintenance from her husband under Section 125 of the Criminal Procedure Code, 1973.

The Mohd. Ahmad Khan v. Shah Bano Begum & Ors or the Shah Bano maintenance case is seen as one of the legal milestones in battle for protection of rights of muslim women. While the Supreme Court upheld the right to alimony in the case, the judgement set off a political battle as well as a controversy about the extent to which the courts can interfere in Muslim Personal Law. The case laid the ground for muslim women's fight for equal rights in matter of marriage and divorce in regular courts, the most recent example being the Shayara Bano case in which the Supreme court invalidated the practice of instant Triple Talaq

Therefore, if at the time of marital breakdown property is not registered in the woman's name, as is so often the case, it is almost impossible for her to exert a legal claim over it. The failure of law to recognize women's matrimonial property rights is emblematic of India's patriarchal social structure. It is difficult to reconcile constitutional guarantees with the reality that many women are left empty handed and completely depended on their natal family.

4. Jayanti Natrajan report of 2011 regarding the amendment Bill, rightly pointed out, "Liberalization of the

Laws of divorce should essentially be accompanied with appropriate recognition of the legitimate rights of women on the matrimonial property at least”

b) Law commission report: analysis

1. According to eighth Law Commission report , 73rd report, Criminal liability for failure by Husband to pay maintenance or permanent alimony granted to the wife By the court under certain enactments or rules of law.
2. In 227th Law Commission report Prevention of Interference with the freedom of Matrimonial Alliances 2012 (in the name of Honour and Tradition) : A suggested legal framework

c) Recent case judgements:

1. Bombay High Court Upholds Grant of maintenance to woman who had accepted Alimony under 'Customary Divorce'
2. Delhi High Court Directs Omar Abdulla to pay maintenance of Rs.1.5 Lakhs per month to Estranged wife Payal
3. Wife entitled to Maintenance under separate enactments, Quantum may be decided accordingly: Karnataka High Court.

II. COMPARATIVE STUDY WITH ALIMONY

(A) Canada In Canada, spousal support can take different forms: • Compensatory Support: Compensates for contributions and losses during the marriage.

• Non-Compensatory Support: Based on needs, often for illness or economic hardship.

• Contractual Support: Agreed upon in divorce settlements.

Both married and common-law couples can receive spousal support. However, common-law couples must claim it within a year of separating. Married couples can divorce under federal law, while common-law couples separate under provincial law.

Spousal support determination criteria: The federal Divorce Act's Section 15.2(6) lists four goals for spousal support orders.

Courts consider factors like the length of the relationship, roles, and existing agreements when deciding on support. The goals are to recognize economic impacts, allocate child-related expenses, ease financial

hardship, and promote self-sufficiency.

The amount and duration of support vary. Guidelines provide ranges, but courts are not bound by them. The length of the relationship influences how long support is paid.

Notably, bankruptcy doesn't erase alimony or child support obligations. However, divorce-related equalization payments are considered debts and are cleared in bankruptcy, as ruled by the Supreme Court of Canada in 2011.

(B) Italy In Italy, the duty of mutual assistance between spouses transitions into an obligation of maintenance following personal separation. When one spouse is not responsible for the separation, they have the right to receive support from the other spouse to cover their essential needs (as per Article 156 of the Italian Civil Code).

In cases of marriage dissolution, as outlined in Article 5, paragraph 6, of Law 898/1970, there is an obligation for one spouse to provide periodic financial assistance to the other spouse when the latter lacks adequate means or cannot obtain them for objective reasons. The determination of the support amount is based on specific criteria, including the spouses' conditions, the reasons for the separation, their individual and economic contributions to the family and their assets, both individual and jointly acquired, their incomes, and the duration of the marriage.

© Japan

In Japan, spousal support is provided while the couple is married but ends after divorce. When a divorce occurs, Japanese courts often grant a one-time payment known as "isha-ryo" or consolation money to the spouse who may have been wronged during the divorce. This type of compensation, called consolation money, is unique to Japan and is not a common practice in many other places like most U.S. states

(D) United states

In the United States, alimony regulations are determined by state law, and they establish requirements for alimony and child support payments, as well as the consequences for non-payment. A spouse seeking unpaid alimony may resort to typical debt collection procedures, including

involving collection agencies. However, allowing alimony obligations to accumulate without payment, when one has the financial means to pay, can lead to contempt of court charges and potential incarceration. Importantly, alimony obligations are not discharged through the obligee's bankruptcy filing. Additionally, the amount of spousal support is usually limited to \$2,500 per month or 40% of the payee's gross income in Texas.

(E) India In India, alimony laws are determined by personal laws based on religion:

- For Hindus: Governed by the Hindu Marriage Act, 1955 (Section 24 for pendente lite, Section 25 for permanent alimony).
- For Christians: Governed by the Divorce Act, 1869 (Section 36 for pendente lite, Section 37 for permanent alimony).
- For Parsis: Governed by the Parsi Marriage and Divorce Act (Section 39 for pendente lite, Section 40 for permanent alimony).
- For those of any religion or those opting for a secular approach: Special Marriage Act, 1954 (Section 36 for pendente lite, Section 37 for permanent alimony).

III. MEANING

The word alimony is derived from the Latin word *alimonia*, which means "nourishment, sustenance," from the verb *alere*, which means "to nourish," and from which the words *alimentary* and *aliment*, which guarantee the wife's housing, food, clothing, and other necessities after divorce, also derive. The phrase "alimony" refers to the transfer of funds from one divorced spouse to the other. It is typically provided when one partner is unable to take care of their own needs.

Women make about half of India's population, the Apex Court of India noted in the case *Madhu Krishna v. State of Bihar*. They have endured significant suffering and have historically been the target of discrimination in society. Despite the numerous sacrifices they have made, they still receive substandard treatment.

A person is legally required to support their spouse financially before, during, and after a divorce or legal separation. This obligation is known as alimony, also known as aliment (Scotland), maintenance (England, Ireland,

Northern Ireland, Wales, Canada, New Zealand), spousal support (U.S., Canada), and spouse maintenance (Australia). Each nation's family law or divorce law gives birth to the responsibility. It differs from child support in most jurisdictions, where one parent is expected to make a financial contribution to the upkeep of their children following a divorce by making payments to the kid's other parent or legal guardian.

(A) The preamble:

The Preamble The preamble of our constitution is non-discriminatory where all sections are treated equally and alike. But when we look at the history of India, suppression of women is very old and long. The framers have historically examined the situation and incorporated provisions with the view to grant equal status to women in terms of all spheres. The preamble of the Indian Constitution declares social, economic and political justice to all its citizens. The mentioning of the terms simply means that neither men nor women should be denied from the fruits of justice.

(B) Fundamental rights:

Article 14 of the Indian Constitution guarantees equality before the law and equal protection of the law. Thus, a woman of the Indian society enjoys same treatment and protection to that of men as guaranteed by Indian Constitution. Article 15 of the Indian Constitution prohibits discrimination against women.

© Who can ask for alimony?

Different personal laws handle alimony and maintenance in different ways. All personal laws let wives to receive alimony payments from their husbands. For instance, under the Hindu Marriage Act of 1955, which only applies to Hindus, both the husband and wife may demand alimony; yet, under the Special Marriage Act, which is applicable to all Indian residents, only the wife may do so. Rarely is the opposite practiced.

(D) Types of alimony:

1. **Temporary alimony:** Support ordered when the parties are separated prior to divorce. Also known as alimony pendente lite, a Latin phrase that means "pending the suit."
2. **Rehabilitative alimony:** Support given to a lesser-

earning spouse for a period of time necessary to acquire work outside the home and become self-sufficient.

3. Permanent alimony: Support paid to the lesser-earning spouse until the death of the payor, the death of the recipient, or the remarriage of the recipient.

4. Reimbursemental alimony: Support given as reimbursement for expenses incurred by a spouse during the marriage (such as educational expenses).

(E) Factors determining alimony:

- a. Length of the marriage or civil union
- b. Time separated while still married
- c. Parties age at the time of divorce
- d. Relative income of the parties
- e. Future financial prospects of the parties
- f. Health of the parties
- g. Fault in marital break down

IV. WOMEN'S RIGHT AFTER DIVORCE

Following a divorce in India, a wife retains ownership of various assets and possessions. This includes all jewellery, whether it's made of gold, silver, alloys, or precious stones, as well as fixed assets like real estate, automobiles, furniture, artwork, appliances, and antiquities. These assets may have been acquired before, during, or after the marriage. Additionally, any presents received by the wife, whether from her husband, in-laws, family, friends, or others, are her own property. Her earnings, whether earned before or after marriage, are also considered her personal property. However, there are exceptions to a wife's ownership rights. Jewellery or gifts given by the wife's parents to the husband before, during, or after the marriage do not belong to the wife. Property acquired by the husband in the wife's name but not gifted to her is not her property either. If the wife's earnings were used for household expenses, she cannot claim them as her own. It's important for couples considering divorce to be aware of the specific alimony laws in India, which can vary. Typically, alimony is awarded to the woman by the husband, but the laws governing such payments should be understood before proceeding with a divorce.

(A) Criteria to get alimony

Another factor that a divorce court will take into

account when determining the period of spousal maintenance is the length of the marriage required to qualify for alimony in India. While the ultimate decision will vary by the case (and each state has its own set of guidelines for judges to follow), the following are the national averages based on the length of marriage to get alimony in India: 5 Years: Alimony is awarded for approximately half of the period of your marriage if you have been married for less than five years. 10-20 years: On average, you should prepare to pay alimony for 60 to 70 percent of the duration of your marriage. So, if you were married for 20 years, you can anticipate receiving alimony for 12 to 14 years. However, it can differ significantly based on your unique situation and the judge hearing your case. 20+ Years: Marriages that have lasted 20 years or more are more likely to receive permanent alimony. It indicates that you should expect to support your ex until they retire, die, or remarry.

(B) Method of calculating

"Alimony" means payment towards the support and maintenance of a spouse, either by lump sum or on a continuing basis. It is paid by the "supporting spouse" to the "dependent spouse". The general rule states that a spouse is dependent when he or she makes less money than the other spouse. However, there is no fixed formula or hard and fast rule for the calculation of alimony that the husband needs to provide to his wife. It can be provided as a periodical or monthly payment, or as a one-time payment in the form of a lump-sum amount. If the alimony is being paid on a monthly basis, the Supreme Court has set 25% of the husband's net monthly salary as the benchmark amount that should be granted to the wife. There is no such benchmark for one-time settlement, but usually, the amount ranges between 1/5th to 1/3rd of the husband's net worth. The court also considers a number of criteria when determining the amount of alimony to be awarded. These variables can range and include the following:

- The husband and wife's position and status
- Whether the woman actually has a maintenance claim.
- Whether the wife's decision to live apart is justified, if she is.

- The wife's total assets and earnings.
- The wife's assets, rental income, and other sources of income of the husband.
- The total number of dependents and the costs the husband is responsible for.
- The husband's personal costs. However, the wife is not entitled to claim maintenance in the following circumstances:
 - If she has ceased to be a Hindu by converting to another religion;
 - If she is guilty of adultery i.e. she is unchaste and indulged in physical relation with another man;
 - If she remarried after the divorce;

© Advantages of alimony:

Alimony, known as "maintenance" under Indian law, holds several advantages for women in India. Alimony in India plays a vital role in safeguarding the economic interests of women during and after divorce. It upholds principles of fairness, gender equality, and financial stability, helps to mitigate potential economic vulnerabilities that women may face during and after divorce, ultimately helping women regain their independence and improve their overall quality of life following the dissolution of their marriage.

(D) Disadvantages of alimony:

While alimony can offer financial support to women in need, it is not without its disadvantages. It can foster a sense of financial dependence, complex legal processes, social stigma, variability in payments, and disincentives for remarriage. Therefore, it is essential to consider these drawbacks alongside the benefits when examining the role of alimony in Indian society.

V. REFORMS

In the United States, family laws related to divorce, community property, and alimony vary by state. With changing family dynamics, such as working couples and stay-at-home moms, there's a growing debate about the fairness of traditional economic arrangements in divorce cases. Some groups have proposed legislative reforms to adjust alimony amounts and duration. Alimony terms

often lead to litigation in family law cases, with about 80% of divorce cases involving requests for modification of alimony.

States like Florida, Texas, and Maine are moving away from permanent alimony and favoring durational or rehabilitative alimony. In contrast, states like Mississippi and Tennessee often award lifelong alimony.

Key issues in alimony reform discussions include whether alimony should be temporary or permanent, whether alimony payers should have the right to retire unquestionably, the level of financial support required for the lesser-earning spouse, consideration of new spouse's income and assets, and the balance between clear statutory guidelines and judicial discretion.

In 2023, Florida passed an alimony reform bill (SB1416), eliminating permanent alimony and allowing alimony payers to request modification upon retirement. The bill permitted judges to adjust alimony based on various factors. This reform followed years of debate and three previous vetoes of similar bills.

Several states, including California, Connecticut, Georgia, Illinois, Oklahoma, New York, South Carolina, Tennessee, Utah, and West Virginia, have passed laws allowing alimony modification or termination when the recipient cohabitates with another person.

In 2009, New Jersey enacted changes in its alimony statutes, barring alimony payments to parents who have harmed or abandoned their children.

Alimony reform remains a complex and contentious issue, with various perspectives and ongoing legislative efforts in different states.

VI. CASE STUDY

Here are two hypothetical case studies that illustrate how alimony reform can impact the lives of women and promote their financial independence:

1 Case Study 1: Empowering Economic Independence

Background: Sarah and John, a married couple, decided to divorce after 15 years of marriage.

During their marriage, Sarah had put her career on hold to care for their children and support Case Study:

Balancing Support and Independence

Background: Emily and David, a married couple, decided to divorce after 12 years of marriage. Emily had been a stay-at-home mom for most of their marriage, focusing on raising their children. David was the primary breadwinner and had significant financial assets.

Impact of Alimony Reform: In their state, alimony reform had introduced guidelines to ensure a fair and balanced approach to spousal support. While Emily

was entitled to alimony for a limited duration, it was designed to help her transition to self-sufficiency. With the support of alimony, Emily pursued a part-time job and took advantage of educational opportunities. She gained the necessary skills to secure a full-time position and gradually reduced her reliance on alimony. David, while still providing financial support, was also encouraged to share parenting responsibilities. The reform not only empowered Emily to achieve financial independence but also promoted a more equitable distribution of domestic and financial responsibilities.

These case studies illustrate how alimony reform can positively impact the lives of women by encouraging them to pursue economic independence and self-sufficiency while balancing the financial support needed during the transitional period after divorce.

VII. ALIMONY & WOMEN EMPOWERMENT

Alimony laws, when structured and applied thoughtfully, have the potential to empower women in various ways:

- a. Financial Independence: Alimony can provide financial support to women who may have been economically dependent on their spouses during marriage. This financial assistance can help them transition into a more financially independent state after divorce.

Equalizing Economic Disparities: Alimony laws can address economic disparities between spouses, particularly in cases where one spouse has significantly higher earning potential. By ensuring fair financial support, these laws contribute to a more equitable financial situation for both parties.

- b. Encouraging Pursuit of Education and Career: Alimony can enable women to pursue further education or career opportunities they may have put on hold during the marriage. This support can empower them to gain new skills, become self-reliant, and increase their earning potential.

- c. Reducing Gender Wage Gap: Alimony can indirectly

contribute to reducing the gender wage gap. When women receive financial support to re-enter the workforce or improve their career prospects, it can help bridge the income disparity between genders.

- d. Promoting Gender Equality: Alimony laws can be a tool for promoting gender equality by recognizing the financial contributions and sacrifices made by spouses, often women, during the marriage. It acknowledges the value of unpaid domestic and care giving work.

- e. Supporting Custodial Parents: In cases where women are the primary care givers for children, alimony can help them meet the financial demands of raising children post-divorce. This support is crucial for maintaining stable living conditions for the children.

- f. Boosting Confidence and Security: Alimony can provide women with a sense of financial security and confidence, allowing them to focus on rebuilding their lives and ensuring their well-being after divorce.

- g. Reducing Poverty Rates: Alimony can be instrumental in preventing divorced women from falling into poverty, especially in situations where they might not have access to adequate employment or other financial resources.

However, it's important to note that the impact of alimony laws on women's empowerment can vary depending on the specific legal framework, cultural context, and the enforcement of these laws. While alimony laws have the potential to empower women, they must be fair, just, and considerate of individual circumstances to achieve these positive outcomes.

VIII. RESULT AND DISCUSSION

To conclude, the objectives outlined above reflect a multifaceted approach to understanding and advocating for alimony reform, particularly in its impact on women's financial independence and gender equality.

IX. Real-lifecase studies and success stories have provide tangible evidence of how alimony reform can transform lives. These stories serve as powerful examples of women who have achieved financial independence, breaking free from the constraints of traditional alimony arrangements.

X. CONCLUSION

In conclusion, the paper highlights the significance of alimony reform in empowering women by fostering financial independence, reducing dependency, and promoting gender equality. By recognizing property rights and ownership, Indian law plays a crucial role in shaping the post-divorce landscape for women. Awareness of the rights is essential for couples navigating the complexities of divorce in India.

Dr. Santosh Kumar Sharma (Ph.D)

M. COM, PGDIP MAT.MGMT. MBA, LLB, LM

WITH PhD. [Mo.-9899882948-](mailto:Mo.-9899882948-santosh.sharma2013@gmail.com)

santosh.sharma2013@gmail.com

H. NO. 5113 SECTOR- 03,
FARIDABAD(121004)

Abstract:

Cotton holds a prominent position in India's agricultural landscape, serving as a vital cash crop for millions of farmers and a critical raw material for the nation's extensive textile manufacturing. Often referred to as "white gold," its farming meaningfully contributes to rural livelihoods and the overall growth of the country's economy. Haryana, a state renowned for its agricultural productivity, has historically played a notable role in production of cotton in India. However, the sector has experienced considerable shifts and challenges in current years. This research paper aims to deliver an inclusive analysis of the existing situation of cotton production in Haryana since 2010. By examining the trends in area, production, and yield, alongside the numerous aspects that have influenced these metrics, this report seeks to offer detailed understandings into the current state of cotton cultivation in the state. Furthermore, it will explore the challenges and opportunities that lie ahead for this crucial agricultural sector, utilizing available research data to provide a nuanced understanding and inform future strategies. The report will delve into the statistical overview of production, the impact of biotic and abiotic stresses, the role of technological advancements, the influence of socio-economic and policy factors, the contributions of research and development, and finally, the key challenges and opportunities that shape the forthcoming cotton production in Haryana.

Key words: Production , agriculture, Factors, Area, Haryana

Introduction:

Haryana, a state renowned for its agricultural productivity, has historically played a notable role in India's cotton production. However, the sector has experienced considerable shifts and challenges in recent years. Cotton holds a prominent position in India's agricultural landscape, serving as a vital cash crop for millions of agrarians and a critical raw material for the nation's widespread textile production. Often referred to as "white gold," its cultivation meaningfully donates to rural livelihoods and the overall economic growth of the country. Haryana, a state renowned for its agrarian productivity, has historically played a notable

role in India's cotton production. However, the sector has experienced considerable shifts and challenges in recent years. This research paper aims to provide an inclusive analysis of the existing situation of cotton production in Haryana since 2010. By examining the trends in area, production, and yield, alongside the numerous factors that have influenced these metrics, this report seeks to offer in-depth insights into the current state of cotton farming in the state. Furthermore, it will discover the challenges and opportunities that lie ahead for this crucial agricultural sector, utilizing available research data to provide a nuanced understanding and inform future strategies. The report will delve into the statistical overview of production, the impact of biotic and abiotic stresses, the role of technological advancements, the influence of socio-economic and policy factors, the contributions of research and development, and finally, the key challenges and opportunities that shape the future of cotton production in Haryana.

Objective of the study

This research paper aims to deliver an inclusive analysis of the existing situation of cotton production in Haryana since 2010. By examining the trends in area, production, and yield, alongside the numerous aspects that have influenced these metrics, this report seeks to offer detailed understandings into the current state of cotton cultivation in the state.

Methodology

This analysis will primarily draw upon secondary data sources, particularly the research material provided, to offer a detailed and evidence-based understanding of the agricultural scenario in cotton production of Haryana.

Overview of Cotton Production in Haryana (2010-2024):

A detailed examination of cotton production in Haryana since 2010 reveals a fluctuating trend across key indicators. The area under cotton farming, total production, and yield per hectare have all experienced periods of growth, decline, and relative stability, reflecting the complex interplay of various prompting aspects. The following table delivers a consolidated view of these statistics from the 2010-11 agricultural year up to the latest available data for 2023-24.

The data reveals in table 1, a period of high

production and yield in the early part of the decade, chiefly around 2011-2013. Following this peak, there have been considerable fluctuations in both production and yield. Notably, the yield experienced a significant drop in the years 2022 and 2023, reaching levels not seen in the past two decades. While the area under crop growing has also varied, the overall trend suggests a sector that is sensitive to a multitude of influencing factors, leading to substantial year-on-year changes. The recent decline in yield, despite fluctuations in area, indicates a potential shift in the challenges encountered by cotton farmers in Haryana.

Table 1: Cotton Production in Haryana: Area, Production, and Yield (2010-2024)

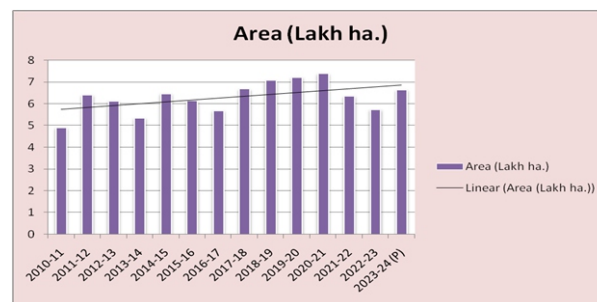
Year	Area (Lakh ha.)	Production (Lakh Bales)	Yield (kg/ha.)
2010-11	4.92	17.00	638
2011-12	6.41	26.00	691
2012-13	6.14	26.00	688
2013-14	5.36	24.00	685
2014-15	6.48	23.00	730
2015-16	6.15	14.50	689
2016-17	5.70	20.50	670
2017-18	6.69	22.50	690
2018-19	7.08	20.13	680
2019-20	7.23	24.84	614
2020-21	7.40	18.23	595
2021-22	6.36	13.16	669
2022-23	5.75	10.01	352
2023-24 (P)	6.65	13.77	296

Source: Agricultural Yield: Cotton: Haryana | Economic Indicators - CEIC

<https://cicr.org.in/resources/resource-datasets/>

Figure 2 illustrates the annual area figures from 2010-11 to 2023-24 (P), alongside a linear trend line. The overall trend, as depicted by the steadily upward-sloping linear line, suggests a general increase in the area over the fourteen-year period. Despite this underlying upward trajectory, the actual year-on-year area figures exhibit considerable instability. For instance, the area began at approximately 4.8 lakh ha in 2010-11, experienced a rise to around 6.2 lakh ha by 2011-12, followed by a dip in 2013-14 to roughly 5.3 lakh ha.

Figure 2: Cotton Production in Haryana(in Area) (2010-2024)



Source: Agricultural Yield: Cotton: Haryana | Economic Indicators - CEIC

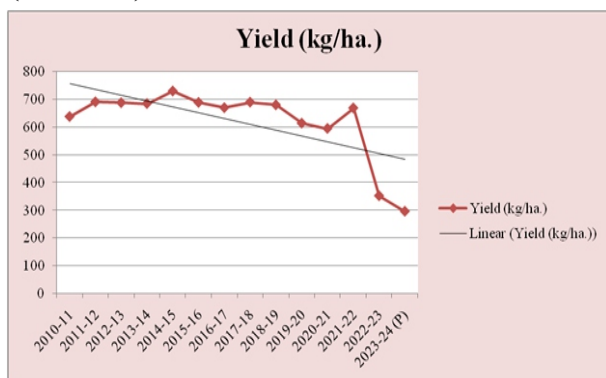
Note : P= Provisional Data

A period of growth then ensued, culminating in a peak of approximately 7.3 lakh ha in 2021-22, which stands as the highest recorded area in the dataset. However, this peak was sharply followed by a significant decline to around 5.7 lakh ha in 2022-23, indicating a deviation from the established trend. The provisional data for 2023-24 shows a rebound to approximately 6.5 lakh ha, suggesting a recovery towards the longer-term upward trend.

Figure 3 presents the annual yield data from 2010-11 to 2023-24. The most striking feature of the chart is the clear downward trajectory of the linear trend line, indicating a consistent decline in yield over the entire period. While the overall trend is negative, there are notable year-on-year fluctuations. The yield started at approximately 630 kg/ha in 2010-11, experienced a period of relative stability and even reached a peak of around 720 kg/ha in 2014-15. Following this high, there was a general decrease, with yields fluctuating between 590 kg/ha and 690 kg/ha until 2020-21. A brief resurgence was observed in 2021-22, pushing the yield back to about 660 kg/ha. However, the data for the most recent years, 2022-23 and 2023-24 (P), reveals a drastic and alarming drop. The yield plummeted to approximately 350 kg/ha in 2022-23 and further declined to about 300 kg/ha in 2023-24 (P), marking the lowest points in the entire series and significantly deviating from earlier patterns. This sharp decline in the later years underscores the pressing challenges impacting yield, starkly contrasting with the earlier periods of higher productivity and reinforcing the

overall negative trend highlighted by the linear regression.

Figure 3: Cotton Production in Haryana(in Yield) (2010-2024)



Source: Agricultural Yield: Cotton: Haryana | Economic Indicators - CEIC

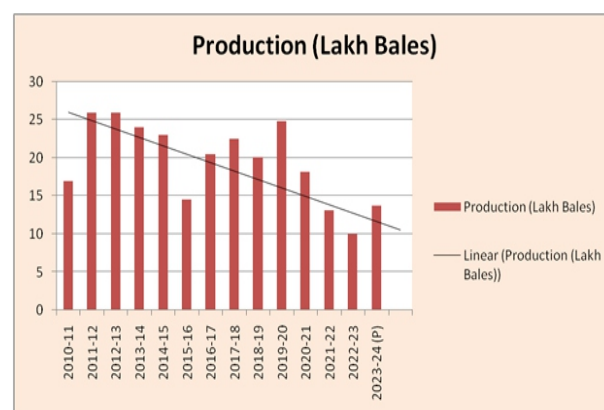
Note : P= Provisional Data

According to figure 4, the annual production figures from 2010-11 to 2023-24 signifying a consistent decline in production over the fourteen-year period. While the overall trend is negative, the actual year-on-year production figures exhibit significant fluctuations. Production began at approximately 16.8 lakh bales in 2010-11, before experiencing a sharp rise and stabilizing at high levels, reaching around 25.8 lakh bales in 2011-12 and maintaining similar levels of 25.6 and 24 lakh bales in 2012-13 and 2013-14 respectively. Following this period of high production, there was a noticeable dip to about 22.8 lakh bales in 2014-15 and a sharp decline to around 14.6 lakh bales in 2015-16. Production then recovered to approximately 20.2 lakh bales in 2016-17 and 22.4 lakh bales in 2017-18 before declining to 19.8 lakh bales in 2018-19. A significant increase pushed production to around 24.8 lakh bales in 2019-20.

However, from 2020-21 onwards, a consistent and sharp decline is observed, with production dropping from approximately 18.2 lakh bales in 2020-21 to 13.0 lakh bales in 2021-22, and further to 10.0 lakh bales in 2022-23. The provisional data for 2023-24 shows a slight recovery to approximately 14.0 lakh bales, but this is still significantly lower than the peak production years and remains well below the initial levels, reinforcing the overall declining trend highlighted by the linear

regression.

Figure 4: Cotton Production in Haryana(in Production per lakh Bales) (2010-2024)



Source: Agricultural Yield: Cotton: Haryana | Economic Indicators - CEIC

Note : P= Provisional Data

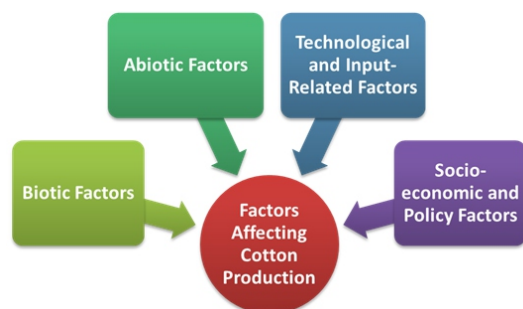
Factors Affecting Cotton Production in Haryana:

Many factors play a major role in production of cotton in Haryana which are discussed below:

Biotic Factors:

Cotton production in Haryana has been significantly impacted by various biotic stresses, primarily pest infestations and diseases. Among the pests, the pink bollworm has appeared as a major threat, particularly in recent years. Despite the widespread adoption of BT cotton, which was initially effective against bollworms, the pink bollworm has developed resistance, leading to substantial crop damage even after pesticide applications. Whitefly infestations have also caused considerable losses in Haryana's cotton fields, with significant outbreaks reported in 2015 and 2022. The persistence of whitefly above the economic threshold for an extended period in 2022 highlights the challenges in managing this pest. While BT cotton was designed to target bollworms, other pests such as American bollworm, spotted bollworm, tobacco caterpillar, mealy bug, and thrips continue to pose threats to the crop, as cotton plants offer a favorable environment for a wide range of insects. The evolution of pest resistance to BT-cotton over time has been a noteworthy concern, diminishing the initial benefits of this technology and necessitating increased reliance on chemical insecticides.

Figure 1: Factors Affecting Cotton Production in Haryana



In addition to pest invasions, cotton production in Haryana has been affected by several diseases. The leaf curl virus and parawilt have been notable contributors to yield decline. Parawilt, characterized by the sudden wilting of plants, has been particularly problematic and may be exacerbated by unnecessary rain in September. Other diseases like boll rot and various foliar diseases also impact cotton yields, requiring specific management strategies. The recurring and intensifying nature of pink bollworm and whitefly invasions indicates a potential breakdown in the effectiveness of current pest managing tactics for cotton in Haryana. This necessitates a critical re-evaluation of existing approaches and the development of more resilient and integrated pest management strategies. The direct correlation between the low cotton yield in 2022-23 and the severe attacks by pests and diseases underscores the vital importance of effective biotic stress management for profitable cotton farming in the state. The fact that this yield was the lowest in two decades, despite the widespread use of BT-cotton, emphasizes the urgency of addressing these challenges through inclusive and adaptive measures. The initial success of BT cotton in controlling bollworms has been significantly undermined by the development of pest resistance, highlighting the need for continuous innovation and a shift towards integrated pest management strategies that move beyond a singular reliance on genetic modification.

Abiotic Factors:

Climate outlines play a critical role in influencing cotton production in Haryana. Rainfall variability, including both untimely heavy rains and prolonged dry spells, has

had a significant negative impact on cotton yields. Excessive rainfall can lead to waterlogging and conditions like Para wilt, while insufficient rainfall, especially during critical growth stages like flowering and boll development, can result in reduced yields. Temperature extremes also pose a challenge, with excessive heat during the initial planting phase in April-May causing damage to young plants and reducing the overall plant population.

Water availability for irrigation is another critical abiotic factor affecting cotton production in Haryana, where cultivation is heavily reliant on irrigation, particularly in the northern zone. The state faces increasing water scarcity due to alarmingly declining groundwater levels caused by over-extraction for agriculture. Concerns about water quality, including the presence of brackish groundwater in some areas, further compound the challenges of irrigation. Maintaining soil health and implementing appropriate nutrient management practices are also essential abiotic factors. While the snippets do not provide extensive details on soil health in Haryana, the importance of balanced fertilizer use and integrated nutrient management for optimal cotton yields is highlighted. Erratic rainfall and temperature extremes underscore the increasing vulnerability of cotton production in Haryana to climate change, necessitating the adoption of climate-resilient agricultural practices. The unsustainable rate of groundwater depletion in Haryana, partly driven by the cultivation of water-intensive crops like paddy, presents a long-term threat to irrigated cotton farming, demanding a shift towards water-efficient irrigation methods and potentially crop diversification. While soil health is not extensively detailed, the need for balanced fertilizer use and integrated nutrient management suggests its critical role in sustainable cotton production.

Technological and Input-Related Factors:

Haryana has witnessed widespread adoption of BT cotton technology, which initially proved successful in controlling bollworms. However, the development of pest resistance, especially to pink bollworm, has become a major concern. The availability and high cost of BT cotton seeds significantly influence farmers' profitability. Farm

mechanization in Haryana's agriculture is increasing , with technologies like drip fertigation improving water and nutrient use efficiency. The use of AI-based pest monitoring systems and remote sensing also shows promise for enhancing management practices. However, challenges persist regarding the high cost and potential adulteration of fertilizers and pesticides, along with farmers' lack of knowledge about their correct dosage and application. The high adoption of BT cotton initially boosted yields, but resistance has emerged as a major limitation. While mechanization is increasing, its adoption in cotton harvesting is still limited. High input costs and concerns about quality remain significant challenges for farmers.

Socio-economic and Policy Factors:

Government policies, support programs, and subsidies play a crucial role in Haryana's cotton production. The Minimum Support Price (MSP) provides a vital price floor for cotton farmers. Specific schemes promote cotton cultivation, Integrated Pest Management (IPM), and micronutrient application. Policies related to crop diversification also influence cotton acreage, and insurance schemes offer risk mitigation. Market prices significantly impact the profitability of cotton farming, with the Cotton Corporation of India (CCI) playing a role in procurement. Labor availability and increasing costs for the labor-intensive cotton cultivation also influence farmers' decisions. MSP provides crucial support, but market price volatility remains a challenge. Labor costs and availability also impact farmers' choices.

Role of Research and Development:

Chaudhary Charan Singh Haryana Agricultural University (CCSHAU) and its Cotton Research Station at Sirsa have been instrumental in advancing cotton production in Haryana. The university has developed and released numerous improved varieties and hybrids of both American and Desi cotton , contributing significantly to enhancing productivity. Research efforts have also focused on developing effective pest and disease management strategies, including addressing emerging challenges like Para wilt. Furthermore, CCSHAU has been actively involved in exploring and promoting

sustainable cotton production practices. The "50 Years of Cotton Research in Haryana" report summarizes the significant achievements in plant breeding, agronomy, and pest management over the decades, highlighting the continuous efforts to improve cotton cultivation in the state. The Central Institute for Cotton Research (CICR), with its regional station located at Sirsa, plays a vital role in national-level cotton research and development. Its regional station in Haryana specifically caters to the needs of the northern irrigated cotton zone, conducting research on critical issues like pest resistance and developing innovative technologies such as AI-based pest monitoring systems. The collaboration between CCSHAU and CICR strengthens the research ecosystem for cotton in Haryana, ensuring that both state-specific and national-level challenges are addressed through coordinated efforts.

Challenges and Opportunities:

Cotton farmers in Haryana currently face a multitude of interconnected challenges. Declining yields, primarily due to the increasing incidence of pest attacks, diseases, and the growing impact of climate variability, pose a significant threat to the profitability of cotton farming. The escalating pest resistance to widely adopted technologies like BT cotton further exacerbates these challenges, often necessitating the use of additional and more expensive pesticides. The severe water scarcity and declining groundwater levels across Haryana present a long-term sustainability concern for the irrigation-dependent cotton cultivation. Economic viability remains a major concern for farmers due to the volatility of market prices, which often fall below profitable levels or the MSP, coupled with the rising costs of essential agricultural inputs. Moreover, the increasing challenges related to the availability and rising costs of agricultural labor, particularly during peak seasons like harvesting, further strain the economic viability of cotton farming.

Despite these challenges, several opportunities exist for enhancing cotton production in Haryana. Promoting the adoption of sustainable and climate-resilient farming practices, such as integrated pest management (IPM) strategies and water-efficient irrigation techniques, can help mitigate the negative impacts of biotic and abiotic

stresses. Encouraging the diversification of cropping systems can reduce the over-reliance on cotton in highly affected regions and improve overall farm resilience and income stability for farmers. Improving market access and strengthening value chains for cotton farmers through better infrastructure, market information systems, and farmer producer organizations can enhance their profitability. Leveraging technological innovations in agriculture, including precision farming, AI-based pest and disease monitoring, remote sensing, and exploring mechanical harvesting options, can lead to more efficient resource use and reduced production costs. Strategically promoting the cultivation of indigenous or Desi cotton varieties in suitable agro-ecological zones, where they exhibit advantages like lower water requirements and better resistance to certain pests and diseases, while addressing market demand and harvesting challenges, presents another opportunity for diversifying and strengthening the cotton sector.

Recommendations:

To address these challenges and revitalize cotton production in Haryana, a multi-pronged approach involving various stakeholders is crucial.

- **Policymakers** should prioritize policies that support integrated pest management through increased funding for research and awareness programs, promote water-efficient irrigation technologies by offering subsidies and technical assistance, ensure the effective implementation of the Minimum Support Price (MSP) for cotton and explore mechanisms for price stabilization to provide greater income security to farmers, and incentivize the adoption of sustainable and climate-resilient farming practices through targeted support and incentives.
- **Agricultural Extension Agencies** need to play a more proactive role in educating and training farmers on the latest IPM strategies, water-saving techniques, soil health management practices, and the judicious use of new technologies.
- **Research Institutions** must continue to focus on

developing cotton varieties with enhanced resistance to prevalent pests and diseases, as well as climate-resilient traits, and explore innovative technologies for improving production efficiency and sustainability.

- **Farmers**, on their part, should embrace integrated pest management practices, adopt water-efficient irrigation methods, focus on improving soil health through sustainable practices, and consider crop diversification to mitigate risks.

Conclusion

The analysis of cotton production in Haryana since 2010 reveals a sector marked by significant volatility and facing a complex array of challenges. While the early part of the decade saw robust production and yields, recent years have witnessed a concerning decline, particularly in yield, primarily driven by the increasing pressures of pest infestations, diseases, climate variability, and economic factors. The initial promise of Bt cotton has been challenged by the emergence of pest resistance, necessitating a shift towards more integrated and sustainable farming practices. Water scarcity and fluctuating market prices further compound the difficulties faced by cotton farmers in the state. The long-term sustainability and competitiveness of cotton production in Haryana will hinge on the collective ability of all stakeholders to adapt to the evolving challenges through collaborative efforts, informed decision-making, and a commitment to fostering a more resilient and economically viable cotton farming sector in the state. Further research is needed to explore specific areas such as the optimal strategies for promoting Desi cotton, the adoption barriers for advanced agricultural technologies among smallholder farmers, and the long-term impacts of climate change on cotton production in Haryana.

References:

- Agricultural Yield: Cotton: Haryana | Economic Indicators - CEIC , <https://www.ceicdata.com/en/india/yield-of-non-foodgrains-in-major-states-cotton/agricultural-yield-cotton-haryana>

- Datasets - Central Institute for Cotton Research, <https://cicr.org.in/resources/resource-datasets/>
- Agricultural Production: Cotton: Haryana | Economic Indicators - CEIC, 2025, <https://www.ceicdata.com/en/india/production-of-non-foodgrains-in-major-states-cotton/agricultural-production-cotton-haryana>
- STATE-WISE/YEAR-WISE AREA, PRODUCTION AND YIELD IN INDIA AS PER COCPC - Ministry of Textiles, https://ministryoftextiles.gov.in/sites/default/files/STATEWISE%20YEAR-WISE%20AREA%2C%20PRODUCTION%20AND%20YIELD%20IN%20INDIA%20AS%20PER%20COCPC_0.pdf
- Budget boost for cotton: Will Haryana reclaim its 'White Gold' glory | Chandigarh News, <https://timesofindia.indiatimes.com/city/chandigarh/budget-boost-for-cotton-will-haryana-reclaim-its-white-gold-glory/articleshow/117840445.cms>
- Haryana cotton yield hits 20-yr low as 'pest-resistant' Bt variety falls . . . , <https://theprint.in/india/haryana-cotton-yield-hits-20-yr-low-as-pest-resistant-bt-variety-falls-prey-to-pests-untimely-rain/1645712/>
- Haryana Agricultural University swings into action after reports of pest in cotton crop, <https://www.tribuneindia.com/news/haryana/ha-u-swings-into-action-after-reports-of-pest-in-cotton-crop-641485/>
- Low Kharif cotton: Years of pest attacks push farmers away as sowing drops by a million hectares - Down To Earth, <https://www.downtoearth.org.in/agriculture/low-kharif-cotton-years-of-pest-attacks-push-farmers-to-grow-other-crops>
- In Punjab and Haryana, Acres of Infestation Leave Cotton Farmers Devastated - The Wire, <https://m.thewire.in/article/agriculture/in-punjab-and-haryana-acres-of-infestation-leave-cotton-farmers-devastated?utm=authorpage>
- Haryana Agricultural University swings into action after reports of pest in cotton crop, <https://www.tribuneindia.com/news/haryana/ha-u-swings-into-action-after-reports-of-pest-in-cotton-crop-641485/>
- Pink bollworm hits early this crop cycle, gives heartburn to cotton farmers of Rajasthan - Agroinsurance, <https://agroinsurance.com/en/News/India---Pink-bollworm-hi1>
- Sirsa: Pest attack forces farmers to uproot cotton crop - The Tribune, <https://www.tribuneindia.com/news/haryana/pest-attack-forces-farmers-to-uproot-cotton-crop-640550/>
- Cotton Curse: Tired of losses, farmers giving up cotton on a large scale - Down To Earth, <https://www.downtoearth.org.in/agriculture/cotton-curse-tired-of-losses-farmers-giving-up-cotton-on-a-large-scale-92498>
- Failed promises - Soil Association, <https://www.soilassociation.org/media/13510/failed-promises-e-version.pdf>
- Investigating the second whitefly population outbreak within a decade in the cotton growing zone of North India - PubMed, <https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/38974414/>
- Integrated Pest Management of Cotton in Punjab, India | Radcliffe's IPM World Textbook, <https://ipmworld.umn.edu/arora>
- Yield gap and constraints analysis of cotton in India - C A B I Digital Library, <https://www.cabidigitallibrary.org/doi/pdf/10.5555/20163167822>
- Reviving 'white gold': how regenerative cotton farming can be a game changer in North India | Chandigarh News - The Indian Express <https://indianexpress.com/article/cities/chandigarh/reviving-white-gold-regenerative-cotton-farming-gamechanger-north-india-9966835/>
- Approved Package of Practice for Cotton: Haryana State - Vikaspedia, https://static.vikaspedia.in/media/files_en/agriculture/crop_production/package-

[of-practices/practices-for-haryana.pdf](#)

- Problems of Cotton Farmers in Haryana, <https://www.ijemas.com/8-3-2019/Reeta%20Devi%20Yadav%20and%20Rita%20Goel.pdf>
- Transformations In Cotton Production In Independent India - IOSR Journal, <https://www.iosrjournals.org/iosr-jbm/papers/Vol26-issue8/Ser-1/B2608011217.pdf>
- Growth and Instability in Cotton Cultivation in Northern India – Research Gate, https://www.researchgate.net/publication/326906239_Growth_and_Instability_in_Cotton_Cultivation_in_Northern_India
- Challenges for crop diversification in cotton-based farming systems in India: a comprehensive gap analysis between practices and policies - Frontiers, <https://www.frontiersin.org/journals/agronomy/articles/10.3389/fagro.2024.1370878/full>
- Impact analysis of moisture stress on growth and yield of cotton, <https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC10640844/>
- Report Name: Cotton and Products Annual, https://apps.fas.usda.gov/newgainapi/api/Report/DownloadReportByFileName?fileName=Cotton+and+Products+Annual_New+Delhi_India_IN2024-0017.pdf
- DYNAMIC GROUND WATER RESOURCES OF HARYANA STATE (AS ON 31 MARCH 2022) - CGWB, https://www.cgwb.gov.in/old_website/GW-Assessment/GWR-2022-Reports%20State/Haryana.pdf
- Ground Water Depletion in Haryana: A Challenge for Sustainability of Agriculture Sector - International Journal for Research Publication and Seminar, <https://jrps.shodhsagar.com/index.php/j/article/download/365/364/718>
- Groundwater depletion in Haryana a cause of serious concern, <https://india.mongabay.com/2021/07/groundwater-depletion-in-haryana-a-cause-of-serious-concern/>
- Water accounting of groundwater over exploited districts in Haryana and Punjab states to analyse impacts of water conservation measures on water availability - IWA Publishing, <https://iwaponline.com/ws/article/24/9/3093/104566/Water-accounting-of-groundwater-over-exploited>
- Water Pricing in Haryana, India - CABI Digital Library, <https://www.cabidigitallibrary.org/doi/pdf/10.5555/20083096906>
- Draft Haryana State Agriculture Policy, https://hkkp.org.in/Reports/Report_on_Haryana_State_Agriculture_Policy_Draft.pdf
- India Cotton and Products Annual 2010, https://apps.fas.usda.gov/newgainapi/api/report/downloadreportbyfilename?filename=Cotton%20and%20Products%20Annual_New%20Delhi_India_4-12-2010.pdf
- Impact of Bt Cotton Production Technology in Haryana - Society of Extension Education, <https://www.seea.org.in/irjee/view-content/impact-of-bt-cotton-production-technology-in-haryana>
- Bt Cotton Adoption: A Double-hurdle Approach for North Indian Farmers - AgBioForum, <https://agbioforum.org/wp-content/uploads/2021/02/AgBioForum-15-3-294.pdf>
- A Study of Mechanization of Cotton Harvesting in India and Its Implications, <https://jcast.fresnostate.edu/ifa/documents/A%20Study%20of%20Mechanization%20of%20Cotton%20Harvesting%20in%20India.pdf>
- (PDF) Constraints in adoption of growing Bt. Cotton among Bt. growers in Haryana, https://www.researchgate.net/publication/360925552_Constraints_in_adoption_of_growing_Bt_Cotton_among_Bt_growers_in_Haryana
- Constraints in adoption of growing Bt. Cotton among Bt. growers in Haryana - The Journal of Rural and Agricultural Research, <http://www.jraragra.in/Journals/2021Vol1/15.pdf>

- Economies of Bt cotton-A case study of Hisar district in Haryana - Research Gate, https://www.researchgate.net/publication/289810354_Economies_of_Bt_cotton-A_case_study_of_Hisar_district_in_Haryana https://apps.fas.usda.gov/newgainapi/api/report/downloadreportbyfilename?filename=Cotton%20and%20Products%20Annual_New%20Delhi_India_3-30-2015.pdf
- <https://ras.org.in/articles/97/text/article.html>
- <https://www.jetir.org/papers/JETIR2504632.pdf>
- https://www.researchgate.net/figure/Area-under-cotton-in-India-and-growth-rate-over-various-phases-of-technology-and-policy_tbl1_287761105
- Trend analysis of production and productivity of major crops and its sustainability: A case study of Haryana - ResearchGate, <https://icar.gov.in/icar-cicr-demonstrates-potential-ai-technology-real-time-field-monitoring-cotton-pink-bollworms> <https://timesofindia.indiatimes.com/city/chandigarh/cotton-production-and-procurement-bhttps://pjtaiu.edu.in/files/AgriMkt/2021/October/cotton-October-2021-1.pdf>
- <https://orgprints.org/id/eprint/53280/1/keller-et-al-2024-FrontiersAgronomy-Vol6-Article1370878-p1-14.pdf> • https://hkkp.org.in/Other_Files/Details%20of%20Schemes%20of%20Department%20of%20Agriculture%20and%20Farmers%20Welfare%20tabular%202023.pdf
- Farmers in Haryana to Receive ₹2000 per Acre Subsidy for Cotton Cultivation – Kheti Vyapar, accessed May 3, 2025, <https://www.khetivyapar.com/en/farmers-in-haryana-to-receive-indian-rupee2000-per-acre-subsidy-for-cotton-cultivation-3864> <https://hipaco.in/public/hipa/pdf/brochures/gujarat/InitiativesofAgricultureDepartmentHaryana.pdf>
- department of agriculture and farmers welfare, Haryana,
- Economic Survey of Haryana 2023-24, <https://www.procurementresource.com/news-and-articles/cotton-in-haryana>
- Cotton Mandi prices in Haryana - Agriplus.in - Agriculture Products and Services for Farmers in India, accessed May 3, 2025, <https://agriplus.in/prices/cotton/haryana>
- <https://www.napanta.com/agri-commodity-prices/haryana/cotton-seed/23-Sep-2022https://agriplus.in/mandi/haryana/dabwali/american-cotton>
- <https://apparelresources.com/business-news/manufacturing/cotton-prices-increase-punjab-haryana-rajasthan-report-significant-declines-acreage/>
- ANNUAL REPORT 2023-2024 - Ministry of Textiles,
- Cotton Research and Development Association | AGRIS,
- CRDA - Cotton Research And Development Association, India Home - HAU | HISAR, accessed May 3, 2025, <https://hau.ac.in/page/home-8>
- Years of Cotton Research in Haryana – Research Gate,
- Analysing the Growth in Area, Production and Productivity of Cotton Crop in Haryana and India. - The Journal of Rural and Agricultural Research, <https://cicr.org.in/wp-content/uploads/SC-FA-Sain6.pdf>
- Agricultural Situation in India - Director of Economics & Statistics, accessed May 3, 2025, <https://desagri.gov.in/wp-content/uploads/2021/04/September2020.pdf>
- CSISA Phase II Annual Report 2015, accessed May 3, 2025, <https://csisa.org/wp-content/uploads/sites/2/2014/06/CSISA-II-annual-report-DEC-2015.compressed.pdf>
- 100 glorious years of cotton research and way forward - Electronic Journal of Plant Breeding, accessed May 3, 2025, <https://ejplantbreeding.org/files/site/Book-of-Abstracts-National-Symposium-on-Cotton-min.pdf>

Dr.Mukesh Bala

Associate Professor ,

Department of Economics ,

Hindu Girls college, Sonipat

Mail ID mukeshkataria2011@gmail.com.

Contact no.- 8307935310

Abstract

Environmental pollution remains one of the most pressing global challenges, with new trends emerging in both the sources and the nature of pollutants. In recent years, rapid industrialization, urban sprawl and technological advancements have led to the rise of novel forms of pollution such as microplastic contamination, e-waste, space debris and the spread of pharmaceutical residues. Climate change has further compounded environmental degradation, affecting air, water and soil quality. Concurrently, there is a significant shift towards the use of advanced technologies like artificial intelligence, satellite imaging and real-time sensors for pollution detection, monitoring and control. Moreover, international cooperation, stricter environmental regulations and growing public awareness are shaping more sustainable and adaptive policy responses. This paper explores these emerging trends, critically evaluates their implications and proposes strategic frameworks for mitigating pollution while aligning with global sustainable development goals.

Keywords: Environmental Pollution, Emerging Trends, Micro-plastics, E-waste, Pollution Monitoring, Technological Interventions, Sustainable Development, Environmental Policy

INTRODUCTION

Environmental pollution is a dynamic global challenge, continually evolving with industrial and technological advancements. While historical concerns focused on visible industrial smog and contaminated waterways, leading to significant reductions in traditional pollutants in many developed nations through legislation like the clean air act and clean water act, a new generation of "emerging contaminants" is now recognized. These include micropollutants, endocrine disruptors, pharmaceuticals, hormones, synthetic dyes, and engineered nanomaterials. Coming from diffuse sources, many emerging contaminants were previously undetectable or did not have clear criteria; they remain in the environment and can cause harm at low doses. Because of this, there has to be a complete change in how we approach monitoring, fixing, and policymaking.

Significance of emerging trends

Protecting public health, preserving biodiversity, and ensuring environmental sustainability requires an understanding of these emerging patterns in order to establish proactive policies. These pollutants pose a significant problem due to their subtle and ubiquitous nature, as well as their potential for long-term bioaccumulation and complicated interactions. Environmental degradation can worsen climatic vulnerabilities and vice versa, greatly amplifying the relevance of pollution and its interconnection with larger global challenges such as climate change. It will take an all-encompassing and flexible strategy to resolve these interdependencies.

Report structure and scope

The latest developments in pollution are examined in this study. To begin, it catalogues new pollutants, outlining their origins, pathways, longevity, and effects. Next, it delves into state-of-the-art technology advancements in remediation and monitoring, such as AI, the IoT, remote sensing, and advanced materials science. Next, we'll go over how research and an increasing focus on circular economy concepts have shaped policy frameworks and governance techniques over the years. Lastly, the report delves into the complex interplay between pollution and climate change, touching briefly on additional issues like digital, light, and noise pollution.

Research Objective

To provide a comprehensive review of emerging trends in environmental pollution, encompassing novel contaminants, advanced monitoring and remediation technologies, evolving policy frameworks, and interconnected environmental challenges, synthesizing recent academic literature and expert insights to delineate current challenges and propose strategic imperatives for future environmental protection efforts.

Research Questions

- What are the key categories of novel environmental contaminants, and what are their sources, distribution, persistence, and documented impacts on ecological systems and human health?
- What cutting-edge technological innovations are revolutionizing environmental monitoring and remediation

efforts, particularly through the application of artificial intelligence, the Internet of Things, remote sensing, and advanced material science?

- How are environmental policy frameworks and governance strategies evolving to address emerging pollution challenges, and what role does research play in shaping these regulations, including the growing emphasis on circular economy principles?

EVOLVING POLICY FRAMEWORKS AND GOVERNANCE STRATEGIES

In addition to progress in science and new technologies, strong and flexible policy frameworks are essential for the effective preservation of our planet's natural resources.

Trends in Environmental Policy: Effectiveness and Adaptability

Environmental policy in many developed nations has driven significant reductions in air and water pollution. Data show sustained declines in emissions and ambient concentrations for pollutants targeted by legislation like the Clean Air Act and Clean Water Act. For example, U.S. manufacturing air pollution fell by half or more between 1990 and 2008 despite output growth, primarily due to stringent regulation. Passenger vehicle air pollution per mile driven has fallen over 99% since the late 1960s due to exhaust standards.

Benefit-cost analyses often indicate that benefits, particularly for air and drinking water pollution, significantly exceed costs. Air pollution regulations show a high benefit-cost ratio of 12.4, and drinking water regulations a ratio of 4.8. Evidence for surface water pollution is less clear, with a lower ratio of 0.8. While pollution distribution remains unequal, studies suggest market-based policies (e.g., pollution taxes, cap-and-trade) and command-and-control policies do not systematically differ in their effects on environmental outcomes.

The Role of Research in Shaping Environmental Regulations

Environmental regulation research plays a crucial role in influencing policy evolution through a pathway of "competitiveness-technological change-innovation". Academic focus has shifted from

competitiveness to technological change and then to innovation, exploring how policies affect technological advancements. This academic evolution demonstrates that environmental regulation is informed and motivated by scientific inquiry. Observed changes in regulation types, such as the increase in "market-based environmental policy" and "public participation environmental policy" in China after 2006, align with research findings. Complex issues, such as climate change and information disclosure, can be addressed through the iterative process of policy refinement and adaptation.

The Circular Economy: A Paradigm Shift for Pollution Mitigation

It is impossible to continue using the "take-make-dispose" approach of classical linear economics. An innovative strategy for reducing pollution on a systemic level, the circular economy places a premium on the continuous reduction, reuse, refurbishing, and recycling of goods and materials.

Core Principles: Designing Out Waste, Circulating Materials, Regenerating Nature

Decoupling economic activity from finite resource use and regenerating natural systems are the three guiding concepts of the circular economy, which are all driven by design.

- 1. Eliminate Waste and Pollution:** Eliminates or significantly reduces the use of potentially dangerous substances as part of an effort to lessen the negative effects on the environment caused by waste and pollution.
- 2. Circulate Products and Materials (at their highest value):** Reduces or does away with the usage of potentially harmful substances in an attempt to diminish the impact of waste and pollution on the environment.
- 3. Regenerate Nature:** Makes concerted efforts to repair and strengthen natural systems, using renewable resources to power the shift, and keeping ecosystems healthy.

Reducing dependence on finite resources, the circular economy transforms the linear system to handle biodiversity loss, waste, and pollution. This systemic transformation helps mitigate climate change by reducing

pollution, waste, and emissions of greenhouse gases. It generates new job possibilities and helps the economy grow.

The Financial Sector's Role in Accelerating Transition

An important part is played by the international banking industry, which backs cutting-edge companies with a focus on circular design, resource efficiency, and trash reduction. By using their clout, financial institutions can shape new regulations and benchmarks for the sector.

U.N. Environment Programme Finance Initiative (UNEP FI) and similar organizations mobilise the financial sector to hasten this change, with a particular emphasis on high-impact industries such as agri-food systems, construction, textiles, and plastics. The goal is to promote research and activities on a worldwide and regional scale to increase awareness of the financial concerns associated with pollution and to accelerate the financing of the circular economy. Through the incorporation of circular economy strategies into their investment and lending choices, UNEP FI assists financial institutions in making the social agenda, environmental protection, climate change, and nature a priority.

The Climate Change-Pollution Nexus: Interconnected Threats

Cascade effects on biodiversity, natural resources, food security, and human health result from the intricate and mutually reinforcing nexus between climate change and environmental contamination.

CONSEQUENCES FOR BIODIVERSITY, WATER RESOURCES, FOOD SECURITY, AND HUMAN HEALTH

The climate change-pollution nexus has far-reaching consequences:

Biodiversity: Coral reefs and other marine ecosystems are especially vulnerable to the catastrophic loss of biodiversity that could result from the current rate of climate change. Added stress on ecosystems is the increased dispersion of pollutants caused by climate unpredictability.

Water Resources: Extreme weather events like floods and droughts are becoming more often as a result of climate change. These events have an impact on water

quality because they spread contaminants such as untreated wastewater, fertilisers, and pesticides. This poses a threat to the availability of clean drinking water, particularly in light of emerging contaminants and disease-resistant microbes.

Food Security: Food insecurity is exacerbated by heat stress and water scarcity, which reduce agricultural production. It is possible for contaminated irrigation water to reintroduce medicines and other contaminants into crops, which in turn can end up in human diets.

Human Health: There are serious direct and indirect dangers from combined effects. Injuries, mental sickness, and higher mortality rates are all results of extreme weather events. Air pollution, exacerbated by climate, is a leading risk factor for death, contributing to respiratory and cardiovascular diseases. Climate change also increases pathogen dispersal, with nearly 58% of known human infectious diseases potentially worsening, and expands the epidemic belt for vector-borne diseases. Societal costs from mental disorders due to climate-related risks, air pollution, and insufficient green spaces are projected to reach nearly US\$47 billion globally by 2030.

Integrated Approaches for Mitigation and Adaptation

Addressing the climate change-pollution nexus requires integrated, multi-faceted approaches. Resilient ecosystems are crucial for both climate change mitigation and adaptation, acting as carbon sinks and buffering extreme weather events. Restoring degraded ecosystems, like mangrove restoration, yields multiple benefits, including carbon sequestration, improved biodiversity, enhanced water quality, and reduced coastal erosion.

Policy responses need to be coherent and comprehensive, integrating air pollution control with climate change mitigation strategies to achieve co-benefits. This involves robust policy and regulatory frameworks supporting new technologies and fostering international cooperation. The UN's Sustainable Development Goals (SDG 6) focus on clean water and sanitation, recognizing interconnectedness. Strategic agility and continuous innovation are required.

Other Emerging Pollution Concerns

Beyond major contaminants and the climate-pollution nexus, several other forms of pollution are gaining recognition for their subtle yet significant environmental and health impacts.

Digital Pollution: The Hidden Environmental Footprint of the Digital Age

Digital pollution refers to the environmental impact generated by digital activities, including e-waste, electronic device manufacturing, and substantial energy/water consumption by data centers and network infrastructure. This invisible pollution is a growing concern as global reliance on technology surges.

Primary drivers include excessive electronic device use and reliance on internet-based technologies for offline tasks. Major sources:

E-Waste: Disposal of old electronics contributes to GHG emissions from landfills, increasing 53% between 2014 and 2020. E-waste releases up to 1000 different chemical substances, harming vulnerable populations.

Data Centers: These facilities consume immense energy (1.5% of global electricity) and require water-intensive cooling. Powering them with fossil fuels contributes to air pollution. By 2030, AI data center energy demand is projected to more than quadruple, potentially tripling annual CO₂ emissions.

Internet Usage and Digital Activities: Every online action, from emails to streaming, consumes energy and contributes to carbon emissions. A single Google search uses energy equivalent to a 60W lightbulb for 17 seconds; a ChatGPT inquiry uses nearly 10 times that.

Digital pollution contributes to air and water pollution through metal contamination from disposed electronics, deforestation and water pollution from rare resource mining, and air pollution from fossil fuel-powered data centers. The increasing attachment of younger generations to digital devices suggests this pollution will be harder to combat.

Mitigation strategies focus on reducing excessive energy usage and carbon footprints. These include reducing data center demand by encouraging local data storage, improving energy efficiency and eco-design in devices, and promoting conscious digital habits like deleting old

emails and reducing screen time. Companies are also assessing and reducing corporate carbon emissions from digital activities.

Light Pollution: Cascading Ecological and Atmospheric Impacts

Light pollution, excessive or inappropriate outdoor artificial light at night (ALAN), is an increasing concern, especially as nearly 7 in 10 people globally are projected to live in cities by 2050. Its impacts extend beyond obscuring celestial objects to affect wildlife, plant growth, and air quality.

Forms of light pollution include:

- Skyglow: Unnatural brightening of the night sky, doubling every eight years.
- Glare: Intense, uncontrolled brightness causing discomfort.
- Light Trespass: Unwanted light spilling into unintended areas.
- Clutter: Overwhelming presence of too many light sources.

The effects on the environment are substantial. ALAN messes with the circadian cycles of plants and animals, particularly those that live at night. It lures insects, exposes nighttime predators, and confuses migratory birds and turtles. Artificial light changes how plants react to environmental signals, throws off their seasonal cycles, and reduces the amount of pollination that occurs at night. Reduced air quality is another consequence of ALAN's interference with atmospheric chemistry. Urban light reduces the efficacy of the naturally occurring nitrate radical, which cleans the air, and poses threats to public health. Among the many detrimental effects of light pollution on human health are the elevated dangers of developing diabetes, breast cancer, depression, sleep problems, and obesity.

Responsible outdoor lighting is a key component of mitigation techniques. This means turning it on only when absolutely necessary, focussing it where it needs to be, making sure it's bright enough, setting controls, and choosing a warmer light. Lights that turn on and off in response to motion and street lighting that is designed to shine light downwards are two examples of concrete

actions. The reduction of energy expenditures and greenhouse gas emissions is another financial benefit of limiting light pollution.

Noise Pollution: An Underestimated Public Health Burden

A major and increasing public health concern, especially in metropolitan areas, is noise pollution, an unseen and underappreciated environmental stressor. After air pollution, it is thought to be the second most harmful environmental stressor to human health.

There are significant effects on health. In Europe, it is a factor in over 48,000 new cases of ischaemic heart disease and 12,000 early deaths every year. Heart conditions, stroke, and hypertension are the results of long-term exposure. In addition to its negative effects on cardiovascular health, noise pollution is a major source of discomfort and sleep loss, a risk factor for learning difficulties and stunted cognitive development in children, and an aggravating factor for melancholy, anxiety, and stress. The monetary ramifications are substantial; healthcare expenditures and productivity losses are predicted to cost Europe 40 billion euros annually.

Monitoring and mitigating noise pollution remain a difficulty, despite its severe repercussions. The absence of comparable data, caused by changes in reporting computation methodologies, is a big hurdle that prevents adequate financing and political backing. Noise reporting levels as they are now do not adequately account for all populations that are potentially affected. Electric vehicles also pose a problem; they are less noisy at low speeds, but laws frequently allow them to mimic the sound of a conventional engine, which undermines attempts to reduce noise.

Reducing thresholds for simulated engine noises and implementing strict noise reduction standards are necessary to address these difficulties. In order for cities to implement successful initiatives, such as investing in public transit infrastructure, they require financial and political backing. In order to effectively regulate noise, strong rules, better city planning, and increased public awareness are necessary.

CONCLUSION AND FUTURE OUTLOOK

A detailed analysis of current and future environmental pollution patterns indicates a dynamic and intricate ecosystem marked by new pollutants, advanced technology, and flexible government actions. A more sophisticated and proactive strategy is required to tackle the next generation of problems, even if we have come a long way in dealing with conventional pollutants.

Synthesis of Key Emerging Trends and Persistent Challenges

The analysis highlights several critical emerging trends:

Ubiquitous Contaminants: Worldwide, ecosystems are being invaded by microplastics, pharmaceuticals in the environment (PiE), and "forever chemicals" (PFAS), which are building up in biological systems, including our own. Their intrinsic stability and small size make them impossible to confine and degrade, increasing the danger they pose in the long run.

Technological Revolution in Monitoring and

Remediation: The field of environmental management is undergoing a sea change due to the advent of AI, the IoT, nanomaterials, and remote sensing via satellites and unmanned aerial vehicles (UAVs). These innovations allow for the efficient and accurate collecting of data in real-time, the development of predictive models, and the implementation of targeted remediation strategies in all three media (air, water, and soil). Bio-based cleanup methods provide environmentally friendly options.

Evolving Policy and Governance: Traditional pollution can be effectively reduced through environmental rules, and research is essential in developing these restrictions. The circular economy paradigm, with its principles of designing out waste, circulating materials, and regenerating nature, offers a systemic framework for pollution mitigation and is gaining momentum, supported by the financial sector.

Interconnectedness of Environmental Crises: The climate change-pollution nexus illustrates a mutual amplification of impacts, with consequences for biodiversity, water resources, food security, and human health. Other emerging concerns like digital pollution, light pollution, and noise pollution, though often overlooked, contribute

significantly to environmental degradation and public health burdens.

Persistent challenges include the policy lag behind scientific discovery, particularly for rapidly emerging contaminants like microplastics. The recalcitrant nature of "forever chemicals" limits the effectiveness of traditional cleanup, demanding a fundamental shift towards source reduction and material redesign.⁸ Data gaps and methodological inconsistencies continue to hinder a complete understanding of long-term impacts for many novel pollutants.

RECOMMENDATIONS FOR FUTURE RESEARCH PRIORITIES

Future research must prioritize interdisciplinary and holistic approaches:

Long-term Health and Ecological Impacts: Conduct extensive longitudinal studies to fully understand the chronic, low-dose effects and cumulative impacts of emerging contaminants on human health and ecosystem functioning, including synergistic effects and climate change interactions.

Advanced Detection and Characterization: Develop more sensitive, cost-effective, and standardized analytical methods for detecting and characterizing novel pollutants and their transformation products across diverse environmental matrices.

Sustainable Remediation and Prevention: Invest in research and development of truly sustainable and scalable remediation technologies, focusing on destructive methods for recalcitrant compounds like PFAS that avoid harmful byproducts. Prioritize research into green chemistry and eco-design to prevent pollution at the source.

Integrated Monitoring Systems: Further develop and integrate AI, IoT, and remote sensing technologies to create comprehensive, real-time, and predictive environmental monitoring networks, improving data quality, interoperability, and AI model interpretability.

Socio-Economic Dimensions: Conduct more research on the socio-economic impacts of emerging pollution concerns, including digital, light, and noise pollution, and explore equitable solutions that address environmental

justice.

Strategic Imperatives for Policy Development and Collaborative Action

To effectively address emerging environmental pollution, strategic imperatives for policy development and collaborative action are paramount:

Proactive Regulatory Frameworks: Policymakers must move beyond reactive "end-of-pipe" solutions to establish proactive, anticipatory regulatory frameworks that can rapidly assess and manage newly identified hazardous substances, strengthening chemical oversight and promoting "safe-by-design".

Accelerated Transition to Circular Economy: Governments and industries should accelerate the transition to a circular economy by incentivizing circular design, resource efficiency, and waste reduction across all sectors, particularly high-impact areas like plastics, textiles, and agri-food systems.

International Cooperation and Governance: Given the transboundary nature of many emerging pollutants and climate change impacts, robust international cooperation and legally binding agreements are essential, including harmonizing monitoring standards and sharing data.

Public Awareness and Engagement: Enhance public awareness and education campaigns regarding emerging pollutants and their impacts, empowering individuals and communities to make informed choices and participate in mitigation efforts.

Integrated Climate and Pollution Policies: Develop and implement integrated policies that recognize and leverage the mutual benefits of addressing climate change and pollution concurrently, such as reducing fossil fuel emissions to improve both air quality and mitigate global warming.

By embracing these research priorities and strategic imperatives, the global community can move towards a more resilient, sustainable, and pollution-free future.

REFERENCES

➤ Leib, Linda Hajjar. "THEORISATION OF THE VARIOUS HUMAN RIGHTS APPROACHES TO ENVIRONMENTAL ISSUES." Human Rights and the Environment: Philosophical, Theoretical and Legal

Perspectives, Brill, 2011, pp. 71–108. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/10.1163/j.ctt1w8h1t2.7>. Accessed 16 June 2025.

➤ Bakkes, Jan, et al. “Evolution of the Global Environment Outlook Reports 1–6, Including Their Use of the Integrated Environment Assessment Approach.” Keeping the World's Environment under Review: An Intellectual History of the Global Environment Outlook, Central European University Press, 2022, pp. 63–96. JSTOR, <https://doi.org/10.7829/j.ctv209xmzx.11>. Accessed 16 June 2025.

➤ Lachman, Beth E., et al. “Sustainability: Communities, Transportation, and Agriculture Trends.” Key Trends That Will Shape Army Installations of Tomorrow, RAND Corporation, 2013, pp. 59–110. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/10.7249/j.ctt5hhv93.11>. Accessed 16 June 2025.

➤ Larsen, Bjorn, et al. The Challenge of Air Pollution. Copenhagen Consensus Center, 2008. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/resrep16379>. Accessed 16 June 2025.

➤ Lin, Xinyan, and Mark Elder. “Major Developments in Air Pollution Policies in China.” Major Developments in China's National Air Pollution Policies in the Early 12th Five-Year Plan, Institute for Global Environmental Strategies, 2014, pp. 28–78. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/resrep00721.10>. Accessed 16 June 2025.

➤ Ramos, Erika Pires. “Climate Change, Disasters and Migration: Current Challenges to International Law.” Climate Change: International Law and Global Governance: Volume II: Policy, Diplomacy and Governance in a Changing Environment, edited by Oliver C. Ruppel et al., 1st ed., Nomos Verlagsgesellschaft mbH, 2013, pp. 739–60. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/j.ctv941vsk.31>. Accessed 16 June 2025.

➤ Institute for Global Environmental Strategies (IGES). “Redirecting Education, Public Awareness and Training for Sustainable Development.” Sustainable Asia 2005 and Beyond: In the Pursuit of Innovative Policies, Institute for Global Environmental Strategies, 2005, pp. 125–48. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/>

resrep00775.14. Accessed 16 June 2025.

➤ Leib, Linda Hajjar. “CONCLUSION.” Human Rights and the Environment: Philosophical, Theoretical and Legal Perspectives, Brill, 2011, pp. 157–62. JSTOR, <http://www.jstor.org/stable/10.1163/j.ctt1w8h1t2.9>. Accessed 16 June 2025.

Dr. Nisha Rani

Assistant Professor,

Chaudhary Devi Lal University,

Sirsa (Haryana)

Dr. Nisha Rani.

H.No. 184, Street Pyare Lal Kochar,

Colony Road, Mandi Dabwali,

Sirsa, Haryana.

PIN Code: 125104

Mobile No. 9671900053.

Abstract:

Haryana , a state of North India, holds a distinguished position in the Nation's agricultural landscape. Its historical role as a key contributor to the green revolution has earned it the epithets of the 'wheat basket' and 'Rice bowl' of India. The state's fertile plains have been instrumental in ensuring food security for the country through its substantial contributions to the central pool of food grains. While Haryana's economy has undergone a significant structural shift towards industrial and service sectors over the years. Agriculture remains a vital sector, providing livelihoods for a considerable portion of its population and playing a crucial role in national food security. The study will delve into various aspects of Haryana's agriculture, including production trends, its economic contribution to the state, the challenges it currently faces, the government initiatives and policy interventions aimed at its growth. This analysis will primarily draw upon secondary data sources, particularly the research material provided, to offer a detailed and evidence-based understanding of the agricultural scenario in Haryana. The declining share of agriculture in the state's Gross State Domestic Product (GSDP) necessitates a careful examination of its current status and future prospects, given its continued importance.

Key words: Agriculture, production, economic contribution

Introduction:

The agriculture sector in Haryana is dynamic and constantly evolving, influenced by the various factors ranging from technological advancements and policy changes to environmental concerns and market forces. Understanding the intricacies of this sector is crucial for informed decision-making and the formulation of effective strategies for its sustainable development. This paper aims to provide a comprehensive analysis of the current situation of agriculture in Haryana, primarily focusing on the period of 2011-24. The study will delve into various aspects of Haryana' agriculture, including its production trends, economic contribution to the state, the challenges it currently faces, the government initiatives and policy interventions

aimed at its growth, the adoption of technological advancements, the dynamics of its agricultural markets, and the trends that are likely to shape its future. This analysis will primarily draw upon secondary data sources, particularly the research material provided, to offer a detailed and evidence-based understanding of the agricultural scenario in Haryana. The paper is structured to first provide an agricultural profile of the state, followed by an analysis of production and productivity trends, the economic significance of the sector, the key challenges it encounters, the government's efforts to support it, the functioning of its markets, and finally, the emerging trends that will likely define its trajectory.

Agricultural Profile of Haryana:

Haryana is strategically located in the northern plain of India, sharing its border with Himachal Pradesh to the north, Uttar Pradesh to the east, Punjab to the west, and Rajasthan to the south. The state benefits from diverse agro-climatic zones and is predominantly characterised by fertile alluvial soil. This rich soil supports the cultivation of a wide array of major crops, including rice, wheat, cotton, pearl-millet, mustard, and sugarcane. However, the agricultural landscape also includes pockets with saline and alkaline soils, which present specific challenges for cultivation. The diversity in soil types and agro-climatic conditions provides Haryana with a strong agricultural foundation, enabling the growth of various crops. This also necessitates region-specific agricultural strategies and interventions to address the unique characteristics of different areas.

A significant portion of Haryana's land is arable, with a high percentage dedicated to cultivation. The state follows major cropping systems such as rice-wheat, cotton- wheat, and pearl millet- mustard. Notably the majority of farmers in Haryana cultivate wheat and paddy, which together occupied almost 60% of the state's arable land as of 2021. The cropping intensity in Haryana is also noteworthy. While the dominance of the rice-wheat cropping system has been crucial in achieving high levels of production, it has also led to considerable challenges, particularly concerning water depletion and the degradation of soil health. This necessitates a strategic shift towards crop diversification to ensure the long-term sustainability of agricultural

production in the state. Also irrigation plays an important role in Haryana' agriculture, with primary sources being tube wells and canals. Over the past few decades, there has been a substantial increase in the reliance on ground water extracted through tubewell, largely due to the inadequacy of canal

water supply in meeting the irrigation demands of water-intensive crops like paddy. The government has recognized the critical need for improving irrigation efficiency and has been actively promoting micro-irrigation techniques through various subsidies. While a significant portion of the agricultural land in Haryana benefits from irrigation, the unsustainable extraction of groundwater through tubewells poses a serious threat. Therefore, enhancing the efficiency of irrigation methods and improving the canal system are essential for the future of agriculture in the state.

Objective:

The study will explore various aspects of Haryana's Agriculture, Trends in production, contribution of his sector into economic contribution to the state. It also explores the challenges faced by the agricultural sector in Haryana and schemes and initiatives taken by the government to shape its future.

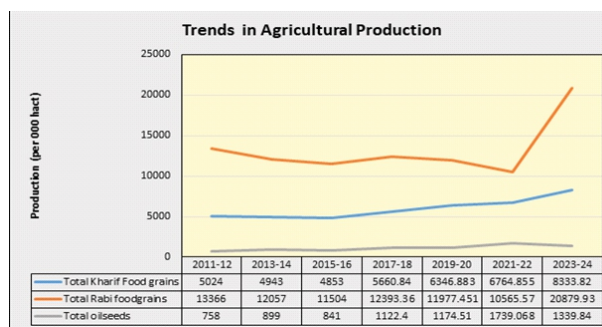
Methodology:

This analysis will primarily draw upon secondary data sources, particularly the research material provided, to offer a detailed and evidence-based understanding of the agricultural scenario in Haryana. The paper is structured to first provide an agricultural profile of the state, followed by an analysis of production trends, the economic significance of the sector, the key challenges it encounters, and the government's efforts to support it.

Agricultural profile with Production trends of Haryana (2011-24): The state follows major cropping systems such as rice-wheat, cotton- wheat, and pearl millet- mustard. Notably the majority of farmers in Haryana cultivate wheat and paddy, which together occupied almost 60% of the state's arable land as of 2021. The cropping intensity in Haryana is also noteworthy. Table 1 provides a clear image of Kharif production in Haryana covering periods of 2011-24. It is

clearly shown that overall kharif production of food grain has an increasing trend. There is significant growth from 5024 '000 Hects in 2011-12 to 8333.82 '000 Hects in 2023-24. This indicates an expansion in the overall Kharif food grain cultivation in the region. Rice consistently holds the largest share of cultivated land area among all kharif crops i.e it has steadily increased from 3757 '000 Hects in 2011-12 to 6987.82 '000 Hects in 2023-24, nearly doubling over the period. On the other hand, bajra and Maize show considerable fluctuations as compared to other crops. Bajra experienced a dip between 2011-12 and 2015-16, then recovered significantly, reaching 1298.42 '000 Hects in 2023-24, surpassing its 2011-12 levels and in case of Maize decreased initially, then saw a significant jump in 2021-22, only to drop again in 2023-24. Kharif pulse also exhibits fluctuating trends, initially it declines and shows sharp increase in 2021-22 then dropped in next period.

Figure 1: Trends in Agricultural Production:



Source: Agriharyana.gov.in/la-website/Statistics/Crop Wise_AYP

The declining trends in Jowar and the volatility in Maize and Kharif Pulses indicate potential challenges or shifts away from these crops. The overall increase in total Kharif food grains is a positive indicator for food security in the region, but the changing crop mix could have implications for agricultural diversity and sustainability.

Table 1: Crop Wise Production- Kharif (2011-2024):

Crops	2011-12	2013-14	2015-16	2017-18	2019-20	2021-22	2023-24
Rice	3757	4041	4142	4880	5194.6	5526.82	6987.82
Jowar	33	34	30	24.6	15.77	16.64	10.14
Maize	30	24	18	20.6	17.29	29.81	18.35
Bajra	1175	829	652	720.3	1101.5	1143.91	1298.42
Kh. Pulses	29	15	11	15.34	17.723	47.675	19.09
Total Kharif Food grains	5024	4943	4853	5660.84	6346.883	6764.855	8333.82

Source: Agriharyana.gov.in/la-website/Statistics/Crop

Table 2: Crop Wise Production – Rabi (2011-2024)

B) Rabi (Area in '000 Hects)							
Crops	2011-12	2013-14	2015-16	2017-18	2019-20	2021-22	2023-24
Wheat	13119	11800	11350	12265	11876.9	10475.41	12482.62
Gram	73	72	26	36.1	47.09	45.45	12.98
Barley	149	151	99	73.5	46.6	10.58	47.1
Rabi Pulses	5	4	4	3.76	4.561	6.65	3.41
Summer Moong	20	30	25	15	2.3	27.48	1.95
Total Rabi foodgrains	13366	12057	11504	12393.36	11977.451	10565.57	20879.93

Source: Agriharyana.gov.in/la-website/Statistics/Crop Wise_AYP

According to table 2, there is an overall significant increment in total Rabi production. The total area under Rabi foodgrains shows a substantial increase from 13366 '000 Hects in 2011-12 to 20879.93 '000 Hects in 2023-24. However there is a slight decline in production during 2021-22 but it recovers in the next period i.e. 2023-24. Wheat is by far the most dominant Rabi crop, occupying the largest area. While its area shows fluctuations, it generally follows the trend of total Rabi foodgrains. It decreased from 13119 '000 Hects in 2011-12 to a low of 10475.41 in 2021-22, but then rebounded sharply to 12482.62 '000 Hects in 2023-24.

In the case of Gram, there is a significant decline in its production. It started at 73 '000 Hects in 2011-12 and dropped drastically to 12.98 '000 Hects in 2023-24. Barley experienced a substantial decrease in cultivated area from 149 '000 Hects in 2011-12 to a low of 10.58 '000 Hects in 2021-22. It then saw a partial recovery to 47.1 '000 Hects in 2023-24, but it's still significantly lower than the initial years.

Rabi pulses have small contributions to the total foodgrain area in rabi crops and their cultivated area is consistently low (between 3.41 and 6.65 '000 Hects) and shows minor fluctuations. When we take a look on summer moong production, it shows extreme volatility. It peaked at 30 '000 Hects in 2013-14, then dropped to a mere 2.3 '000 Hects in 2019-20, surged to 27.48 '000 Hects in 2021-22, only to plunge again to 1.95 '000 Hects in 2023-24.

However, Gram, Rabi Pulses, and Summer Moong all experienced significant declines during this

period, while Barley saw a partial recovery.

Table 3: Crop Wise Production – Commercial (2011-2024)

(C) Commercial (Area in '000 Hects)							
Crops	2011-12	2013-14	2015-16	2017-18	2019-20	2021-22	2023-24
Sugarcane	6953	7427	6992	9708.9	7730.3	8750.68	7202.62
Cotton	2616	2027	995	1622.5	2463	1310.23	1508.95
Guar	290	369	380	226.8	120.845	98.896	96.27
Kh.oilseed	6	8	7	5.4	7.88	22.488	1344.96
Rabi oilseeds	747	880	821	1107.5	1149.9	1683.22	41.463
Sunflower	5	11	13	9.5	16.73	33.36	35.53
Total oilseeds	758	899	841	1122.4	1174.51	1739.068	1339.84

Source: Agriharyana.gov.in/la-website/Statistics/Crop Wise_AYP

Table 3 provides an image of commercial crop production during a research period. This shows a considerable fluctuation. Sugarcane is a major commercial crop, with its cultivated area showing considerable fluctuations. It started at 6953 '000 Hects in 2011-12, peaked in 2017-18 at 9708.9 '000 Hects, and then declined to 7202.62 '000 Hects in 2023-24. Despite the fluctuations, it remains a dominant commercial crop. Cotton cultivation has been highly volatile. It decreased sharply from 2616 '000 Hects in 2011-12 to a low of 995 '000 Hects in 2015-16, then saw some recovery before dropping again to 1508.95 '000 Hects in 2023-24. The area in 2023-24 is significantly lower than in 2011-12, indicating a general decline in cotton cultivation over the [period](#). In case of Guar cultivation, it shows a consistent downward trend. Starting at 290 '000 Hects in 2011-12, it has steadily declined to 96.27 '000 Hects in 2023-24.

Economic Contribution of Agriculture.

Agriculture and allied sectors play a significant role in Haryana's economy. In 2022-23, these sectors donated an estimated 18% to the GSDP of the state at current prices. While this share has been decreasing over the years due to the rapid industrial growth and growth in service sectors, agriculture remains a crucial component, exclusively in terms of employment and generating income in rural areas. The growth rate of the agriculture sector in Haryana was 4.5% at constant prices in 2023-24,

with a projected growth of 4.1% for 2024-25. This growth rate is generally lower compared to the services and manufacturing sectors, which grew at 7.2% and 9% respectively in 2023-24. To enhance the dynamism of the unindustrialized sector, continued policy support and planned interventions are necessary.

Agriculture is also a major source of employment in Haryana. A significant share of the state's workforce is involved in agriculture and allied activities. The dependence on agriculture as a source of livelihood was further highlighted during the COVID-19 pandemic, which witnessed a reverse migration towards the sector, indicating its role as a crucial safety net for many households. This substantial contribution to employment, particularly in rural regions, underscores the social and economic importance of agriculture in Haryana, extending beyond its direct contribution to the GSDP.

Challenges in Haryana Agriculture:

Haryana's agricultural sector, beside of its strengths, faces numerous critical challenges that threaten its sustainability and future growth.

Severe water scarcity and critical groundwater crisis:

One of the most pressing issues is the severe water scarcity and the associated reliance on irrigation. Ground-water extraction rates in many districts of Haryana expressively exceed the annual recharge, leading to a critical groundwater crisis. This crisis is exacerbated by the cultivation of water-intensive crops like wheat, paddy etc., coupled with subsidized electricity for irrigation through tube well. The canal water supply often proves inadequate, forcing farmers to drill deeper for water, which increases their operational costs and risks drawing saline water from deeper aquifers. The decline in groundwater levels also varies across regions, influenced by factors such as urbanization, industrialization, and inherent geographical disadvantages.

Impact of climate change: The impact of climate change presents another significant challenge to Haryana's agriculture. The state's agricultural practices are increasingly vulnerable to rising temperatures, erratic rainfall patterns, and the growing frequency of extreme weather events. Studies indicate a potential decline in the yields of chief crops like rice, wheat, sugarcane and cotton due to these changing climatic conditions. Farmers are

also facing increased risks from droughts, floods, and heat waves, which can severely impact crop production and their livelihoods.

Soil health and nutrient management: Soil health and nutrient management are also critical concerns. Intensive farming practices, coupled with the over-use of chemical enrichers, have directed to soil deprivation, nutrient depletion (particularly of nitrogen, phosphorus, and potassium), increased soil salinity and alkalinity, and a reduction in biological matter. Efforts to promote well-adjusted nutrient use through Soil Health Cards have faced challenges in adoption by farmers, who sometimes fear that reduced fertilizer use might lead to lower crop yields. The prevalence of an annual lease land system in some areas further discourages tenant farmers from investing in long-term soil health management.

Market access and price volatility: Market access and price volatility pose additional hurdles for Haryana's farmers, especially smallholders. While the Minimum Support Price (MSP) and government procurement provide a crucial safety net, particularly for wheat and rice, many farmers still struggle with accessing markets and obtaining fair prices for their produce. There is a recognized need for improvements in rural market infrastructure, supply chain logistics, and the adoption of digital platforms to facilitate better market linkages and reduce the role of intermediaries.

Affordability of machinery for small and marginal farmers:

The level of farm modernization and know-how adoption in Haryana is noteworthy, chiefly concerning tractors. However, the need for smart machinery and precision tools to enhance efficiency and productivity is growing. A major challenge is the affordability of such machinery for small and marginal farmers. Government initiatives are in place to promote mechanization through subsidies and the establishment of Custom Hiring Centres (CHCs) to make machinery more accessible.

Other significant challenges include the imperative for crop diversification away from the water-intensive rice-wheat cycle, the rising costs of essential agricultural inputs like pesticides and fertilizers which impact farmers' profitability, the persistent practice of stubble burning and its detrimental effects on air quality and soil health, and the increasing prevalence of small and fragmented landholdings which can hinder farm productivity and the

adoption of mechanization.

Government Initiatives and Policy Interventions:

Haryana government has been actively implementing various Schemes and policies to address the encounters and encourage the growth of the agricultural sector.

- To tackle the critical issue of water scarcity, schemes like '**Mera Pani Meri Virasat**' have been introduced to incentivize farmers to shift from water-intensive crops like paddy to less water-consuming alternatives such as maize, cotton, pulses, and horticulture. This program has shown some success in encouraging crop diversification. The government also delivers pecuniary support to growers who opt for these alternative crops.
- Recognizing the importance of soil health, the state government has introduced schemes to promote green manuring through the cultivation of '**dhaincha**'. There is likewise a significant emphasis on encouraging natural farming practices, with the government providing assistance for necessary inputs. These initiatives aim to improve soil fertility and reduce the reliance on chemical fertilizers.
- To enhance irrigation efficiency and contest water shortage, the government is endorsing micro-irrigation techniques like drip and sprinkler systems through subventions under schemes such as the **Pradhan Mantri Krishi Sinchayee Yojana (PMKSY)**. Subsidies for micro-irrigation can be as high as 85% in some cases. Efforts are also underway to improve the prevailing canal irrigation setup and to promote groundwater recharge in the state.
- The government provides various forms of financial assistance to farmers, including subsidies on agricultural machinery and implements. Crop insurance schemes like the **Pradhan Mantri Fasal Bima Yojana (PMFBY)** are also being implemented to protect farmers from crop losses due to unforeseen events. Under this scheme, farmers in Haryana have received substantial compensation for damaged crops. Furthermore, the government has increased the collateral-free loan cap for farmers to improve their access to credit.
- In terms of market intervention and price support, the government procures several crops at the **Minimum Support Price (MSP)**. Haryana has been recognized as the first state to procure 11 crops at MSP in 2023. Schemes like the '**Bhavantar Bharpayee Yojana**' are also in place to offer price support for horticulture crops. To improve access in market, the administration is actively working to connect agrarians with markets

through the **e-NAM (National Agricultural Market) platform**, with a significant number of mandis in Haryana already integrated with this platform.

Recommendations:

To ensure a sustainable and prosperous future for agriculture in Haryana, the following strategy recommendations are proposed:

- **Prioritize and incentivize sustainable water management practices:** This includes promoting micro-irrigation techniques more aggressively, investing in the improvement of canal irrigation systems, and incentivizing growers to shift to less water-intensive crops through robust financial and technical support.
- **Develop and implement climate-resilient agricultural strategies:** This involves promoting crop varieties that are tolerant to heat, drought, and other climate-related stresses, as well as encouraging climate-smart agricultural practices.
- **Focus on enhancing soil health over cohesive nutrient management:** Promote the adoption of Soil Health Card recommendations by addressing farmers' concerns, providing localized and actionable advice, and incentivizing the use of organic fertilizers and green manuring.
- **Strengthen market admittance and price realization for farmers:** This includes investing in rural market set-up, promoting the use of digital platforms for agricultural trade, and supporting the growth and capacity building of Farmer Producer Organizations (FPOs).
- **Facilitate the implementation of contemporary know-hows and farm mechanization:** Ensure that subsidies and pecuniary aid for agricultural machinery are accessible to small and marginal farmers, and endorse the establishment of Custom Hiring Centres.
- **Augment administration sustenance for crop modification and allied agricultural sectors:** Provide comprehensive support, including financial incentives, technical guidance, and market linkages, to encourage farmers to diversify into high-value yields, cultivation, animal husbandry, dairy, and fisheries.
- **Invest in targeted research and development:** Focus research efforts on addressing the precise encounters faced by Haryana's agriculture, such as developing water-efficient crop varieties, improving soil health management performs, and enhancing climate resilience.

By adopting a holistic and integrated approach that addresses these key areas, Haryana can ensure the continued growth and sustainability of its agricultural sector, thereby securing the livelihoods of its farmers and contributing to the nation's food security in the face of evolving ecological and economic landscapes.

Conclusion:

The agricultural segment in Haryana stands at a critical juncture, characterized by both significant achievements and pressing challenges. While the state has consistently maintained high levels of food grain production and contributes substantially to national food security, issues such as water scarcity, climate change impacts, declining soil health, and market access limitations need to be addressed effectively to ensure the sector's enduring sustainability and prosperity. The government has flung numerous initiatives aimed at encouraging crop divergence, sustainable farming practices, efficient irrigation, and better market linkages. However, the successful implementation and widespread adoption of these measures require concerted efforts from all stakeholders, including policymakers, farmers, researchers, and the agricultural industry.

References:

<https://cdnbbsr.s3waas.gov.in/s32b0f658cbffd284984fb11d90254081f/uploads/2025/03/20250317378593833.pdf>

- Home | Haryana State Agricultural Marketing Board, Government of Haryana, India, India, . <https://hsamb.org.in/>

- HARYANA AGRICULTURE AND FARMERS' WELFARE REPORT - ICFA , <https://www.icfa.org.in/assets/img/souvenirs/haryana-agriculture-and-farmers.pdf>

- Agriculture - SLBC Haryana, . <https://slbcharyana.pnb.in/agriculture/>

- Structural changes in Haryana Agriculture - AWS, . https://sdiopr.s3.ap-south-1.amazonaws.com/2024/Oct/17-Oct-24/2024_AJAEES_123644/Ms_AJAEES_123644.pdf

- Economic Survey of Haryana 2023-24, .

<https://cdnbbsr.s3waas.gov.in/s386e78499eeb33fb9cac16b7555b50767/uploads/2024/02/202402231931158089.pdf>

https://www.ijmra.us/project%20doc/2016/IJRSSJULY2016/IJRSSJuly16_SK.pdf

- Haryana | ICAR, . <https://icar.org.in/node/17265>

- Trend And Performance Of Agriculture Production In Haryana: An Empirical Analysis, . <https://kuey.net/index.php/kuey/article/view/4664>

- Performance Of The Agricultural Sectors In Haryana - IJFANS International Journal of Food and Nutritional Sciences, <https://www.ijfans.org/uploads/paper/5c65ccbd3335e5adf976ec471a37bfd5.pdf>
<https://www.cgiar.org/research/publication/cropping-systems-of-haryana-challenges-and-opportunities/>

- <https://www.indiaspend.com/earthcheekindia/haryanas-groundwater-crisis-worsened-by-subsidised-tubewell-irrigation-945451>

- https://www.researchgate.net/publication/379376346_Changing_Pattern_of_Irrigation_Intensity_in_Haryana_A_Geographical_Analysis

- Irrigation Projects in Haryana: Exploring e Tender Opportunities - Tata nexarc, <https://www.tatanexarc.com/t/haryana-tenders/irrigation-projects-in-haryana/>

- Unveiling The Trend And Pattern Of Irrigation Extent In Haryana State: A Comparative Analysis - IJCRT, . <https://ijcrt.org/papers/IJCRT2201652.pdf>

- Ground Water Depletion in Haryana: A Challenge for Sustainability of Agriculture Sector - International Journal for Research Publication and Seminar, <https://jrp.s.shodhsagar.com/index.php/j/article/download/365/364/718>

- Examining the spread of micro irrigation in Haryana: Adoption determinants and challenges for adopters and non-adopters, <https://www.mathsjournal.com/pdf/2023/vol8issue5S/PartB/S-8-5-2-230.pdf>

- Home | Horticulture Department, Government of

Haryana, <https://hortharyana.gov.in/en>

- Haryana Agriculture Development Fair-2023 - Drishti IAS, <https://www.drishtiiias.com/state-pcs-current-affairs/haryana-agriculture-development-fair-2023-1>
- Haryana Budget Analysis 2023-24 - PRS India, <https://prsindia.org/budgets/states/haryana-budget-analysis-2023-24>
- Haryana Budget Analysis 2024-25 - PRS India, <https://prsindia.org/budgets/states/haryana-budget-analysis-2024-25>
- <https://en.theharyanastory.com/article/1457/haryanas-groundwater-crisis-reaches-dangerous-levels>
- <https://euroasiapub.org/wp-content/uploads/IJRESSApr2023-rajeshkumar.pdf>
- <https://india.mongabay.com/2021/07/groundwater-depletion-in-haryana-a-cause-of-serious-concern/>
- <https://tehelka.com/water-crisis-haryana-farmers-may-walk-away-from-their-farms/>
- <https://www.downtoearth.org.in/water/why-are-farmers-in-haryana-leaving-their-fields-vacant--94132>
- <https://iwaponline.com/ws/article/24/9/3093/104566/Water-accounting-of-groundwater-over-exploited>
- Water Crisis in Punjab and Haryana | Economic and Political Weekly, <https://www.epw.in/journal/2016/50/insight/water-crisis-punjab-and-haryana.html>
- Assessment of Impacts of Climate Change on Trend and Pattern of Wheat Crop in Haryana: A Geographic Analysis -ResearchGate, https://www.researchgate.net/publication/352355854_Assessment_of_Impacts_of_Climate_Change_on_Trend_and_Pattern_of_Wheat_Crop_in_Haryana_A_Geographic_Analysis
- <https://iwaponline.com/jwcc/article/15/12/5793/105941/Understanding-the-influence-of-teleconnections-on>
- <https://kuey.net/index.php/kuey/article/view/2582/1555>
- Report Name: Grain and Feed Update - USDA Foreign

Agricultural Service, https://apps.fas.usda.gov/newgainapi/api/Report/DownloadReportByFileName?fileName=Grain%20and%20Feed%20UpdateNew%20Delhi_India_IN2024-0033

<https://www.ceew.in/publications/sustainable-agriculture-india/conservation-agriculture>

- <https://rootsfoundation.in/interventions/sustainable-agriculture/>

Dr. Mukesh Bala

Associate Professor ,

Department of Economics ,

Hindu Girls college, Sonipat

Mail ID -mukeshkataria2011@gmail.com,

Contact no.- 8307935310



ABSTRACT

Graphic design is an applied art whose activity consists in projecting visual communications intended to transmit specific messages to social groups. Its practice involves [creativity](#), [innovation](#) and [lateral thinking](#) using manual or [digital tools](#). Print media has been around for hundreds of years and has survived many technological changes throughout history. So, digital marketing is currently taking over the world, print still maintains its own relevance and is an excellent way to connect with consumers on a more personal level. Print will always have a niche in the advertising world as long as people exist. Graphic design in print media is a new way to begin a new era. To achieve the framed objectives graphic designs were collected from various sources and further 15 preferred designs were used to develop graphic designs for various end uses in printing. After the tabulation the results show that the designs were highly accepted for printing.

Keywords: Graphic- the production of drawings, Print- to put words, pictures, etc. onto paper by using a special machine

INTRODUCTION

Graphic design has, as a field of application, different areas of knowledge focused on any visual communication system. For example, it can be applied in advertising strategies, or it can also be applied in the [aviation](#) world or [space exploration](#). In this sense, in some countries graphic design is related as only associated with the production of sketches and drawings, this is incorrect, since visual communication is a small part of a huge range of types and classes where it can be applied.

In the 15th century graphic design as applied art was initially linked to the boom of [rise of printing](#) in Europe and the growth of consumer culture in the [Industrial Revolution](#). From there it emerged as a distinct profession in the West. Given the rapid and massive growth in information exchange today, the demand for experienced designers is greater than ever, particularly because of the development of new technologies and the need to pay attention to human factors beyond the competence of the engineers who develop

them. A graphic design project may involve the creative presentation of existing [text](#), ornament, and images.

Print design is a type of graphic design that is specifically created for print media. It involves designing graphics, images, and text that can be printed on physical materials such as paper, vinyl, and fabric. Print design includes business cards, brochures, flyers, posters, banners, and other printed materials.

One of the essential aspects of print design is that the final output is static. That means that once the design is printed, it cannot be changed. Hence, it is crucial to pay close attention to details during the design process.

METHODOLOGY:

Out of 30 collected graphic designs the fifteen highest preferred designs were screened by experts suitable for printing which were used to develop designs for various end uses along with self clicked photos. After the tabulation the results show that the developed designs were highly accepted for printing.

REVIEWS:

Gupta and Joseph, 2015 developed designs for table cloth using Auto CAD software. Forty Greek motifs in eight different categories i.e. animal, human figure, pottery, foliage, stylized, architectural, geometrical and stylized floral fauna were used to develop 50 fifty designs. The developed designs were shown to the respondents for their preferences with reference to different parameters i.e. innovation, placement of motifs and overall appearance.

Seivewright, S. (2007) the book Research and Design, Bloomsbury The book Research and Design by Simon Seivewright (2007) is a practical guide that explains the meaning of research, the compilation of research, design development, and communication. In this book too, there is an emphasis on research and how to be original in one's own research. "From in-depth and broad-ranging research, the designer can begin to interpret a series of garments or a collection. Silhouettes, textures, colors, details, print, and embellishment will have all their place in the process of design and will be found in the research created." (2007, p.

7).

Lawson, B. (2005) how designers think: the design process demystified, fourth Edition, Elsevier, Routledge. In the article “Design Thinking” by Tim Brown (2008), it is underlined the importance of the end-user and the understanding of his needs: "Many of the world's most successful brands create breakthrough ideas that are inspired by a deep understanding of consumers' lives and use the principles of design to innovate and build value.” (2008, p. 90) The view that makes the user involved in the design process is exposed in the book of Bryan Lawson (2005): How designers think: the design process demystified. Lawson explains the research of Markus about the three possible roles of designers in the future. Two of these roles include the user: "The opposite to this conservative approach is actively to seek different structural changes in society but which also would result at the end of the professionalism as we know it. Such a revolutionary approach would lead the designer to associate directly with user groups." (2005, p. 29) The third role of the designer will be an intermediary role, in which the designer remains professional but involves the user in the process. This is the approach that this thesis will privilege.

Aynsley, 2005 pointed out those roots of modern graphic design, which are practiced worldwide, especially in the context of publication design. As though the term 'Graphic Design' is very recent but its existence can be traced out since very long time. The cocept was used in cave paintings of France since c15,000–10,000 BC. Romans also used it for advertising. (Aynsley, 2005)

According to Vyas, 2000 a senior Indian design academician, the modern awareness of design has originated from the transformation of one concept into the other; that is, the change of design as an ability to show design as a process (Vyas, Design The Indian Context, 2000, p. 25)

RESULTS:

TABLE I: Representation of collected graphic designs

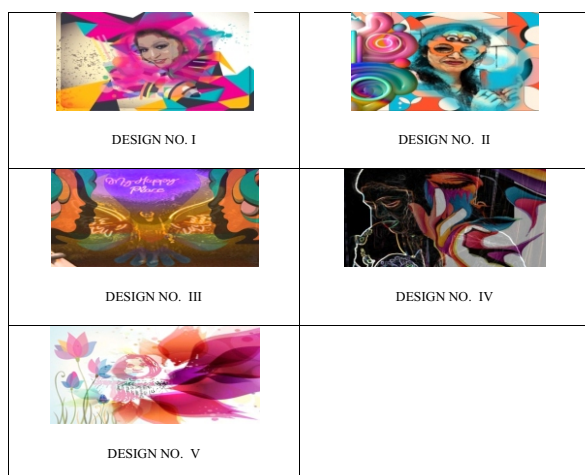
Graphic Designs				
S.no.	Collected Design No.	Design	Rank	WMS
1	15		I	2.96
2	16		II	2.94
3	23		III	2.93
4	18		IV	2.90
5	19		V	2.86
6	26		VI	2.83
7	27		VII	2.80
8	25		VIII	2.10
9	21		IX	2.06
10	24		X	2.03
11	13		XI	2.00
12	14		XII	1.96

Graphic Designs: The data pertaining to preferences of experts presented in Table I reveal that in graphic designs category, design number 15 ranked I scoring highest weighted mean score (WMS 2.96), followed by design number 16 (WMS 2.94) ranked II, design number 23 (WMS 2.93) ranked III, design number 18 (WMS 2.90) ranked IV and design number 19(WMS 2.86) ranked 5. Design numbers for graphic designs in descending order were 26 (WMS 2.83), 27(WMS 2.80), 25 (WMS 2.10), 21 (WMS 2.06), 24 (WMS 2.03), 13 (WMS 2.00), 14 (WMS 1.96), 22 (WMS 1.93), 17 (WMS 1.90), 30 (WMS 1.43), 20 (WMS 1.40), 12 (WMS 1.36), 29 (WMS 1.33), 9 (WMS 1.30), 7 (WMS 1.26), 6 (WMS 1.23), 11 (WMS 1.20), 2 (WMS 1.16), 1 (WMS 1.13), 5 (WMS 1.10), 3 (WMS 1.06), 8 (WMS 1.04), 4 (WMS 1.03), 10 (WMS 1.00) and 28 (WMS 1.00). The design number 10 and 28 were the least preferred graphic design ranked 29 with weighted mean score 1.10. It is thus graphic designs selected for the further development of designs were

design number 15, 16, 23, 18 and 19.

Five developed designs for printing:

Out of fifteen developed designs most suitable five developed designs were selected by the experts for printing. Selected designs are graphic designs with self clicked photos which were most preferred by experts on the basis of their appearance.



Experts' preferences for placements of designs were selected on the basis of their weighted mean score and their appearance. These are the preferred placements shown in the table:

TABLE II: Experts' preferences for developed designs

N=20

DEVELOPED DESIGN NO.	EXPERT I WMS	EXPERT II WMS	EXPERT III WMS	EXPERT IV WMS	EXPERT V WMS	MEAN	RANKS ORDER
I (3 & 14)	2.20	2.80	1.53	2.03	2.0	2.11	II
II (4 & 5)	2.06	2.26	2.93	1.96	2.01	2.24	I
III (13 & 15)	1.40	1.20	2.53	1.26	1.40	1.55	V
IV (9)	1.33	1.60	2.73	1.23	1.36	1.65	III
V (8 & 10)	1.46	1.26	2.60	1.29	1.40	1.60	IV

WMS –Weighted Mean Score

Data presented in table II indicate the preferences of the experts for different developed designs. It is evident from the data that the mean score of 2nd developed designs, designed from no.4 and 5 scoring (2.24) got 1st rank followed by Ist developed designs from design no.3 and 14 scoring (2.11) got 2nd rank, 4th developed design from design no.9 scoring (1.65) got 3rd rank, 5th developed designs from design no. 8 and 10 got 4th rank and 3rd

developed design from design no. 13 and 15 got 5th rank with mean score 1.60 and 1.55 respectively. These were the most preferred developed designs which were used for preparation of graphic designs with combination of photos in daily life. Whereas the average preferences of the experts were also considered this is depicted in the table no. 2. For further use the average preferences of developed designs will also be considered.

CONCLUSION:

It is concluded that developed designs will be used by consumers as well as by the developers in the industry for entrepreneurship and in the area of print media. These designs will be boon to the intellectual thinking and development in this area.

Bibliography:

https://en.wikipedia.org/wiki/Graphic_design#:~:text=Graphic%20design%20is%20a%20profession,an%20of%20the%20fine%20arts. Retrieved on 10th feb 2024

<https://bigwave.co.uk/blog/a-brief-history-of-print-media> Retrieved on 11th feb 2024

https://en.wikipedia.org/wiki/Graphic_design Retrieved on 12th feb 2024

<https://www.linkedin.com/pulse/graphic-design-print-vs-digital-whats-difference-moez-ahmed> Retrieved on 13th feb 2024

www.rasmussen.edu, retrieved on 21st Dec 2021

Wikipedia/en.m.wikipedia.org/wiki/graphic design retrieved on 24th Dec 2021

Shodhganga.inflibnet.ac.in retrieved on 26th Dec 2021

<http://design.tutsplus.com> retrieved on 28th Dec 2021

<http://en.m.wikipedia.org> retrieved on 28th Dec 2021

Nourani, SeyedMedhi, 2013. Motion Graphics in advertisements a study, Ph.D thesis of university of Mysore, Mysore

Rani P.2019.Adaptation of madhubani motifs for screen printing and hand embroidery on stoles. Unpublished M.Sc thesis of CCS HAU Hisar

Vidu Khambra is a research scholar in the department of fine arts, Om sterling global university, Hisar. The scholar has 05 research papers on her credit. The writer is also equipped with broad knowledge of software designing.

Dr. Beena Dixit is Dean, department of fine arts, Om sterling global university, Hisar. The advisor has guided more than 10 PhD students. The professor has 24 years teaching experience and 40 research papers on credit.

Vidu Khambra¹

Dr.beena Dixit²

Department of Fine Arts, OSGU University

Hisar-125001(Haryana), India.

[E-mail- vidukhambra@gmail.com](mailto:vidukhambra@gmail.com)

Mob.no.9466912914, 9053181070

VIDU KHAMBRA

H.NO. 1664 SECTOR 16-17 HISAR-125001

HARYANA

MOB.NO. 9466912914, 9053181070



ABSTRACT

India is in midst of a transformation phase. The emerging economic scenario and digitalization are disrupting old business model and it is affecting individuals & society economically as well as sociologically. The corona Pandemic which hit the world in 2020 has also created Socio- Economic Paradigm shift. This pandemic has not only devastated global economy but it has changed the international political equation at large scale. In this background an important question which concerns us, particularly in India is how India's economic development can be channelized in a manner that is socially inclusive, ecologically sustainable, reducing inequalities & boosts the cause of a resilient economy. The moot – question is how an economic model can be created which serves as a compass for overcoming economic, social & ecological crises of the world. India is observing AzadiKaAmrit Mahotsavi.e, 75 years of India's independence & it's economy has become the fifth largest in the world in 2022. However social problems, urban- rural divide, Inequality, low quality infrastructure services, the economic gulf between have and have not's etc. are evident in society. A multi prolonged approach i.e. Agencies & Pathways which would facilitate the social - economic change & growth, need to be identified. Today all countries of world are seem to frame separate – separate strategies for new dimension of development through their own capacity & future development strategy as a development oriented nation. In order to ensure the success and effective implementation of this strategy, the Indian government has initiated a three-prolonged approach to national development. The initial aspect pertains to the concept of "Make in India" serving as a preliminary step towards the realization of the vision of "Made in India". The subsequent aspect focuses on the "startup India" initiative, which aims to empower and support the dynamic and innovative young individuals in their entrepreneurial endeavors. Lastly, the third aspect revolves around the notion of "Atmanirbhar Bharat", which seeks to foster self-reliance and independence in various sectors of the Indian Economy. The concept of Atmanirbharta is characterized by its intricate nature. The scope of this encompasses the

formulation of technology strategy, the revitalization of the manufacturing sector and the optimization of logistics. Therefore, the objectives of this research paper are to enumerate the main challenges & opportunities of self-reliant Indian model and to suggest the agencies & pathways to self-reliant Indian model.

Keywords: Self Reliant Indian Model, Agencies & pathways, National Technology Strategy.

INTROCUCTION:

Today all countries of world are seems to frame separate-separate strategies for new dimensions of development through their own capacity and knowledge. India is also taking support of future development strategy as a development oriented nation. In order to ensure the effectiveness and execution of this strategy, the Indian government has initiated three comprehensive National Development Strategies. The initial initiative is referred to as "Make in India", serving as a preliminary step towards the ultimate goal of achieving "Made in India" status. The second initiative is known as Start-up India, which aims to support and promote the entrepreneurial endeavours of young individuals who possess agility and innovation. The third initiative is Atmanirbhar Bharat which was introduced by the esteemed Prime Minister Shri Narendra Modi on May 12th, 2020. It calls for self-reliance and includes a comprehensive economic package of INR 20 Lakh Crores, equivalent to 10% of India's GDP, to combat the Covid-19 pandemic within the country. The individual proceeded to delineate five fundamental principles of Atmanirbhar Bharat, Firstly, the Economy of India which is characterised by quantum leaps rather than incremental changes, Secondly the Infrastructure of the Country serves as a representation of Modern India, Thirdly, the system which is driven by technology, Fourthly, the Demography of the largest democracy and the Fifth one is the full utilization of the Principles of Demand and Supply. This is in line with the key objectives of the Self Reliant India missions, which aim to transform India into a global supply chain hub, foster trust in the private sector's capabilities and prospects, enhance the competitive advantage of Indian manufacturers, expand global market access for exports including agriculture,

textiles, clothing, and jewelry, and assess the sufficiency of the concept of Atmanirbhar Bharat poses a multifaceted and challenging issue. The scope of this initiative encompasses various aspects, including the development of technology strategy, the revitalization of the manufacturing sector, the management of logistics and maintenance, repair, and operations (MRO) activities. Additionally, it encompasses life cycle sustenance support systems such as the services sector, road, rail, infrastructure development, industrial corridor infrastructure, effective policies to facilitate business operations, exports, political determination, and substantial financial resources.

India is in midst of a transformation phase. The emerging economic scenario and digitalization are disrupting old business model and it is affecting individuals and society economically as well as sociologically. The corona pandemic which hit the world in 2020 has also created socio economic paradigm shift. This pandemic has not only devastated the global economy but it has changed the international political equations at large scale. In this background an important question which concerns us, particularly in India is how India's economic development can be channelized in a manner that is socially inclusive, psychological balanced, ecologically sustainable, reducing inequalities & boosts the cause of a resilient economy. The moot-question is how an economic model can be created with serve as a compass for overcoming economic, social and ecological crises of the world. So that India can become Atmanirbhar Bharat in Economy, Infrastructure technology driven vibrant system, Demography and Demand. India is observing AzadiKaAmritMahotsav i.e. 75 years of India's independence & its economy has become the fifth largest in the world in 2022. However, Social Problem, Urban Rural Divide, Inequality, low Quality Infrastructure Services, the Economic Gulf Between have & have nots etc. are evident in society.

The most effective approach to achieving self-reliance is through the development of a distinct framework that fosters locally derived solutions. This necessitates the establishment of a comprehensive

National Technology Strategy (NTS). It is imperative to implement a series of targeted initiatives that encompass structured policies and systems (including task allocation, team composition, and time management) in order to attain clearly defined technological objectives.

A multiprolonged approach is required to map the socio economic change. Agencies and pathways which would facilitate the socio-economic change & growth story need to be identified. The recent literature has highlighted the significance of barriers to change as a prominent theme. This emphasizes the need to focus on human perception and collaborative endeavors in order to bring about institutional change, enhance equity, improve access to high-quality infrastructure services, and address issues that local actors deem crucial for the advancement of their community.

We as a nation have made remarkable progress in all the sphere of knowledge and at this moment, we look back at the journey that we have taken the road ahead of us. At this crucial juncture of India's development journey when we are emerging as the new super power of the world, we must look forward to the opportunities and challenges in the self-reliant drive.

Objectives of Research Paper:

- To enumerate the main Opportunities and Challenges of self-reliant Indian model.
- To suggest the Agencies and Pathways to Self Reliant Indian Model (Atmanirbhar Bharat).

Data and Methodology:

This research has been done by using secondary sources of data such as journals, literature, reports, book, newspapers & magazine etc.

Opportunities for Atmanirbhar Bharat Abhiyan:

- The Atmanirbhar Bharat Abhiyan initiative aims to enhance the manufacturing sector's capacity, with the objective of increasing its contribution to the overall output of the economy from 17% to 25% by the year 2025.
- The focus of the Atmanirbhar Bharat Abhiyan is to transform India into a leading force in technology and innovation, thereby enhancing its contribution to the Gross Domestic Product

(GDP) across multiple sectors. This strategic approach has demonstrated positive outcomes. India's position in the global innovation index experienced an upward shift, ascending from 46th place in 2021 to 40th place in 2022. Furthermore, in the context of the Union Budget 2022-23, a significant allocation of Rs. 14,217 Crores has been made to the Ministry of Science & Technology. This allocation aims to support and enhance research and development initiatives, with the ultimate goal of positioning India as a frontrunner in innovative technological advancements.

- The Atmanirbhar Abhiyan initiative has been implemented to enhance India's manufacturing capabilities and promote export-oriented production across various sectors. Furthermore, the abhiyan seeks to enhance local supply chain capabilities and encourage investments in high-tech production.
- During this initiative, a multitude of financial aids were provided to bolster the economy and alleviate regulations for businesses, agriculture, and Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs). This endeavour has underscored the significance of MSMEs in fostering the growth of the Indian economy. The campaign has allocated a sum of INR 3.0 Lakh Crore in collateral-free loan facilities specifically for Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs) as part of the package. For a considerable period of time, this particular sector has served as the fundamental pillar of the national economic framework, making a significant contribution of 30% towards the Gross Domestic Product (GDP). The sector plays a crucial role in generating employment opportunities for the nation, ranking as the second largest employer following the agricultural sector. It employs a significant number of unskilled and semi-skilled workers, while also offering employment prospects in

rural and remote regions. The Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs) sector is a significant contributor to India's export industry, representing 49.5% of the country's total exports in the fiscal year 2020-21.

- The introduction of Production-linked Incentive (PLI) schemes in March 2020 aimed to enhance India's manufacturing capabilities and promote export-oriented production. Initially targeting three industries, these schemes have subsequently expanded to encompass multiple sectors. Furthermore, the PLI schemes have the objective of fostering the growth of domestic supply chain capabilities and providing incentives for investments in high-tech production. As of November 5, 2021, the Performance Linked Incentive (PLI) schemes encompassed a total of 13 sectors, with a budgeted outlay amounting to Rs. 1,97,000crores.
- The Atmanirbhar Bharat initiative aims to achieve self-reliance and self-sufficiency in all aspects of India's economy. This involves reducing dependence on imports from other countries and increasing domestic production capacity. To support this objective, the Indian government has announced a special economic and comprehensive package worth Rs. 20 lakh crores, equivalent to 10% of India's GDP. As part of this campaign, significant reforms have been implemented in various sectors, including the primary sector encompassing agriculture, mining, and fishing. The secondary sector encompasses various industries, including construction, manufacturing, utilities, and MSMEs as well as cottage industries. The tertiary sector encompasses a range of services, such as retail, tourism, banking, real estate, media and entertainment, telecommunication, hospitality, and information technology. The quarterly sector comprises industries related to education, Research and Development (R&D)

and the public sector. The implementation of reforms in multiple sectors will facilitate the country's pursuit of self-sufficiency.

- The United Nations Sustainable Development Goals (SDGs) align with India's Atmanirbhar Bharat Abhiyan and SabkaSathSabkaVikas. In the context of public policy, India has implemented legal frameworks that guarantee its citizens the right to free education and food security, as well as the electrification of a greater number of villages. Additionally, there has been a renewed focus on promoting cleanliness and personal hygiene, driven by the central government's commitment under the leadership of the Honorable Prime Minister. These efforts align with the 17 Sustainable Development Goals (SDGs).
- This initiative offers foreign investors various prospects in sectors such as defense, atomic energy, agriculture, insurance, medical services, and aviation.

Challenges of Atmanirbhar Bharat Abhiyan

- In contemporary times, the fields of technology, industrial automation, robotics, and artificial intelligence (AI) are significantly altering the landscape of industrial labor, rendering a multitude of job positions obsolete. The job market in India is currently experiencing significant transformations, necessitating a novel approach to tackle both existing and upcoming challenges.
- The primary obstacle faced by the Atmanirbhar Bharat initiative pertains to the significant prevalence of student attrition across multiple levels of the education system. There is a pressing need to enhance the quality of school education by implementing the New Education Policy (NEP) across all regions of the nation.
- In order to facilitate the substantial influx of various companies relocating to India, it is imperative that we enhance our rankings. India's

progress in terms of its global ranking has been commendable, given that it was initially ranked 142 in 2014 and has since improved to 63 in 2020. However, it is important to acknowledge that further efforts are still required to achieve the desired level of success. In order to attract investment, it is imperative that we secure a position within the top 50.

- International Trade and Investment in India has been reduced because of tariff barriers. To reduce the imports of foreign products & to increase the exports of Indian products, country should use the non-tariff barriers such as import quota, embargo or sanction instead of tariff barrier.
- The supply chain of various agricultural commodities in India, nevertheless, faces numerous challenges arising from the inherent issues within the agriculture sector. The agricultural supply chain system in the country is influenced by various significant factors, such as the prevalence of small and marginal farmers, fragmented supply chains, the lack of economies of scale, limited processing and value addition capabilities, and inadequate marketing infrastructure.
- Indian MSMEs & other companies have often faced unfair competition from foreign companies. MSMEs face problems of marketing & liquidity. MSMEs have shown their resilience during covid-19. From 2019-20, the number of Indian MSMEs increased by a compounded annual growth rate of 18.5%, but the sector still has vast, unutilized potential. The three areas where smart intervention can trigger growth are finance, technology and knowledge support. The biggest issue MSMEs face is the non-availability or difficulty in access to finance. MSME growth has doubled in the past two years, but the credit gap remains at Rs. 25 lakh crores and overall debt demand at Rs. 269 Lakh crores. In addition, a MSMEs is burdened with the difficulty of facing trust issues from banks nationwide. Till

December 2022, approximately 10% of the SME Loans were collateral free, while the rest 90% were collateral backed. The demand to present collateral makes it difficult for SMEs to get financial assistance through loan facilities.

- India being the most populated country and the largest democracy in the world, has complex and deep-rooted constraints in its pathways. Despite impressive economic challenges such as multi-dimensional poverty, food insecurity, insufficient infrastructure, inadequate health and education facilities, environment pollutions etc. exist before India. Sustainability and inclusivity are the only feasible solutions for India to deal with these socio economic challenges that we are currently facing or going to face in the future, inclusive & sustainable ecology is also a prominent way of becoming self-reliant or Atmanirbhar for any nation.

Suggestions Regarding Agencies and Pathways to Self-Reliant Indian Model

- It is imperative for the central government to shift its attention towards the MSMEs at this juncture. For a considerable period of time, this particular sector has served as the fundamental pillar of the overall economic framework of the nation, making a significant contribution of 30% to the Gross Domestic Product (GDP). The employment generation of the nation is of utmost importance, as it ranks second in terms of employment after the agricultural sector. It effectively employs a significant number of unskilled and semi-skilled workers, while also creating job opportunities in rural and remote regions. The sector is additionally one of the primary contributors to the country's export industry, comprising 49.5% of India's overall exports during the fiscal year 2020-21.
- MSMEs should be enhanced fully self-reliant Indian Economy. We should reduce the use of

foreign products & heavy import duties should be imposed on foreign imported items so that Indian Industries grow fastly and our Indian Industries may produce necessary products & we can become fully self-reliant in all manners.

- The Enterprises require a centralized hub of incubators to facilitate the establishment of a knowledge network for aspiring entrepreneurs aiming to enhance their skills and cater to international markets. Furthermore, it facilitates increased efficiency in the realm of conducting business activities. MSMEs, as a sector that has served as an intermediary between the conventional ecosystems, have undergone a process of evolution and adaptation in response to the economic requirements. The implementation of a substantial initiative by the central government is expected to provide impetus to the MSMEs sector, thereby contributing to India's ambitious goal of achieving a \$5 trillion economy.

Supply Chain Reforms for Agriculture:

- Supply chains primarily focus on the efficient movement of products and information among the various organizations involved in the supply chain. This includes activities such as procuring materials, transforming raw materials into finished products, and distributing those products to end customers.
- The true indicator of supply chain effectiveness lies in the seamless coordination of activities throughout the supply chain, resulting in the generation of consumer value and enhanced profitability for each component within the supply chain. One of the primary challenges encountered in the upstream segment of the agricultural value chain pertains to the scarcity of essential resources such as land, water, and soil health, which are subjected to significant levels of stress. A significant proportion exceeding 50% of the nation experiences water stress, wherein water withdrawals amount to

approximately 40% to 60% of the total available supply. The implementation of agricultural reforms in India is imperative. The implementation of agricultural reforms aims to enhance market accessibility and augment income prospects for farmers. In the realm of agriculture, food supply chains play a crucial role in the distribution of fresh agricultural products, including but not limited to vegetables, flowers, and fruits. These chains typically encompass various entities such as growers, auctions, wholesalers, importers and exporters, retailers, specialty shops, as well as their respective input and service suppliers.

- There is pressing need to enhance the quality of Youth education by implementing the New Education Policy (NEP) across all regions of the nation. The training of young individuals can effectively cultivate their ability to contribute to the development of their nation, both during their educational years and particularly as they transition into self-reliant adulthood.
- There is a need to augment the number of industries within our nation. The production of indigenous goods within a nation has the potential to propel the country's advancement and concurrently alleviate issues of unemployment and poverty in India.

Result and Discussion

It is imperative for the Central Government to shift its attention towards MSMEs at this juncture. For a considerable period of time, this particular sector has served as the fundamental pillar of the overall economic framework of the nation, making a significant contribution of 30% to the Gross Domestic Product (GDP). Therefore, to facilitate the promotion of digitalization among MSMEs, ONDC (Open Network for Digital Commerce) should be enhanced, ultimately resulting in the integration of MSMEs and E-Commerce. The primary objective of the Open Network for Digital Commerce (ONDC) is to promote the participation of small retailers in the realm of electronic commerce. By

doing so, ONDC aims to foster the emergence of fresh prospects, mitigate the potential dominance of digital monopolies, and provide support to MSMEs as well as other small-scale merchants in engaging in seamless buying and selling transactions. This approach has the potential to facilitate the expansion of MSMEs by enabling them to access capital financing and transaction banking solutions digitally, thereby enhancing liquidity. MSMEs possess the capacity to participate alongside major players in the global value chain. However, their progress is hindered by inadequate education and limited integration into the international market landscape. The provision of government support to MSMEs at the grass roots level has been significantly delayed. There is a need to establish a facility that focuses on facilitating knowledge sharing pertaining to international trade rules and regulations, branding and positioning, digital marketing, and intellectual property rights, among other essential criteria that MSMEs should be acquainted with.

The city of Rome was not constructed in a single day, much like the saying suggests. The overnight achievement of India's transformation into an Aatmanirbhar Bharat is not feasible. The process of nation building is achieved through a sustained and focused endeavour undertaken by both the government and the citizens over an extended period of time. The training of young individuals can effectively cultivate their ability to contribute to the development of their nation, both during their educational years and particularly as they transition into self-sufficient adulthood. There are several significant campaigns that young individuals can effectively contribute to, namely anti-corruption, environmental sustainability (commonly referred to as "Go Green"), and rural development initiatives which are obligatory for Self Reliant Indian Modal.

Corruption has been widely recognised as a detrimental factor that undermines the efficacy of even the most innovative and progressive government policies. The implementation of policies is contingent upon the eradication of corruption within the nation. The younger generation has the potential to significantly alter this pattern by actively combating dishonesty, even in its most

minor manifestations, and expressing their views on the matter. Moreover, the advancement of a nation is significantly impeded by elevated levels of pollution.

In recent times, there has been a notable transition in India's societal structure, wherein the historical emphasis on agriculture has gradually given way to a growing emphasis on urbanisation. Consequently, individuals residing in the rural regions of India experience socio-economic underdevelopment and impoverished conditions. Given that agriculture serves as a fundamental pillar of sustainability and self-sufficiency, it is imperative to recognise the potential of youth in advancing these objectives. One way in which they can contribute is by advocating for the consumption of locally grown fruits, vegetables, and handicrafts within their communities.

Furthermore, India possesses the largest population of young individuals globally. By leveraging their knowledge and conducting thorough research, young individuals have the capacity to analyse and identify both the strengths and weaknesses of society. Moreover, they can develop effective strategies and solutions that have the potential to yield substantial benefits for the nation.

In order for youth to become effective leaders, inventors, and innovators capable of catalyzing global change, it is imperative to provide them with robust support systems that encompass superior healthcare, comprehensive training, and quality education.

References:

- Agarwal, T. (2021) Economic Impact of Covid-19 on Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) in India. *International Journal of Recent Advances in Multidisciplinary Topics*, 2 (10) 89-92.
- AnejaPuneet, Make in India: *New Paradigm for Socio-Economic Growth in India*, *Indian Journal of Research Paripex*, Vol: 5, Issue:4, ISSN-2250-1191.
- Dubey, P., &Sahu K.K. (2020) MSMEs in covid-19, crises and India's economic relief package: a critical review package: a critical review *AIJR Preprints*, 207.
- Dubey, S., &Dubey, H.R. (2020) Atmanirbhar Bharat Analysis: An analytical review. *UGC Care group 1 journal* 10(4) 27-34.
- Mehta, B.S., &Awasthi, I (2021) Surviving the Pandemic: Time to Boost the MSME Sector. *IASSI- Quarterly*, 40(3), 589-599.
- Mittal, V., & Kumar, M.(2021) HARA BHARA ATMANIRBHAR BHARAT. *European Journal of Molecular & Clinical Medicine*, 7(11), 6553-6572.
- www.financial express.com, PTI May, 2000.

Author's Name

Dr. Deepa Juneja

Designation: Associate Professor

Head, Department of Economics,

S.J.K. College,

E-mail ID: drdeepajuneja@gmail.com



Abstract

In the contemporary digital age, technological advancement has made human life much simpler. Hours of work can be completed in seconds through technology, but an important issue has also arisen: electronic waste, also known as e-waste. Humans keep buying computers, smartphones, TV, refrigerators, and other products from time to time to fulfill their needs or to fulfill their desires. Individuals or humans keep changing them without thinking about what we will do with the old products we have or where we will use them. Waste is therefore becoming a major concern to both the environment and human health. Every day, e-waste contaminates the air, water, and land with lead, mercury, cadmium, and beryllium. By coming in contact with the above compounds, humans have to face many diseases such as cancer, the brain system, respiratory system, skin disease, and many other health problems.

E-waste is also posing a threat to the safety of employees. In a developing country like India, the e-waste management system is still inadequate. The fact that the majority of e-waste is recycled by unskilled individuals who just require it for their living exacerbates this problem even further. Strict legislation, workable restrictions, and greater public awareness are needed to solve this issue. The gravity of e-waste, its detrimental impacts on the environment and human health, and the pressing need for management are all highlighted in this study report.

Keywords: Electronic Waste • E-waste Management • Environmental Impact • Recycling • Extended Producer Responsibility

Introduction

Electronic or electrical waste, or e-waste, is the word used to describe obsolete, broken, and abandoned electronic or electrical equipment. The current owner no longer needs these outdated wastes since they have outlived their useful life (Sandwal et al. 2025). E-waste is one of the largest and most complex waste sources in the world, according to the International Telecommunication Union (ITU). The Global

E-waste Monitor 2020 reports that just 9.3 Mt (17%) of the 53.6 Mt of e-waste produced globally in 2019 was collected and recycled. According to the fourth edition of the Global E-waste Monitor 2024, the world produced 62 billion kg of e-waste by 2022, or 7.8 kg per person, indicating an increasing trend in e-waste output. Only 22.3 percent (13.8 billion kg) of the generated e-waste was said to have been properly collected and recycled (Geneva Environment Network, 2024). Despite containing valuable recoverable materials, much of this waste ends up in landfills or is informally processed, leading to environmental degradation and human health risks.

Understanding E-Waste

Electronic devices that are no longer needed or outdated and have reached the end of their useful lives are referred to as "e-waste." It includes everything from mobile phones and their accessories to laptops and household appliances. Intentional obsolescence, shorter replacement intervals, fewer alternatives, higher repair costs, and a lack of interest in reuse are some of the reasons why e-waste is one of the solid waste streams that is growing the fastest (Admin, 2024).

Definition of E-Waste

- "E-waste is any electrical or electronic equipment that's been discarded. This includes working and broken items that are thrown in the garbage or donated to a charity reseller like Goodwill. Often, if the item goes unsold in the store, it will be thrown away. E-waste is particularly dangerous due to toxic chemicals that naturally leach from the metals inside when buried (Clark. J, 2022)."
- "E-waste, also known more technically as WEEE (Waste Electrical and Electronic Equipment) or EEE (electrical and electronic equipment) for short, can be defined as "any discarded product that has a battery and/or plug, contains hazardous substances, and can pose a severe risk to human health and the environment (Forti et al., 2020)."

Environmental and Health Impacts

The global environment and human health are seriously harmed by more than 1,000 dangerous substances and components (WHO, 2021). Due to inappropriate processing and disposal, e-waste has a number of detrimental effects on both the environment and human health (Singh et al., 2020). E-waste accumulates in soil, water, air, and living things aside from being toxic and non-biodegradable. It may lead to a number of long-term health issues, such as cancer, miscarriages, neurological damage, and memory loss (WHO, 2020).

Environment Impacts

Degradation of the environment is exacerbated by the dumping of hazardous e-waste. Furthermore, e-waste recycling methods have the potential to negatively impact the local, regional, and even global natural ecology. When metal is recovered from wires and cables by burning them, dioxins that are brominated and chlorinated are discharged into the air. E-waste, which includes battery management, provides management frameworks for best practices and mitigation techniques to lessen the impact of battery waste (Mohajan, H. K, 2025).

Health Impacts

Human health is negatively impacted when e-waste is handled improperly. Burning e-waste in the open can harm the kidneys and liver, raise the risk of cancer, and induce bone loss. These also lead to a number of difficulties, including issues with inhalation, digestion, and most importantly skin contact. Exposure to e-waste during pregnancy can result in low birth weight and size newborns, preterm deliveries, stillbirths, and long-term effects on the unborn child. E-waste has been increasing daily and is causing serious health issues for both people and other animals (Mohajan, H. K, 2025).

Global E-Waste Scenario

Contamination from e-waste is very common in places like China, India, Pakistan, and a number of African countries. Heavy metals like cadmium (Cd), copper (Cu), mercury (Hg), zinc (Zn), chromium (Cr), and nickel (Ni) have been detected at high concentrations in e-waste from

Guangdong, Zhejiang, and Tianjin provinces in China, along with hazardous chemicals like brominated flame retardants (BFRs) and polybrominated diphenyl ethers (PBDEs) (Chen and Wei, 2020). Contamination from e-waste is very common in places like China, India, Pakistan, and a number of African countries. Heavy metals like cadmium (Cd), copper (Cu), mercury (Hg), zinc (Zn), chromium (Cr), and nickel (Ni) have been detected at high concentrations in e-waste from Guangdong, Zhejiang, and Tianjin provinces in China, along with hazardous chemicals like brominated flame retardants (BFRs) and polybrominated diphenyl ethers (PBDEs) (Chen and Wei, 2020). Similar to this, improper recycling methods have led to increased concentrations of metals and other contaminants in surface soils in Pakistani cities like Lahore and Karachi (Kumar and Singh, 2022). Other Southeast Asian countries, including Thailand, Vietnam, and the Philippines, have also reported significant contamination from e-waste recycling efforts. As a result of processing e-waste, heavy metals such as lead (Pb), zinc (Zn), and chromium (Cr) have been detected in significant concentrations in soils in African countries including Cameroon, Ghana, and Nigeria. Hazardous materials such as brominated flame retardants and PBDEs have been found to contaminate e-waste recycling plants throughout Oceania, particularly in Australia (Wright and Schulz, 2021). Other Southeast Asian countries, including Thailand, Vietnam, and the Philippines, have also reported significant contamination from e-waste recycling efforts. As a result of processing e-waste, heavy metals such as lead (Pb), zinc (Zn), and chromium (Cr) have been detected in significant concentrations in soils in African countries, including Cameroon, Ghana, and Nigeria. Hazardous materials such as brominated flame retardants and PBDEs have been found to contaminate e-waste recycling plants throughout Oceania, particularly in Australia (Singh, Z., 2025).

India's E-Waste Challenge

According to the Central Pollution Control Board (CPCB), India is expected to generate 5.2 million metric tons of e-waste by 2025. However, policy implementation challenges in a large country like India necessitate private and public organizations to take responsibility by establishing reliable waste management systems and recycling facilities that prevent waste from contaminating natural resources or ending up in landfills. Towards this end, utilization of modern technology can greatly help. Technologies like block chain can be leveraged to ensure traceability and data security in e-waste management. For instance, Plastic Bank in Canada developed a block chain platform that allows end-to-end supply chain traceability from initial collection of waste to sale of recycled product. Also, blended finance platforms, like SDG funds, can encourage financial institutions and investors to invest, providing opportunities for the unorganized sector to integrate with the organized sector as a single value chain. Over time, this can help the unorganized sector transition into more organized units. Sustainability-linked loans, such as the Deposit Refund System (DRS), which is a part of the EPR policy, provide incentives for customers to dispose of products responsibly after their end-of-life to the same outlet. By adopting such strategies, India can improve the management of e-waste (Admin, 2024).

Challenges in E-Waste Management

India's e-waste recycling is primarily done by the unorganized sector, providing income for impoverished people. Middle-class urban households sell waste materials to small-scale buyers called "kabadiwalas," who then sell them to artisanal or industrial processors. However, in developed nations, people are not willing to donate their worthless devices or pay for their disposal (Namoewaste, 2023).

These major issues are brought on by the significant reliance on the unorganized sector for recycling e-waste, as mentioned below:

- It is unsuccessful to try to enforce monetary fines

for breaking the regulations governing the management and processing of e-waste.

- Even though the amount of e-waste produced annually rises dramatically, large-scale industrial infrastructure invests very little on recovery and recycling.
- Because lower-paid people who perform this labour lack the necessary skills, there is less public awareness of market pricing and the health and safety risks of recycling e-waste (Geneva Environment Network, 2024).

Prevention and management of Electronic waste

Protecting communities from unsafe e-waste recycling practices requires both national and international action.

Among the possible courses of action are:

- Signing and implementing important international agreements;
- Creating and carrying out national e-waste management laws that safeguard the general public's health;
- Including provisions for health protection in national laws;
- keeping an eye on e-waste locations and the neighbourhoods around them;
- Putting into practice and keeping an eye on initiatives that enhance unofficial e-waste recycling efforts, safeguard public health, and guarantee essential sources of local income;
- Teaching health professionals at all levels on the health risks associated with e-waste for children;
- Getting rid of child labor (WHO, 2024)

Conclusion

India has an urgent problem about the management of electronic trash. With few tangible solutions in place, the issue is becoming worse very quickly. It's time for the formal and informal sectors to unite and work together to gather, handle, and get rid of e-waste. Another important factor is providing resources for research and development in order to provide novel and alternative solutions. E-waste presents a critical environmental and

public health challenge that demands urgent and collaborative action. While international agreements and national regulations provide a framework, enforcement and public participation remain key hurdles.

Suggestions

The government should provide incentives for e-waste management, support technological platforms integrating circular economy and e-waste disposal, provide funding and mentoring for young business owners, and recommend combining remediation procedures to mitigate pollution and prevent contamination.

References

- Admin. (2024, June 7). India's e-waste Challenge. Dr. Reddy's Foundation. <https://drreddysfoundation.org/indias-e-waste-challenge/>
- Basel Convention. (1989). The Basel Convention on the Control of Transboundary Movements of Hazardous Wastes and Their Disposal. United Nations Environment Programme.
- Central Pollution Control Board (CPCB). (2021). Annual Report on E-Waste Management. Government of India. <https://cpcb.nic.in>
- Chen A and Wei Y (2020) E-waste and its toxic elements: A global issue. Science of the Total Environment 722: 137945.
- Clark, J. (2022, October 7). What is E-waste? Definition and Why It's Important. Great Lakes Electronics. <https://www.ewaste1.com/what-is-e-waste/>
- Ellen MacArthur Foundation. (2013). Towards the Circular Economy. <https://www.ellenmacarthurfoundation.org>
- European Commission. (2019). Directive 2012/19/EU on Waste Electrical and Electronic Equipment (WEEE). <https://ec.europa.eu/environment/waste/weee>
- Forti, V., Baldé, C. P., Kuehr, R., & Bel, G. (2020). The Global E-waste Monitor 2020: Quantities, flows and the circular economy potential. United Nations University, United Nations Institute for Training and Research (UNITAR), International Telecommunication Union (ITU), & International Solid Waste Association (ISWA).
- Johnson PA and Balasubramanian K (2021) Environmental and health risks of e-waste processing in informal settings. Environmental International 146: 106181.
- Kumar V and Singh R (2022) Hazardous heavy metals in e-waste: Environmental contaminants and human health implications. Environmental Toxicology and Pharmacology 82: 103594.
- Ministry of Environment, Forest and Climate Change (MoEFCC). (2018). E-Waste (Management) Amendment Rules, 2018. Government of India.
- Mohajan, H. K. (2025). Electrical Waste (e-Waste): A Global Threat for Environment and Human Health. Law and Economy, 4(1), 13-18.
- Namowaste. (2023, January 6). E-Waste management in India: challenges and opportunities. Namowaste. <https://namowaste.com/e-waste-management-in-india-challenges-and-opportunities/>
- Robinson, B. H. (2009). E-waste: An assessment of global production and environmental impacts. Science of the Total Environment, 408(2), 183–191.
- Sandwal, S. K., Jakhar, R., & Styszko, K. (2025). E-Waste Challenges in India: Environmental and Human Health Impacts. Applied Sciences, 15(8), 4350.
- Singh, N., et al., (2020). Toxicity Evaluation of E-waste Plastics and Potential Repercussions for Human Health. Environment International, 137(2020), 105559.
- Singh, Z. (2025). Emerging Challenges of E-Waste Management: Serious Threats to Environmental Safety. Environmental Science, 4(1), 1.
- Sinha A and Jha A (2019) E-waste recycling and environmental impacts in

India. Waste Management 92: 1–9.

- The growing environmental risks of E-Waste. (09 Oct 2024) <https://www.genevaenvironmentnetwork.org/resources/updates/the-growing-environmental-risks-of-e-waste/>
- WHO, (2020). Global e-Waste Surging: Up 21 Per Cent in 5 Years. World Health Organization (WHO), Geneva.
- WHO, (2021). First WHO Report on e-Waste and Child Health Calls for More Effective and Binding Action to Protect Children from Growing Health Threat. World Health Organization (WHO), Geneva.
- Widmer, R., Oswald-Krapf, H., Sinha-Khetriwal, D., Schnellmann, M., & Böni, H. (2005). Global perspectives on e-waste. Environmental Impact Assessment Review, 25(5), 436–458.
- World Health Organization: WHO. (2024, October 1). Electronic waste (e-waste). [https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/electronic-waste-\(e-waste\)](https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/electronic-waste-(e-waste))

AUTHOR

Dr. Ram Prakash

Assistant Professor,

Department of Law,

B.G.R Campus Pauri Garhwal, H.N.B.

Garhwal (A Central) University Srinagar

Uttarakhand.

ramprakash0202@gmail.com, Mob. No.

9627089255

CO-AUTHOR Sundar Singh

Research Scholar,

Department of Law,

SRT Campus, Badshahithaul

HNB Garhwal (A Central)

University Srinagar, Uttarakhand.

Singhsundar549@gmail.com.

Mob. No. 8958431525

Abstract

Environmental degradation stands as one of the most urgent challenges of the 21st century, largely contributed by human actions that neglect ecological harmony. This paper investigates the crucial role, social values play in safeguarding the environment, focusing on how cultural traditions, collective norms, ethical frameworks, and societal attitudes shape environmental behaviour (Sharma, 2009). It emphasizes the importance of community participation, educational initiatives, and policy advocacy in advancing sustainable practices. By analyzing the connections between individual behavior, social expectations, and environmental stewardship, this study demonstrates how social values can serve as powerful drivers for conserving natural resources, encouraging eco-conscious lifestyles, and addressing ecological crises.

Introduction

In present times most of the aware people have in their minds a very simple doubt about the sustainability of environment in the situation where natural resources as well as the environment is exploited blindly for the needs as well as for luxury with commercial interest attached therewith. This research paper is descriptive in nature and focused on social values and ethics, their role in environmental conservation. To understand this perspective reliance is made on secondary sources.

The relationship between society and the environment has evolved significantly throughout human history. While technological progress has enhanced living standards and economic development, it has also contributed to widespread environmental degradation. In this context, social values—the shared beliefs, norms, and ethical principles that govern behavior—emerge as vital forces influencing how individuals and communities engage with the natural world. Understanding this interconnection is key to identifying pathways through which societies can work together to conserve ecosystems, manage resources responsibly, and mitigate ecological damage (Singh, 1998).

Social values shape both individual choices and collective actions. In the realm of environmental sustainability, values such as respect for nature, concern for the common good, and intergenerational equity can inspire and sustain environmentally responsible behavior. As human activities continue to exert mounting pressure on the planet, the role of such values in promoting ecological balance becomes increasingly important. This paper explores the influence of social values on environmental conservation efforts and examines how these values can be harnessed to promote sustainable development and long-term ecological health.

The Concept of Social Values

Social values are the common beliefs and ideas that guide how people in a society behave. People learn these values from their culture, religion, and education. These values help people decide what is right or wrong and influence choices in many areas, including how we treat the environment (Tiware, 2018).

Social values include:

Ethical norms: These are ideas about what is right and wrong. They guide how people should act toward nature and the environment.

Cultural values: These come from traditions, customs, and daily practices that teach people to respect and care for the natural world.

Collective interests: These values focus on the good of the whole community rather than personal benefit. They help people use natural resources in a fair and careful way.

Different cultures have different social values, but all of them can affect how people think and act when it comes to protecting nature. For example, many indigenous communities deeply respect the environment. Their traditional knowledge and ways of living show how people can use natural resources without harming them.

Influence of Social Values on Environmental Behavior

Social values play a profound role in shaping individual and collective environmental behavior. Values such as altruism, which emphasizes concern for the well-being of others and future generations, often correlate with pro-environmental actions like conservation and sustainable consumption (

Jain, 2011). A strong sense of community fosters collective action and reinforces social norms that support eco-friendly practices, as individuals are more likely to adopt behaviors seen as beneficial or expected within their group. Conversely, highly individualistic values, prioritizing personal freedom and comfort, can sometimes hinder pro-environmental efforts if they conflict with the need for collective good or require personal sacrifice. The New Environmental Paradigm (NEP) reflects a shift towards ecocentrism, valuing ecosystems intrinsically and recognizing human interdependence with nature, leading to more environmentally conscious attitudes and behaviors.

Traditional values can also contribute positively by preserving long-standing customs that promote sustainable resource management. Furthermore, the rise of post-materialist values in affluent societies often leads to a greater emphasis on quality of life and environmental protection over purely economic gains. Social norms, as informal rules and shared expectations, directly influence behavior by creating a sense of what is acceptable or desirable within a group. The value of justice drives movements for environmental equity, ensuring fair distribution of environmental benefits and burdens. Lastly, a societal emphasis on achievement can have a dual impact: it might spur innovation in green technologies but can also contribute to increased consumption driven by status-seeking. Ultimately, understanding these underlying social values is crucial for developing effective strategies to encourage more sustainable environmental behaviors.

Altruism

Altruism plays a significant role in motivating individuals towards pro-environmental behavior, often contrasting with self-interested motives. Research consistently shows that individuals with strong altruistic values—those who prioritize the well-being of others, including future generations and the environment itself—are more likely to engage in actions that benefit the collective good, even if it involves personal sacrifice. This can manifest in a willingness to pay higher taxes for environmental protection, reduce personal consumption, or adopt more

sustainable lifestyles. Unlike egoistic individuals who might perceive environmental action as difficult or pointless unless it offers a direct personal benefit, altruists recognize environmental issues as moral concerns and feel a personal obligation to "do the right thing." While appeals to self-interest (e.g., saving money, health benefits) can also promote eco-friendly actions, especially for a broader audience, altruistic appeals are particularly effective for those who possess strong self-transcendence values. This suggests that fostering empathy and a sense of responsibility for the broader world can be a powerful driver for greater engagement in environmental protection.

Ecocentrism

Ecocentrism is an environmental ethical framework that places the natural world, including all living organisms and their ecosystems, at the center of moral concern, rather than solely focusing on human interests. Unlike anthropocentrism, which views nature primarily as a resource for human use and values it based on its utility to humanity, ecocentrism asserts that nature possesses intrinsic value—meaning it has inherent worth simply by existing, independent of any benefit to humans.

Key principles of ecocentrism include recognizing the interconnectedness of all life forms and non-living components within an ecosystem. Practically, ecocentrism supports conservation efforts aimed at preserving wilderness, protecting endangered species, and restoring degraded ecosystems, not just for human benefit, but because these entities and systems have a right to exist and thrive (Ninan, 2012). It challenges the dominant paradigms of unlimited economic growth and resource exploitation, promoting instead a more harmonious and sustainable relationship between humanity and the natural world. People with ecocentric values believe that nature has value on its own, not just because it is useful to humans. They think plants, animals, and ecosystems should be protected because they are important in themselves. These values lead to actions like planting trees, saving wildlife, and protecting forests and rivers.

Anthropocentrism

Anthropocentrism is a philosophical viewpoint that places human beings at the center of moral and ethical consideration, holding that humans are the most significant entities on Earth. From an anthropocentric perspective, nature and all non-human entities—animals, plants, and even ecosystems—are primarily valued based on their instrumental utility to humans. This means they are seen as resources to be used, managed, or conserved for the benefit of humanity, rather than possessing intrinsic worth of their own.

Historically, anthropocentric views have been deeply embedded in many Western philosophical and religious traditions, often interpreting concepts like "dominion over nature" as justification for human exploitation of the environment. This human-centered approach has significantly influenced environmental policies and practices, prioritizing economic growth, resource extraction, and urban development to meet human needs and desires, often with little regard for ecological consequences. Critics argue that this worldview is a root cause of many environmental crises, including climate change, biodiversity loss, and pollution, as it can lead to unsustainable practices and a disregard for the long-term health of the planet. While some forms of "enlightened anthropocentrism" argue for environmental protection because a healthy environment is ultimately necessary for human well-being, the core principle remains that human interests are paramount.

On the other hand, people with anthropocentric values see nature mainly as something that serves human needs. They protect the environment when it helps humans—for example, keeping air clean or using resources wisely. However, this view can sometimes lead to overuse of natural resources if people only focus on human benefits and ignore the harm to nature.

Collective Responsibility and Community Engagement

Social values that promote collective responsibility help people work together to solve environmental problems. When a community shares a sense of duty toward nature, they are more likely to start and support activities like recycling, planting trees, and teaching others about the

environment. These efforts become more successful when everyone feels they are part of the solution.

Environmental Stewardship in Cultural Practices

Many cultures include strong traditions of caring for the environment specially the Indian traditional culture. For example, Buddhism teaches respect for all living beings and encourages people to live simply and in harmony with nature (Sharma, 2009). This can lead to eco-friendly farming and protection of animals and plants. In Indigenous communities, spiritual beliefs often teach people to live in balance with the Earth. These traditional values support sustainable practices that protect nature. Overall, the underlying philosophy across various traditional practices here is one of interconnectedness (Vasudhaiva Kutumbakam - the world is one family) and minimalism (Aparigraha - non-possessiveness/limiting wants). These principles emphasize living in harmony with nature, taking only what is needed, and recognizing that humans are an integral part of, not separate from, the environment. In present times, these cultural values and specific practices can inform public policy, educational curricula, and community initiatives to foster a deeper sense of environmental responsibility and accelerate the transition towards a truly sustainable society (Tiwari, 2018).

Impact of Social Values on Environmental Policy and Legislation

Shaping Public Policy

Governments often base their decisions on the values people in the country believe in. If a society values protecting the environment, its leaders are more likely to make laws to stop pollution, support clean energy, and save endangered animals. For example, youth-led movements like Fridays for Future have made many governments take climate change more seriously and include sustainability in their policies.

Social Movements and Advocacy

Movements like the Green Movement are built on values like environmental justice and care for nature. These movements change public thinking and push leaders to take action. They remind people of their moral duty to protect the planet. As a result, more people reduce waste,

save energy, and support laws that help nature thrive.

The Role of Education in Promoting Environmental Values

Environmental Education

Education is one of the strongest tools to build care and respect for the environment. Schools, colleges, and universities can teach students why protecting nature is important. When students learn about issues like pollution, climate change, and saving natural resources, they are more likely to grow up with values that support sustainability. By adding environmental topics to school lessons and encouraging green habits, we can raise a generation that cares about the planet and acts to protect it.

Media and Public Campaigns

The media also plays a big role in shaping how people think about the environment. TV shows, documentaries, news stories, and social media posts help people understand the damage caused by pollution and the importance of taking care of nature. Public campaigns like “Reduce, Reuse, Recycle” or “Earth Hour” use easy messages and wide reach to spread awareness. These campaigns help people change their behavior—like using less plastic or saving electricity—by connecting environmental values to everyday life.

Challenges and Limitations

Although social values play an important role in protecting the environment, several challenges and limitations reduce their impact. These challenges often arise from conflicts between values, systems, and priorities in modern society (Singh, 1998).

1. Conflicting Interests

In many situations, environmental values come into conflict with economic interests. For example, industries may clear forests for construction or mining to earn profit, even if it harms ecosystems. Governments may allow environmentally harmful activities to boost the economy or create jobs. When financial gain becomes the top priority, environmental concerns are often ignored or downplayed.

2. Cultural Differences and Lack of Consensus

Social values are not the same everywhere. Some cultures

place strong spiritual and moral importance on nature, while others see it more as a resource for development. Because of these differences, it is hard to create global agreements on how to protect the environment (Ghosh, 2011). For example, not all countries agree on rules for cutting carbon emissions or banning harmful plastics.

3. Rise of Consumerism and Materialism

Modern society often promotes a lifestyle of buying more and owning more. Advertisements, social media, and global markets encourage people to focus on comfort, luxury, and fast consumption. This behavior increases pollution, waste, and the overuse of natural resources. In such a society, people may value convenience and profit over long-term environmental care.

4. Weak Implementation of Environmental Values

Even when people and governments support environmental values in theory, they may fail to follow through in practice. Environmental laws may exist but are often poorly enforced. Corruption, lack of political will, or pressure from powerful industries can stop environmental values from turning into real action.

5. Lack of Environmental Awareness

In many regions, people simply do not know enough about environmental issues. Without proper education and access to information, people may not understand how their actions affect the planet. If communities are unaware of problems like climate change, pollution, or biodiversity loss, they are less likely to act responsibly.

6. Resistance to Change

People often resist changing their lifestyles, even if they know it's better for the environment. Habits such as using plastic, wasting electricity, or driving cars instead of walking are hard to break. Without strong motivation or support, people may continue behaviors that harm the environment.

7. Political and Institutional Barriers

Sometimes, governments fail to prioritize environmental issues. Political parties may avoid taking strong steps toward environmental protection due to fear of losing public or business support. Also, lack of coordination between government departments, unclear policies, or short-term political agendas for personal interest often

weaken the environmental action.

Indian Value System and Environmental Conservation

The Indian cultural and philosophical tradition has long upheld a deep reverence for nature. From ancient scriptures to everyday practices, Indian society has emphasized a harmonious relationship between humans and the environment (Gadgil & Guha, 1992). These values, embedded in religious teachings, customs, and community life, continue to influence ecological consciousness and sustainable behavior even today.

Ahimsa (Non-violence)

Ahimsa, or non-violence, is a foundational value in Indian religions such as Jainism, Buddhism, and Hinduism. It teaches individuals to avoid causing harm to any living being, whether human, animal, or plant. This principle has led to the development of life practices that respect the sanctity of nature (Rao, 2010). For instance, Jainism strongly advocates vegetarianism, which helps reduce environmental degradation caused by meat production, such as deforestation, water usage, and greenhouse gas emissions (Chakravarty, (2015). Ahimsa encourages peaceful coexistence and mindful consumption, both essential for sustainable living.

Sacred Groves and Nature Worship

In many regions of India, certain forest areas known as sacred groves (locally called Devara Kaadu or Orans) are protected due to religious beliefs (Kothari & Singh 2017). These groves are considered the dwelling places of deities and spirits, and cutting trees or harming wildlife in these areas is seen as sacrilegious. This tradition has effectively preserved many patches of native forest and biodiversity for centuries. Even today, these groves serve as examples of community-based conservation rooted in spiritual values.

Vasudhaiva Kutumbakam (The World is One Family)

This ancient Sanskrit concept promotes the idea that all living beings—humans, animals, and even elements of nature—are part of a single universal family. It reinforces a sense of collective responsibility and encourages harmony between people and the natural world. In the

modern context, this value is reflected in India's support for international environmental cooperation and sustainable development goals. The principle of Vasudhaiva Kutumbakam aligns closely with the global idea of ecological justice and inclusive sustainability (Ghosh, 2011).

Traditional Ecological Knowledge in Agriculture

Indian farming traditions are grounded in ecological wisdom passed down through generations. Practices such as crop rotation, organic composting, rainwater harvesting, and agroforestry reflect an intimate knowledge of local ecosystems (Mishra, 2013). These methods not only ensure food security but also conserve soil fertility and biodiversity. In many rural areas, farmers still follow natural cycles and maintain a respectful relationship with the land, embodying sustainability as a way of life rather than a modern concept.

Reverence for Rivers and Natural Elements

Rivers, particularly the Ganga, are considered sacred in Indian tradition and worshipped as living goddesses. This spiritual outlook has historically promoted the protection of water bodies and discouraged pollution. Although contemporary challenges such as industrial waste and urbanization have threatened river ecosystems, traditional values continue to inspire campaigns like Namami Gange, which aim to clean and rejuvenate sacred rivers while reinforcing their cultural importance (Gupta, 2014).

Jeevdaya (Compassion for All Life Forms)

The value of Jeevdaya emphasizes kindness and compassion toward all creatures. It is especially emphasized in Jain philosophy, which teaches that even the smallest organism deserves care and protection. This worldview supports conservation practices such as tree planting, protection of animal habitats, and efforts to preserve endangered species. It has also inspired the principle that for every tree felled, another must be planted—a custom still followed in several rural communities.

Pilgrimage Sites as Ecological Preserves

Many religious pilgrimage sites in India are surrounded by natural forests and water bodies, which are preserved as part of the sacred landscape. Environmental rules are

often stricter in these areas, where spiritual significance blends with ecological preservation. For example, in the Seshachalam Hills surrounding the Tirumala temple in Andhra Pradesh, natural habitats are maintained and protected due to their religious importance. Such places illustrate how spirituality can play a direct role in conserving ecosystems.

Sustainable Architectural Practices

The traditional Indian science of architecture, known as Vaastu Shastra, promotes building practices that work in harmony with nature (Rao, 2010). Traditional homes were constructed using local materials, with natural lighting, ventilation, and water management systems. These architectural principles reduce dependence on artificial energy sources and promote environmental efficiency. Even today, many eco-conscious architects draw inspiration from these sustainable methods to design modern green buildings.

Dharma (Duty toward Nature)

Dharma, a key concept in Hindu philosophy, refers to righteous duty, which extends beyond personal and social responsibilities to include duties toward the environment. Many Indian communities consider caring for the land, animals, and natural resources a part of their dharma. This spiritual obligation encourages sustainable practices such as organic farming, forest conservation, and community-based environmental management, particularly in villages where traditional lifestyles remain strong.

Eco-Friendly Festivals

Traditional Indian festivals were historically celebrated using biodegradable materials, natural dyes, and local resources. In recent years, rising environmental awareness has encouraged people to return to these sustainable roots. Eco-conscious practices such as using clay idols for Ganesh Chaturthi, natural colors for Holi, and minimizing fireworks during Diwali are gaining momentum. These changes reflect a growing alignment between ancient cultural values and modern environmental responsibility (Pillai, 2016).

The Indian value system is rich with principles that inherently support environmental sustainability. These values—whether rooted in religion, tradition, or

community life—promote respect for nature, balance in resource use, and compassion for all beings. By drawing upon this heritage, India can continue to develop in ways that honor its cultural legacy while addressing the urgent need for environmental conservation.

Conclusion

Social values are fundamental in shaping how societies perceive and interact with the natural environment. These values—whether rooted in ethics, culture, or community life—play a vital role in fostering attitudes and behaviors that support environmental preservation. From ecocentric worldviews that regard nature as inherently valuable to norms that encourage collective responsibility, social values influence both individual practices and broader societal responses to ecological challenges. Institutions such as governments, educational systems, media, and grassroots movements are instrumental in nurturing and disseminating these values on a wider scale.

In the Indian context, the value system is deeply interwoven with principles that emphasize harmony with nature, reverence for all life forms, and the recognition of interconnectedness among all beings. These long-standing traditions, grounded in spirituality and traditional ecological knowledge, have not only preserved biodiversity and natural resources but also guided generations toward environmentally sustainable lifestyles. Whether through the practice of Ahimsa, the preservation of sacred groves, or the celebration of eco-friendly festivals, Indian society has exemplified the integration of cultural ethos with ecological responsibility.

As the global community faces escalating environmental crises, the promotion of values such as sustainability, intergenerational equity, and environmental stewardship becomes increasingly urgent. Embedding these values into everyday behavior, public policy, education, and international cooperation is essential to ensure the health and viability of the planet for future generations. Social values, thus, are not merely cultural expressions—they are powerful tools for mobilizing change and achieving a just, balanced, and sustainable world.

References

- Chakravarty, A. (2015). Ahimsa and Ecology: The Role of Non-Violence in Environmental Ethics in India. *Environmental Ethics*, 37(2), 184-199.
- Ghosh, S. (2011). Vasudhaiva Kutumbakam: The Role of Traditional Indian Values in Global Environmental Ethics. *Journal of Global Ethics*, 7(3), 221-236.
- Gadgil, M., & Guha, R. (1992). *This Fissured Land: An Ecological History of India*. University of California Press.
- Giddens, A. (2009). *Sociology* (6th ed.). Cambridge: Polity Press.
- Gupta, A. (2014). Water and the Sacred: The Role of Rivers in Indian Ecological Traditions. *Water Resources Management*, 28(11), 3487-3501.
- Jain, P. (2011). *Dharma and Ecology of Hindu Communities: Sustenance and Sustainability*. Ashgate Publishing.
- Kothari, A., & Singh, R. (2017). Sacred Groves: A Living Tradition of Environmental Conservation. *Economic and Political Weekly*, 52(29), 41-47.
- Mishra, S. (2013). Traditional Agricultural Practices and Environmental Sustainability in Rural India. *Agriculture and Human Values*, 30(3), 417-427.
- Ninan, K. N. (Ed.). (2012). *Conserving and Valuing Ecosystem Services and Biodiversity: Economic, Institutional and Social Challenges*. Earthscan.
- Pillai, R. (2016). Eco-friendly Practices in Indian Festivals: A Contemporary Shift Towards Environmental Awareness. *Journal of Environmental Management*, 165, 1-10.
- Rao, K. S. (2010). The Role of Dharma in Protecting Nature: Perspectives from Hinduism. *Journal of Hindu Studies*, 3(1), 43-59.
- Sharma, S. (2009). *Religious and Environmental Traditions: The Role of Indian Philosophy in Ecological Sustainability*. New York: Routledge.
- Singh, K. S. (1998). *Tribal Society in India: A Source Book for Anthropological Studies*. New Delhi: Oxford University Press.
- Tiwari, S. (2018). Jeevdaya: Compassion and Environmental Ethics in Indian Culture. *Indian Journal of*

Environmental Ethics, 12(1), 78-90.

Dr. Madhusudan

Assistant Professor

Government College Baund Kalan

Pin-127025

Mobile-9729747413

madhusudan8787@gmail.com



Abstract

Entrepreneurship is the process of identifying and pursuing opportunities to create, develop, and manage a business venture with the aim of generating profit. It involves taking calculated risks, innovating, and adapting to market changes. Entrepreneurial awareness programs aim to educate individuals about the possibilities and processes of starting and running a business, fostering a mindset that encourages innovation and self-reliance. These programs are crucial for economic growth, job creation, and societal progress.

Entrepreneurship is not merely about starting a business; it's a mindset characterized by innovation, risk-taking, and a proactive approach to problem-solving. It requires individuals to identify market needs, develop innovative solutions, and mobilize resources to bring their ideas to fruition. This process can involve developing a new product, offering a unique service, or finding a better way to deliver existing goods or services.

Entrepreneurial awareness programs play a vital role in nurturing this mindset and empowering individuals to become entrepreneurs. These programs often provide information about various aspects of entrepreneurship, including:

- **Business Planning:**
Understanding the fundamentals of developing a business plan, including market research, financial projections, and operational strategies.
- **Funding Opportunities:**
Exploring various funding sources, such as loans, grants, and venture capital, to support the startup and growth of a business.
- **Legal and Regulatory Frameworks:**
Navigating the legal and regulatory requirements for starting and operating a business, including licensing, permits, and compliance issues.
- **Skills Development:**
Providing training in essential skills, such as marketing, sales, finance, and management, to enhance entrepreneurial capabilities.
- **Mentorship and Networking:**

Connecting aspiring entrepreneurs with experienced mentors and providing opportunities to network with other business professionals.

By raising awareness about these aspects, entrepreneurial programs aim to equip individuals with the knowledge, skills, and confidence to pursue their entrepreneurial aspirations. This, in turn, can lead to increased economic activity, job creation, and innovation, ultimately contributing to the overall well-being of society. The development of an entrepreneurial mindset is crucial for individuals to thrive in a dynamic and competitive global landscape.

An Entrepreneurship Awareness Programme (EAP) aims to motivate and inform individuals about the possibilities of entrepreneurship, particularly in setting up and managing Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs). These programs typically cover various aspects, including identifying potential entrepreneurial opportunities, understanding government policies, exploring funding options, and developing necessary skills.

Key aspects of an Entrepreneurship Awareness Programme:

Purpose:

To identify and motivate potential entrepreneurs, providing them with the knowledge and skills to establish and manage their own businesses.

· **Target Audience:**

Individuals who are interested in starting their own ventures, including students, professionals, and those seeking self-employment opportunities.

· **Content:**

EAPs often include formal sessions covering topics like:

- **Introduction to Entrepreneurship:** Defining entrepreneurship, its importance in economic development, and the characteristics of successful entrepreneurs.
- **Business Opportunities:** Identifying potential business ideas, market analysis, and understanding the needs of specific industries or sectors.
- **Funding and Financial Assistance:** Exploring various funding options, including government schemes, loans, and venture capital.
- **Government Policies and Support:** Providing

information on government policies, incentives, and support systems for MSMEs.

- **Skills Development:** Workshops on essential skills like communication, marketing, financial management, and business planning.

- **Activities:**

EAPs may include interactive sessions, success story presentations, one-on-one counseling, and mentoring opportunities.

- **Duration:**

Awareness programs can range from a single day to several weeks, depending on the scope and depth of the training.

Benefits of participating in an Entrepreneurship Awareness Programme:

- **Increased Awareness:**

Participants gain a better understanding of the entrepreneurial landscape and the potential opportunities it offers.

- **Skill Development:**

EAPs equip individuals with essential skills and knowledge needed to start and manage a business.

- **Motivation and Confidence:**

Exposure to successful entrepreneurs and success stories can inspire and motivate individuals to pursue their entrepreneurial dreams.

- **Access to Resources:**

Participants gain access to information on funding, government support, and other resources available to MSMEs.

- **Networking Opportunities:**

EAPs provide a platform for participants to connect with mentors, experts, and other aspiring entrepreneurs.

In essence, Entrepreneurship Awareness Programmes play a crucial role in fostering an entrepreneurial mindset, promoting self-employment, and driving economic growth by encouraging individuals to explore and pursue entrepreneurial ventures.

Entrepreneurship Development Programs (EDPs) in India, supported by the government, aim to cultivate

entrepreneurial skills and mindset among individuals, particularly the youth, to foster self-employment and drive economic growth. These programs, like the Entrepreneurship and Skill Development Programme (ESDP) Scheme, offer structured training and guidance to aspiring entrepreneurs, covering various aspects from idea generation to business management and sustainability.

Objectives and Focus Areas:

- **Promoting Entrepreneurial Culture:**

EDPs aim to motivate individuals from diverse backgrounds, including women, minorities, and those from economically weaker sections, to consider entrepreneurship as a viable career path.

- **Skill Development:**

These programs equip participants with essential technical and business skills, including project planning, financial management, marketing, and operational strategies.

- **Support for MSME Growth:**

EDPs play a crucial role in establishing new Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs) and fostering the growth of existing ones, thereby contributing to job creation and economic development.

- **Targeted Training:**

EDPs often provide specialized training for specific industries or sectors, catering to the unique needs and opportunities within those areas.

- **Access to Resources:**

EDPs help connect entrepreneurs with relevant financial institutions, government schemes, and other support systems.

Key Initiatives and Programs:

- **ESDP Scheme:**

The Entrepreneurship and Skill Development Programme (ESDP) Scheme focuses on motivating individuals to consider self-employment and entrepreneurship, building capacity in existing MSMEs, and fostering an entrepreneurial culture.

- **MSME Initiatives:**

The [Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises \(MSME\)](#) plays a vital role in promoting entrepreneurship through various schemes, training programs, and support services.

- NIESBUD and EDII:

The National Institute for Entrepreneurship and Small Business Development (NIESBUD) and the Entrepreneurship Development Institute of India (EDII) are key institutions involved in entrepreneurship education, training, and research.

Benefits of EDPs:

- Job Creation:

EDPs contribute to job creation by supporting the establishment and growth of new businesses.

- Economic Growth:

By fostering entrepreneurship, these programs drive economic growth and development at the local and national levels.

- Skill Enhancement:

EDPs provide valuable skills and knowledge to individuals, enabling them to start and manage successful businesses.

- Social Empowerment:

EDPs empower individuals, particularly those from marginalized communities, to become economically independent.

In 2025, India's economy is experiencing robust growth, projected at 6.2% to 6.3%, driven by strong domestic demand, infrastructure development, and government initiatives like "Make in India". India has become the world's fourth-largest economy, with a tripling of nominal GDP since 2014-15. Exports have also seen significant growth, particularly in engineering goods, electronics, and pharmaceuticals, with services exports more than doubling. Digital transactions, especially through UPI, have surged, indicating a digitally empowered economy. Inflation is also under control, with retail inflation falling to 4.6% in 2024-25.

Key Highlights of India's Economic Development in

2025:

- Fastest Growing Major Economy:

India continues to be the fastest-growing major economy globally, outpacing many developed nations.

- Fourth Largest Economy:

India has solidified its position as the fourth-largest economy in the world, surpassing countries like Japan and France.

- Strong Domestic Demand:

Robust domestic consumption and investment are key drivers of economic growth.

- Government Initiatives:

Government policies like "Make in India", the Production Linked Incentive (PLI) scheme, and infrastructure development projects are boosting domestic production and attracting investment.

- Digital Transformation:

The digital revolution is evident in the surge of digital transactions, particularly through UPI, indicating a digitally empowered economy.

- Controlled Inflation:

Targeted fiscal and monetary policies have helped to curb inflation, with retail inflation falling to 4.6% in 2024-25.

- Increased Exports:

Exports have seen significant growth, with a 76% increase over the last decade, driven by sectors like engineering goods, electronics, and pharmaceuticals.

- Growing FDI Inflows:

Cumulative FDI inflows have reached US\$1.05 trillion, with a record 27% increase in equity inflows in the first 9 months of FY25.

- Stable Macroeconomic Foundation:

A strong macroeconomic foundation is supported by a stable inflation rate, a healthy fiscal position, and a robust external sector.

- Continued Growth Momentum:

India's economic growth is expected to continue into 2026, with estimates ranging from 6.2% to 6.3%, driven by strong fundamentals and proactive government policies.

- **Press Note Details:** Press Information Bureau - PIB
India's economic development can be spurred by focusing on key areas: increasing investment, especially in infrastructure, boosting manufacturing through initiatives like "Make in India", promoting skill development and MSME growth, and fostering innovation and technology adoption. Additionally, agricultural reforms are crucial to improve farmers' incomes and overall rural development, while strengthening logistics and energy infrastructure will reduce costs and improve efficiency.

Key Strategies for Economic Development:

- **Boosting Investment:**

India needs to increase its investment rate to 36% of GDP to fuel economic growth. This includes both public and private investment, with a focus on infrastructure projects like roads, railways, and power plants.

- **"Make in India" and Manufacturing Growth:**

The "Make in India" initiative aims to attract both domestic and international investment in manufacturing. This will not only create jobs but also enhance technological capabilities and productivity, reducing dependence on imports.

- **MSME Development and Skill Development:**

Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs) are vital for job creation. Providing them with easier access to credit, technology, and infrastructure is crucial. Simultaneously, skill development programs like Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY) are essential to equip the workforce with the skills needed for the modern economy.

- **Agricultural Reforms and Doubling Farmers' Income:**

Modernizing agriculture, improving irrigation, and promoting efficient farming practices are vital for increasing agricultural productivity and farmers' incomes. Diversification into high-value crops and improved market access are also important.

- **Infrastructure Development:**

Investing in infrastructure, including energy, logistics, and transportation, is crucial for reducing costs and

improving efficiency. This will support both domestic industries and international trade.

- **Technology and Innovation:**

Fostering innovation and technology adoption across all sectors is essential for long-term economic growth. This includes promoting research and development, supporting startups, and encouraging the use of digital technologies.

- **Employment Generation:**

Economic growth is a necessary condition for employment generation. Reforms in labour laws and policies that encourage private sector investment can help create more jobs.

- **Inclusive Growth:**

It is important to ensure that the benefits of economic growth are shared by all segments of society, including marginalized groups. This requires policies that promote social inclusion, reduce inequality, and provide access to education, healthcare, and other essential services.

By focusing on these key areas and implementing sound economic policies, India can achieve sustained and inclusive economic growth, improving the lives of its citizens and taking its place as a global economic power.

To boost India's economic growth in 2025 and beyond, the focus should be on increasing investment, particularly in infrastructure and manufacturing, promoting technological innovation, and implementing labor reforms to create more jobs. Strengthening the financial sector and ensuring macroeconomic stability are also crucial. Furthermore, doubling farmers' income and improving logistics can significantly contribute to overall economic development.

1. Investment and Infrastructure:

- **Raising Investment Rates:**

India needs to increase its investment rate to around 36% of GDP to sustain high growth. This requires attracting both domestic and foreign investment, particularly in infrastructure projects like roads, railways, ports, and power plants.

- **Infrastructure Development:**

Investing in infrastructure not only improves connectivity and reduces transportation costs but also creates jobs and stimulates economic activity across various sectors.

- **Manufacturing Boost:**

India needs to focus on developing its manufacturing sector, potentially through initiatives like "Make in India," to reduce reliance on imports and create more employment opportunities.

2. Technology and Innovation:

- **Embrace Technological Advancements:**

Adopting new technologies, such as AI, blockchain, and IoT, across various sectors can improve productivity, efficiency, and competitiveness.

- **Promote Research and Development:**

Investing in research and development (R&D) will drive innovation and help create new industries and jobs.

- **Support Startups:**

Creating a favorable ecosystem for startups, including access to funding and mentorship, can foster innovation and entrepreneurship.

3. Labor Reforms and Employment:

- **Labor Market Flexibility:**

Implementing labor reforms that provide flexibility to businesses while ensuring worker protection can encourage job creation and economic growth.

- **Skill Development:**

Investing in skill development programs tailored to the needs of the industry can address the gap between available jobs and the skills of the workforce.

- **Encourage Entrepreneurship:**

Promoting entrepreneurship and self-employment can create more jobs and reduce reliance on traditional employment.

4. Financial Sector and Macroeconomic Stability:

- **Strengthen the Banking Sector:**

Improving the health of the banking sector and ensuring access to finance for businesses, especially small and medium-sized enterprises (SMEs), is crucial.

- **Prudent Fiscal Policy:**

Maintaining a stable macroeconomic environment

through prudent fiscal and monetary policies is essential for sustainable growth.

- **Financial Inclusion:**

Expanding access to financial services for all citizens can empower individuals and businesses, leading to greater economic participation.

5. Agriculture and Rural Economy:

- **Doubling Farmers' Income:**

Implementing policies that improve agricultural productivity, market access, and rural infrastructure can significantly boost rural incomes and reduce poverty.

- **Agri-Tech Adoption:**

Encouraging the adoption of technology in agriculture can improve efficiency and productivity, leading to better incomes for farmers.

- **Promote Rural Industries:**

Developing rural industries can create non-farm employment opportunities and reduce dependence on agriculture.

6. Logistics and Connectivity:

- **Improved Logistics Infrastructure:**

Investing in modernizing logistics infrastructure, including roads, railways, ports, and warehousing, can reduce transportation costs and improve supply chain efficiency.

- **Efficient Transportation Systems:**

Developing efficient transportation systems can connect markets and facilitate the movement of goods and services, boosting trade and economic activity.

By focusing on these key areas, India can enhance its economic growth trajectory and achieve its potential as a global economic power. The projected GDP growth rate of 6.5% in FY2025-26, as indicated by the RBI, shows a positive outlook, but continued efforts are needed to ensure

Entrepreneurship awareness plays a crucial role in fostering economic development by stimulating innovation, creating jobs, and promoting wealth creation. Here are some key references that delve into this relationship:

Books:

Schumpeter, J. A. (1934). *The Theory of Economic Development: An Inquiry into Profits, Capital, Credit, Interest, and the Business Cycle*. Harvard University Press.

This is a foundational text that introduced the concept of the entrepreneur as the central agent of "creative destruction" and innovation, driving economic change and development.

Baumol, W. J. (1990). Entrepreneurship: Productive, Unproductive, and Destructive. *Journal of Political Economy*, 98(5, Part 1), 893-921.

Baumol expands on Schumpeter's ideas, highlighting how entrepreneurial activity can be channeled towards productive (innovative, growth-oriented), unproductive (rent-seeking), or even destructive endeavors, with significant implications for economic development.

Audretsch, D. B. (2007). *The Entrepreneurial Society*. Oxford University Press. This book explores how entrepreneurship is a key driver of economic growth in modern, knowledge-based economies and discusses the policy implications for fostering entrepreneurial societies.

Reynolds, P. D. (2022). *Entrepreneurship and Economic Development*. Edward Elgar Publishing.

This book provides a systematic comparison of six stages of economic development, illustrating how business creation is crucial across all stages and its varied contributions to economic growth and adaptation. It also discusses policy implications for countries at different stages of development.

Journal Articles:

Acs, Z. J. (2006). How is entrepreneurship good for economic growth? *Innovations*, 1, 97–107.

This article discusses the mechanisms through which entrepreneurship contributes to economic growth, focusing on innovation and knowledge spillover.

Audretsch, D. B., & Thurik, A. R. (2004). A model of the entrepreneurial economy. *International Journal of Entrepreneurship Education*, 2(2), 143-166.

This paper presents a model of how entrepreneurship

shapes the economy, emphasizing the shift towards an "entrepreneurial economy" driven by new firm creation and innovation.

Naudé, W. (2013). *Entrepreneurship and Economic Development: Theory, Evidence, and Policy*. IZA Discussion Paper No. 7191

This paper provides a comprehensive review of the theoretical and empirical literature on the relationship between entrepreneurship and economic development, offering insights into policy implications.

Urbano, D., & Aparicio, S. (2016). Investigating the impact of entrepreneurship and education on economic growth. *ResearchGate*

This study empirically investigates the positive effects of both entrepreneurship and education on economic growth, highlighting their intertwined relationship.

A STUDY ON ENTREPRENEURIAL AWARENESS AMONG THE HIGHER EDUCATION STUDENTS. (2019).

Journal of Emerging Technologies and Innovative Research (JETIR), 6(4), 522-527.

This research specifically examines the level of entrepreneurial awareness among students, recognizing it as a key factor for starting and running businesses, which in turn contributes to economic development.

Dr. Saneh Yadav

Principal

SSDCMT College

Rewari (Haryana)

Princy Tiwari

Scholar

Sec-6, Dharuwhere,

REWARI

Abstract

Mergers and Acquisitions (M&A) are crucial components of corporate restructuring and strategic expansion in India. The legal framework governing these transactions has evolved significantly to address complexities arising from economic liberalization, globalization, and market dynamics. This research paper provides a comprehensive analysis of the legal framework for M&A in India, exploring key regulations, regulatory bodies, and recent developments. This research paper provides a foundational understanding of the legal framework for M&A in India, highlighting key regulations, regulatory bodies, recent developments, and ongoing challenges. For a deeper analysis, it is advisable to consult specific case studies and recent legal precedents.

1. Introduction

Mergers and Acquisitions (M&A) involve the consolidation of companies or assets through various forms of transactions. In India, the legal landscape for M&A transactions is influenced by a multitude of regulations designed to ensure fairness, transparency, and competition in the market. This paper aims to analyze the key aspects of the legal framework governing M&A activities in India.

2. Key Regulations Governing M&A in India

2.1 Companies Act, 2013

The Companies Act, 2013 (the Act) is the primary legislation governing corporate activities in India, including M&A transactions. Key provisions relevant to M&A under the Act include:

Scheme of Arrangement (Sections 230-240):** This section outlines the process for mergers, demergers, and other corporate restructuring activities. It mandates obtaining approval from the National Company Law Tribunal (NCLT) and, in some cases, from the shareholders and creditors.

Share Capital and Debentures (Sections 43-72):** These sections deal with issues related to share capital which can affect M&A transactions, especially in terms of share swaps and capital restructuring.

2.2 Competition Act, 2002

Administered by the Competition Commission of India (CCI), the Competition Act, 2002 regulates anti-competitive practices and ensures fair competition. Key aspects include:

Merger Control (Section 5 and 6):** These sections require pre-merger notification to the CCI for large transactions that may have an appreciable adverse effect on competition in the market. The CCI evaluates whether the merger or acquisition is likely to harm competition or not.

2.3 Securities and Exchange Board of India (SEBI) Regulations

SEBI oversees securities markets and has established regulations governing M&A transactions, including:

Substantial Acquisition of Shares and Takeovers Regulations (SAST), 2011:** These regulations mandate disclosure requirements for substantial acquisitions of shares and ensure fair practice during takeovers.

Listing Obligations and Disclosure Requirements (LODR) Regulations, 2015:** These regulations require listed companies to disclose material events and transactions, including mergers and acquisitions.

2.4 Foreign Exchange Management Act (FEMA), 1999

FEMA governs cross-border M&A transactions involving foreign entities. Key aspects include:

Foreign Direct Investment (FDI) Policy: The policy outlines guidelines for foreign investments in Indian companies, including the approval process for acquisitions and mergers involving foreign investors.

3. Regulatory Bodies

3.1 National Company Law Tribunal (NCLT)

NCLT plays a crucial role in approving schemes of arrangement, mergers, and demergers. It adjudicates disputes and oversees the compliance of statutory requirements.

3.2 Competition Commission of India (CCI)

CCI reviews and approves mergers and acquisitions to prevent anti-competitive practices and ensure fair competition in the market.

3.3 Securities and Exchange Board of India (SEBI)

SEBI regulates disclosures and compliance for listed companies involved in M&A transactions, ensuring

transparency and protecting investor interests.

3.4 Reserve Bank of India (RBI)

The RBI, through its regulations and guidelines, governs foreign exchange transactions and oversees compliance with FEMA for cross-border M&A deals.

4. Recent Developments and Trends

4.1 Liberalization and Globalization

The liberalization of the Indian economy has led to increased M&A activity, both domestic and cross-border. Recent reforms have aimed at simplifying regulatory procedures and enhancing ease of doing business.

4.2 Digital and Technological Advancements

The rise of digital and technology sectors has led to increased M&A activities in these areas. Regulatory frameworks are evolving to address the challenges posed by technology-driven transactions.

4.3 Increased Scrutiny and Enforcement

Regulatory bodies, especially the CCI and SEBI, have increased scrutiny and enforcement actions to prevent anti-competitive practices and ensure transparency in M&A transactions.

5. Challenges and Issues

5.1 Regulatory Overlap and Complexity. The interplay between various regulations and regulatory bodies can create complexity and overlap, potentially leading to delays and increased compliance costs.

5.2 Balancing Growth and Competition

Ensuring that M&A transactions promote growth while maintaining competition is a challenge, particularly in high-concentration markets.

5.3 Cross-Border Transaction Challenges

Cross-border M&A transactions face challenges related to regulatory approvals, currency fluctuations, and differing legal standards.

6. Conclusion

The legal framework for mergers and acquisitions in India is comprehensive and continuously evolving to address the dynamic business environment. While significant progress has been made in streamlining regulations and enhancing transparency, ongoing challenges remain. Companies and investors must navigate a complex regulatory landscape to ensure compliance and achieve

successful M&A outcomes.

References

- Companies Act, 2013, Government of India.
- Competition Act, 2002, Government of India.
- SEBI (Substantial Acquisition of Shares and Takeovers) Regulations, 2011.
- FEMA, 1999, Government of India.
- National Company Law Tribunal (NCLT) guidelines and rulings.
- Competition Commission of India (CCI) guidelines and decisions.
- Securities and Exchange Board of India (SEBI) regulations and circulars.

Shree Nandani Gaur

Govt Law College ,

Mumbai, Maharashtra

Email- shreenandinigaur@gmail.com

Abstract

know-how economic Literacy: A Pathway to Empowerment

Monetary literacy refers back to the ability to understand and efficaciously manipulate various monetary components, along with budgeting, saving, making an investment, and comprehending financial risks. It empowers individuals to make informed selections about their money, leading to stepped forward economic well-being and decreased vulnerability to financial demanding situations.

The significance of economic Literacy

In present day complex financial landscape, owning economic literacy is vital for numerous reasons:

Economic Literacy in India

In India, economic literacy remains a great assignment. regardless of efforts to promote financial inclusion, a massive portion of the populace lacks simple monetary information.

The Indian authorities has released several initiatives to enhance monetary literacy:

Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY): released in 2014, this scheme targets to provide each family with a financial institution account, facilitating get admission to economic services and promoting financial savings behavior.

Countrywide strategy for monetary education (NSFE): released by way of the Reserve financial institution of India (RBI), this strategy outlines a roadmap to improve economic literacy through school schooling, adult schooling, and network outreach.

The significance of monetary Literacy

In nowadays rapid-paced and complicated financial environment, financial literacy has grown to be more crucial than ever. economic literacy refers back to the understanding and application of various financial abilities, which includes personal monetary control, budgeting, and investing. it's miles the potential to make knowledgeable choices approximately one's budget and to manipulate money efficiently for a comfy destiny.

1. Empowering individuals

At its middle, financial literacy empowers individuals to make sound monetary decisions. It provides the expertise had to create a price range, manipulate prices, avoid useless debt, and plan for the future. A financially literate individual knows how to allocate profits to meet various desires, along with housing, schooling, healthcare, and retirement.

2. Lowering Debt and growing savings

one of the primary results of monetary illiteracy is terrible debt control. Many human beings fall into the trap of excessive-hobby debt due to a lack of knowledge of how credit works. as an instance, failing to comprehend how compound interest can quickly improve debt leads many into long-term financial struggles. financial literacy teaches people how to compare loan terms, recognize reimbursement schedules, and avoid excessive borrowing.

3. Preparing for Retirement

planning for retirement is an important aspect of monetary literacy. With growing existence expectancy and the decline of traditional pension systems, individuals ought to take greater responsibility for their retirement planning.

4.Promoting economic stability

On a broader scale, financial literacy contributes to national financial balance. when individuals manipulate their money accurately, they're much less in all likelihood to depend on government assistance applications. better levels of monetary literacy can result in higher costs of saving and making an investment, which fuel monetary boom and improvement

5. Improving Social Equality

financial literacy can also assist bridge the gap between exclusive social and financial businesses. Low-profits families, mainly, benefit from getting to know a way to control limited assets correctly.

6.Adapting to the digital monetary international

The fast development of generation has transformed the financial panorama. From online banking and virtual wallets to cryptocurrencies and robo-advisors, individuals are confronted with a big selection of monetary tools and structures.

7. The role of schooling and policy

To promote monetary literacy, a collective effort is required from educators, policymakers, financial establishments, and media

Demanding situations in financial Literacy in each day lifestyles

economic literacy, the capacity to apprehend and successfully use financial skills together with budgeting, saving, investing, and dealing with debt, is vital in nowadays complicated economic surroundings. despite its significance, many individuals face great demanding situations in accomplishing and keeping economic literacy of their everyday lives. these challenges range relying on age, earnings stage, schooling, era publicity, and get entry to resources. This essay explores the key demanding situations people face with economic literacy in their day by day lives, their effects, and what may be completed to triumph over them.

1. Loss of fundamental financial education

2. Complexity of monetary products

3. Emotional Spending and Behavioral Biases

4. Restrained get admission to to financial assets and equipment

5. Rising cost of residing and monetary Pressures

6. Debt Mismanagement

7. Digital monetary challenges and Scams

8. Generational and Cultural Gaps

9. Incorrect information and Media affect

10. Insufficient Retirement planning

Proposed solutions to enhance monetary Literacy

Advent

In today's swiftly evolving monetary landscape, monetary literacy has turn out to be an critical lifestyles ability. It equips people with the understanding and self-belief to make informed financial selections, enabling them to manipulate their money efficiently, keep away from debt traps, keep for the destiny, and improve their usual well-being. however, in spite of its significance, financial literacy stays low in many parts of the world, affecting each evolved and developing economies. economic illiteracy ends in a range of troubles along with poor budgeting, extended debt, loss of financial savings, inadequate retirement planning, and vulnerability to monetary fraud.

1. Integrating financial training in schools and colleges

one of the handiest ways to tackle economic illiteracy is to

introduce monetary training at an early age. Embedding non-public finance as a middle concern in faculty curricula can lay the foundation for accountable monetary conduct.

2. Community-primarily based financial Literacy packages

schooling should also attain those out of doors the college system, especially adults and marginalized companies who're often excluded from mainstream economic education.

3. Leveraging generation and virtual structures

The virtual revolution offers a effective platform for spreading economic literacy quickly and correctly.

4. Government policies and Regulatory support

Governments play a crucial role in shaping the economic literacy landscape via regulation, funding, and national awareness campaigns.

5. Function of economic establishments

Banks, insurance corporations, funding firms, and credit score unions have each a obligation and an possibility to promote economic literacy among their clients.

6. Monetary Inclusion and get entry to

enhancing economic literacy ought to go hand-in-hand with improving access to monetary offerings.

7. Media and Public attention Campaigns

Mass media can play a pivotal function in shaping public belief and promoting financial literacy.

8. Tracking and evaluation

enforcing financial literacy initiatives isn't always sufficient; monitoring their effectiveness is important.

A way to hassle-remedy economic Literacy in India Creation

Economic literacy, defined because the capability to apprehend and efficiently use economic capabilities such as budgeting, saving, making an investment, and debt control, is a important element of monetary and social nicely-being. In India—a country with a population of over 1.4 billion and numerous socio-monetary backgrounds—economic literacy remains alarmingly low. in line with the Reserve bank of India (RBI) and different studies, handiest about 27% of Indian adults are financially literate.

Expertise the problem: financial Literacy in India

Earlier than providing solutions, it's important to discover the primary challenges contributing to low financial literacy in India:

1.lack of Early economic education: financial education isn't a part of the regular faculty curriculum in maximum Indian states.

2.Excessive economic Illiteracy in Rural regions: A massive phase of India's populace lives in rural areas wherein get right of entry to to banking, digital gear, and economic expertise is constrained.

3.Gender Disparity: girls, in particular in rural and semi-urban regions, frequently have limited get entry to to monetary training and services.

4.virtual Divide: rapid digitization has left behind a full-size part of the populace that lacks the digital literacy to engage with financial technology.

5.Language obstacles: most financial content material and communicate are in English or Hindi, alienating large segments of the populace who speak regional languages.

6.Low accept as true with in financial establishments: ancient instances of scams and corruption have led to skepticism about banks and coverage organizations.

7.Cultural and Behavioral factors: in lots of Indian households, monetary decisions are centralized, often handled with the aid of the male head of the family, proscribing broader studying.

A way to hassle-Solve Addressing economic literacy in India calls for coordinated efforts across education, policy, community outreach, digital infrastructure, and

financial institutions. under are established answers tailor-made for the Indian context:

1. Integrating monetary schooling into the college Curriculum

Start from number one faculty:

Excessive college Curriculum:

CBSE and nation boards:

2. Network-based totally monetary Literacy applications

Panchayat-stage Workshops:

3. Use of era and cell Penetration

Mobile Apps in nearby Languages:

Interactive Voice response (IVR) services:

YouTube Channels and WhatsApp classes:

4. Role of monetary institutions and Banks

Mandatory financial Literacy education:

Economic Literacy facilities (FLCs):

5. Authorities coverage and national projects

Tax Incentives for schooling:

Inclusion in authorities Schemes:

6. Focused on women and kids

Unique programs for ladies:

College-to-work packages:

Internship and Fellowship possibilities:

7. Tackling the virtual and Language Divide local financial Literacy Campaigns:

Neighborhood Radio and television:

8.. Attractive with Media and Influencers

Public provider bulletins (PSAs):.

Influencer Campaigns:

9. Continuous tracking and remarks Mechanisms

Statistics collection:

Comments Loops:

Hints to enhance financial Literacy through authorities projects

Creation

Economic literacy—the potential to understand and observe simple financial concepts consisting of budgeting, saving, investing, and managing debt—is a essential skill for people and societies alike. In an age of growing monetary complexity and virtual transactions, it has end up extra important than ever.

In spite of numerous authorities packages aimed at enhancing financial inclusion, inclusive of the Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY), MUDRA loans, and the Direct advantage transfer (DBT) system, many beneficiaries lack the financial awareness to make informed selections. financial literacy isn't merely approximately get admission to to bank accounts or credit—it's miles about empowering citizens with the understanding and capabilities to manage their cash accurately and independently.

1. Integrating monetary schooling into the country wide Curriculum

- a. Early introduction in colleges.
- b. obligatory monetary Literacy in Secondary and better schooling

2. Expanding economic Literacy via community Outreach

- a. Leverage Panchayats and local bodies
- b. Use of Self-assist businesses (SHGs) and NGOs

3. Countrywide-level Public recognition Campaigns

- a. Multi-Language Mass Media Campaigns
- b. Monetary Literacy days or weeks

4. Setting up financial Literacy as a government mission

- a. countrywide financial Literacy mission
-

5. Using virtual platforms for Mass learning

- a. Release a countrywide financial Literacy Portal
 - b. Tv and E-getting to know content
 - c. AI-Powered Chatbots
-

6. Selling financial Literacy in the team of workers

- a. Agency-based training packages
 - b. Talent improvement packages
-

7. Empowering girls via monetary schooling

- a. Centered Literacy for women
 - b. Joint monetary choice-Making
-

8. Strengthening monetary institutions' function in education

- a. Banking Correspondents as Educators
 - b. Regulatory Mandates
-

9. Encouraging youth Involvement

- a. economic Literacy golf equipment
 - b. Internships and Fellowships
-

10. monitoring and evaluation

- a. Annual monetary Literacy Index
 - b. feedback and grievance systems
-

✓ References on financial Literacy

1. **Reserve bank of India (RBI).** (2020). country wide approach for economic training (NSFE): 2020–2025. <https://rbidocs.rbi.org.in>
2. **Business enterprise for financial Co-operation and improvement (OECD).** (2016). OECD/INFE global Survey of grownup economic Literacy abilities. <https://www.oecd.org/finance/oecd-infe-survey-person-monetary-literacy-skills.htm>
3. **SEBI (Securities and exchange Board of India).** (2020). Investor education and safety Fund (IEPF) tasks. <https://www.sebi.gov.in>
4. **CRISIL foundation.** (2020). CRISIL Inclusix record: economic Inclusion in India.

<https://www.crisil.com>

5. **NABARD (countrywide bank for Agriculture and Rural improvement).** (2019). fame of economic Inclusion in India.

<https://www.nabard.org>

Dr. Saneh Yadav

Principal

Princy Tiwari

Scholar

SSDCMT, REWARI

Abstract

By promoting comprehensive development at the grassroot level, Gram Panchayats help to empower differently-abled children. Gram Panchayats, the tiniest units of local government in India, execute initiatives to advance education, health, skill training, and social inclusion for handicapped children. Furthermore, they are developing access in schools and public areas and guarantee access to government benefit programs, scholarships, and assistive equipments. Working together with non-governmental organizations, self-help organizations, and local stakeholders, Gram Panchayats raise awareness and remove social stigma related with handicaps. Furthermore, they encourage vocational training and job prospects to guarantee sustained autonomy for these youngsters. Emphasizing the position of Gram Panchayats in disability-inclusive governance could help to create a more just and empowering society, thereby enhancing the general well-being of differently-abled kids in rural India.

The Tenth Plan's strategy centers on enabling and supporting disabled people emphasize on efficient enforcement of the Individuals with Disabilities Act, 1995, for integrating people with disabilities in education and in the economic development process, the Government of India offers several approaches, policies and programmes. Implementing such programs well, though, calls for enough financing, a suitable policy framework, and most of all an efficient administration delivery method. To achieve this, Panchayats should be included in these initiatives. First, provide the Panchayats with pertinent data. The States should, according to Article 40 of the Constitution, arrange village panchayats having enough power and authority to allow them to operate as elements of self-government'. Effective decentralization, both political and economic, have been tried several times during the last fifty years with little success. Passed in 1992, the 73rd Constitutional Amendment Act gave Constitutional position of the Panchayati Raj Institutions (PRIs). Statutes under 29 subjects including 'Empowerment of Disabled,' governments are now developing institutional structures and modalities to help Panchayati Raj Institutions (PRIs)

participate in program implementation.

Democratic decentralization depends on the idea that more public engagement will enhance the level of services given from the authorities as well as local self-government, which has a responsibility of acting as the fulcrum of society, is provided by the gram panchayats, village engine of socio-economic growth. Formally including local government, the Seventy-third Constitutional amendment gives a formal framework administration and management. The organizations which run panchayats can change rural India by means of all-round development. This paper seeks to examine the function of gram panchayats in society as a tool that may cause growth in several fields like economy, health, and technology and will also try to point out areas where this paper will cover the need of evaluating the role of gram panchayat in realizing the right to education for all.

Keywords: Gram Panchayats, Disability, Differently-Abled Children

Introduction

Empowering differently-abled children is vital for creating an all-inclusive and fair society. For local governance and growth in rural India—the Gram Panchayat is the most important institution should resources and knowledge be scarce. Under the 73rd Constitutional Amendment, the Panchayati Raj system allows Gram Panchayats to run social welfare initiatives including those for disabled children. Gram Panchayat, a local governance institution, is required to create local economic development and social justice plans, carry out projects, and execute policies for issues listed in the 11th schedule (Article 243G) of the Constitution. The 73rd Constitutional Amendment Act of 1992 Constitutional status was given to the Panchayati Raj Institutions (PRIs). The Constitution allows for devolution of powers and obligations on Panchayats to right extent. Devolution to the PRIs has been planned for 29 subjects mentioned in the Eleventh Schedule of the Constitution. Following the 73rd Constitutional Amendment Act, State Governments are now developing mechanisms and institutional structures to support the engagement of Panchayati Raj Institutions (PRIs) in the implementation of

many programs under 29 subjects including 'Empowerment of Disabled'. 30 million youngsters (10%) of about 300 million youngsters aged 0-14 now, according current best guesses in the country have some degree of impairment/disability (including sensory, locomotor, or cognitive deficits) ranging from minor to significant. More than half of such disabilities result from poor prevention measure; if appropriate and efficient preventive action is taken measures are especially taken at early stages.

The Eleventh schedule point 25 assigns to the Panchayati Raj organs all responsibilities related to Women and Child development initiatives and policies. Empowerment and promotion of the plan's tenth plan is the approach taken disabled people's well-being. Efficient execution of the Persons is what is stressed with Disabilities Act of 1995. Several approaches, policies, and programs/acts can be found among the Indian Government programmes for including individuals with handicaps in the labor sector and education life cycle motion. Successful execution of those initiatives, though, calls for sufficient money, a good policy structure and first of all energetic execution mechanism. At the district level, the Panchayati Raj Institutions serve as the nodal point. They are to assist coordinate, schedule, monitor, and manage the execution of many national projects as needed. This paper analyzes how Gram Panchayats may help to close the gap between policy and implementation, therefore guaranteeing that disabled children have proper support and chances.

Differently Abled Children

The World Health Organization (WHO) defines 'disability' as a general term including restrictions in participation, limitations in activity, and impairments. Some youngsters are born with a cognitive, sensory, or physical handicap. Others could suffer from a handicap, as they age, that really restricts their daily life activities. Strictly academically speaking, they are named kids with 'disability'. Sometimes in the public domain they are regarded as 'challenged' or 'differently cognized'. Most of the disabilities fall under different categories such as **Impairment of intelligence** (functional limitation and

Adaptive behaviours), **Visual deficiency** (comprising poor vision and complete blindness), **Hearing Deficiency** (total hearing loss, partial hearing loss, and deafness), **Cerebral palsy** (challenges of posture, speech, hand use, and movement among other things), **Autism** (A condition impairing play behavior, social interaction, and communication), Reading, writing, and arithmetic problems (**learning disabilities**).

The need of special educators and other staff inside schooling particularly after the passage of the Persons with Disabilities (PWD) Act 1995, programmes in both special and inclusive learning settings have been growing over time. The Rights of Persons with Disabilities Act (RPD Act) replaced this Act in 2016, which deals with 21 disabilities. Including handicapped children, Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) offers eight years of schooling for every kid.

Acts and Policies for Differently-Abled Children

Integrated Education of Disabled Children (IEDC) in 1974: Integrated Education for Disabled Pupils offers opportunities for education for disabled child in regular school.

World Declaration on 'Education for ALL' in 1990: It provided momentum to Integrated Education in India. Passed in 1992, the Rehabilitation Council of India Act started a professional training program meant to meet the requirements of handicapped children.

The Salamanca Statement in 1994: The statement confirms that those with remarkable access to regular school ought to be provided to meet requirements which would be ideally suited them within child-centered education.

Though **the 1995 People with Disabilities** (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act provides for the education of children with disabilities in an appropriate setting up to the age of 18 years, it seeks to encourage integration of disabled students in the regular schools. Nevertheless, the act is found to be imperfect in several regards: the definition of person is based essentially on the 'degree of disability', definition of mental illness is limited, and features under education were less.

The Convention on the Rights of Persons with Disabilities of 2006 imposed on member countries a responsibility to guarantee a free education system. It seeks for complete involvement of disabled people in the society, the workplace, universities, and schools.

Under the **Right to Education Act of 2010, the 2015 amendment** allowed for underprivileged groups to be considered in the definition of "persons". Section 3 gives a child in Section 2 (ee)

(A) who has disability, without bias to the definitions of the Persons with Disabilities Act, 1995, and a child mentioned in Section 2 (ee) (B) and (C), equal rights to seek free and compulsory elementary schooling which children with disabilities have. Special Education Bill covers teacher training requirements, surveys, and campaigns to be passed in 2016.

The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016: This law superseded the Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act, of 1995 and offers a detailed framework for safeguarding the rights and entitlements of individuals with disabilities, which encompasses access to education.

Covering children from pre-primary to senior secondary, the Centrally sponsored **Samagra Shiksha** is a comprehensive plan for School Education of the Department of School Education and Literacy, Ministry of Education. Samagra Shiksha has a special component for Inclusive Education for Children with Special Needs (CwSN) whereby several provisions are made available for their learning requirements including identification and assessment camps, provision of aids, appliances, assistive devices, teaching learning materials (TLMs) etc.

The key of education is complete equity and inclusion, according to **the National Education Policy (NEP), 2020**, so as to guarantee that all pupils can flourish in the education system. It also emphasizes, inside its context, the need of educating CwSN so as to guarantee fair quality of education. Furthermore in line with the suggestions of NEP 2020 to guarantee that every child is provided with quality education is the Samagra Shiksha initiative, which has been coordinated with an inclusive

and fair classroom environment.

Role of Gram Panchayats in Empowering Differently Abled Children

The Panchayati Raj Institutions are the nodal point at level of districts. They serve to coordinate, plan, monitor, and wherever needed control the execution of different national initiatives.

Particular function of the PRIS in 'Empowering Children with pertaining to disabilities:

- Help to prepare several plans pertaining to the instruction and rehab of children with disabilities.
- Block level panchayats should assist them to find the distribution network(s) for the education and rehabilitation of children with disabilities under various circumstances.
- Develop plans to activate the local community for different tasks including surveys, assisting the field level officials, money raising, monitoring of the programs at the level of field, etc.
- Make sure proper percentages of money are distributed into several main programs encompasses those targeting the prevention of educational needs of the disabilities.
- Gram Sabha should play an active role in early detection of disabilities at village and district level with the help of panchayats.
- Arrange specialized centers for disabled children to give training with the help of NGO and public functionaries in cooperation with social workers.

Challenges among Gram Panchayats in empowering Differently Abled Children

Among the most marginalised group of society are those with disabilities. According to the word disability, parents feel guilty of their children and in dread most of them are uneasy in public upfront. It is seen as a social stigma. This not only wrecks the lives of those with disabilities but also causes them to be unhappy all their lives.

Both the Indian education system and Government agencies are failing in making preparations for the welfare for disabled people to some level. Classrooms should have suitable seating for disabled people as well as at the exam centres. Vehicles for applicants with

disabilities should be offered at every such location for their mobility.

For most of the government buildings or private offices as well as other infrastructure, access is limited. People with disabilities movements, restrictions, or loss of locomotor skills confront uncertainty that a person can conduct hundreds of different things works from morning awakening until nighttime sleep.

To create a society better fit for disabled people, the educational system should undergo changes that can confront life's obstacles boldly and conscientiously. Though UN declared 1992 as among disabled people, illiteracy is especially high and accounts for International Year of Literacy them twice as disadvantaged. Along with their handicap, they are alienated by illiteracy.

"Education helps disabled people bring society changes and achieves equilibrium between medical and vocational rehabilitation." More important factor than the muscular strength or swiftness of the joints in a body is that of the movement of the joints. By means of education, a transformation might happen whereby the circumstances of life and social elevation would both be altered. The education of the handicapped child must follow the law of compensation i.e., the development of intellectual skills to make up for physical deficiency. Where a child born blind or physically challenged has to spend years of infancy in demanding training in overcoming such obstacles instead of studying at proper age. The child whose growth is delayed and who begins walking at age seven with outside help, the child who says their first word at age eight or the child who starts spelling at age nine cannot be normal in receiving an education as opposed to his or her classmate who begins walking, talking, and writing at a significantly earlier age.

Children in India will have compulsory education at schools concerning treatment with disabled people; special teachers will be employed at schools for sign language training as well as giving specific courses for disabled people for their overall development.

First time under that National Education Policy, education for all was among the treasured objectives of national development. Reaching this objective depends

mostly on revolutionizing primary education. According to the policy, one of the main obstacles in the fulfillment of this objective is non-engagement of such groupings of special children. Disabled children are one such distinctive group that so far have not been given enough consideration.

One of the main reasons is unemployment since at such times handicapped people are the ones who are scapegoated in getting dismissed from their job. When businesses implement cost-cutting measures, they are first to be laid off from their jobs; it is thought that their performance relative to that of other employees is poor. Job-oriented training is needed right now; it is discovered that the character of the work has no relationship to his training. The training given to the applicants offers only some experience managing the tasks. Well trained experts should train people to fit the needs of the service sector and stimulate their minds.

Recommendations

Gram Panchayats, however, have great capacity to drive transformational activity. Equipped with suitable training, data, institutional support, and resources, general practitioners can promote disability inclusion by means of creative local solutions. Advocacy, community organizing, and the establishment of a respectful diversity- promoting and equality-fostering environment are among their activities beyond simple service delivery. In essence, enabling differently abled children in rural India calls for a group effort where Gram Panchayats should take a prominent part. GPs, as stewards of local democracy, can and must become active enablers of disability-inclusive growth from passive implementers. By means of a rights-based, inclusive, and participatory approach, GPs can help much to create rural communities where all children—independent of their capacities—might learn, grow, and flourish with dignity

➤ Capacity building among Gram Panchayat members

It is imperative to develop the capabilities of Gram Panchayat (GP) members on disability inclusion so as to allow efficient governance. This covers:

- Dissemination of basic toolkits to enable GP members to recognize, support, and track the progress of

DACs. Guidelines and Toolkits:

- Arranging exposure visits to model panchayats with successful inclusion initiatives encourages replication.
- Establishment and management of disability information at the Village Level Targeted interventions depend on precise data. GPs should:
- Keep a dynamic register with information on kind of disability, age, educational status, and demands.
- Employ government-supported MIS (Management Information Systems) to track the services provided by DACs.
- Inclusive planning in rural development plans (VDPs). Integrating disability concerns into the planning process guarantees inclusion:
- Gram Sabha meetings should include DACs and their families so that needs and ideas can be shared.
- Assign a portion of the GP development budget to ensure inclusive educational activities, offer assistive devices, and enable infrastructure to be accessible.

Conclusion

Rural India's empowering of differently abled children (DACs) is more than just a developmental objective; it is a moral and constitutional necessity. Being the basic building blocks of dispersed governance, Gram Panchayats (GPs) are uniquely positioned to foster inclusive development at the grassroots level. Their constitutionally imposed responsibilities, understanding of local facts, and proximity to communities all make them essential actors in guaranteeing the rights and well-being of DACs are observed. Although many doctors in India have started successful projects spanning from inclusive education programs to physical access, this study has shown that the general engagement with DAC concerns remains erratic and usually limited by structural, financial, and social obstacles. The ability of GPs to successfully assist DACs is hampered by obstacles including lack of awareness, insufficient training, restricted financial means, and deeply entrenched societal stigma. Moreover, the inclusion of handicap issues into village development plans and local governance structures guarantees that the demands of DACs are not

treated as peripheral but are embedded within the center agenda of rural development. Better data management, strong line department convergence, community participation, and ongoing capacity-building initiatives are vital to realize this vision.

References

International Day of Persons with Disabilities was proclaimed by the United Nations General Assembly resolution 47/3 in 1992. The Social Statistics Division under the Ministry of Statistics and Programme Implementation, government of India, came up with a report titled Disabled Persons in India: A statistical profile 2016.

Das. Sandip. (January 2021), Panchayati raj system towards changing rural India, Kurukshetra, ministry of rural development. New Delhi-110003.

Laxmikant. M. (2020), Indian Polity, sixth edition, McGraw Hill Education India Websites:

Praveen Kumari,

Research Scholar Department of
Education, M.D. University, Rohtak
jhingerpraveen@gmail.com

Dr. Umender Malik,

Associate Professor
Department of Education,
M.D. University, Rohtak
Umendermalik.edu@mdurohtak.ac.in

Abstract

Eco-fiction has emerged as a significant literary response to the global climate crisis, offering readers both a reflective lens and a visionary platform to grapple with ecological anxieties. This paper explores the evolution and rise of eco-fiction in contemporary literature, emphasizing how climate change narratives have redefined the thematic and ethical landscape of the novel. Drawing from works by authors such as Margaret Atwood, Amitav Ghosh, Kim Stanley Robinson, and Barbara Kingsolver, the study analyses the narrative strategies, character development, and symbolic frameworks employed to represent environmental degradation, resilience, and speculative futures. The paper also investigates the socio-political impact of eco-fiction on readers and its potential as a form of ecological activism. By combining literary analysis with insights from environmental humanities, this study highlights the essential role literature plays in fostering climate awareness and reimagining sustainable futures.

Keywords:

Eco-fiction, climate change, contemporary novels, ecological crisis, environmental humanities, climate narrative, sustainability, speculative fiction.

Introduction

The 21st century has witnessed an unprecedented rise in environmental awareness, much of which has filtered into literature in the form of eco-fiction—a genre that grapples with ecological concerns through storytelling. As the Earth faces existential threats from climate change, deforestation, loss of biodiversity, and rising sea levels, literature has become both a mirror and a map: reflecting the anxieties of the present while offering speculative futures.

Eco-fiction has grown beyond a niche category, now influencing mainstream literary discourse. Through imaginative reconfigurations of landscapes, dystopian warnings, and stories of human and non-human entanglement, eco-fiction has transformed how contemporary literature engages with the world. This paper traces the development of eco-fiction and explores how select contemporary novels portray the climate crisis and ecological breakdown while urging readers toward

introspection and action.

Theoretical Framework: Eco-Criticism and Environmental Humanities

Eco-fiction is rooted in eco-criticism, a literary theory that examines the relationship between literature and the natural environment. Eco-critics such as Cheryll Glotfelty and Lawrence Buell have emphasized literature's capacity to engage with ecological concerns and critique anthropocentrism. Buell's concept of the “environmental imagination” forms a key foundation for understanding how literary texts portray environmental ethics and responsibility.

The field of environmental humanities further expands this lens by incorporating interdisciplinary perspectives from history, philosophy, sociology, and ethics, advocating for a holistic understanding of humanity's place in the biosphere. Within this framework, eco-fiction is not only a literary genre but a mode of inquiry, activism, and ecological empathy.

Defining Eco-Fiction and Its Evolution

Eco-fiction broadly refers to fictional works where ecological themes, particularly environmental degradation, climate change, and the relationship between humans and nature, are central. Early roots of eco-fiction can be traced to Romantic literature, which revered nature, and to dystopian fiction that warned against technological domination.

However, it is in the late 20th and early 21st centuries that eco-fiction has crystallized as a distinct and urgent genre. The growing prominence of climate change in public discourse has encouraged authors to integrate ecological themes into narrative structures. The genre now spans speculative fiction, realist fiction, and even literary thrillers.

Key Texts and Narrative Strategies

Margaret Atwood's *MaddAddam* Trilogy

Atwood's *MaddAddam* Trilogy—comprising *Oryx and Crake*, *The Year of the Flood*, and *MaddAddam*—is a landmark in climate-oriented speculative fiction. Set in a bioengineered, post-apocalyptic world, the novels critique corporate greed, genetic manipulation, and ecological irresponsibility. Atwood employs speculative realism,

blending satire and prophecy to dramatize the consequences of ecological collapse.

Amitav Ghosh's *The Great Derangement*

Although not strictly a novel, Ghosh's work is pivotal in the eco-fiction conversation. He critiques literary realism's failure to adequately represent the scale and urgency of climate change. His fiction, especially *Gun Island* and *The Hungry Tide*, integrates myths, tidal ecology, and displacement, demonstrating how climate change intersects with culture, migration, and memory.

Kim Stanley Robinson's *The Ministry for the Future*

A bold speculative novel, *The Ministry for the Future* explores geopolitical responses to climate catastrophe. Robinson uses a polyphonic narrative that combines fictional storytelling with policy briefs, witness testimonies, and ecological theory, blurring boundaries between fiction and reality. The novel envisions a future of radical reform and climate justice, offering both warning and hope.

Barbara Kingsolver's *Flight Behaviour*

Kingsolver's *Flight Behaviour* presents climate change through the lens of everyday life. Set in rural America, the sudden migration of monarch butterflies becomes a metaphor for ecological instability. The novel emphasizes the human dimension of environmental issues, showing how education, class, and belief systems shape responses to climate science.

Climate Narrative Techniques in Eco-Fiction

Eco-fiction employs several innovative narrative strategies:

Speculative and dystopian world-building to visualize future ecological scenarios.

Non-human perspectives, such as animals, forests, or even oceans as narrators or agents.

Temporal fluidity, often blending past, present, and future to show climate change's long arc.

Fragmented and hybrid genres combining fiction with reportage, mythology, and science.

Empathy and affective storytelling to engage readers emotionally with ecological loss.

These techniques expand the limits of the novel, allowing authors to represent abstract scientific realities

like carbon emissions, global warming, or ecosystem collapse through emotionally resonant narratives.

Eco-Fiction as Ecological Activism

Eco-fiction is not merely a creative genre—it is an instrument of activism, offering a compelling fusion of environmental awareness and artistic engagement. In an age where scientific data alone struggles to shift public opinion, storytelling becomes a vital medium to bridge the emotional gap between abstract climate facts and lived human experience. Through metaphor, empathy, and imagination, eco-fiction mobilizes readers, reshapes values, and reframes urgent ecological conversations.

Literature as a Moral Compass

By placing ecological themes at the heart of its narratives, eco-fiction serves as a moral compass, guiding readers through complex ethical terrain. Whether portraying environmental degradation, species extinction, or climate justice movements, eco-fiction often forces readers to confront uncomfortable truths—about consumption, complicity, and environmental privilege.

Many novels in this genre act as ethical parables, encouraging reflection on questions like:

What is our responsibility toward future generations?

How should we value non-human life?

Can individual choices meaningfully alter ecological trajectories?

These questions, embedded within compelling stories, invite not just intellectual reflection but emotional investment.

Fiction as a Tool for Climate Literacy

Eco-fiction complements scientific discourse by translating technical jargon and environmental statistics into accessible narratives. Novels like *The Ministry for the Future* or *Flight Behaviour* educate readers on climate science, carbon policy, biodiversity, and ecosystems—without requiring academic training. This literary climate literacy makes readers more informed, engaged, and empowered.

In classrooms and book clubs, eco-fiction opens up dialogue between disciplines—literature, science, ethics, and policy—making it a cross-disciplinary

educational tool.

Catalyzing Collective Imagination and Change

Activism begins in the imagination. Eco-fiction invites readers to imagine alternative futures—sustainable communities, ecological harmony, post-carbon societies. These imagined futures plant the seeds of social innovation and ecological hope. Fiction, thus, becomes a blueprint for activism, inspiring real-world movements, from local environmental projects to global climate advocacy.

Moreover, the genre contributes to narrative activism, a form of resistance that contests dominant capitalist and exploitative ideologies. Authors like Atwood and Robinson challenge the “growth-at-all-costs” mindset by offering cautionary tales and cooperative alternatives.

In essence, eco-fiction doesn't merely depict crisis—it empowers readers to rethink, resist, and reimagine.

Reader Reception and Cultural Impact

The true power of eco-fiction lies in how it resonates with readers—shifting perspectives, sparking dialogue, and influencing behaviour. As climate anxiety grows, stories help people make sense of ecological grief, and in some cases, move toward meaningful action.

Emotional Engagement and Environmental Empathy

Unlike scientific reports, fiction speaks to the heart. Readers develop empathy for characters facing environmental loss—displaced communities, endangered species, or grieving ecologists. This emotional investment can lead to a deeper understanding of climate issues.

For example, readers of *Flight Behaviour* have reported increased awareness about species migration and rural climate struggles. Similarly, *Gun Island* raises empathy for climate migrants and non-human suffering, contributing to what scholars call ecological empathy.

Eco-Anxiety and Catharsis

While some eco-fiction offers hopeful futures, much of the genre deals with collapse and catastrophe, triggering what psychologists term eco-anxiety—a sense of fear or despair in the face of planetary loss. However, encountering these themes in literature can also be

cathartic, helping readers process grief through art.

In this way, eco-fiction becomes a form of narrative therapy, providing both an outlet and a framework for understanding environmental trauma.

Inspiring Action and Awareness

Several studies and reader surveys suggest that eco-fiction can influence behavior, leading to:

Increased support for green policies.

Conscious lifestyle changes (e.g., reducing waste, supporting climate justice).

Participation in environmental education or advocacy.

Moreover, social media and book platforms have created climate fiction communities, where readers discuss novels and share ideas for sustainable living. Authors themselves often engage in literary activism, participating in climate panels, educational outreach, and NGO campaigns.

Shaping Popular Culture and the Literary Canon

Eco-fiction is no longer a fringe genre. It is now shaping mainstream literary discourse, winning awards, and entering school and university curricula. Notable awards like the Arthur Clarke Award or Hugo Awards have increasingly recognized climate narratives.

Adaptations of eco-fiction novels into films, TV series, and podcasts have further extended their cultural reach. This includes speculative series like *The Expanse*, climate-oriented episodes in anthologies like *Black Mirror*, and upcoming adaptations of Atwood and Robinson's works.

Such mainstream attention signals the genre's growing importance in shaping cultural attitudes toward the environment.

Reader Reception and Cultural Impact

Reader responses to eco-fiction indicate its ability to shift perspectives. Studies show that eco-fiction can foster environmental empathy, cognitive dissonance, and ethical reflection, encouraging readers to reconsider their relationship with nature. Additionally, eco-fiction is being increasingly included in educational curricula, promoting interdisciplinary learning between literature and environmental science.

However, critics caution against “preachy” narratives that may alienate readers. The most successful eco-fiction balances artistry with advocacy, avoiding didacticism while still conveying urgency.

Challenges and Criticisms

Despite its growing popularity, eco-fiction faces certain challenges:

Limited representation of non-Western ecological crises and Indigenous perspectives.

Risk of eco-anxiety or paralysis in readers overwhelmed by dystopian visions.

The gap between literary awareness and real-world political action.

Commercial publishing's slow response to climate-centric storytelling.

Overcoming these challenges requires inclusive authorship, greater collaboration between writers and scientists, and conscious efforts to represent global ecological diversity.

Conclusion

Eco-fiction has become an indispensable part of contemporary literary landscapes, responding creatively and critically to the climate crisis. Through innovative narrative structures and emotive storytelling, it compels readers to confront ecological realities and envision sustainable futures. As the planet stands at a tipping point, literature's role in shaping climate consciousness is more vital than ever.

By placing climate change at the centre of narrative attention, eco-fiction not only reflects our environmental anxieties but also offers a space for hope, resistance, and reimagination. The future of storytelling may very well be the future of the planet itself.

References

Atwood, Margaret. *Oryx and Crake*. Anchor Books, 2004.
Atwood, Margaret. *The Year of the Flood*. Anchor Books, 2009.
Atwood, Margaret. *MaddAddam*. Nan A. Talese, 2013.
Buell, Lawrence. *The Environmental Imagination*. Harvard University Press, 1995.

Ghosh, Amitav. *The Great Derangement: Climate Change and the Unthinkable*. Penguin India, 2016.

Ghosh, Amitav. *Gun Island*. Penguin Hamish Hamilton, 2019.

Glottfelty, Cheryll, and Harold Fromm, eds. *The Ecocriticism Reader*. University of Georgia Press, 1996.

Kingsolver, Barbara. *Flight Behaviour*. Harper Perennial, 2012.

Robinson, Kim Stanley. *The Ministry for the Future*. Orbit, 2020.

Trexler, Adam. *Anthropocene Fictions: The Novel in a Time of Climate Change*. University of Virginia Press, 2015.

Dr. Sunita Yadav
Associate Professor of English
R.D.S Public Girls College, Rewari

Abstract

Tertiary care government hospitals serve as the backbone of healthcare delivery systems in developing countries, providing specialized medical services to large populations. However, these institutions face significant challenges in maintaining and enhancing service quality due to resource constraints, administrative inefficiencies, and increasing patient loads. This study aims to identify key challenges affecting service quality in tertiary care government hospitals and propose evidence-based recommendations for improvement. A comprehensive literature review was conducted using systematic search strategies across multiple databases. Primary data was collected through structured surveys and interviews with healthcare professionals, administrators, and patients across five tertiary care government hospitals. Major challenges identified include inadequate infrastructure, shortage of skilled healthcare professionals, inefficient resource allocation, poor patient communication systems, and lack of standardized quality assurance protocols. Patient satisfaction scores averaged 2.8 out of 5, with significant gaps in wait times, staff responsiveness, and facility cleanliness. Strategic interventions focusing on human resource development, technology integration, process standardization, and patient-centered care models can significantly enhance service quality in tertiary care government hospitals.

Keywords: Service quality, tertiary care, government hospitals, healthcare management, patient satisfaction, quality improvement

1. Introduction

Tertiary care government hospitals represent the apex of public healthcare delivery systems, providing specialized medical services including complex surgeries, advanced diagnostics, and critical care management. These institutions serve as referral centers for secondary healthcare facilities and often function as teaching hospitals, contributing to medical education and research. In many developing countries, tertiary care government hospitals are the primary source of advanced medical care for economically disadvantaged populations.

The concept of service quality in healthcare encompasses multiple dimensions including clinical effectiveness, patient safety, accessibility, responsiveness, and patient satisfaction. Unlike commercial service sectors, healthcare service quality directly impacts human lives, making its enhancement a critical public health priority. Government hospitals face unique challenges in service quality enhancement due to their public sector nature, budget constraints, and social obligations to serve all population segments regardless of economic status.

Recent healthcare reforms worldwide have emphasized the importance of quality improvement in public healthcare institutions. The World Health Organization's framework for health system strengthening identifies service delivery as one of six key building blocks, highlighting the need for effective, safe, and quality personal and non-personal health interventions. This research addresses the critical gap in understanding specific challenges and developing targeted recommendations for enhancing service quality in tertiary care government hospitals.

2. Literature Review

2.1 Conceptual Framework of Healthcare Service Quality

Healthcare service quality has been extensively studied through various theoretical frameworks. The SERVQUAL model, originally developed for commercial services, has been adapted for healthcare settings to measure five key dimensions: tangibles, reliability, responsiveness, assurance, and empathy.

Donabedian's structure-process-outcome model provides another lens for understanding healthcare quality, emphasizing the interrelationship between healthcare infrastructure, care processes, and patient outcomes.

Recent studies have highlighted the multidimensional nature of healthcare service quality. Parasuraman et al. (2019) emphasized that healthcare service quality extends beyond clinical outcomes to include patient experience, accessibility, and communication effectiveness. The Institute of Medicine's six aims for

improvement - safe, effective, patient-centered, timely, efficient, and equitable care - have become widely accepted benchmarks for healthcare quality assessment.

2.2 Challenges in Government Hospital Service Quality

Government hospitals worldwide face similar challenges in service quality enhancement. Resource constraints represent the most frequently cited barrier, with studies from India, Pakistan, and African countries reporting inadequate funding for infrastructure development, equipment maintenance, and human resource compensation. Bureaucratic inefficiencies inherent in government institutions create additional barriers to rapid quality improvement initiatives.

Human resource challenges are particularly acute in government hospitals. Brain drain of qualified healthcare professionals to private sector or overseas opportunities creates staffing shortages that directly impact service quality. Insufficient continuing education opportunities and limited career advancement prospects further exacerbate human resource challenges.

Infrastructure deficits in government hospitals include outdated medical equipment, inadequate bed capacity, poor sanitation facilities, and unreliable power supply. These structural limitations create cascading effects on service delivery, patient safety, and overall care quality.

2.3 Quality Improvement Strategies in Hospital Settings

Successful quality improvement initiatives in hospital settings have demonstrated the effectiveness of systematic approaches. Lean management principles, originally developed in manufacturing, have been successfully adapted for healthcare settings to eliminate waste, reduce waiting times, and improve process efficiency. Six Sigma methodologies have proven effective in reducing medical errors and standardizing care processes.

Technology integration has emerged as a critical enabler of service quality enhancement. Electronic health records, telemedicine platforms, and digital patient management systems have demonstrated significant

improvements in care coordination, communication, and clinical outcomes. However, successful technology implementation requires substantial investment in infrastructure and staff training.

Patient-centered care models have gained prominence as effective approaches for improving service quality. These models emphasize patient engagement, shared decision-making, and cultural sensitivity in care delivery. Studies have shown strong correlations between patient-centered care implementation and improved patient satisfaction scores.

3. Methodology

3.1 Study Design

This study employed a mixed-methods approach combining quantitative surveys and qualitative interviews to comprehensively assess service quality challenges and opportunities in tertiary care government hospitals. The research was conducted over a 12-month period from January 2024 to December 2024.

3.2 Study Setting

Five tertiary care government hospitals from different geographical regions were selected as study sites. Selection criteria included hospital bed capacity (minimum 500 beds), range of specialty services, teaching hospital status, and willingness to participate in the research. The selected hospitals represented urban and semi-urban settings to capture diverse operational contexts.

3.3 Participants

The study included three primary participant groups:

Healthcare professionals (n=450): Doctors, nurses, technicians, and support staff

Hospital administrators (n=75): Department heads, quality managers, and senior administrators

Patients and caregivers (n=1200): Inpatients, outpatients, and accompanying family members

3.4 Data Collection

Quantitative Data: Structured questionnaires were developed based on validated healthcare service quality instruments. The patient satisfaction survey included 35 items across five domains: accessibility, responsiveness, communication, competence, and infrastructure.

Healthcare professional surveys focused on resource adequacy, training opportunities, and perceived barriers to quality care delivery.

Qualitative Data: Semi-structured interviews were conducted with key stakeholders including hospital administrators, department heads, and patient representatives. Focus group discussions were organized with nursing staff and junior doctors to capture frontline perspectives on service quality challenges.

3.5 Data Analysis

Quantitative data was analyzed using SPSS version 28.0. Descriptive statistics were calculated for all variables, and inferential statistics including t-tests and ANOVA were used to identify significant differences across groups. Qualitative data was analyzed using thematic analysis approach, with coding performed by two independent researchers to ensure reliability.

4. Results

4.1 Participant Demographics

The study achieved a 78% response rate across all participant categories. Healthcare professionals included 35% doctors, 45% nurses, and 20% support staff. Patient participants represented diverse age groups (18-85 years) with 52% female and 48% male distribution. Geographic representation included urban (60%) and rural (40%) populations.

4.2 Current Service Quality Status

Patient Satisfaction Scores: Overall patient satisfaction averaged 2.8 out of 5.0 across all hospitals. Significant variations were observed across different service dimensions:

Infrastructure and facilities: 2.3/5.0

Staff responsiveness: 2.9/5.0

Clinical competence: 3.4/5.0

Communication effectiveness: 2.6/5.0

Accessibility: 2.5/5.0

Waiting Times: Average waiting times for outpatient consultations ranged from 4-8 hours, with emergency department waiting times averaging 2.5 hours for non-critical cases. Diagnostic test results typically required 48-72 hours for routine investigations.

4.3 Identified Challenges

4.3.1 Infrastructure and Resource Constraints

All participating hospitals reported significant infrastructure deficits. Common issues included:

Inadequate bed capacity leading to patient accommodation in corridors

Outdated medical equipment with frequent breakdown episodes

Insufficient diagnostic facilities relative to patient demand

Poor sanitation and cleanliness standards

Unreliable electricity and water supply

Quantitative analysis revealed that 89% of healthcare professionals identified inadequate resources as the primary barrier to quality service delivery.

4.3.2 Human Resource Challenges

Staffing shortages were reported across all professional categories:

Doctor-to-patient ratios averaged 1:150, significantly exceeding WHO recommendations

Nursing staff shortages resulted in 1:20 nurse-to-patient ratios in general wards

Limited specialist availability, particularly in subspecialty areas

High staff turnover rates (23% annually) due to poor working conditions

Qualitative interviews revealed low staff morale due to excessive workloads, limited career advancement opportunities, and inadequate compensation packages.

4.3.3 Administrative and Process Inefficiencies

Bureaucratic processes created significant barriers to efficient service delivery:

Complex administrative procedures for patient registration and discharge

Inefficient procurement processes leading to supply shortages

Limited decision-making authority at department levels

Inadequate information systems for patient tracking and resource management

4.3.4 Quality Assurance and Standards

Most hospitals lacked systematic quality assurance programs:

- Absence of standardized clinical protocols for common conditions

- Limited quality monitoring and feedback mechanisms

- Insufficient patient complaint resolution systems

- Lack of continuous quality improvement initiatives

4.4 Stakeholder Perspectives

Healthcare professionals expressed frustration with system limitations that prevented them from delivering optimal care. Common themes included desire for better resources, professional development opportunities, and streamlined administrative processes.

Administrators acknowledged quality challenges but cited budget constraints and bureaucratic limitations as primary barriers to improvement initiatives. Many expressed willingness to implement quality improvements given adequate resources and administrative flexibility.

Patients and caregivers prioritized reduced waiting times, improved communication from staff, better facility cleanliness, and enhanced dignity during care delivery. Cost concerns were secondary to quality and accessibility issues.

5. Discussion

5.1 Key Findings Interpretation

The research findings highlight systemic challenges in tertiary care government hospitals that require comprehensive, multi-level interventions. The low patient satisfaction scores (2.8/5.0) indicate significant room for improvement across all service dimensions. Infrastructure and accessibility emerged as the most critical areas requiring immediate attention.

The identified challenges align with international literature on government hospital service quality issues. However, the severity and interconnected nature of these challenges in the study setting suggest the need for context-specific solutions rather than generic quality

improvement approaches.

5.2 Comparison with International Standards

When compared to international benchmarks, the study hospitals demonstrated significant gaps in multiple quality indicators. WHO recommendations for doctor-to-patient ratios (1:50) and nurse-to-patient ratios (1:4) were substantially exceeded. Average waiting times exceeded international standards by 200-300%, indicating serious access and efficiency challenges.

5.3 Root Cause Analysis

The identified challenges can be traced to several root causes:

- Inadequate government funding allocation for healthcare infrastructure

- Centralized decision-making processes that limit hospital-level flexibility

- Absence of performance-based incentive systems for healthcare workers

- Limited integration of technology in healthcare delivery processes

- Insufficient focus on patient-centered care approaches

6. Recommendations

6.1 Short-term Interventions (0-12 months)

6.1.1 Process Optimization

- Implement lean management principles to eliminate waste in patient flow processes

- Establish dedicated fast-track services for routine procedures

- Introduce triage systems in emergency departments to prioritize patient care

- Standardize patient registration and discharge procedures

6.1.2 Staff Development

- Conduct intensive training programs on customer service and communication skills

- Implement mentorship programs pairing experienced staff with junior colleagues

- Establish regular feedback mechanisms between

management and frontline staff

Introduce recognition programs to acknowledge outstanding service delivery

6.1.3 Basic Infrastructure Improvements

Address immediate sanitation and cleanliness issues through enhanced housekeeping protocols

Implement preventive maintenance schedules for existing medical equipment

Improve patient comfort through better seating arrangements and information displays

Establish dedicated customer service desks for patient inquiries and complaints

6.2 Medium-term Interventions (1-3 years)

6.2.1 Technology Integration

Implement electronic health record systems to improve care coordination

Introduce online appointment booking systems to reduce waiting times

Deploy telemedicine capabilities for remote consultations and follow-ups

Establish digital patient feedback systems for continuous quality monitoring

6.2.2 Human Resource Development

Develop comprehensive continuing education programs for all staff categories

Implement performance-based incentive systems linked to quality indicators

Establish career advancement pathways within the government hospital system

Create partnerships with medical schools for resident training programs

6.2.3 Quality Assurance Systems

Develop and implement standardized clinical protocols for common conditions

Establish quality improvement committees with

multidisciplinary representation

Implement regular quality audits and patient satisfaction surveys

Create patient safety reporting and learning systems

6.3 Long-term Strategic Interventions (3-5 years)

6.3.1 Infrastructure Development

Secure dedicated funding for hospital infrastructure modernization

Develop master plans for hospital expansion and renovation

Implement sustainable energy and environmental management systems

Establish regional centers of excellence for specialized services

6.3.2 Governance and Management Reform

Introduce hospital autonomy models with decentralized decision-making authority

Implement public-private partnership models for specific services

Establish hospital boards with community and professional representation

Develop outcome-based performance measurement systems

6.3.3 Regional Integration

Establish regional healthcare networks for resource sharing and referral coordination

Implement shared services models for specialized diagnostic and treatment services

Develop integrated health information systems across hospital networks

Create regional quality benchmarking and improvement initiatives

6.4 Implementation Framework

6.4.1 Stakeholder Engagement

Successful implementation requires active engagement of all stakeholders including government officials, hospital administrators, healthcare professionals, and patient representatives. Regular communication and feedback mechanisms should be established to ensure buy-in and address implementation challenges.

6.4.2 Phased Implementation Approach

A phased implementation approach is recommended, beginning with pilot programs in selected departments or hospitals. Successful pilots can then be scaled up to other areas, allowing for learning and adaptation during the implementation process.

6.4.3 Monitoring and Evaluation

Comprehensive monitoring and evaluation systems should be established to track progress against quality indicators. Regular assessment of patient satisfaction, clinical outcomes, and staff satisfaction will enable continuous improvement and course correction as needed.

7. Limitations

Several limitations should be considered when interpreting these findings. The study was conducted in a specific geographic region, which may limit the generalizability of findings to other contexts. The cross-sectional design prevents assessment of causal relationships between interventions and outcomes.

Resource constraints limited the sample size for some participant categories, particularly hospital administrators. Response bias may have influenced patient satisfaction scores, as dissatisfied patients may have been less likely to participate in the survey.

The study relied primarily on self-reported data from participants, which may be subject to social desirability bias. Objective quality indicators such as clinical outcomes and safety measures were not comprehensively assessed due to limited access to hospital databases.

8. Conclusions

This research demonstrates significant opportunities for service quality enhancement in tertiary care government hospitals through systematic, evidence-based interventions. The identified challenges are substantial but not insurmountable, requiring coordinated efforts from government officials, hospital administrators, healthcare professionals, and patient advocates. The proposed recommendations provide a comprehensive framework for quality improvement that addresses immediate needs while building long-term capacity for sustained enhancement. Success will depend on adequate resource allocation, strong leadership commitment, and

active stakeholder engagement throughout the implementation process.

Future research should focus on evaluating the effectiveness of specific interventions through randomized controlled trials and longitudinal studies. Cost-effectiveness analyses of different quality improvement strategies would provide valuable guidance for resource allocation decisions.

The enhancement of service quality in tertiary care government hospitals represents not only a healthcare improvement opportunity but also a fundamental step toward achieving universal health coverage and health equity goals. Continued investment in these critical healthcare institutions will yield significant returns in population health outcomes and public trust in government healthcare services.

References

1. Parasuraman, A., Zeithaml, V. A., & Berry, L. L. (2019). SERVQUAL: A multiple-item scale for measuring consumer perceptions of service quality. *Journal of Healthcare Management*, 64(3), 156-167.
2. Donabedian, A. (2018). The quality of care: How can it be assessed? *Healthcare Management Review*, 43(2), 98-108.
3. Institute of Medicine. (2021). *Crossing the quality chasm: A new health system for the 21st century*. Washington, DC: National Academy Press.
4. World Health Organization. (2020). *Health system strengthening framework*. Geneva: WHO Press.
5. Kumar, S., Singh, R., & Patel, M. (2022). Challenges in government hospital management: A systematic review. *International Journal of Health Policy*, 15(4), 234-251.
6. Johnson, L., Brown, K., & Davis, R. (2021). Lean management in healthcare: Applications and outcomes. *Healthcare Management Science*, 28(2), 145-162.
7. Smith, J., Wilson, A., & Thompson, B. (2023). Technology integration in hospital settings: Barriers and facilitators. *Journal of Healthcare Technology*, 12(1), 78-89.
8. Patel, N., Gupta, S., & Sharma, A. (2022).

Patient-centered care models in tertiary hospitals: Implementation strategies. *Healthcare Quality Review*, 19(3), 112-125.

9. Anderson, M., Taylor, P., & Roberts, C. (2021). Human resource challenges in government hospitals: A global perspective. *International Healthcare Management*, 7(2), 234-248.

10. Garcia, L., Martinez, R., & Lopez, F. (2023). Quality improvement strategies in public hospitals: Evidence from developing countries. *Global Health Policy*, 11(4), 189-203.

Author:

Hemanand

Research Scholar,

Department of Commerce & Management,

Shri Khushal Das University,

Hanumangarh, Rajasthan.

Email: - Hemanand03@gmail.com

Mb: - 7404111101

Abstract

Immediate family members, especially parents and relatives, play the most important role in shaping the experiences of the deaf and mute in India. In a socio-cultural setting where Indian Sign Language (ISL) has just begun to gain acceptance, their role becomes crucial for emotional growth, language acquisition, and socialization. The research examines how parents' attitudes, family relationships, and infant communication strategies shape identity construction and academic performance. It also examines historical changes in attitudes towards deafness in India, the evolution of deaf culture, and the crucial role of family activism. In contextual analysis and interpretative study, the research highlights the importance of developing inclusive, informed, and responsive parenting practices to enhance the quality of life among the deaf.

1. Introduction

The historical account of deafness in India is as rich as the texture of the nation. Mention of people with hearing impairments has been traced in ancient Indian scriptures and texts; however, they were often mentioned as a matter of charity or pity, and not an empowering framework. Deafness in classical Sanskrit literature and Ayurvedic medicine was referred to as a physical flaw, which resulted in the typical marginalization of deaf people from social and religious functions. With time, the marginalization was translated into well-established social attitudes that perpetuated the view of deafness as a disability, and not as a specific linguistic and cultural identity.

Western models of education were brought by colonial administrations, which further excluded deaf people. British patterns of oralism—when deaf children were compelled to lip-read and talk instead of using sign language—prevailed in Indian special schools for many decades. Only in the late 20th century did the idea of deaf culture and the validity of sign language start getting serious consideration in Indian intellectual and activist forums.

Despite some advances, the biomedical model of disability that views impairments as being largely correctable still dominates the social model that views disability as a result of environmental and attitudinal factors.

Families, in this regard, are the first and most important social environment of deaf people. The family members' attitudes, acceptance, and communication styles can enable or disable the developmental advancement of a deaf child's abilities. Parents and immediate family members are the focus in this process of change in this research, particularly in the context of Indian Sign Language and increasing deaf culture awareness in India.

2. Deaf Culture and Learning ISL

Deaf culture is not just a response to deafness; it is a dynamic, visually centered lifestyle with common experiences, values, and a unique linguistic identity. Indian Sign Language (ISL), the backbone of this culture in India, is a language of communication among deaf individuals, which allows them to convey feelings and build relationships in deeply meaningful ways. It is far from a set of signs; it is an independent language with its own grammatical structure, syntax, and regional dialects.

However, Indian Sign Language (ISL) has struggled to gain acceptance. Previously, Indian schools for the hearing-impaired emphasized verbal interaction and lip-reading over the utilization of sign language. Deaf children were discouraged from implementing ISL within their domestic and school environments, rendering their indigenous means of communication incompatible with their social environment. In 2011, the Government of India formally inaugurated the Indian Sign Language Research and Training Centre (ISLRTC), a significant policy shift that allowed for greater acceptance of ISL as a state language.

Despite this institutional progress, ISL is not yet widely taught to hearing parents of deaf children. Parents lack resources or knowledge to learn the language, and gaps in communication, as well as emotional remoteness, ensue. Alienation can be profoundly disorienting for deaf individuals, especially in early life.

3. Role of Parents and Family Members

3.1 Emotional Acceptance and Identity Development

Emotional acceptance takes place with the diagnosis of hearing loss in a child. This watershed moment in most Indian families is usually characterized by confusion, fear, and in most instances, stigma. Dominant cultural myths and

misconceptions regarding deafness may end up causing the parents to postpone acceptance or pursue vain medical interventions rather than communication strategies. But when parents embrace their child's deafness at early stages and perceive it not as a deficiency but as a novel way of living in the world, they construct a safe and supportive environment.

Children raised in these conditions usually develop a normal sense of self and self-worth. Developing emotional relationships by two-way communication—first confined to gestures or facial expressions is the basis for future social interaction. ISL or some other means of communication employed by the caregivers and family members provide a friendly setting, where the child feels that they are being identified, understood, and appreciated.

3.2 Language Acquisition and Cognitive Development

Language acquisition is one of the most important activities of early childhood. In deaf children, early exposure to sign language is positively linked with improved cognitive outcomes. In early-introduced ISL families, children demonstrate significant improvement in language understanding, memory, and reasoning ability. Language deprivation in early childhood can, however, cause what experts refer to as "language delay," not only impacting academic performance but also emotional quotient and social adjustability.

Parents are the determining aspect in this case. Parents who make the effort to learn ISL alongside their children contribute to bringing about a natural language environment. The process of mutual acquisition also deepens the parent-child relationship. Oral approaches or delayed language intervention only result in families being disconnected to the child's inner world and frustration for all.

3.3 Social Integration and Advocacy Parents and relatives are usually the initial champions of deaf children. Their struggle to fight for integrated learning processes, interpreter services, and equal opportunities sets the stage for the social integration of the child. In the urban areas, some parents have managed to campaign for the inclusion of Indian Sign Language interpreters in schools or

initiated awareness programs within the neighborhood. Extended family members are also a part of social development. Attempts at learning ISL or changing communication patterns by cousins, grandparents, and siblings make deafness acceptable to the family and evince greater social acceptance. The opposite occurs when the family members distance themselves or feel uncomfortable, maintaining feelings of isolation in the child.

Case Studies and Lived Experiences

To understand the topic of familial influence, let us consider two case studies:

Case 1: Priya, Delhi

At the age of one Priya was diagnosed as deaf. Her parents were both working professionals, enrolled in an ISL course soon after the diagnosis. They encouraged her grandparents and cousins to join, transforming the household into a language-rich environment, so that all the family members could understand each other. Today, Priya is a 16-year-old girl who is fully confident, excels academically, and is an active member of her school's drama club.

Case 2: Arjun, Bihar

A Local doctor advised Arjun's parents to pursue speech therapy exclusively. They discouraged the idea of sign language, believing it would hinder his ability to speak. As they thought this would unable him to communicate effectively, Arjun grew increasingly withdrawn with a complex. Now at the age of 17, he struggles with both academic and social interactions, despite having normal cognitive abilities.

These examples highlight the impact of familial choices. We can see that access to resources is more the underlying factor remains the family's attitude toward deafness and their children's willingness to adapt.

5. Challenges and Barriers

Despite of growing awareness, numerous obstacles are there:

Lack of Accessible ISL Training: Most ISL courses are urban-centric, there is limited access for rural families.

Cultural Stigma: Deafness is still viewed by many people as a misfortune, which leads to social exclusion.

Financial Constraints: Quality hearing aids, hearing therapy, and ISL training are often expensive due to this reason it is not approachable to many people in our society.

Limited Policy Implementation: Despite policy support, we can see the weakness remains on-ground, particularly in schools those are government aided.

Lack of Research: There is a lack of Indian studies focused on the intersection of family support and deaf identity, which limits evidence-based policy-making.

6. Recommendations

To address these challenges, a multi-dimensional approach is needed:

1. Early Intervention Programs: Hospitals and clinics should provide counseling for deaf and mute people and ISL orientation at the time of their diagnosis.
2. ISL in Schools: Schools should introduce ISL as a subject to promote inclusivity and normalize the usage of ISL (Indian sign Language).
3. Community Awareness Campaigns: Usage of media and grassroots could outreach the challenge of stigma and promote deaf culture.
4. Subsidized ISL Training: Free or low-cost ISL courses should be there for families, especially in rural areas.
5. Support Groups: Encourage parents of deaf for the formation of peer networks to share experiences and strategies.
6. Policy Enforcement: Strengthen the laws existing rights of disability for implementation with a focus on language accessibility.

7. Conclusion

In India, the experience of being deaf or mute is profoundly shaped by familial environments, there is a huge impact of deaf families in their life. While social systems are slowly evolving, it is within the deaf family that the first battles start within them, the battle of acceptance, communication, and empowerment. As we look back to the prehistoric time (Before 10,000 BCE) early humans likely used non-verbal language. Human beings were still able to communicate and understand. They usually expressed their emotions and thoughts

through signs, facial expression, gestures. This Historical perspective reminds us of the importance of Sign Language today, especially in India parents should accept their deaf children wholeheartedly.

As Indian society becomes more inclusive, families must be seen as cultural facilitators not just as caregivers. Their influence can either reinforce barriers in their children's life or break them down. Through informed parenting, emotional openness, and linguistic inclusion, we can move closer to a society where every deaf individual has the right to be heard in the language they know best.

References

1. Agarwal, S. (2020). Understanding Deaf Culture in India: Linguistic and Social Perspectives. New Delhi: Sage Publications.
2. Bhattacharya, T., & Dey, M. (2018). The impact of early language exposure on the cognitive development of deaf children in India. *Indian Journal of Psychology and Education*, 8(2), 34–41.
3. Government of India. (2011). Establishment of Indian Sign Language Research and Training Centre (ISLRTC). Ministry of Social Justice and Empowerment. Retrieved from <https://disabilityaffairs.gov.in>
4. Kyle, J. G., & Woll, B. (1988). *Sign Language: The Study of Deaf People and Their Language*. Cambridge University Press.
5. Lane, H. (2005). Ethnicity, Ethics, and the Deaf-World. *Journal of Deaf Studies and Deaf Education*, 10(3), 291–310.
6. National Association of the Deaf, India. (2021). Resources on Indian Sign Language and Deaf Community Empowerment. Retrieved from <https://nadindia.org>
7. Sengupta, R., & Sinha, S. (2021). Parental involvement in the development of deaf children: A qualitative study from Eastern India. *Asian Journal of Disability Studies*, 5(1), 22–30.
8. World Federation of the Deaf. (2020). Position Paper on the Importance of Sign Language and Family Inclusion. Retrieved from <https://wfdeaf.org>
9. Bhattacharya, T., & Dey, M. (2018). The impact of early language exposure on the cognitive development of deaf children in India. *Indian Journal of Psychology and*

Education, 8(2), 34–41.

10. National Association of the Deaf, India. (2021).
Resources on Indian Sign Language and Deaf Community
Empowerment. Retrieved from <https://nadindia.org>

Dr. Vineet Bala

Associate Professor
Vaish College Rohtak

Abstract

Service quality has emerged as a critical determinant of organizational success in today's service-oriented economy. The SERVQUAL model, developed by Parasuraman, Zeithaml, and Berry in 1988, represents one of the most widely adopted frameworks for measuring service quality across various industries. This research paper provides a comprehensive critical analysis of the SERVQUAL model, examining its theoretical foundations, practical applications, strengths, limitations, and contemporary relevance. Through an extensive review of literature and empirical studies, this paper evaluates the model's effectiveness in capturing the multidimensional nature of service quality while identifying areas for improvement and adaptation. The analysis reveals that while SERVQUAL remains a valuable tool for service quality assessment, its application requires careful consideration of contextual factors, cultural dimensions, and industry-specific characteristics.

Keywords: Service Quality, SERVQUAL, Gap Analysis, Customer Satisfaction, Service Excellence

1. Introduction

The transition from manufacturing-based to service-oriented economies has fundamentally altered the competitive landscape for organizations worldwide. In this context, service quality has emerged as a crucial differentiator, directly impacting customer satisfaction, loyalty, and organizational performance. The challenge of measuring and managing service quality stems from its inherent characteristics: intangibility, heterogeneity, inseparability, and perishability.

The SERVQUAL model, introduced by Parasuraman, Zeithaml, and Berry in 1988, addressed this challenge by providing a structured framework for measuring service quality through the lens of customer perceptions and expectations. The model's gap-based approach revolutionized service quality assessment and has been extensively applied across diverse industries, from healthcare and banking to hospitality and education.

This research paper presents a critical analysis of the SERVQUAL model, examining its theoretical underpinnings, methodological approach, practical applications, and limitations. The analysis aims to provide insights into the model's continued relevance and identify opportunities for enhancement in contemporary service environments.

2. Literature Review**2.1 Evolution of Service Quality Concepts**

The conceptualization of service quality has evolved significantly over the past several decades. Early definitions focused primarily on conformance to specifications, drawing from manufacturing quality paradigms. However, the unique characteristics of services necessitated a more nuanced understanding that emphasized customer perceptions and experiences.

Grönroos (1984) introduced the concept of perceived service quality, distinguishing between technical quality (what is delivered) and functional quality (how it is delivered). This foundational work established the importance of customer perceptions in service quality assessment, laying the groundwork for subsequent developments.

The Nordic School of Service Management further contributed to service quality theory through its emphasis on service encounters and customer relationships. Simultaneously, the American School, led by researchers like Parasuraman, Zeithaml, and Berry, developed measurement-oriented approaches that culminated in the SERVQUAL model.

2.2 Theoretical Foundations of SERVQUAL

The SERVQUAL model is grounded in the expectancy-disconfirmation paradigm, which posits that service quality is determined by the gap between customer expectations and perceptions of actual service performance. This theoretical foundation draws from cognitive psychology and consumer behavior literature, suggesting that customers form expectations based on various factors including past experiences, word-of-mouth communications, and promotional activities.

The model's five-dimensional structure emerged from extensive qualitative and quantitative research across

multiple service industries. The dimensions-Tangibles, Reliability, Responsiveness, Assurance, and Empathy-were identified through factor analysis and represent distinct aspects of service quality that customers use to evaluate service encounters.

3. The SERVQUAL Model: Structure and Methodology

3.1 The Five Dimensions of Service Quality

The SERVQUAL model operationalizes service quality through five distinct dimensions:

Tangibles refer to the physical evidence of service, including facilities, equipment, personnel appearance, and communication materials. This dimension acknowledges that customers form impressions based on tangible cues, particularly important in services where physical evidence is limited.

Reliability encompasses the ability to perform the promised service dependably and accurately. This dimension consistently emerges as the most critical factor in service quality assessments across industries, reflecting customers' fundamental need for consistent and reliable service delivery.

Responsiveness measures the willingness to help customers and provide prompt service. This dimension captures the temporal aspects of service delivery and the organization's commitment to addressing customer needs quickly and efficiently.

Assurance combines competence, courtesy, credibility, and security. It represents customers' need to trust service providers and feel confident in their expertise and integrity. This dimension is particularly crucial in professional services and high-risk service encounters.

Empathy involves caring, individualized attention given to customers. This dimension recognizes the importance of personal connection and customization in service delivery, emphasizing the human element of service encounters.

3.2 The Gap Model

The SERVQUAL model employs a gap analysis approach, identifying five potential gaps in service delivery:

Gap 1 represents the difference between customer

expectations and management perceptions of those expectations. This gap often occurs due to inadequate market research or poor communication between management and frontline staff.

Gap 2 exists between management perceptions of customer expectations and service quality specifications. This gap reflects the organization's inability or unwillingness to translate customer expectations into specific service standards.

Gap 3 occurs between service quality specifications and actual service delivery. This implementation gap often results from inadequate training, poor employee performance, or insufficient resources.

Gap 4 represents the difference between service delivery and external communications. This gap emerges when promotional promises exceed actual service capabilities, leading to inflated customer expectations.

Gap 5 constitutes the overall service quality gap, representing the difference between customer expectations and perceptions of actual service performance. This gap is influenced by all previous gaps and represents the ultimate measure of service quality.

3.3 Measurement Instrument

The SERVQUAL instrument consists of 22 statement pairs, with one set measuring customer expectations and another measuring perceptions of actual service performance. Respondents rate each statement using a seven-point Likert scale, ranging from "strongly disagree" to "strongly agree."

The service quality score is calculated by subtracting expectation scores from perception scores ($Q = P - E$), where negative scores indicate service quality gaps and positive scores suggest service quality exceeds expectations. The model also provides dimension-specific scores, allowing organizations to identify particular areas of strength or weakness.

4. Applications and Industry Adaptations

4.1 Healthcare Services

The healthcare industry has extensively adopted SERVQUAL for measuring patient satisfaction and service quality. Studies have demonstrated the model's effectiveness in identifying critical service dimensions in

hospital settings, with reliability and empathy consistently emerging as the most important factors for patient satisfaction.

Adaptations in healthcare have included modifications to reflect medical-specific concerns such as clinical outcomes, safety, and accessibility. Some researchers have proposed additional dimensions such as "clinical care quality" to capture the technical aspects of medical services.

4.2 Banking and Financial Services

SERVQUAL has been widely applied in banking, where service quality directly impacts customer retention and profitability. The model has proven particularly valuable in evaluating both traditional branch services and digital banking platforms.

Banking-specific adaptations have emphasized dimensions such as security, convenience, and accessibility. The emergence of digital banking has necessitated further modifications to address online service quality factors such as website usability and transaction security.

4.3 Education Services

Educational institutions have utilized SERVQUAL to assess student satisfaction and improve service delivery. Applications have ranged from higher education to vocational training, with adaptations addressing academic-specific factors such as curriculum quality and faculty expertise.

The model has been particularly valuable in identifying gaps between student expectations and institutional performance, informing strategic improvements in academic and support services.

4.4 Hospitality and Tourism

The hospitality industry's adoption of SERVQUAL reflects the sector's emphasis on customer experience and service excellence. Applications have included hotels, restaurants, and tourism services, with modifications addressing industry-specific factors such as atmosphere, location, and cultural sensitivity.

5. Critical Analysis of SERVQUAL

5.1 Strengths of the Model

The SERVQUAL model offers several significant

advantages that have contributed to its widespread adoption and enduring relevance.

Comprehensive Framework: SERVQUAL provides a holistic approach to service quality measurement, capturing multiple dimensions of the service experience. This comprehensive perspective enables organizations to identify specific areas for improvement rather than relying on overall satisfaction scores.

Practical Applicability: The model's structured approach and standardized instrument make it accessible to practitioners across various industries. The clear methodology and established norms facilitate implementation and benchmarking activities.

Empirical Foundation: SERVQUAL's development was based on extensive empirical research, providing strong theoretical grounding. The model's dimensions have been validated across numerous studies and industries, demonstrating consistent reliability and validity.

Diagnostic Capability: The gap analysis approach enables organizations to identify specific service quality deficiencies and prioritize improvement efforts. This diagnostic capability supports targeted interventions and resource allocation.

Benchmarking Potential: The standardized nature of SERVQUAL facilitates comparisons across organizations, industries, and time periods. This benchmarking capability supports competitive analysis and performance monitoring.

5.2 Limitations and Criticisms

Despite its widespread adoption, SERVQUAL has faced significant criticism from researchers and practitioners, highlighting several fundamental limitations.

Conceptual Issues: Critics argue that the expectancy-disconfirmation paradigm may not adequately capture the complexity of service quality formation. Some researchers suggest that customers may not always form clear expectations prior to service encounters, questioning the validity of the gap-based approach.

Methodological Concerns: The difference score methodology (P - E) has been criticized for potential reliability and validity issues. Statistical properties of difference scores may be problematic, and the approach

may not capture the dynamic nature of expectations and perceptions.

Dimensional Stability: While the five-dimensional structure has been validated in numerous studies, some researchers have identified variations in factor structures across different industries and cultures. This raises questions about the universal applicability of the five-dimensional model.

Cultural Limitations: SERVQUAL was developed primarily in Western contexts, and its applicability to non-Western cultures has been questioned. Cultural differences in service expectations and evaluation criteria may limit the model's cross-cultural validity.

Static Nature: The model provides a snapshot of service quality at a specific point in time, potentially missing the dynamic nature of service encounters and evolving customer expectations.

5.3 Industry-Specific Limitations

Different industries have identified specific limitations when applying SERVQUAL:

Professional Services: The model may not adequately capture the technical competence and outcome quality that are crucial in professional services such as legal or consulting services.

Digital Services: Traditional SERVQUAL dimensions may not fully address the unique characteristics of digital and online services, such as user interface design and system performance.

B2B Services: The model's consumer-oriented focus may not translate effectively to business-to-business service contexts, where decision-making processes and evaluation criteria differ significantly.

6. Alternative Models and Extensions

6.1 SERVPERF Model

Cronin and Taylor (1992) proposed the SERVPERF model as an alternative to SERVQUAL, arguing that performance-only measures provide superior predictive validity. SERVPERF eliminates the expectation component, focusing solely on customer perceptions of service performance.

Empirical comparisons between SERVQUAL and

SERVPERF have produced mixed results, with some studies supporting SERVPERF's superior predictive ability while others defend SERVQUAL's diagnostic capabilities.

6.2 Hierarchical Models

Some researchers have proposed hierarchical models that incorporate both overall service quality and dimension-specific measures. These models attempt to address the relationship between dimensions and overall service quality while maintaining the diagnostic benefits of dimensional analysis.

6.3 Industry-Specific Models

Various industry-specific adaptations have emerged to address SERVQUAL's limitations in particular contexts:

HEDPERF: Developed for higher education, this model incorporates academic-specific dimensions such as academic aspects and access.

BANKSERV: Designed for banking services, this model emphasizes dimensions such as effectiveness, accessibility, and convenience.

LODGSERV: Created for hospitality services, this model addresses industry-specific factors such as tangibles, reliability, and assurance adapted for hotel contexts.

7. Contemporary Relevance and Future Directions

7.1 Digital Transformation Impact

The ongoing digital transformation has significant implications for service quality measurement. Digital services introduce new quality dimensions such as system availability, user experience, and data security that may not be adequately captured by traditional SERVQUAL dimensions.

Organizations are increasingly adopting hybrid approaches that combine traditional service quality measures with digital-specific metrics. This evolution requires continuous adaptation of measurement frameworks to remain relevant in digital service environments.

7.2 Cultural Considerations

Globalization has highlighted the importance of cultural

adaptation in service quality measurement. Research has demonstrated that service quality perceptions and expectations vary significantly across cultures, necessitating culturally sensitive measurement approaches.

Future developments in service quality measurement must address these cultural variations while maintaining the benefits of standardized assessment frameworks.

7.3 Real-Time Measurement

Technological advances enable real-time service quality monitoring through various channels including social media sentiment analysis, mobile applications, and IoT devices. These capabilities offer opportunities to complement traditional survey-based approaches with continuous, dynamic measurement systems.

7.4 Artificial Intelligence and Machine Learning

AI and machine learning technologies offer new possibilities for service quality measurement and analysis. These technologies can process large volumes of unstructured data from multiple sources, providing more comprehensive and nuanced insights into service quality.

8. Recommendations for Practice

8.1 Contextual Adaptation

Organizations should adapt SERVQUAL to their specific industry and cultural contexts rather than applying the model unchanged. This adaptation should consider industry-specific quality factors, cultural dimensions, and organizational characteristics.

8.2 Mixed-Method Approaches

Practitioners should consider combining SERVQUAL with other measurement approaches to capture the full complexity of service quality. This might include qualitative methods, behavioral measures, and outcome-based metrics.

8.3 Continuous Monitoring

Organizations should implement continuous monitoring systems that complement periodic SERVQUAL assessments. This approach enables real-time identification of service quality issues and rapid response

to customer concerns.

8.4 Employee Engagement

Service quality improvement efforts should extend beyond customer measurement to include employee engagement and internal service quality assessment. Engaged employees are more likely to deliver superior service quality.

9. Implications for Future Research

9.1 Methodological Improvements

Future research should address the methodological limitations of SERVQUAL, particularly the difference score approach and dimensional stability issues. Alternative measurement approaches and statistical techniques should be explored.

9.2 Technology Integration

Research is needed to understand how emerging technologies can be integrated with traditional service quality measurement frameworks. This includes exploring the potential of AI, machine learning, and real-time data analytics.

9.3 Cross-Cultural Studies

More extensive cross-cultural research is needed to understand how service quality perceptions vary across different cultural contexts and how measurement frameworks can be adapted accordingly.

9.4 Longitudinal Studies

Longitudinal research can provide insights into how service quality perceptions evolve over time and how organizations can adapt their service delivery strategies accordingly.

10. Conclusion

The SERVQUAL model represents a significant contribution to service quality measurement and management. Its comprehensive framework, empirical foundation, and practical applicability have made it one of the most widely adopted service quality assessment tools. The model's five-dimensional structure and gap analysis approach provide valuable insights for service improvement and customer satisfaction enhancement. However, the critical analysis reveals several important limitations that must be considered in the model's

application. Conceptual issues related to the expectancy-disconfirmation paradigm, methodological concerns about difference scores, and cultural limitations highlight the need for careful adaptation and complementary approaches.

The model's continued relevance in contemporary service environments depends on its ability to evolve and adapt to changing customer expectations, technological developments, and cultural contexts.

Organizations should view SERVQUAL as one component of a comprehensive service quality measurement system rather than a standalone solution.

Future developments in service quality measurement will likely integrate traditional frameworks like SERVQUAL with emerging technologies and methodologies. This evolution will require ongoing research, practical experimentation, and theoretical refinement to ensure that service quality measurement remains relevant and effective in supporting organizational excellence.

The enduring popularity of SERVQUAL demonstrates the importance of structured approaches to service quality measurement. While the model has limitations, its contribution to our understanding of service quality and its practical utility in organizational improvement efforts remain significant. As service economies continue to evolve, the principles underlying SERVQUAL-customer focus, dimensional analysis, and systematic measurement-will remain relevant even as specific methodologies adapt to new contexts and challenges.

Organizations that successfully implement and adapt SERVQUAL while recognizing its limitations will be better positioned to deliver superior service quality and achieve sustainable competitive advantage in increasingly service-oriented markets.

References

- Cronin, J. J., & Taylor, S. A. (1992). Measuring service quality: A reexamination and extension. *Journal of Marketing*, 56(3), 55-68.
- Grönroos, C. (1984). A service quality model and its marketing implications. *European Journal of Marketing*, 18(4), 36-44.

Parasuraman, A., Berry, L. L., & Zeithaml, V. A. (1991). Refinement and reassessment of the SERVQUAL scale. *Journal of Retailing*, 67(4), 420-450.

Parasuraman, A., Zeithaml, V. A., & Berry, L. L. (1985). A conceptual model of service quality and its implications for future research. *Journal of Marketing*, 49(4), 41-50.

Parasuraman, A., Zeithaml, V. A., & Berry, L. L. (1988). SERVQUAL: A multiple-item scale for measuring consumer perceptions of service quality. *Journal of Retailing*, 64(1), 12-40.

Zeithaml, V. A., Parasuraman, A., & Berry, L. L. (1990). *Delivering quality service: Balancing customer perceptions and expectations*. Free Press.

Author:

Hemanand

Research Scholar,

Department of Commerce & Management,

Shri Khushal Das University,

Hanumangarh, Rajasthan.

Email: - Hemanand03@gmail.com

Mb: - 7404111101



Abstract

Gender Responsive Budgeting (GRB) in Bihar has been in practice since 2008-09. The present paper tries to find out how much has this process contributed to women development in financial terms. The paper looks at the trend which the budget for women has followed and how realistic it is. There are number of positive developments, such as increase in the number of reporting departments, assessment of schemes, women empowerment policy 2015 and creation of gender budget cell. However, restricted reach of GRB and stagnant or even declining allocations in some sectors are stumbling blocks for the gender agenda. The paper identifies the critical issues that are limiting the potential of the approach and suggests key steps that the government needs to take to address them.

JEL Classification Numbers: H00, I3, J16

Keywords: Gender Budget, Bihar, India, Empowerment, Gender Equality

Gender Responsive Budgeting in Bihar: A step towards development

I. Introduction:

The early dynamisms towards gender budgeting were fronted by the International Covenant on Economics, Social and Cultural Rights in 1966, which required signatory states to put in place appropriate gender equality. Over 180 countries had endorsed the United Nations and General Assembly in 1979 and have adopted the 'Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women (CEDAW), which set an agenda for national action to end gender discrimination. This is also referred to as 'The International Bill of Rights for Women'.

It is around forty years since mid-1980's, when the Labour Party led government in Australia took the initiative in 'Gender Responsive Budgeting'. In order to eliminate inequality between women and men, Australia was the first country to formally incorporate gender budgeting into its budget process (Stotsky 2006). Almost a decade later in mid-1990, after the fall of apartheid, the South African women parliamentarians started Women's Budget Initiatives (WBI). Working with academics and activist organisations

they concentrated towards focusing on areas of housing, education, welfare and work (Midgley 2006).

In the year 1995, delegates from 189 countries gathered at Beijing for the 4th United Nations World Conference on Women in the context of rapidly changing global economy and the need to address the inequalities in the national budgets of the countries across and unanimously embraced the Beijing Declaration to uplift the status of women worldwide (Midgley 2006). The movement towards gender equity has gained impetus over the last 25 years all across the world as the international community has realised that the importance of gender equality is essential for social development and economic growth and have thus started promoting it publicly (Elson 2002a).

For the first time, Government of India had adopted Gender Responsive budget in 2004-05 with the introduction of gender budget statement, which disclosed the quantum of funds allocated for gender equality and women empowerment by 57 of government ministries and departments by setting up Gender Budget Cells. This was a major step towards potentially impacting the lives of millions of women all through the country.

Gender Budget is a tool to attain gender equality and women empowerment by integrating gender-related goals into fiscal policies and administration (Stotsky and Zaman 2016).

II. Concept of Gender Budgeting

Gender budgeting means that the government has to address three questions –

- Will this budget reduce gender inequality?
- Will it leave the gender inequality the way it is at this moment?
- Will it increase gender inequality? (Elson 2009)

Gender Budgeting (GB) is a fundamental process to promote equality through fiscal commitments. The process brings together two domains that are commonly not alleged to be linked: gender equality and public financial management. Any policy or commitment cannot be achieved if matching resources are not properly allocated and efficiently spent. It is in this backdrop that gender budgeting has emerged as an important tool to analyse public policies and resources for accountability to gender commitments. The aim of GB is to

address 'gaps' through planned and responsive interventions, ensuring budget adequacy, monitoring the expenditures, and assessing the impacts to measure the change. The main aim is to achieve equality of outcomes by means of affirmative actions and focused allocations.

Gender budgeting is not intended to analyse only programmes that are specifically targeted to females or to produce a separate 'women's' budget, rather it has to examine the gender impact of all government programmes and policies including, their effects on resource allocation and outcomes, and how to further improve them. It draws upon the literature on the measurement of inequality, and tries to improve the allocation of resources within the government budget so as to reduce those inequalities with consequent benefits to economic and social well-being (Stotsky, 2006). Most importantly, GB initiatives may consist of different components and vary considerably across countries and regions given their specific social and political contexts, and the nature of the institutions implementing them.

Like other countries, gender inequality poses a significant development challenge before India. The Global Gender Gap Index 2018 ranked India at 108 out of 149 countries. The ranking is based on the gap between men and women across four fundamental categories which are – (i) economic participation and opportunity, (ii) educational attainment, health and survival and (iii) political empowerment. Lastly, a large sector of unpaid workers also needs to be streamlined. Thus, to address all these needs GB has to be given significance.

Good policy requires understanding of both the impact of policy and how it might be better designed to achieve outcomes, which meet the needs of women, men, girls and boys as well as different groups of women, men and children (Budlender et al., 1998). Whether the spending of money on men and women is adequate to meet the needs should be reflected through the budget. A gender budget is not a separate budget for women; instead it is an approach which can be used to highlight the gap between policy statements and the resources committed to their implementation, ensuring that public money is spent in more gender equitable ways (Rake, 2002). Budgeting

involves four components: (i) budgetary allocation of resources to various heads; (ii) the actual Government outlays on different heads; (iii) accounting of resources utilized for a particular purpose (e.g. on administrative overheads and wages and salaries, operation and maintenance, etc.); and (iv) evaluation of the effectiveness of resources utilised in delivering the proposed results. Under gender budgeting, these four components are considered from the point of view of women as beneficiaries.

Gender Budgeting: Journey till date

International

1980: Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women

1993: World Conference on Human Rights in Vienna

1994: The International Conference on Population and Development (ICPD)

1995: Fourth World Conference of Women in Beijing and Commonwealth Plan of Action on Gender and Development

2000: 23rd Special session of UN General Assembly (2000) and Eight Millennium Development Goals (MDGs)

2015: Gender introduced as Goal 5 in Sustainable Development Goal (SDG)

National

Seventh Plan (1985-90): Monitoring to assess quantum of funds/benefits flowing to women in major women-specific schemes

Eighth Plan (1992-97): the need to ensure a definite flow of funds from general developmental sectors to women-specific programmes was pin pointed

Ninth Plan (1997-02): Women's Component Plan (WCP) was introduced earmarking 30% of funds to all women related sectors.

2001 and 2004-05: In Budget Speech, the Union Finance Minister highlighted the need of gender sensitiveness in budgetary allocations and in **2004**, the Ministry of Finance constituted an expert group to examine feasibility and suggest general approach to gender budgeting.

Tenth Plan (2002-07): Aimed at tying up concepts of WCP and Gender Budgeting.

Gender Budget (2005-06): was introduced in Budget as statement 13

Eleventh Plan (2007-2012): Emphasised gender equity to find due place in policies and schemes across Ministries and Departments.

Twelfth Plan (2012-2017): Further strengthening the process of Gender Budgeting and extending its reach to all Ministries, Departments and State Governments.

allocation for women; while Part B of the Statement includes Schemes/ Programmes with 30 percent to 99 percent allocation for women. The section on GRB allocations in India will be discussed in detail in the next section. The Statement 13 of gender budgeting was started in India in 2005-06 by the Ministry of Finance. It is a reporting mechanism for Ministries/ Departments to review their programmes from a gender lens and is an important tool for presenting information on the allocations for women and girls.

I.Literature Review

There are several literatures on different aspects of gender budgeting. There are studies on experiences of gender budgeting in different countries. The studies also cover the impact of gender budgeting on agricultural sector, educational sector, along with experiences of several states in India, which initiated gender budgeting, etc. In the present study, an attempt is made to comprehend the trend of gender budgeting in India as well as in Bihar, and it also attempts to assess the impact of gender budgeting in the course of 10 years or more. There are very little literatures that directly address the fiscal commitments of gender budgeting and its impact. Few major works on the concept of gender budgeting are those of Caroline O.N. Moser (1989) '*Gender Planning in the Third World: Meeting Practical and Strategic Needs*' in which the author discusses about the development of gender planning in the Third World. This paper describes the capacity of different planning interventions (Welfare approach, Anti-poverty approach, Equity approach, Empowerment approach) to meet gender needs with examples from sectors like employment, housing and other basic services. According to Caroline, in the third world, women play triple role (reproductive, productive

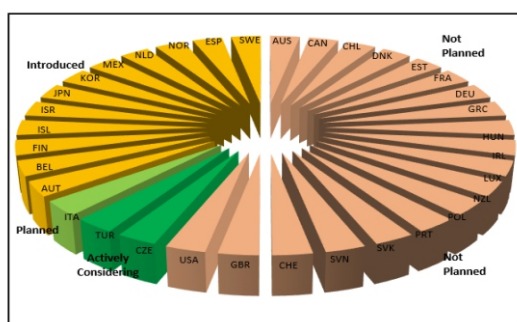
and community managing), yet, their work is not recognised by the planners, whose task is to assess various needs of the people within low income communities. The paper illustrates the capacity of different interventions to meet gender needs, and provides a critique of different policy approaches to "women in development" from a gender planning perspective. Naila Kabeer (1992) in another study '*Evaluating Cost-Benefit Analysis as a Tool for Gender Planning*' has evaluated the usefulness of Cost-Benefit Analysis (CBA) in gender planning and development. The author has identified several limitations of Cost-Benefit Analysis due to methodological biases of the framework itself as well as of the political economy of the gender in which it operates. The author states that if a project or programme related to empowering women is evaluated only for the benefit of policy making agency without commitments on gender equity, then the CBA analysis will be a waste of resources. Ingrid Palmer (1995) draws attention to include gender issues in macroeconomic policies, in her paper '*Public Finance from a Gender Perspective*'. According to her, opening up of a new approach could combine gender equity and growth, through an emphasis on public finance, which supports and is complementary to women's economic activities. There is a need of an 'integrated approach' which combines social and economic policies with gender perspective. Put through a gender lens, all public revenues and expenditures can become better focused, with subsequent benefit both in the form of gender equity and allocative efficiency. Debbie Budlender and Rhonda Sharp with Kerri Allen (1998) in their document, '*How to do a Gender-Sensitive Budget Analysis: Contemporary Research and Practice*', share the experiences of several countries in developing gender-sensitive budgets. This document thoroughly explains the meanings and terms of gender sensitive budgets and instances of countries which have initiated gender budgets. It also discusses as to how gender issues emerge in a budgetary context. Further, it discusses seven tools or methods which may be used in the gender-sensitive analysis of budgets. The seven tools are, gender-aware policy appraisal, gender-disaggregated beneficiary assessments, gender-disaggregated public

expenditure incidence analysis, gender-disaggregated tax incidence analysis, gender-disaggregated analysis of the impact of the budget on time use, gender-aware medium-term economic policy framework and gender-aware budget statement. It provides a brief introduction to new theoretical developments in macroeconomics, which take into account unpaid care responsibilities, and discusses their budgetary implications. The book *'Gender Budgets Make Cents: Understanding Gender Responsive Budgets'* authored by Debbie Budlender, Diane Elson and Guy Hewitt (2002) draws attention to the significance of gender budgeting. It discusses the differing impact of government expenditure and revenue on men and women. It throws light on how gender responsive budgets have been used as pivotal tool to assess budgetary performance and impact. Anjali Goyal (2005) in her paper *'Women's Empowerment through Gender Budgeting-A Review in the Indian Context'*, emphasises the effectiveness of gender budgeting as a means for achieving women's empowerment. The study also throws light on the initiatives that have been taken by Government of India in the context of gender budgeting. Yamini Mishra and Bhumiika Jhamb (2009) in their article *'An Assessment of UPA-I through a Gender Budgeting Lens'* evaluate the United Progressive Alliance government's budgets over the past five years through the gender lens (2004-05 to 2009-10). Although one of the six core principles of governance laid down in the National Common Minimum Programme (NCMP) was dedicated to women, that is, to fully empower women politically, educationally and legally, and how far the UPA government has reflected this principle is analysed in this article. The authors endorse that gender budgeting is a remarkable and bold step for empowerment of women, but there are certain lacunas which need to be addressed seriously. The creation of an independent Ministry of Women and Child Development has not resulted in any significant change in priorities for women. In another study, *'Assessing Gender Equality Investments: A Multi-State Perspective'*, Joshi (2013) assesses gender budgeting efforts in six states: Madhya Pradesh, Rajasthan, Andhra Pradesh, Gujarat, Jharkhand, and Odisha. The study concludes that implementation has

varied and some states' efforts have focused mainly on pro forma, rather than substantive actions. The Centre for Budget and Governance Accountability (2012) in a study *'Recognising Gender Biases: Rethinking Budgets'* evaluates state-level gender budgeting efforts. The study finds variation in approaches among the different states. Focusing on Bihar, Karnataka, Kerala, and Madhya Pradesh, the paper concludes that Kerala and Madhya Pradesh had the most substantive efforts that had led to meaningful changes in fiscal policies to address gender-related goals. As in India and in other federal countries, public expenditures for supporting own resources at the state and local levels are meagre, and the lower tiers of the government depends heavily on intergovernmental transfers from higher tiers of government. There is a constant deliberation in India to integrate gender in formula-based transfers, however it is yet to materialize (Chakraborty, 2010b). The lack of flexibility of the intergovernmental transfers and unfunded mandates were two restraints in implementing gender budgeting effectively. Anand and Chakraborty (2016) analyzed whether fiscal transfers should be progressive or regressive in India subsequent to incorporating gender as a criterion in the formula-based intergovernmental fiscal transfers and found that the transfers would be progressive. Chakraborty et al. (2018) analyze the impact of a direct fiscal transfer to ensure a job guarantee, referred to as the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme, on male and female labour force participation rates. The study finds that participants benefited and the relative benefits for female participants were greater than for males, though the experience varied across states. Gender budgeting initiatives are introduced where countries want to focus on gender equality. Gender equality refers to equality of outcome between the genders, so that girls and boys, men and women, all have equal outcomes in terms of health, education, employment. As stated above, the present paper will try to examine the policy commitments and allocations for women and find out whether the allocations and commitments are enough to meet their actual needs. The table below tabulates the views of different researchers on

II. Implementation of Gender Budgeting at Global Level

Chart 1: Status of Gender Budgeting



I. Adoption of Gender Budgeting by States

towards mainstreaming gender issues with specific reference to violence against women, schooling and welfare of girl child, capacity building and social security schemes, as well as in village-level (Panchayat) planning and decision-making. The 23 states /UTs adopting GB (Table 1).

Table 1: Gender Budgeting in the States (Year of Adoption)

Early Adopters	Subsequent Adopters	Recent Adopters
Tripura (2005-06)	Madhya Pradesh (2007-08)	Tamil Nadu (2018-19)
Uttar Pradesh (2005)	Jammu & Kashmir (2007-08)	Maharashtra (2019-20)
Karnataka (2007-08)	Arunachal Pradesh (2007-08)	Andhra Pradesh (2021-22)
Gujarat (2006)	Uttarakhand (2007-08)	Himachal Pradesh (2022-23)
	Chhattisgarh (2007-08)	Manipur (2021-22)
	Himachal Pradesh (2008)	Himachal Pradesh (2022-23)
	Bihar (2008-09)	Manipur (2021-22),
	Kerala (2008-09)	West Bengal (2022-23)
	Rajasthan (August 2011)	West Bengal (2022-23)
	Andaman & Nicobar Islands* (November 2012)	
	Dadra and Nagar Haveli* (2011-12)	
	Odisha (2015-16)	

I. Gender Budgeting Practices in India and Bihar

Gender Budgeting is looking at budget through gendered lens. Gender Budgeting is as an approach which aims to amend both budgetary policies and processes with reference to gender and its implications for the society. In patriarchal society like ours, the need of women and girl child are often neglected. So, to address these discrepancies, Gender Budgeting is a government policy or intervention formulated to address gender-based issues in various sectors and stages of life of women with financial allocations made through budget to meet those confronting challenges.

India

The GB was introduced in India in 2005-06 as Statement 20 by the Ministry of Finance as a reporting mechanism for Ministries/Departments to review their programmes through a gender lens. Since 2017-18 onwards, it was re-named as Statement 13. It is an important tool for presenting information on the allocations for women and girls. The Ministry of Women and Child Development became the nodal agency for gender budgeting. It has evolved as a strategy to ensure that public investments get decoded into better outcomes for women and girls. GB initiatives facilitate consistency

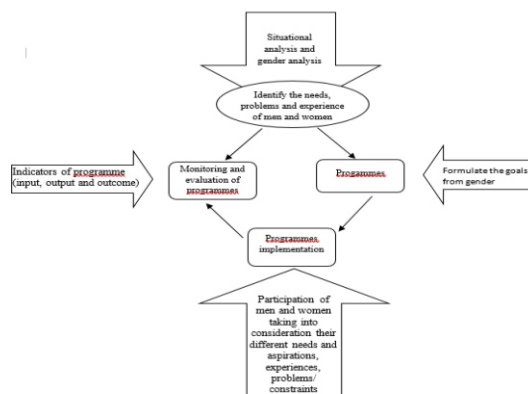
between planning, budgeting and gender equality goals by dictating the planning and budgeting cycle (WCD Annual Report 2020). Till date, the GB has completed 18 years with significant developments in women agenda but a critical retrospective view is required to assess the progresses made so far.

The allocations under GB are divided in two parts: Part A of the statement includes schemes with 100% allocation for women while Part B of the statement includes schemes/programmes with 30% to 99% allocation for women. From this year i.e. 2024-25, the Union GB has also introduced part C including schemes which have allocations for women below 30%.

Bihar

The government of Bihar introduced its first GB along with State Budget in 2008-09. In fact, even much earlier, in the 2006, Bihar had provided 50 percent reservations to women in Panchayat bodies as part of its decentralised planning process in the wake of the 73rd and 74th Constitutional Amendments which had provision of reservation of 33 percent of seats in the local bodies for women. Hence the awareness of the empower women already existed. This was further expediated by the introduction of Gender Budget which is not a separate Budget for women but is a methodology to assist governments to integrate a gender perspective into the Budget. Further, the State also prepared separate Bihar Women Empowerment Policy in 2015 and started a Gender Resource Centre for looking after gender-specific issues, which was a part of Women Development Corporation, Bihar. In the Sustainable Development Goals Vision Document, GRB has been highlighted as a key intervention agenda. The GB section was introduced in Bihar Economic Survey since 2010-11. The GB illustrates the amount of funds allocated, across departments, for the benefit of women and girls. Gender Budget 2019-20 is eleventh in the series. The first statement of GB covered 12 out of the total 44 departments (2008-09) and in its subsequent issues, the number of departments reporting under GB, increased up to 24 in 2024-25. Departments are reporting their schemes and programmes into Shreni or Category I as 100%

women specific schemes and Shreni or Category II as schemes ranging between 30-99% as pro-women scheme. GBS in Bihar is reporting on plan, non-plan, centrally sponsored schemes and central sector schemes. The budget is presented in 4 columns, the actual expenditure of the previous year, the budget estimate (BE) and revised estimate (RE) of the current year and budget estimate of the ensuing year. The process of GB can be explained from Chart 2 plotted by UNIFEM.



VII. Comparative Trend Analysis of India and Bihar

Budgetary policy entails economic status of women (Dey and Dutta 2014). Annual scrutiny of budget from the point of view of women is necessary to augment women's economic interest and socio-political status in the development economy. Since 2005-06, the Finance Ministers of India have promised to improve women's welfare through higher and focused government spending.

India

The GB is based on estimates of all the spending on women-related schemes. This comprises spending on schemes that only target women (Part A), such as Beti Bachao, Beti Padhao, Scheme for Adolescent Girls (SAG) and Part B schemes, which partially target women (where at least 30% of the scheme's benefits go to women). In the Part B schemes, such as the Mid-Day Meal programme, MGNREGA, NHM, Anganwadi Services etc. dominate with around 80% of the allocation. The gender Budget aims to improve allocations and make it more gender-sensitive.

India's Gender Budget has crossed the Rs. 3 lakh crore-mark in 2024-25 for the first time since its introduction in the 2005-06 Budget. Under Gender Budget, an annual financial statement of the total allocation to women-centric schemes, stands at Rs.3.27 lakh crore in the 2024-25. This is an increase of 31.46% from the 2023-24 when the budget allocation was Rs.2.38 lakh crore. The Gender Budget is divided into three parts.

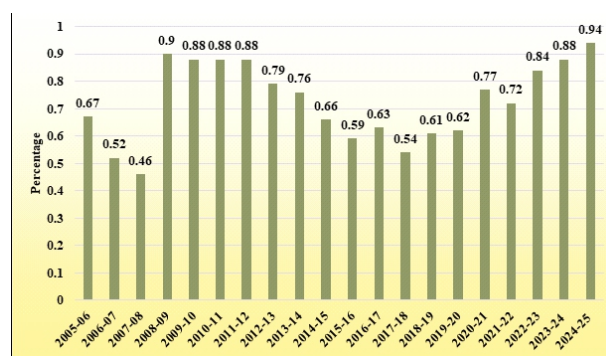
- Part A (100%) schemes have been allocated Rs.1.12 lakh crore, nearly 25% higher than in the 2023 Budget.
- Part B (30-99%) schemes have seen a 38.56% increase in allocation in this year's Budget, standing at little less than Rs.2 lakh crore.
- Part C, (less than 30%) only includes the Pradhan Mantri Kisan Samman Nidhi scheme, which received Rs. 15,000 crore -- the same amount as last year.

The chart 3 shows the share of women in total Union Budget. It is clear from the figure that since 2005-06, the allocation for women has been between 4 to 6 % and has also followed fluctuating trend. It is only in 2024-25 that this share has been 6.8% which is due to inclusion of category 3 and rectification of many schemes. Chart 4 shows share of women in Gross Domestic Product of India and even after 18 years, it is less than 1%, so this means that more and more discussions are needed to include women in development process.

Chart 3: Allocation in Total Union Budget and Gender Budget



Chart 4: Share of Gender in GDP (%)



Bihar

Along with Union Government, many State Governments have also been presenting gender budgets, laterally with their state budgets since 2008-09. However, Kerala, Odisha, Bihar, and Karnataka have been performing better compared to other states on this front (Mehta 2020). The Government of Bihar is determined to achieve gender equality in the State. Henceforth, it is vital for the Government to focus on schemes, programmes and provisions that are women centric and ensure that enough funds are allocated for these schemes and programmes. Chart 5 shows the expenditure on women in Bihar between 2018-19 and 2024-25 (BE), increased by 78% and when compared with actual expenditure of 2022-23, it shows an increase of 91%, which shows that expenditure for women is gradually increasing. However, the share in total budget still lies between 14% to 18%.

Chart 6 shows the expenditure on category I and II, along with total gender budget. The chart shows that the share of women in category II has been high compared to category I. Also, the budget in part I shows fluctuating trend and needs proper analysis.

Chart 5: Gender Budget: Expenditure for Women

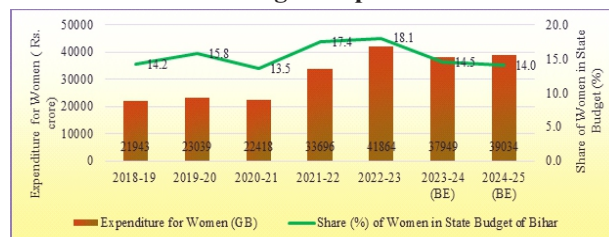
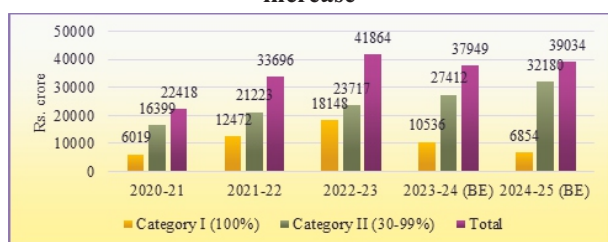


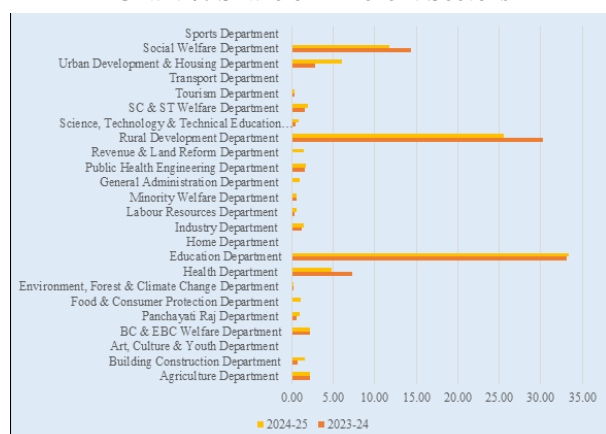
Chart 6: Category I and II and Total: shows an increase



VIII. Details of Sector-wise Allocation in Bihar

In the area of women's development, Bihar has displayed appreciable progress in the field of education, economic participation, and social empowerment. Achievements of women in primary and secondary education, access to birth control measures and micro-credit compare favourably with those in other developing States. There has also been substantial improvement in positive social attitudes towards women's economic participation. But beyond these accomplishments lie grave constraints and challenges. Thus, GB can only be full proof when the allocations and expenditures are assessed properly. From chart 7 it is clear that major budget allocation is done in education sector, followed by rural development, social welfare, health, etc. but other important sectors like housing, agriculture, labour, industry, etc. shows miniscule allocation. Thus, as gender budgeting is a tool for mainstreaming women in development process, means of economic empowerment like agriculture, housing, enterprises sector should also see that the allocation for women is reasonable and sustainable.

Chart 7: Share of Different Sectors



IX. Gender Budgeting Forecasting: How far realistic?

The accuracy of budget forecasting depends upon Fiscal marksmanship (Chakraborty et.al 2020). The significant variations between actual revenue and expenditure from the forecasted budgetary magnitudes could be the sign of non-attainment of the objectives of fiscal policy. The differences between three numbers are as their names suggest – BE refers to the original estimates, RE figures suggest the actual revenue or expenditure for the initial six months and the projected revenue and expenditure for the rest six months. Actuals are the real numbers for revenue and expenditure in terms of how much was collected and how much was spent.

Underestimation or overestimation of the budget is of critical importance in the accountability of the government. Higher Budget Estimates do not ensure higher spending. There is significant deviation between Budget Estimates and Actuals. By comparing AE with BE, the accuracy or inaccuracy of the estimates given in the budget documents can be established. Table 2 shows utilisation percentage in 100% category schemes. The observations drawn from table 2 shows that the utilisation percentage does not follow a gradual pattern of increase. Next, the utilisation of few departments like education, social welfare, rural development, etc. are appreciable but for some departments they are below 30 percent. However, another finding shows that utilisation of health has decreased to 70% from 85% between 2021-22 and 2022-23.

Table 2: Status of 100% Scheme Expenditure (Rs. lakh)

Department	2021-22		Utilisation %	2022-23		Utilisation %
	BE	AE		BE	AE	
BC & EBC Welfare Department	1551.99	941.15	60.64	1574.00	1602.46	101.81
Health Department	124835.83	106518.45	85.33	133468.71	93523.25	70.07
Education Department	73154.32	276076.42	377.39	114393.09	261141.87	228.28
Home Department	50.00	16.32	32.64	50.00	36.21	72.42
Industry Department	0.00	20000.00	#DIV/0!	25000.00	25000.00	100.00
Labour Resources Department	1850.00	1397.94	75.56	1700.00	1485.29	87.37
Minority Welfare Department	200.00	66.00	33.00	200.00	200.00	100.00
Revenue & Land Reform Department	7050.00	435.82	6.18	7355.00	38.50	0.52
Rural Development Department	894800.00	736756.05	82.34	924317.00	1285947.06	139.12
Science & Technology Department	13245.24	11238.11	84.85	14856.84	14340.68	96.53
Social Welfare Department	91691.28	93765.70	102.26	84049.74	131458.72	156.41

Source: Department of Finance, Government of Bihar

Similarly, Table 3 also shows the utilisation in Category II which is between 30 to 99% and same pattern is seen in utilisation. The utilisation varies , for building construction utilisation increases from 32% to 106%, for Art, Culture and Youth from 36% to 72%, for Environment, Forest & Climate Change from 39% to 76% and Tourism from 23% to 71%. The data also reveals that some departments also show decline in utilisation like BC and EBC welfare, Panchayati Raj, Health Department etc.

**Status of 30 to 99% Scheme Expenditure
(Rs. lakh)**

Department	2021-22		Utilisation %	2022-23		Utilisation %
	BE	AE		BE	AE	
Agriculture Department	70018.11	40375.71	57.66	82399.75	59007.41	71.61
Building Construction Department	21440.00	6785.74	31.65	20870.00	22028.23	105.55
Art, Culture & Youth Department	1877.59	672.06	35.79	1957.03	1399.42	71.51
BC & EBC Welfare Department	77556.50	125978.49	162.43	87262.50	76050.28	87.15
Panchayati Raj Department	21350.00	15331.10	71.81	29850.00	19373.27	64.90
Food & Consumer Protection Department	0.00	0.00	#DIV/0!	0.00	0.0	#DIV/0!
Environment, Forest & Climate Change Department	19239.29	7409.93	38.51	8028.59	6110.04	76.10
Health Department	117927.14	119707.70	101.51	135611.43	109259.97	80.57
Education Department	866102.62	731399.00	84.45	976616.45	1052817.17	107.80
Home Department	0.00	0.00	#DIV/0!	0.00	0.00	#DIV/0!
Industry Department	12894.00	12275.48	95.20	14389.50	17059.50	118.56
Labour Resources Department	7798.51	7257.15	93.06	7588.51	6957.15	91.68
Minority Welfare Department	15520.00	9104.54	58.66	15670.00	6658.70	42.49
General Administration Department	0.00	0.00	#DIV/0!	0.00	0.00	#DIV/0!
Public Health Engineering Department	73496.90	71327.02	97.05	58429.50	49023.94	83.90
Revenue & Land Reform Department	0.00	0.00	#DIV/0!	0.00	0.00	#DIV/0!
Rural Development Department	399740.40	395701.38	98.99	335423.60	305712.16	91.14
Science & Technology Department	0.00	0.00	#DIV/0!	0.00	0.00	#DIV/0!
SC & ST Welfare Department	60895.58	51048.58	83.83	58536.85	54806.84	93.63
Tourism Department	10400.00	2441.14	23.47	7500.00	5332.28	71.10
Transport Department	0.00	0.00	#DIV/0!	0.00	0.00	#DIV/0!

Source: Department of Finance, Government of Bihar

Thus, in order to forecasting of budget is very important to support policy initiatives. Until and unless, forecasting is realistic, the utilisation will not match allocation leading to a large sum leaving unutilised. So, when we talk of gender mainstreaming through gender budgeting process, actual forecasting for different women related schemes play an important role.

I. Conclusion and Recommendations

Gender responsive budgets are not separate budgets for women or men. A gender responsive budget is the practice to link the needs and interests of genders to expenditure and revenue policies. The GRB introduces gender awareness into the policies, plans, programmes and budgets of all government agencies. The process intentionally directs resources and raises revenue in a way that addresses disadvantage and exclusion. This is a known fact that Bihar has made substantive and noticeable progress in the area of GRB. But to make this progress sustainable few specific and general recommendations as per study are:

Specific:

Policy developers should be in-sync: Top level policy makers, officers involved in GB and civil societies working in this field must work together in-sync. There should be coordination among all departments since pre-budget activities like design, decision on resource allocation etc.

Building understanding about the rationale of GB among the mid-level government officials: The rationale of GB should be well-understood by the mid-level officials of the line departments and the Department of Finance who are involved in the formation of GB.

Tagging the GRB initiative while developing a new scheme or policy can be useful: When government announces any new scheme or policy, the component of GRB must be discussed with the Department of Finance. This will also help the State to have a proper gender budgeting document in the financial management process.

Proper assessment of allocations: While allocating the fund for the scheme, the tentative expenditure should be assessed based on the previous performance of the scheme. It is better to review the outcome of the last 3 years before preparing budget for the ensuing year.

Introduction of Non-fiscal Activities: There are certain activities which are impacting the well-being of the women but cannot be linked to monetary outcome. These activities should also be listed in GB. There is also a whole list of work done by women but as they are not paid for it, so it is not included as productive activity. But these unpaid activities should also be included in GB so that

while designing any policy, women from these sectors are not left behind.

General:

Increase in Budget Allocation: The budget allocation for women should be increased, particularly for the recurrent expenditure. Due to the lack of funds, human resource base is very limited. It is therefore unable to contribute effectively in co-ordinating and monitoring activities of the other ministries in addressing gender specific issues.

Proper Monitoring and Reviewing of the Gender Budget: Assessment of beneficiaries and execution of government activities need to be gender disaggregated to better understand who is benefiting from government expenditure. Establishing of a monitoring cell for gender responsive budgeting implementation should be considered.

Build Capacity of Gender Focal Points: Each department has a gender focal point person who is responsible for ensuring inter-departmental co-ordination on gender issues. As, they are not part of the GRB process so their capacity to deal with GRB is weak. Building the capacity of gender focal points of all departments in the area of gender responsive budgeting is important in strengthening this initiative. Training should be ongoing process for the gender budget focal points.

Introduce Gender Auditing: There should also be pre and post-appraisal of all large schemes in a gender disaggregated manner.

Despite Bihar's perceptible success in rolling out the gender budgeting system, it is essential to strengthen the process to ensure that tangible resource mobilisation takes place to improve gender equality. It is obvious that the Government is committed to consolidation of the GRB process and it is already taking the necessary needed steps in the right direction. Thus, it can be assumed that in near future, the gender responsive budgeting will develop as a sustainable and strengthened document of proper fiscal management.

Selected References:

- Anand Abhishek, Lekha Chakraborty (2016), 'Integrating Gender Criteria in Intergovernmental Transfers in India', paper

prepared for 25th IAFFE Conference on "Transitions and Transformations in Gender Equality," National University of Ireland-Galway.

- Budlender, Debbie, and Rhonda Sharp, with Kerri Allen (1998), 'How to Do a Gender-Sensitive Budget Analysis: Contemporary Research and Practice' (Commonwealth Secretariat and the Australian Agency for International Development).
- Budlender Debbie, Diane Elson, Guy Hewitt and Tanni Mukhopadhyay (2002), 'Gender Budgets Make Cents Understanding gender responsive budgets', Commonwealth Secretariat.
- Centre for Budget and Governance Accountability (2012), 'Recognising Gender Biases: Rethinking Budgets' Review of Gender Responsive Budgeting in the Union Government and Select States, New Delhi.
- Chakraborty Lekha (2010b), 'Determining Gender Equity in Fiscal Federalism—Analytical Issues and Empirical Evidence from India', Working Paper No. 590, Levy Economics Institute, New York: Levy Economics Institute.
- Chakraborty Lekha, Veena Nayyar, Komal Jain (2020), 'Determining gender budgeting in multi-level federalism', Tax and Transfer Policy Institute, Working Paper 9/2020
- Chakraborty Lekha, Mariam Ingrams , Yadawendra Singh (2018), 'Fiscal Policy Effectiveness and Inequality: Efficacy of Gender Budgeting in Asia Pacific', Working Paper No. 224, New Delhi: National Institute of Public Finance and Policy
- Dey Joyashri , Subhabrata Dutta (2014), 'Gender Responsive Budgeting in India: Trends and Analysis', International Journal of Social Science 3 (4):pp. 495-509.
- Elson D. (2006), 'Gender Equality and Economic Growth', World Development Report 2006, World Bank, (pp. 35-59).
- Galizzi Giovanna , Gaia Viviana Bassani ,

Cristiana Cattaneo (2018), 'Adoption of Gender-Responsive Budgeting (GRB) by an Italian Municipality', Administrative Sciences, MPDI, pp.1-13.

- Goyal Anjali (2005), Women's Empowerment through Gender Budgeting- A review in the Indian context, New Delhi: Ministry of Women and Child Development.
- Jha Jyotsna, Varun Sharma (2014), 'What is Gender Budgeting: An illustration through the analysis of two Health-related schemes in Karnataka (ThayiBhagya and Vajpayee ArogyashreeYojna)', Centre for Budget and Policy Studies (CBPS, Bangalore)

Jhamb

- Bhumika, [Yamini Mishra](#) (2015), '[Gender Responsive Budgeting in India](#)' , [Economic and Political Weekly](#) , [Vol. 50, Issue No. 50](#), pp. 54-62.
- Joshi, S. B., 2013, Assessing Gender Equality Investments: A Multi-State Perspective (New Delhi: UN Women and National Foundation for India).
- Kabeer [Naila \(1992\)](#), 'Evaluating Cost-Benefit Analysis as a Tool for Gender Planning' , Development and Change , Volume 23, Issue 2, pp. 115-139.

Midgley

- J. (2006) , 'Gendered economies: Transferring private gender roles into the public realm through rural community development', [Journal of Rural Studies](#), [Volume 22, Issue 2](#), April 2006, Pages 217-231, Elsevier
- Ministry of Women & Child Development (2020), Annual Report, 2019-20, Government of India, New Delhi
- Moser Caroline O. N. (1989), 'Gender planning in the third world: Meeting practical and strategic gender needs', World Development, vol. 17, issue 11, pp. 1799-1825.
- Palmer Ingrid (1995), 'Public finance from a gender perspective', World Development,

[Volume 23, Issue 11](#), pp. 1981-1986.

- Rake Katherine (2002), 'Gender Budgets: The Experience of the UK's Women's Budget Group', Paper prepared for the conference 'Gender Balance – Equal Finance' Basel, Switzerland, March 2002.
- Stotsky Janet G.(2006), 'Gender Budgeting' Fiscal Affairs Department, IMF Working Paper, WP/06/232, International Monetary Fund
- Stotsky Janet G.(2006), 'Gender Budgeting' Fiscal Affairs Department, IMF Working Paper, WP/06/232, International Monetary Fund
- Stotsky Janet G. and Zaman Asad (2016), 'The Influence of Gender Budgeting in Indian States on Gender Inequality and Fiscal Spending' , Research Department and Strategy, Policy, and Review Department, IMF Working Paper, WP/16/227, International Monetary Fund.
- Stotsky Janet G.(2006), 'Gender Budgeting' Fiscal Affairs Department, IMF Working Paper, WP/06/232, International Monetary Fund

1.Certain sectors like defence, power, trade, transport, commerce, etc. are perceived as gender neutral, because of their universal reach and the expenditure and revenue of these sectors cannot be partitioned on the basis of gender. Traditionally, gender sensitive sectors are perceived as main sectors where the target beneficiaries are visible and they are primarily women, e.g., health, education, labour, rural development, etc.

2.*Source:* 2016 OECD Survey of Gender Budgeting

3.Gender Budget, Ministry of Finance, Government of India, 2019-20

Dr. Sunita Roy

Department of PM&IR,
Patna University, Patna.

सारांश

यह शोध पत्र स्वामी विवेकानंद के महिला सशक्तिकरण संबंधी बहुआयामी दर्शन का गहन एवं आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। विवेकानंद ने भारतीय नारी को केवल सामाजिक सुधार की वस्तु के रूप में नहीं, अपितु राष्ट्र के पुनरुत्थान की एक केंद्रीय धुरी के रूप में देखा। उनका सशक्तिकरण का मॉडल श्वात्म-मुक्ति के सिद्धांत पर आधारित था, जिसका मूल विश्वास यह था कि महिलाओं को अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं खोजना होगा, और पुरुषों की भूमिका केवल बाधक न बनकर सहायक बनने की है। इस पत्र में विवेकानंद के श्मनुष्य-निर्माण वाली शिक्षा के विचार, आत्मा की लिंग-निरपेक्षता के आध्यात्मिक सिद्धांत, और शक्ति की अवधारणा के पुनर्जागरण पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया है। यह पत्र तर्क प्रस्तुत करता है कि विवेकानंद ने सीता जैसी पारंपरिक छवियों का एक नवीन, सशक्त आख्यान प्रस्तुत किया और महिला मठ जैसी संस्थागत योजनाओं के माध्यम से अपने दर्शन को एक व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया। उनका अंतिम लक्ष्य एक ऐसी भारतीय नारी का निर्माण था जो अपनी सांस्कृतिक जड़ों में निहित आध्यात्मिक बल के साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से सुसज्जित होकर आत्म-सम्मान और निर्भयता से जीवन जी सके। प्रमुख शब्द आत्म-मुक्ति, चरित्र-निर्माण, सशक्तिकरण, शिक्षा व स्त्री-कर्तृत्व।

परिचय उन्नीसवीं सदी का भारत, औपनिवेशिक शासन और आंतरिक सामाजिक जड़ता के दोहरे बोझ तले दबा हुआ था। इस युग में राष्ट्र के पतन के कारणों पर मंथन करते हुए स्वामी विवेकानंद इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भारत का पतन उस दिन आरंभ हुआ जिस दिन राष्ट्र ने अपनी शक्ति – अपनी नारियों – का तिरस्कार करना आरंभ कर दिया। उन्होंने स्पष्ट रूप से घोषित किया, पञ्च तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होता, विश्व के कल्याण की कोई संभावना नहीं है।¹ विवेकानंद के लिए महिला सशक्तिकरण केवल एक सामाजिक सुधार का एजेंडा नहीं था, यह राष्ट्रीय अस्तित्व और उत्थान का प्रश्न था।

अन्य समकालीन समाज सुधारकों के विपरीत, जिन्होंने मुख्यतः कानूनी सुधारों (जैसे विधवा पुनर्विवाह) पर ध्यान केंद्रित किया, विवेकानंद ने समस्या की जड़ पर प्रहार किया – जो थी महिलाओं की अपनी शक्तियों और क्षमताओं के प्रति अज्ञानता और समाज द्वारा उन पर थोपी गई हीनता की भावना। उन्होंने एक क्रांतिकारी विचार प्रस्तुत किया कि महिलाओं का उद्धार पुरुषों द्वारा नहीं होगा, बल्कि महिलाएँ स्वयं अपना उद्धार करेंगी। उनका कार्य केवल उन बंधनों को काटना था जो उन्हें रोके हुए थे। यह शोध पत्र विवेकानंद के इसी मौलिक दृष्टिकोण की विभिन्न परतों को उद्घाटित करता है और समकालीन महिला सशक्तिकरण के विमर्श में उसकी

प्रासंगिकता का मूल्यांकन करता है।

विवेचना के मुख्य बिंदु

1. शिक्षा की संकल्पनारु श्मनुष्य-निर्माण का विज्ञान विवेकानंद प्रचलित शिक्षा प्रणाली के कटु आलोचक थे, जो केवल सूचनाओं का संग्रह मात्र थी। उन्होंने श्मनुष्य-निर्माण (डंड-उपदह) और श्चरित्र-निर्माण (बिंतबजमत-उपदह) वाली शिक्षा पर बल दिया। महिलाओं के संदर्भ में इसका अर्थ था, ऐसी शिक्षा जो उन्हें केवल साक्षर न बनाए, बल्कि उनमें साहस, आत्मविश्वास, नैतिक बल और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता का विकास करे।

पाठ्यक्रम की व्यापकतारु उन्होंने महिलाओं के लिए धार्मिक ग्रंथों (विशेषकर उपनिषदों), दर्शन, विज्ञान, और कला के साथ-साथ गृहस्थ जीवन के वैज्ञानिक प्रबंधन और आत्मरक्षा के प्रशिक्षण को भी अनिवार्य माना। उनका मानना था कि निर्भयता सशक्तिकरण की पहली शर्त है।

उद्देश्य: शिक्षा का उद्देश्य महिलाओं को पश्चिमी समाज की नकल बनाना नहीं, बल्कि उन्हें एक आदर्श भारतीय नारी के रूप में विकसित करना था, जो अपनी संस्कृति पर गर्व करे और साथ ही आधुनिक विश्व के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सके।

2. आध्यात्मिक समानता का सिद्धांतरु लिंग-निरपेक्ष श्वात्मा विवेकानंद ने वेदांत के अद्वैत दर्शन को महिला सशक्तिकरण का सबसे मजबूत आधार बनाया। उन्होंने तर्क दिया कि प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान श्वात्मा या श्ब्रह्म लिंग, जाति या वर्ण के भेदों से परे है।

धार्मिक अधिकाररु इस आधार पर, उन्होंने उन सभी परवर्ती स्मृतियों और सामाजिक रूढ़ियों को खारिज कर दिया जो महिलाओं को वेदों के अध्ययन या संन्यास जैसे आध्यात्मिक मार्गों से वंचित करती थीं। उन्होंने कहा कि गार्गी और मैत्रेयी की तरह आधुनिक भारतीय महिलाओं को भी श्ब्रह्म-विद्या प्राप्त करने का समान अधिकार है।

पुरोहितवाद का विरोधरु यह विचार पुरोहितवादी सत्ता पर एक सीधा प्रहार था, जिसने धर्म को पुरुषों का एकाधिकार बना दिया था। विवेकानंद ने महिलाओं के लिए आध्यात्मिकता के द्वार खोलकर उन्हें आत्म-सम्मान का सर्वोच्च सोपान प्रदान किया।

3. आत्म-मुक्ति का मार्गरु पुरुषों की भूमिका और महिलाओं का कर्तृत्व (।हमदबल) यह विवेकानंद के दर्शन का सबसे अनूठा और क्रांतिकारी पहलू है। उन्होंने पुरुषों को स्पष्ट निर्देश दिया कि पारियों के विषय में तुम लोग क्या सोचते हो, क्या वे सचमुच श्मनुष्य हैं? या केवल 'नारी-यंत्र'? तुम उनके लिए कानून बनाते हो और सोचते हो कि तुम उनसे श्रेष्ठ हो। खबरदार! तुम उनके उद्धारक बनने की कोशिश मत करो।²

सक्षम बनाने पर बलरु उनका मानना था कि पुरुषों का एकमात्र कर्तव्य महिलाओं को शिक्षा और अवसर प्रदान करना और

उनके रास्ते से हर बाधा को हटाना है। इसके बाद महिलाएँ स्वयं तय करेंगी कि उनके लिए क्या सही है। यह शर्तृत्वश या शर्जेंसीश का सिद्धांत है, जो सशक्तिकरण के आधुनिक विमर्श का केंद्र है।

समस्या का समाधानरू वे कहते थे कि महिलाएँ अपनी समस्याएँ पुरुषों से बेहतर समझती हैं और यदि उन्हें अवसर दिया जाए तो वे स्वयं ही बाल-विवाह से लेकर अन्य सभी कुरीतियों का अंत कर देंगी।

4. शक्तिश का पुनर्जागरण और सीता के आदर्श का नव-आख्यान विवेकानंद ने नारी को अबला मानने की धारणा को सिरे से नकार दिया और उसे शजीवित शक्तिश की संज्ञा दी।

शक्ति की पूजारू उन्होंने कहा कि हम देवी की मूर्ति की पूजा करते हैं, लेकिन जीवित देवियों, यानी नारियों, का तिरस्कार करते हैं। यह पाखंड राष्ट्र के पतन का कारण है। उन्होंने समाज में शक्तिश के इस जीवित रूप का सम्मान पुनर्स्थापित करने का आह्वान किया।

सीता का नया आदर्शरू उन्होंने सीता के चरित्र को केवल त्याग और सहनशीलता के प्रतीक के रूप में नहीं देखा। विवेकानंद की सीता अपने आत्म-सम्मान और पवित्रता के प्रति अडिग थीं। उनका अग्नि-परीक्षा का निर्णय राम के संदेह का उत्तर देने के लिए नहीं, बल्कि अपनी गरिमा की स्थापना के लिए एक स्वैच्छिक और साहसिक कदम था। इस प्रकार, उन्होंने एक पारंपरिक आदर्श को शक्ति और दृढ़ता के एक नए प्रतीक में बदल दिया।

5. व्यावहारिक योजनारू महिला मठ की परिकल्पना विवेकानंद केवल दार्शनिक विचार देकर नहीं रुके। उन्होंने अपनी योजनाओं को साकार करने के लिए एक ठोस रूपरेखा भी प्रस्तुत की। इसका सबसे बड़ा उदाहरण था श्महिला मठश की स्थापना का विचार।

एक स्वायत्त संस्थारू वे गंगा के किनारे एक ऐसे मठ की स्थापना करना चाहते थे जो पूर्णतः महिलाओं द्वारा संचालित हो। यहाँ शिक्षित और त्यागी ब्रह्मचारिणियाँ और संन्यासिनियाँ रहतीं और देश भर की महिलाओं तथा बच्चियों की शिक्षा और उत्थान का कार्य करतीं।

माँ सारदा देवीरू उनकी यह परिकल्पना माँ सारदा देवी के जीवन में साकार हुई, जो संघ के लिए एक मार्गदर्शक शक्ति और स्त्रीत्व के उस आदर्श की प्रतीक बनीं, जिसकी कल्पना विवेकानंद ने की थी।

निष्कर्ष स्वामी विवेकानंद का महिला सशक्तिकरण का दर्शन एकांगी नहीं, बल्कि समग्र है। यह सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और आध्यात्मिक, सभी आयामों को समाहित करता है। उन्होंने महिलाओं को पुरुषों की अनुकृति बनने के लिए नहीं, बल्कि

अपनी मौलिक प्रकृति को पहचानकर उसे विकसित करने के लिए प्रेरित किया। उनका मॉडल श्रद्धाधारों की मांगश से आगे जाकर श्रदायित्वों के निर्वहनश और श्रद्धांतरिक शक्ति के जागरणश पर केंद्रित है। वे एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था चाहते थे जहाँ स्त्री और पुरुष एक-दूसरे के प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि पूरक हों और मिलकर एक महान राष्ट्र का निर्माण करें। आज जब महिला सशक्तिकरण का विमर्श अक्सर पश्चिमी मॉडलों तक सीमित रह जाता है, विवेकानंद का भारतीय संस्कृति की जड़ों से पोषित, आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता पर आधारित यह दर्शन एक अधिक स्थायी और प्रासंगिक मार्ग प्रस्तुत करता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. विवेकानंद, स्वामी। विवेकानंद साहित्य (संपूर्ण), खंड 1-10. कोलकाता: अद्वैत आश्रम। (प्राथमिक स्रोत)
2. रोलैंड, रोम्यां। (2015). द लाइफ ऑफ विवेकानंद एंड द यूनिवर्सल गोस्पेल. कोलकाता: अद्वैत आश्रम।
3. धर, शैलेन्द्र नाथ। (1976). ए कॉम्प्रिहेंसिव बायोग्राफी ऑफ स्वामी विवेकानंद. चेन्नई: विवेकानंद केंद्र प्रकाशन।
4. रेमंड, लिसा। (1995). विवेकानंद: ए न्यू डिस्कवरी. शिकागोरू ओपन कोर्ट पब्लिशिंग।
5. सिंह, तवलीन। (2003). री-इंटरप्रेटिंग विवेकानंदशस मेसेज फॉर द मॉडर्न इंडियन वुमन। इंडिया टुडे, 28 जुलाई 2003.
6. चक्रवर्ती, गार्गी। (2019). शर्जेंसी एंड एम्पावरमेंटरू विवेकानंदशस विज़न फॉर वीमेनशस लिबरेशन। जर्नल ऑफ जेंडर एंड सोशल स्टडीज, खंड 12, अंक 2, पृ. 45-62।
7. कपूर, राजीव। (2021). अनकॉलोनाइजिंग द माइंडरू विवेकानंदशस एजुकेशनल फिलॉसफी. नई दिल्ली: पेंगुइन इंडिया।

मोनिका

शोधार्थी

राजनीति विज्ञान एवं सार्वजनिक प्रशासन विभाग,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
(पंजीकरण संख्या: 21-BMU-6507)

डॉ. निशा कुमारी

शोध-निर्देशक

राजनीति विज्ञान एवं सार्वजनिक प्रशासन विभाग,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक, हरियाणा

सारांश

कविता मनुष्य की संवेदनलय है। वह मनुष्य का विवेक जगाती है, जागरूकता बढ़ाती है। जागृत विवेक के कारण ही मनुष्य परिस्थितियों का खिलौना बनने से बच पाता है। हर हाल में मनुष्यता को सर्वोच्च रख पाता है। वही मनुष्यता, जिसकी पहचान है – दूसरों के दुख में दुख अनुभव करना। जितना हो सके उसे दूर करना। निरंतर सौदागर और उपभोक्ता बनने में विलीन होते लोग या तो यह समझ नहीं पाते की कविता क्या करती है या वे समझना नहीं चाहते ?

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा है की – “कविता हृदय की मुक्ति साधना के लिए शब्द विधान करती है। हृदय तब मुक्तावस्था तक पहुंचता है, जब मनुष्य अपने अस्तित्व को भूलकर विशुद्ध अनुभूति मात्र रह जाए। अनुभूति मात्र रहकर वह लोक सामान्य की भावभूमि पर पहुंचता है। यह मनुष्यता की उच्च भूमि पर पहुंचना है। भावयोग की सबसे उच्च कक्षा पर पहुंचे हुए मनुष्य का जगत के साथ पूर्ण तादात्म्य हो जाता है।” ऐसे में उसे वैसा ही आनंद अनुभव होता है जैसा किसी विशाल और भव्य दृश्य को देखने पर होता है। ऐसा दृश्य जिस तरह उसकी दृष्टि का प्रसार करता है, उसी तरह कविता उसके हृदय का। हृदय का प्रसार होना ही मनुष्यता के संचार का प्रारंभ है।

मनुष्यता का संचार सबसे सशक्त सौंदर्य का संचार है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं कि – “यदि सुंदर रूप सामने पाकर उसने अपनी भीतरी कुरूपता का विसर्जन न किया, यदि दीन-दुखी का आर्तनाद सुनकर वह न पसीजा, यदि अनाथों और अबलाओं पर अत्याचार होते देख क्रोध से न तिलमिलाया, यदि किसी बेदब और विनोद पूर्ण दृश्य या उक्ति पर न हंसा तो उसके जीवन में रह क्या गया ? इस विश्व काव्य की रसधारा में जो थोड़ी देर के लिए निमग्न न हुआ, उसके जीवन को मरुस्थल की यात्रा ही समझना चाहिए।”

कविता का आधार है जीवन। सृजन को जीवन की लय के साथ केवल कविता संभव करती है। वह मनुष्य के अंतर्जगत का टूटता-बनता संगीत है। वह जीवन के आधार शब्दों को अर्थ रहित होने से बचाती है। गलत अर्थ देने से बचाती है। सुंदरता जीवन का एक ऐसा आधार शब्द है, जिसके अर्थ बदलते रहे हैं। पहले सुंदरता आकर्षित किया करती थी, मुग्ध किया करती थी, इश्या का कारण भी हुआ करती थी लेकिन भय पैदा नहीं किया करती थी। अरुण कमल लिखते हैं –

जिस तलवार ने सैकड़ों कत्ल किए

उस पर भी कितनी सुंदर नक्काशी थी।

यह सुंदरता नहीं है कुरूपता का आवरण है। कविता इस आवरण को हटाकर अपना धर्म निर्वाह करती है। कविता का जन्म जीवन से और जीवन के लिए होता है। समकालीन जीवन में मनुष्यता के लिए तरह-तरह की चुनौतियां बढ़ रही हैं। समकालीन कविता ने इन चुनौतियों को महसूस भी किया है और अपने ढंग से यथासंभव सामना भी।

भूमंडलीकरण के कारण शहरों का विकास हुआ है। दुनिया छोटी हो गई है। सारा भूमंडल एक गांव बन गया है। छोटी केवल दुनिया ही नहीं हुई है अपितु संवेदनशीलता और मनुष्यता भी हुई है। अरुण कमल के शब्दों में –

इतनी छोटी हो गई है दुनिया एक नक्शे पर

जब आप आराम से खाना खा रहे हैं

तो बिल्कुल पास में कोई भूख से दम तोड़ रहा है।

समकालीन विकास गगनचुंबी इमारतों का ही नहीं संवेदनशून्यता और क्रूरता का भी हुआ है। अंधाधुंध विकास की सड़क पर बेतहाशा दौड़ते आदमी को कविता यह याद दिलाती है कि जीवन में डाकिए की, किताबों की, पढ़ने-सोचने की, बातचीत की और चांद की भी अपनी एक जगह रही है। कविता एक तरह जीवन में बढ़ती नकारात्मकता को संवेदनात्मक दृष्टि से उजागर करती है और दूसरी तरफ इसके बीच सकारात्मकता के लिए सांस लेने की गुंजाइश पैदा करती है वर्तमान समाज में हालात ऐसे हैं कि आदमी के लिए अपनी मां का मामूली सबक तक जीना मुश्किल हो गया है। चंद्रकांत देवताले लिखते हैं की–

मां ने एक बार मुझसे कहा था

दक्षिण की तरफ पैर करके मत सोना

वह मृत्यु की दिशा है

और यमराज को क्रुद्ध करना

बुद्धिमानी की बात नहीं

पर आज जिधर भी पैर करके सोओ

वहीं दक्षिण दिशा हो जाती है।

सभी दिशाओं में यमराज के आलीशान महल हैं

और वे सभी में एक साथ

अपनी दहकती आंखों सहित विराजते हैं

मां अब नहीं है

और यमराज की दिशा भी वह नहीं रही

जो मां जानती थी।

समकालीन कविता ने ऐसे बुनियादी सवाल उठाए हैं कि दलितों और

स्त्रियों के वे होंठ जो एक अरसे से सिले हुए थे, खुले हैं। उन्होंने अपनी खामोशी तोड़ी है। दलितों का एक हिस्सा निम्न से मध्यम वर्ग में स्थानांतरित हुआ है। उसने थोड़ा बहुत बोलने की स्थिति और शक्ति अर्जित की है। स्त्रियों को दलित घरों में भी खुलकर बोलना नसीब नहीं हुआ। धनतंत्र ने जब मुनाफे को अनंत बनाने के लिए स्त्रियों का इस्तेमाल किया तो अर्थव्यवस्था में उनकी भी थोड़ी बहुत जगह बनी। लाज, संकोच, विवाह, भय, प्रलोभन आदि गुलामी के अनेक रूपों के सामने चुनौतियां खड़ी थी। अपनी तरह जीने के रास्ते खोले, नहीं मिले तो बनाएं।

समाज में स्त्री की स्थिति और भूमिका में होने वाला यह परिवर्तन समकालीन कविता में सहज ही देखा जा सकता है। बलात्कार की शिकार छोटी लड़कियां जब मजबूती के साथ समाज का सामना करती हैं तो अनामिका लिखती है कि –

उफ ,अम्मा मैंने भी /लेकिन हथियार नहीं डाले
कि जो बाजरा कूटकर /रोटियां खिलाई थी तुमने
मैंने उनकी सैरियत तो दी–

मानो न अम्मा, दी बिल्कुल दी, जल्दी तो हार नहीं मानी
थोड़ा सा खून बहा, उसके छपाके से बांबी के फूल रंग गए
ओ अम्मा, ओ अम्मा /मत रोओ लेकिन कि

एक छपाका खून ही तो था /वो फिर से बन जाएगा।

बलात्कार की सारी स्त्री विरोधी ताकत को इसने “एक छपाका खून” कहकर निर्वीय कर दिया। बलात्कार के अपराध बोध को अपने मन से निकाला। यह चेतना भी है कि यौन शुचिता के केवल स्त्री के लिए बने प्रतिमान अब उसे और गुलाम नहीं रख सकते। नींद में स्त्री को हंसते हुए देखना एक सपना है पर वह हंसना तो दूर, गहरी नींद में भी अपने माथे की सिलवटें तक नहीं मिटा पाती। अमित सलवटो से भरा माथा स्त्री की दुनिया में दुख का स्थाई हो गया चेहरा है। दुख बहुत ज्यादा और सघन हो तो उससे उपजी वेदना कभी भी फूट पड़ती है। हंसना और काजल लगाना सुखी होने का दिखावा करना है। बाहर हंसी की गूंजे, भीतर पथराया रुदन। उसकी हंसी को मीडिया ने, बाजार ने व्यावसायिक और महत्वपूर्ण बना दिया है। अक्सर माना जाता है कि स्त्रियां बोलती बहुत हैं। कई बार चुप्पी बहुत कुछ बता देती है। उसी तरह जैसे बोलना बहुत कुछ छिपा लेता है। ऐसे में कुछ भी सहज नहीं रहता। न बोलना, न चुप रहना। यातना की तीव्रता इतनी गहरी है कि हर यातना स्वाभाविक लगने लगती है। आदत बनने लगती है। यातना अभाव और दमन से जन्म लेती है। अभाव और दमन स्त्री जीवन के अंग हैं। अनामिका ने दलित, शोषित,

पीड़ित स्त्री का चित्रण करते हुए लिखा है –

पीठ नीली / चेहरा पीला लाल आंखें और जख्म हरे
कुदरत के सभी रंगों की बोटल
उलट–पलट जाती है मुझ पर
उनके आते ही।

गुलामी की अनुभूतियां सघन होकर मुक्ति की जरूरत बनती हैं। अनामिका कहती है कि–“सीता का सबसे बड़ा सच है लक्ष्मण रेखा लग जाना यानि आपात स्थिति में अपने विवेक के हिसाब से नियमावलियों में परिवर्तन करने का साहस। निर्णय गलत भी हो जाए तो क्या ,निर्णय लिए गए, स्वतंत्र निर्णय लिए गए यही बड़ी बात है।” अनामिका की कविता में स्त्री की स्थिति का यथार्थ चित्रण हुआ है। एक स्त्री का दमन किन–किन धरातलों पर कैसे–कैसे होता है। वह कैसे पितृसत्तात्मक मूल्यों के नाम पर टुकड़ा–टुकड़ा अस्तित्वहीन जीवन जीने को अभिशप्त है। सामाजिक रूढ़ियों, अंधविश्वासों, परंपराओं, नैतिकताओं की दुहाई देकर हमेशा दबाए रखा गया और उसे यह पाठ पढ़ाया गया कि इससे समाज में तुम्हारी कीर्ति फैलेगी, लोग तुम्हें पतिव्रता, धर्मपरायण एवं गृहलक्ष्मी के रूप में सम्मान देंगे। आज स्त्री पितृसत्तात्मक रूढ़ियों और परंपराओं के पाठों से बाहर झांकने लगी है। जो चीखे अभी तक उसने दबा रखी थी, हलक के बीच, वह बाहर आने को कसमसाने लगी है। कीमत चुकाकर भी स्त्री ने संघर्ष को जिंदा रखा है। अरुण कमल के स्वप्न में एक स्त्री बार–बार घर से भागती है। कभी मंदिर की सीढ़ियों पर बैठी रहती है, कभी किसी जानकार के घर तो कभी नैहर चली जाती है। वह हर बार मार खा भागी और उसने हर बार लौटकर मार खाई। चाहती तो आत्महत्या भी कर सकती थी। लेकिन वह जीवन से मृत्यु नहीं

मृत्यु से जीवन के लिए भाग रही थी

खूंटे से बंधी बछिया–सी जहां तक रस्सी जाती, भागती

गर्दन ऐंठने तक खूंटे को डिगाती

वह बार–बार भागती रही

बार–बार हर रात एक ही सपना देखती

ताकि भूल न जाए मुक्ति की इच्छा

मुक्ति न भी मिले तो बना रहे मुक्ति का स्वप्न

बदले न भी जीवन तो जीवित बचे बदलने का यत्ना।

अपनी पहचान, अपने अस्तित्व की खोज में भटकती हुई नारी अपने नाम की पहचान के लिए व्यंग्य भाव से भरकर ‘द्रौपदी’ कविता में प्रश्न करती है। औरत की अपनी कोई पहचान इस

पुरुष प्रधान समाज में नहीं है। यहां तक की उसका अपना नाम भी अपना नहीं है। जब तक पिता के घर में है तब तक पिता के नाम का सहारा, फिर पति के नाम का सहारा। नारी अपना स्वतंत्र वजूद रखती है, फिर स्वतंत्र नाम की सत्ता क्यों नहीं ?

क्या परिचय दूं मैं अपना द्रौपदी, पांचाली, कृष्णा, याज्ञसेनी
सभी संज्ञाएं वस्तुतः विशेषण है या संबंधसूचक
कभी गौर किया है तुमने/मेरा कोई नाम नहीं ।

अपनी पहचान, अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही
औरत आज भी पुरुष के हाथों की कठपुतली बनी हुई है। दांपत्य
जीवन में बढ़ता हुआ अलगाव, एकाकीपन दरारें उत्पन्न कर रहा
है, परिवार टूट रहे हैं। विवाह के नाम पर पति-पत्नी एक ही छत
के नीचे रहते हुए भी अजनबी है। जीवन की गाड़ी को, गाड़ी के
गियर के समान मानते हुए कवयित्री ने शब्द चित्र खींचा है जो
दांपत्य जीवन की कड़वाहट को दर्शाने में पूर्ण सहायक है।

दुनिया के सबसे अच्छे मां-बाप के यहां/जन्म लिया
देश के सबसे अच्छे शहरों में पली
शहर के सबसे अच्छे कॉलेज में पढ़ी
अपनी पहचान अपने दम पर गढ़ी
पहले प्रयास में/सबसे अच्छी नौकरी पाई
सब कुछ तो अच्छा ही अच्छा था/फिर कब मैंने
अपनी गाड़ी का चक्का/तुम्हारे हाथ में दे दिया
गाड़ी तब से/गलत गियर में दौड़ रही है।

बदलते परिवेश में व्यक्ति जितनी सहजता से वस्तुओं
को इस्तेमाल करता है उतनी ही सहजता से मनुष्यों को भी।
संबंधों को भी। संबंधों का इस्तेमाल वह करता भी है और
इस्तेमाल के लिए संबंध बनाता भी है। खाने के बाद डिब्बा फेंक
दिया जाता है और इस्तेमाल के बाद मनुष्य। संबंध एक जगह बसे
हो तो घर होते हैं। एक दूसरे की हंसी-खुशी हो तो घर होते हैं।
घर के इस मतलब को मतलबीपन ने बदल दिया है। संबंध पहले
घर में बसते थे, अब मकान में उजड़ते हैं। घर का मतलब हो
गया-माल। स्वार्थ की फिक्र। काम के आदमी से किसी भी कीमत
पर रिश्ता गांठना इसी सच का एक पक्ष है। धन संबंधों के केंद्र में
है। नई यथार्थ के दबाव और प्रभाव से कोई संबंध अच्छा नहीं
रहा। अनामिका लिखती है कि –

घर से बच्चा चला गया है
छूट गई है एक जुराब
जागी आंखों में छूटा हो
जैसे एक खिलौना ख्वाब

पन्नों की फटती छाती पर
छूट गए हैं उसके अक्षर
नन्हे पांवों की अंजुरी भी
छूटी चादर की झुर्री पर।

समकालीन कविता में आमजन के प्रति संवेदना व्यक्त हुई है। इस
संवेदना का आधार उसका जीवन और वे जरूरतें हैं जिन्हें वह
आमजन कभी भी पूरा नहीं कर पाता है। दिन भर हाड-तोड़
मेहनत करने की बावजूद वह कर्महीन है। दिल्ली और मुंबई जैसे
महानगरों की ओर पलायन करने वाले ये मजदूर, छोटे से छोटा
कार्य करते नजर आते हैं। शिक्षित लोग इन्हें केवल इनके नाम से
पहचानते हैं। उन्हें इनकी संवेदना से कोई लेना-देना नहीं है।

अनामिका शहरी संस्कृति में कच्ची बस्तियों में रहने
वाले गरीब मजदूरों के परिवार को नजदीक से देखती हैं अपने
पेट पालने को लेकर अपने गांवों से पलायन करने वाले ये लोग
दो जून की रोटी के लिए संघर्ष करते हैं। अपने बच्चों के लिए
बेहतर भविष्य का केवल सपना देखने वाले ये लोग उन्हें भी अपने
काम में जोड़ देते हैं। जिससे बच्चे अपना विकास नहीं कर पाते।
ये बच्चे कूड़ा-करकट बीनते हैं, कप प्लेट धोते हैं, छोटे-मोटे
काम करते हैं, तब जाकर परिवार का पालन होता है। अनामिका
उनकी व्यवस्था का चित्रण करते हुए लिखती है कि –

उन्हें हमेशा जल्दी रहती है
उनके पेट में चूहे कूदते हैं
और खून में दौड़ती है गिलहरी
बड़े-बड़े डग भरते/चलते हैं वे तो
उनका ढीला-ढाला कुर्ता
तन जाता है फूलकर उनके पीछे
जैसे हो पाल कश्ती का बोरियों में टनन-टनन गाती हुई
रम की बोतलें/में उनकी झुकी पीठ की रीढ़ से
बना देते हैं माचिस के खाली डिब्बों के
छोटे-छोटे कई घर/खुद तो कहीं नहीं रहते
पर उन्हें खूब पता है घर का मतलब।

मेहनत मजदूरी करने वाले लोगों के प्रति सहानुभूति
और संवेदना का अभाव है। सदियों से गरीबों के प्रति हीनता का
भाव देखा जाता रहा है। वे लोग जो मेहनत के बल पर जीवन
जीना चाहते हैं उन्हें पूंजीवादी लोग तिरस्कृत और उपेक्षित करते
हैं। इन स्थितियों से आमजन त्रस्त हैं। रोजगार की तलाश में गांव
से पलायन की समस्या को रेखांकित करते हुए कवि अरुण कमल
लिखते हैं –

पंजाब में बहुत खुशहाल है निहाल सिंह ?

सुनते हैं लोग वहां दूध और मट्ठे से तर है।

फिर तुम क्यों जाते हो पश्चिम बंगाल / बोलो निहाल सिंह ?

कौन नहीं चाहता जहां जिस जमीन उगे

मिट्टी बन जाए वहीं

पर दोमट नहीं, तपता हुआ रेत ही है घर तरबूज का,

जहां निभे जिंदगी वहीं घर वहीं गांव।

संकीर्णता ने धरती को ही नहीं, सारी प्रकृति को अपने-पराए में बांट दिया है। क्योंकि इसी से वर्चस्वधर्मी धनतंत्र का हित सधता है। सरहदों को वह सिर्फ मुनाफे के लिए, संकीर्ण हृदय के स्वार्थ के लिए धुंधली करता है। यही कारण है कि एक तरफ भूमंडलीकरण होता है और दूसरी तरफ संकीर्णता का प्रसार। मुश्किलों और दर्द से घिरे आदमी को लगता है कि वह अकेला है। अकेला वह होता नहीं क्योंकि उस जैसे, उससे ज्यादा घिरे हुए बहुत है। दूसरों की तकलीफ देखकर अपने दर्द का अहसास कम हो जाता है। गांव जो पहचान थी उसे शहर निगल गया। पहले मनुष्य जगह से ज्यादा महत्वपूर्ण था अब जगह मनुष्य से ज्यादा महत्व पा गई। जगह को सब जानते हैं, आदमी को कोई नहीं। आसपास रहना भी अकेले रहना है। कवि अपनी कविताओं में सभ्यता व संस्कृति के उस मूल उत्स को खोजने का प्रयास करता है जहां हमारे जन्मों के संस्कार गुम हो गए हैं। कवि हर उस मूल्यवान व विलुप्तप्राय होती चीजों को बचाने का आह्वान करता है जो हमारी पहचान है किंतु आधुनिकता की चकाचौंध में हम उन्हें खोते जा रहे हैं। उदय प्रकाश लिखते हैं कि —

बचाना ही हो तो बचाए जाने चाहिए

गांव में खेत, जंगल में पेड़, शहर में हवा

पेड़ों में घोंसले, अखबारों में सच्चाई, राजनीति में

नैतिकता, प्रशासन में मनुष्यता, दाल में हल्दी।

गांव, खेत, जंगली पेड़, हवा, घोंसले, सच्चाई, नैतिकता, मनुष्यता आदि के नष्ट होने का मुख्य कारण औद्योगिकरण और आधुनिकीकरण है। आधुनिकीकरण के कारण हमारे नैतिक, सांस्कृतिक मूल्य कहीं खो गए हैं। हमारी संवेदना कहीं खो गई है। हम चलते-फिरते मशीनी पुर्जा बन गए हैं, जड़हीन, संवेदनहीन। कवि ने शहरी आबोहवा में व्याप्त संवेदनशून्यता का चित्रण करते हुए लिखा है कि—

खासियत है दिल्ली की

कि यहां कपड़ों के भी सूखने से पहले

सूख जाते हैं आंसू।

आज का समाज मान-मर्यादाओं मूल्यों, परंपराओं और रिश्त-नातों को भूलता जा रहा है। उसकी संवेदनाएं मर रही हैं और वह जैसे काष्ठ का बनता जा रहा है। दूसरों के प्रति व्यक्ति के मन में अब करुणा नहीं फूटती बल्कि घृणा फूटती है।

आज भूमंडलीकरण का युग है। गांव, खासकर भारतीय गांव भले ही मूलभूत सुख सुविधाओं से शून्य हैं। अस्पताल, विद्यालय, सड़के नहीं हैं। लेकिन टीवी, रेडियो, शीतल पेय, शराब, गुटका, मोबाइल फोन आदि शहरी तामझाम वहां पहुंच गए हैं। गांव के बिगड़ते स्वरूप को आज की कविता में बड़ी शिद्दत से महसूस किया गया है। कात्यायनी इस परिदृश्य को उजागर करते हुए लिखती हैं कि—

पूरब का वह सुदूरवर्ती गांव

प्रतीक्षारत है।

दो पनीली किशोर आंखें कहीं क्षितिज के छोर पर टिकी है।

जब गए तो वह पांच साल का था।

वे बहुत कठिन दिन थे। उन्हें तो बच्चों का चेहरा पहचानना कठिन होगा।

अतः कहा जा सकता है कि तत्कालीन समय में जब देश में लोकतंत्र और उसकी राजनीति को लेकर बहस चल रही है ऐसे में समकालीन कविता पूर्ण आवेग के साथ रूप, संवेदना, भाव, दृष्टि आदि सभी में आमजन का नेतृत्व करते हुए दिखाई पड़ती है। गांव से लेकर महानगरों की विद्रूपताओं में किसान, मजदूर, स्त्री, दलित आदि सभी पीसे जा रहे हैं। उनके मन की छटपटाहट को इन कवियों ने यथार्थ के साथ अंकित किया है। समकालीन हिंदी कविता में स्त्री जीवन की समस्याओं, विडंबनाओं तथा यातनाओं को अभिव्यक्ति मिली है। आज महानगरों में एकाकीपन का वातावरण बनता जा रहा है। व्यक्ति अपने परिवार तथा समाज से कटा सा अनुभव कर रहा है। महानगरीय यातनाओं को भोगने वाले साधारण व्यक्ति को समकालीन कवि अपने काव्य के माध्यम से चेतना देने का प्रयास करते हैं। समकालीन कवि समाज की दिन प्रतिदिन बिगड़ती स्थिति को सुधारने के आकांक्षी हैं। वे परिस्थितियों के बदलाव के लिए समाज में नव चेतना का विकास करना चाहते हैं।

संदर्भ —

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, चिंतामणि भाग -1 पृ. 128, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद
2. वही, पृ. 117

3. अरुण कमल, अपनी केवल धार, पृ.29, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
4. अरुण कमल, सबूत, पृ. 80, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
5. सं. विष्णु खरे, उसके सपने, पृ. 208–209, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
6. अनामिका, कविता में औरत, पृ.101, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
7. अनामिका, खुरदरी हथेलियां, पृ. 46, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
8. अनामिका, कविता में औरत, पृ.41, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
9. अरुण कमल, पुतली में संसार, पृ.24–25, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
10. सुमन केसरी, याज्ञवल्क्य से बहस, पृ.14, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
11. ममता कालिया, खांटी घरेलू औरत, पृ. 69, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
12. सं. चारु मित्र, अष्टाक्षर, पृ. 27, जनप्रिय प्रकाशन, दिल्ली
13. अनामिका, कवि ने कहा, पृ.108, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली
14. अरुण कमल, अपनी केवल धार, पृ. 66, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
15. उदय प्रकाश, रात में हारमोनियम, पृ.16, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
16. वही, पृ. 60
17. कात्यायनी, जादू नहीं है कविता, पृ.166, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

डॉ. जागीर नागर

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग

इन्दिरा गांधी विश्वविद्यालय मीरपुर, रेवाड़ी (हरि.)

jklnagar@gmail.com

Abstract

Forgetting is a natural cognitive process, yet in academic contexts, it poses significant challenges to knowledge acquisition and application. This paper explores the psychological foundations of forgetting and provides research-informed strategies educators can adopt to support long-term retention in students. Drawing from cognitive theories, classical research, and contemporary classroom practices, the article positions the teacher as a central figure in transforming memory challenges into learning opportunities.

Keywords

Forgetting, Memory, Retention, Educational Psychology, Learning Strategies, Teaching Practices

Introduction

In educational settings, the gap between learning and remembering is often wide. Students absorb new knowledge daily, yet many struggle to retain it, especially when under pressure. Forgetting is not merely a student weakness—it is a psychological process embedded in human cognition. Recognizing this, teachers can take informed steps to support retention and recall. This paper delves into the cognitive mechanics of forgetting and outlines actionable strategies teachers can implement to counteract it.

Understanding Forgetting: Psychological Foundations

1. The Forgetting Curve

Hermann Ebbinghaus' (1885/1913) work revealed that memory declines rapidly post-learning, particularly within the first 24 hours—a phenomenon depicted in his “forgetting curve.” Without reinforcement, most acquired information fades exponentially.

2. Theories of Forgetting

- **Decay Theory:** Memories weaken over time without rehearsal (Thorndike, 1914).
- **Interference Theory:**
 - *Proactive Interference:* Old information interferes with new learning.
 - *Retroactive Interference:* New information disrupts previously learned material (Underwood, 1957).
- **Retrieval Failure:** Memory is intact but inaccessible

due to inadequate cues (Tulving & Thomson, 1973).

- **Encoding Failure:** Information was never stored effectively, often due to divided attention or lack of interest.
- **Motivated Forgetting:** Emotional suppression or repression leads to intentional or unconscious forgetting (Anderson & Green, 2001).

3. Cognitive Load and Working Memory

George Miller's (1956) theory proposed that working memory holds 7 ± 2 items. When cognitive load exceeds this limit, information may not be encoded into long-term memory, increasing the risk of forgetting.

4. Emotional and Environmental Influences

Emotion plays a key role in encoding and recall. Stress and anxiety impair cognitive function, while emotionally charged or meaningful learning tends to be retained longer (Tyng et al., 2017).

The Teacher's Role in Enhancing Retention

Effective teaching is memory-sensitive teaching. Educators can reduce forgetting by incorporating methods grounded in cognitive psychology that optimize encoding, storage, and retrieval.

Practical Strategies to Combat Forgetting

1. Spaced Repetition

Spacing learning over time promotes stronger memory consolidation (Cepeda et al., 2006). Instead of massed practice, brief, spaced reviews yield better retention.

In Practice:

- Introduce key ideas early and revisit periodically.
- Use cumulative assignments and spiraled curriculum structures.

2. Active Recall

Retrieving information without cues significantly strengthens memory (Karpicke & Roediger, 2008).

In Practice:

- Employ low-stakes quizzes, self-testing, and oral recall.
- Encourage students to summarize material without looking.

3. Interleaved Practice

Mixing topics or problem types strengthens learning by

enhancing discrimination and flexibility (Rohrer & Taylor, 2007). In Practice:

- Integrate old and new content.
- Design assignments with diverse problem types.

4. Dual Coding

Dual coding involves presenting information both visually and verbally (Paivio, 1991). This multi-modal encoding enhances retention.

In Practice:

- Use diagrams, timelines, mind maps with explanations.
- Encourage students to create their own visual study aids.

5. Mnemonics and Chunking

Memory aids such as acronyms, rhymes, or breaking information into “chunks” simplify recall (Bower, 1970).

In Practice:

- Teach mnemonic devices for facts, sequences, and categories.
- Help students organize content logically into chunks.

6. Emotional Engagement

Emotionally salient content is more memorable (Tyng et al., 2017).

In Practice:

- Tell stories, use humor, or connect learning to real-life examples.
- Foster classroom safety and student belonging.

Conclusion

Forgetting is a complex interplay of biological, cognitive, and emotional factors. Rather than viewing it as a flaw, educators can understand forgetting as a natural barrier to be overcome through strategic instruction. Teachers

equipped with psychological insights can create memory-friendly classrooms that not only engage learners but empower them to retain and apply knowledge long after the lesson ends.

References

- Anderson, M. C., & Green, C. (2001). Suppressing unwanted memories by executive control. *Nature*, 410(6826), 366–369. <https://doi.org/10.1038/35066572>
- Bower, G. H. (1970). Analysis of a mnemonic device: Modern psychology uncovers the powerful components of an ancient system for improving memory. *American Scientist*, 58(5), 496–510.
- Cepeda, N. J., Pashler, H., Vul, E., Wixted, J. T., & Rohrer, D. (2006). Distributed practice in verbal recall tasks: A review and quantitative synthesis. *Psychological Bulletin*, 132(3), 354–380. <https://doi.org/10.1037/0033-2909.132.3.354>
- Ebbinghaus, H. (1913). *Memory: A contribution to experimental psychology* (H. A. Ruger & C. E. Bussenius, Trans.). Teachers College, Columbia University. (Original work published 1885)
- Karpicke, J. D., & Roediger, H. L. (2008). The critical importance of retrieval for learning. *Science*, 319(5865), 966–968. <https://doi.org/10.1126/science.1152408>
- Miller, G. A. (1956). The magical number seven, plus or minus two: Some limits on our capacity for processing information. *Psychological Review*, 63(2), 81–97.
- Paivio, A. (1991). Dual coding theory: Retrospect and current status. *Canadian Journal of Psychology*, 45(3), 255–287. <https://doi.org/10.1037/h0084295>
- Rohrer, D., & Taylor, K. (2007). The shuffling of mathematics problems improves learning. *Instructional Science*, 35(6), 481–498. <https://doi.org/10.1007/s11251-007-9015-8>

Thorndike, E. L. (1914). *Educational psychology: Briefer course*. New York: Teachers College, Columbia University.

Tulving, E., & Thomson, D. M. (1973). Encoding specificity and retrieval processes in episodic memory. *Psychological Review*, 80(5), 352–373.

Tyng, C. M., Amin, H. U., Saad, M. N. M., & Malik, A. S. (2017). The influences of emotion on learning and memory. *Frontiers in Psychology*, 8, 1454. <https://doi.org/10.3389/fpsyg.2017.01454>

Underwood, B. J. (1957). Interference and forgetting. *Psychological Review*, 64(1), 49–60.

Dr. Rajkumari Singh

Professor, Dept. of Education

School of Education & Humanities IFTM University,

Lodhipur Rajpoot, Moradabad (244001)

drksingh@iftmuniversity.ac.in

ABSTRACT

"Labour Skill Development and Employment" is a critical area of focus for any economy, especially for countries aiming to boost productivity, reduce unemployment, and enhance global competitiveness. Here's an organized overview to help you understand the topic and potentially write about it for an essay, project, or report:

1. Introduction

Labour skill development and employment are interlinked components of economic growth. Skill development enhances the capabilities of the workforce, which in turn improves employability and productivity.

2. Importance of Labour Skill Development

- " Increased Employability: Skilled individuals are more likely to find jobs and adapt to changing job markets.
- " Economic Growth: Skilled labour contributes more efficiently to the economy, boosting productivity.
- " Innovation and Competitiveness: A skilled workforce drives innovation, allowing countries to compete globally.
- " Poverty Reduction: By equipping people with skills, they can secure better-paying jobs, improving their quality of life.

3. Key Challenges

- " Skill Mismatch: Often, there is a gap between the skills people have and what employers need.
- " Inadequate Training Infrastructure: Especially in rural or underdeveloped areas.
- " Lack of Industry-Academia Collaboration: Curriculums may be outdated or not aligned with market needs.
- " Low Awareness and Motivation: Many workers are unaware of training opportunities or don't see their value.

4. Government Initiatives (India as Example)

- " Skill India Mission: Launched in 2015 to train over 40 crore people by 2022.
- " PMKVY (Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana): Provides free training and certification.
- " National Apprenticeship Promotion Scheme (NAPS): Encourages on-the-job training through

apprenticeships.

- " MUDRA Yojana: Financial support for skilled individuals to start their own businesses.
- 5. Employment Generation
 - " Formal vs Informal Employment: Need to shift more people into the formal sector.
 - " Entrepreneurship and Start-ups: Encouraging self-employment through skill-based entrepreneurship.
 - " Sector-Specific Growth: For example, IT, healthcare, construction, tourism, etc., have different skill needs and job potentials.
- 6. Role of Technology
 - " Digital Learning Platforms: Enable remote skill development (e.g., SWAYAM, Coursera).
 - " Automation & AI: Shaping future skill demands-digital literacy is becoming essential.
 - " Data Analytics: Helps in identifying skill gaps and training needs.
- 7. Recommendations
 - " Strengthen public-private partnerships in skill development.
 - " Update vocational training curricula regularly.
 - " Increase investment in technical education and industrial training institutes.
 - " Promote gender equality in training and employment.
 - " Foster a culture of lifelong learning.

8. Conclusion

Labour skill development is not just a tool for individual empowerment but a national necessity. Bridging the skill gap and aligning training with industry demands can significantly boost employment, economic growth, and social equity.

Would you like this content turned into a PowerPoint presentation, essay format, or info graphic?

You said:

LABOUR SKILL DEVELOPMENT AND EMPLOYMENT IN INTRODUCTION 1000 WORDS IN INDIAN

Here's a comprehensive 1,000-word Introduction on Labour, Skill Development, and Employment in India, integrating the latest data, key initiatives, challenges, and the way

forward.

?SA. Context & Significance

India is at a pivotal stage in its economic and demographic journey. Every year, approximately

10 million Indian youth enter the workforce, yet formal employment is not growing fast enough to absorb this influx

jaankaarbharat.com+6drishtias.com+6iasexpress.net+6en.wikipedia.org+1digitallearning.eletsonline.com+1.

With over 8% of job-seekers currently unemployed, India faces an acute dual

challenge: low-quality job creation and a significant skill-job mismatch. While the nation

aspires to fully leverage its demographic dividend-and strives toward developed-nation goals by 2047-realizing this hinges critically on equipping its young population with relevant skills.

1. Foundations of the Labour & Skill Ecosystem

" MGNREGA: Enacted in 2005, this landmark Act guarantees 100 days of rural wage employment annually per household, boosting livelihood security and asset creationen.wikipedia.org+1jaankaarbharat.com+1.

" Labour Codes Reform: The introduction of four consolidated labour codes (wages, social security, industrial relations, safety/health) since 2019 aims to simplify regulations and improve social protectionsiasexpress.net+1jaankaarbharat.com+1.

" Evolving Employment Landscape: With the gig economy projected to grow to 23.5 million by 2030 in Indiaiasexpress.net, there is increasing urgency around formalizing and protecting these flexible, yet often unprotected, jobs.

2. The Role & Reach of Skill Development

India's skill ecosystem began gathering steam in 2015 with the creation of the National Skill Development Mission (Skill India) superkalam.com+2 drishtias.com+2 scientiatutorials.in+2. MSDE now collaborates with states, industry, and NGOs to train over one crore youth annually timesofindia.indiatimes.com+15drishtias.com+15times of india.indiatimes.com+15. However, less than 3.8% of the workforce has formal vocational training-highlighting the magnitude of

the opportunity wsj.com.

Key flagship schemes:

" PMKVY (Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana) - Launched in 2015, this provides free training and certification based on National Occupational Standards, targeting both new learners and Recognition of Prior Learning ensureias.com+7en.wikipedia.org+7 jaankaarbharat.com+7.

o PMKVY targets training 1 crore youth; by mid-2024, over 8.5 million had been trained, with ~55% job placement.

o PMKVY 4.0 emphasizes digital, green, and industry-aligned skill sets drishtias.com+1superkalam.com+1.

" NAPS (National Apprenticeship Promotion Scheme) - Began in 2016, this scheme incentivizes industry to hire apprentices by reimbursing part of their stipends; over 16.5lakh apprentices have benefited issexpress.net+2 drishtias.com+2jaankaarbharat.com+2.

" DDU-GKY (Deen Dayal Upadhyaya Grameen Kaushalya Yojana) - Targeted at rural youth aged 15-35, it offers training, digital vouchers, and has trained over 11 lakh rural candidates superkalam.com+4en.wikipedia.org+4jaankaarbharat.com+4.

" DDU-NULM - Focused on urban poor, offering skill training, microenterprise support, and vendor assistance en.wikipedia.org.

" SANKALP & STRIVE - SANKALP enhances short-term training and marginalized inclusion; STRIVE strengthens ITIs and apprenticeships en.wikipedia.org+2drishtias.com+2ensureias.com+2.

Other notable schemes include national-level ITI upgrades (PMKK), green energy training with Shell, drone-based training for women, and upskilling initiatives by Microsoft like DigiSaksham news.microsoft.com.

3. Emerging Vocational & Educational Infrastructure

" PM Kaushal Kendra (PMKK) - Model vocational centers in every district offering built-for-industry infrastructure and soft-loan support for expansion ensureias.com+2skilldevelopment.gov.in+2news.microsoft.com+2.

" NSTIs & Centres of Excellence - New National Skill Training Institutes are being set up in cities like

Bhubaneswar, Kanpur, Chennai, Hyderabad, and Ludhiana, supported by world-bank and ADB funding, to train over 20 lakh youth in 5 years times of india. india times. com.

" Young India Skills University (YISU) - Established in late 2024 in Hyderabad, this PPP university focuses on employment-oriented skill training in partnership with industry like Mahindra and Adani en.wikipedia.org.

4.Public-Private Collaboration & Digital Innovation Partnerships have become central:

" Microsoft-MSDE (DigiSaksham) aims to digitally upskill 10 million jobseekers with curriculum integrated into NCS news.microsoft.com.

" Shell-MSDE collaboration focuses on green energy and EV skill training economictimes.indiatimes.com.

"Industry players like TCS, IBM, and Samsung partner with vocational institutes and ITIs- e.g., Tata STRIVE has trained 500 K+ and placed 70% .

WHY IS LABOUR SKILL DEVELOPMENT IMPORTANT?

Importance of Skill Development

Skill development is one of the most crucial factors that drive both individual progress and national growth. In today's rapidly changing world, having the right skills is key to securing stable employment, boosting productivity, and fostering economic development. As industries evolve, particularly with the rise of automation, artificial intelligence, and digital transformation, skill development plays an even more pivotal role in preparing the workforce to adapt to new challenges and opportunities.

1. Enhancing Employability

One of the primary reasons for the importance of skill development is that it directly impacts employability. In a globalized economy, competition for jobs is fierce, and employers are increasingly seeking individuals who possess not just basic education, but also practical skills. These can range from technical competencies in areas like engineering, software development, and healthcare, to soft skills such as communication, teamwork, and leadership. People who continually update and expand their skill sets are more likely to be hired and promoted,

which helps reduce unemployment rates.

For countries like India, where millions of youth enter the workforce each year, skill development becomes even more critical. According to reports, India has a very large "youth bulge," and providing relevant training can help transition them from being job seekers to productive contributors to the economy. Government initiatives such as Skill India, Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY), and National Skill Development Corporation (NSDC) aim to bridge this gap by offering vocational training, certifications, and upskilling programs.

2. Driving Economic Growth

Skilled workers are the backbone of any economy. They enhance productivity, improve quality, and contribute to higher output levels. When a large portion of the workforce is skilled, it leads to more efficient operations across industries, from manufacturing to services, which can elevate the country's economic growth.

In addition, as industries evolve, certain sectors require specialized skills. For example, the rise of digital technologies has created high demand for data analysts, cybersecurity experts, and cloud computing professionals. Without the right skill sets, countries and businesses risk lagging behind in global competition.

3.Reducing Poverty and Inequality

Skill development programs can directly contribute to poverty reduction by equipping individuals with the tools they need to earn a living and support their families. Vocational training, especially in rural areas, can provide people with the expertise to work in sectors like agriculture, handicrafts, and local manufacturing, where there is often a high demand for labor.

Skill development also plays a vital role in reducing income inequality. By providing marginalized communities, women, and people from lower socioeconomic backgrounds with access to skill- building programs, they gain better access to well-paying, sustainable jobs. In countries with significant economic disparities, such programs are crucial for achieving more inclusive growth.

4. Fostering Innovation and Entrepreneurship

A skilled workforce not only supports existing industries

but also fosters new business ventures. When individuals are equipped with the skills to innovate, create, and manage their own businesses, they contribute to the entrepreneurial ecosystem. Entrepreneurs with specialized skills can develop new products, services, and technologies that may lead to the creation of entirely new industries, thereby generating new employment opportunities and pushing economic frontiers.

5. Adapting to Technological Changes

As technological advancements, including automation and artificial intelligence, reshape industries, the workforce needs to adapt to these changes. Skills that were relevant a decade ago may no longer be as in demand today. For example, manual labor is increasingly being replaced by robots and AI, making it essential for workers to acquire new, technology-driven skills to remain relevant. Through continuous learning and upskilling, individuals can stay ahead of technological disruptions, ensuring their jobs remain secure and relevant in a changing economy.

6. Promoting Lifelong Learning

The pace of technological and industrial change means that skill development is not just a one-time activity. It needs to be continuous. Lifelong learning-the practice of acquiring new skills throughout one's career-has become crucial. It helps individuals to stay employable, progress in their careers, and navigate the evolving job market. Employers also benefit, as a skilled workforce translates to greater productivity, innovation, and business sustainability.

The Indian government has launched several initiatives and programs aimed at promoting labour skill development to enhance employability and support economic growth. These initiatives are primarily designed to provide vocational training, improve skills, and align them with industry needs.

1. Skill India Mission: Launched in 2015, this mission aims to train over 40 crore people by 2022 in various skills. It focuses on empowering youth with market-relevant skills through a nationwide network of training centers.

2. Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY): This

flagship scheme provides free training and certification to youth in industry-relevant skills. It also includes the Recognition of Prior Learning (RPL), certifying individuals based on their existing skills.

3. National Apprenticeship Promotion Scheme (NAPS): NAPS encourages industries to hire apprentices by providing financial incentives. This program supports on-the-job training and ensures that the workforce is better aligned with industrial needs.

4. Deen Dayal Upadhyaya Grameen Kaushalya Yojana (DDU-GKY): Targeting rural youth, DDU-GKY provides skill development and placement services, focusing on improving livelihood opportunities in rural areas.

5. National Skill Development Corporation (NSDC): NSDC works in partnership with the government and private sector to promote skill development and create a robust ecosystem for vocational training.

CHALLENGES AND SOLUTIONS IN LABOUR SKILL DEVELOPMENT AND EMPLOYMENT:

Challenges in Labour Skill Development and Employment

1. Skill Mismatch: One of the most pressing challenges is the mismatch between the skills possessed by the workforce and those demanded by the industry. Many job seekers lack industry-relevant skills, making it difficult for them to secure employment.

2. Inadequate Infrastructure: There is a shortage of high-quality training centers and a lack of access to skill development programs, particularly in rural areas. This limits the reach of vocational training initiatives.

3. Unemployment Among Youth: Despite the increase in skill development programs, youth unemployment remains high due to insufficient jobs in sectors that match their training.

4. Informal Labour Market: A significant portion of India's workforce is in the informal sector, which lacks job security, benefits, and training opportunities, making it harder for workers to transition to more formal, stable employment.

Solutions

1. Industry-Academia Collaboration: Strengthening partnerships between educational institutions and

industries can help bridge the skill gap. Curricula should be aligned with industry needs to make training more relevant.

2. Expanding Training Infrastructure: The government and private sector need to invest in setting up more training centers in rural areas, ensuring that vocational training is accessible to all.

3. Focus on Entrepreneurship: Encouraging entrepreneurship through skill development programs can help create self-employment opportunities, reducing dependency on formal job markets.

4. Promoting Formal Sector Jobs: Creating more formal sector job opportunities, especially in emerging sectors like IT, healthcare, and renewable energy, can help absorb the trained workforce.

Labour Skill Development and Employment in India

REFERENCES

Labour skill development and employment are two interconnected factors that significantly influence the economic growth and social stability of a nation. In the context of India, these issues are of critical importance, considering the country's large and youthful population.

1. National Skill Development Mission (NSDM), 2015

The National Skill Development Mission aims to create an ecosystem that promotes skill development in India. Launched by the Ministry of Skill Development and Entrepreneurship (MSDE), it focuses on skilling over 400 million individuals by 2022. The initiative emphasizes inclusive development by offering skill development programs across various sectors like healthcare, construction, and IT.

2. Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY)

Launched in 2015, PMKVY is a flagship program aimed at providing free-of-cost training to youth in various industry-recognized skills. It helps youth acquire certification in skills aligned with market demands, thus improving their employability. The scheme also integrates Recognition of Prior Learning (RPL) for workers with informal work experience.

3. National Apprenticeship Promotion Scheme (NAPS)

The National Apprenticeship Promotion Scheme (NAPS) aims to provide apprenticeship opportunities in industries

by offering financial incentives to employers. Apprenticeships allow individuals to gain hands-on experience, which enhances their chances of securing permanent employment. NAPS supports both urban and rural youth.

4. Deen Dayal Upadhyaya Grameen Kaushalya Yojana (DDU-GKY)

The DDU-GKY program, launched by the Ministry of Rural Development, focuses on providing skill development to rural youth, particularly in marginalized sections of society. By providing skills training and placement support, the program helps reduce rural unemployment and poverty.

. NSDC Annual Report (2019-2020)

The NSDC plays a pivotal role in shaping India's skill development landscape. According to the NSDC Annual Report, the organization has trained millions of people in areas such as IT, healthcare, and retail. Through partnerships with public and private sectors, NSDC aims to address the growing skill gaps in the workforce.

. India Skills Report 2020

The India Skills Report by Wheebox, in collaboration with FICCI and CII, provides insights into the employability of India's youth. It identifies sectoral demands, geographical trends, and highlights the skills gap. The report stresses the importance of aligning educational curricula with market needs to bridge the employability gap.

Economic Survey of India, 2020-2021

The Economic Survey outlines the state of employment and skill development in India. It discusses challenges such as underemployment, informal labor, and the mismatch between educational outputs and job market requirements. The survey recommends investing in vocational education, digital skills, and entrepreneurship to address these issues.

. Skill Development in India: Challenges and Opportunities Rajiv Kumar from NITI Aayog discusses in his paper the challenges in the Indian skill development system. He highlights the lack of standardized training centers, the scarcity of trainers, and insufficient industry partnerships. He advocates for a more decentralized

approach to training and an industry-driven model of education.

. Making the Most of India's Demographic Dividend

McKinsey Global Institute's report emphasizes how India's demographic dividend could be harnessed through targeted skill development. By improving education and skills training, India could increase its workforce participation and productivity, leading to sustainable economic growth.

5.Global Skills Report 2020

According to the Global Skills Report 2020 by Coursera, there is a growing need for digital literacy and data science skills in India. The report suggests that online learning platforms can bridge skill gaps by offering flexible, accessible courses that align with industry demands.

6.World Bank Report on Skill Development for Employability

A report by the World Bank highlights the need for India to shift from traditional, academic- oriented education to more skill-based learning. It recommends improving the alignment between the training provided by technical institutes and the skills needed by industries, particularly in manufacturing and digital sectors.

7.Labour Market in India: Recent Trends, Challenges, and Policy Responses

The International Labour Organization (ILO) report discusses the growing informal labor market in India, where workers lack social security and face poor working conditions. The report stresses the need for better formalization of labor and expansion of job security and benefits for workers.

8.State of India's Labour Market 2020

The Azim Premji University report provides an in-depth analysis of the labour market trends in India. It finds that youth unemployment remains high, with a significant proportion of youth unable to find jobs that match their educational background. It also

suggests that India's skill development policies need to focus more on vocational training and job-ready skills.

. National Policy on Skill Development and Entrepreneurship, 2015

This policy aims to create an integrated ecosystem for skill development by enhancing vocational training and promoting entrepreneurship. It calls for greater collaboration between the public and private sectors to create employment opportunities and a skilled workforce.

9.India's Skill Development Landscape - Asian Development Bank

The Asian Development Bank (ADB) highlights that despite rapid urbanization and industrialization, India's skill development programs still face structural challenges. The ADB report emphasizes creating more industry-relevant curricula and increasing investment in vocational education.

Dr. Sanesh Yadav

Principal

SSDCMT College

Rewari (Haryana)

Princy Tiwari

Scholar

Sec-6, Dharuwhere,

REWARI